प्राचीन पुस्तकोद्धारक फंड ग्रंथांक २६

॥ अर्हम् ॥

दादासाहिब जंगमयुगप्रधान भट्टारक

श्रीजिनदत्तसूरिचरितम्।

पूर्वार्द्धम्।

जैनाचार्य श्रीमज्जिन कृपाचन्द्रसूरिजी
महाराजके सदुपदेशसें
दक्षिणहैदरावादनिवासी जैतारणवालो
सेठ छगनमलजी आदिकने
प्रकाशित किया।

मुम्बापुर्यां
निर्णयसागरमुद्रालये मुद्रयित्वा प्रकाशितम्।

वि० सं० १९८२, सन १९२५

प्रथमावृत्ति] मूल्यं १॥ रूप्यकसार्धम्। [प्रति ५००

॥ ॐ अर्हंनमः ॥

श्रीजिनदत्तसूरिचरितप्रस्तावना ॥

॥ जयति विनिर्जितरागः सर्वज्ञः त्रिदशनाथकृतपूजः । सद्भूतवस्तुवादी, शिवगतिनाथोमहावीरः ॥ १ ॥ सिद्धये वर्द्धमानस्तात्ताम्रायन्नखमंडली, । प्रत्यूहशलभप्रोपे दीप्रदीपांकुरायते ॥ २ ॥ सर्वारिष्टप्रणाशाय, सर्वाभीष्टार्थदायिने । सर्वलब्धिनिधानाय, श्रीगौतमस्वामिने नमः ॥ ३ ॥ श्रीमद्वीरजिनास्यपद्महृदतो निर्गम्यते गौतम, गंगावर्त्तनमेत्यया प्रविभवे मिथ्यात्ववैताढ्यकं, । उत्पत्तिस्थितिसंहृतित्रिपथगा ज्ञानाम्बुधाद्विगा, । सा मे कर्ममलं हरत्वविकलं—श्रीद्वादशांगी नदीः ॥ ४ ॥ कृपाचंद्रसूरिं नौमि, गछखरतरान्वितं, । स्याद्वादविधिविद्वांसं श्रद्धालुजनसेवितम् ॥ ५ ॥ जयतिश्रीमदानंदमुनिः मौनव्रतसमायुक्तः । मुनिगणनृपभसमं स वुधरत्नः गुणगणखनिः ॥६॥ तत्प्रसादमाधाय, किंचित्संयोजितं मयका, तेन लभन्तु लोकाः, मद्बोधिरत्नाः चिराच्छिन्नम् ॥ ७ ॥ चित्रचरित्रं गुरूणा ॥ शृण्वन्तु भो भव्या सादरा संतः प्रदत्तैकावधानाः ॥ अचिरान्मौख्यं प्रपद्यंतु ॥८॥

अहो सज्जनो सावधान होकर सुणो, एकावतारी जैनसघ याने जैन कोमके उत्पादक स्तंभभूत श्री वीरशासनमे श्री उद्योतनसूरिजीके हाथमें जो गच्छस्थापन किये गये उनोंके परम पूजनीक चोरासीगच्छोंको अलंकृत करनेवाले, प्रायें करके समस्त जैन प्रजाओंकी वृद्धि करनेवाले,

अतः चोरासीगच्छोंमे चक्षुतिलक स्थूणा जिहाज सार्थवाह निर्यामक-समान चारित्रपात्रचूडामणि अनेक चारित्रहीन सिथलाचारी आचार्योंको और साध्वादि संघको सुविहित चारित्र और सुविहित्त विधिमार्गमे प्रवर्त्तनेवाले, प्रायें लुप्तप्राय सद्विधिकों प्रगट करनेवाले, तीर्थंकर प्रतिरूप श्रीगौतम श्रीसुधर्मादि अवताररूप श्रीसीमंधरस्वामीके मुखार-विंदसें निर्णय हुवा है एकावतारीपणा जिणोंका अर्थात् एक भवकरके मुक्तिनगरीमें जानेवाले, युगप्रधान पदसें विभूपित ऐसे अनेक क्षत्रिय वैश्य ब्राह्मणादिक महर्द्धिकलोकोकों प्रति बोधके जैनकोम बनानेवाले दस दसहजार कुटुंब सहित बोहित्थ कुमारपालादि ४ राजाओंको १२ व्रत सम्यक्तसहित धरानेवाले औरभी भाटी पडिहार चहुआण पवाँर देवडा राठोड आदिराजाओंको जैनधर्मतर्फझुकानेवाले, जैनधर्म जैन प्रजाकेऊपरआये हुवे अनेक तरहके उपद्रवोंको दूर हटानेवाले, विक्रम-पुरमें १२०० साधु साधवीयां को दीक्षादेनेवाले, १ लाख तीस हजार घरकुटुंबको प्रतिबोध देनेवाले, अनेक मिथ्यात्वी देवीदेवताओंसें जैन-धर्मकी सेवाकरानेवाले, भवनपति व्यंतर जोतिषि वैमानिक इन ४ निकायके अनेक सम्यग्दृष्टि देवी देवताओंसें सुसेवित होनेवाले, श्रीसू-रिमंत्रके वलसें धरणेंद्रादि ६५ सूरिमंत्राधिष्टायकोंको आकर्षणकरनेवाले, परकायप्रवेशादि विद्यानिपुण, और चितोडनगरीमें श्री चिंतामणिपार्श्व-नाथ स्वामिके मंदिरमें गुप्तरहिहुइपूर्वाचार्यसंबंधि अनेक विद्याम्नायसें भरीहुइ आम्नाय पुस्तक विद्यावलसें ग्रहणकरनेवाले, उज्जेणी महा-काल मंदिरके स्तंभमें पूर्वाचार्योंने गुप्तसुरक्षितपणें विद्याम्नाय पुस्तकें

रखीथी, तिसके अन्दरसें १ विद्याम्नाय पुस्तक श्रीसिद्धसेनदिवाकरनें ग्रहणकरी थी, तिस महाकालमंदिरस्तभगत विद्याम्नाय पुस्तककों विद्यावलसें आकर्षणकर ग्रहण करनेवाले, और अनेक देव एकसो आठ जातिके भैरव, ५२ प्रकारके क्षेत्रपाल विमलेश्वर पूर्णभद्र माणिभद्र कपिल पिंगल कुमुद अजन वामन पुष्पदत जय विजय जयन्त अपराजित तुवरु खट्वाग अर्चि-मालि कुसुम अग्निकुमार मेघकुमार गोमुखादि २४ यक्ष सेलयपर्वतवासी क्षेत्रपाल, सिधुगतपचनदी अधिष्ठायक पचपीरादिदेवगणसे सेवितहोने वाले, चक्रेश्वरी आदि २४ यक्षणी, धृतिलक्ष्मी आदि २४ महादेवी, १६ रोहिणीआदि विद्यादेवी, सरस्वती, श्री लक्ष्मी धृति कीर्ति बुद्धि ह्री ६ देवी पद्मा जया विजया अपराजिता वैरोट्या जया विजया जयन्ती अपराजिता जभा स्तभा मोहा अंधा गगा रभा चोसठ्ठयोगिणी आदि देव देवीगणसें सेवित होनेवाले, अनेक विद्या ह्रीं विद्या परमेष्ठीविद्या आचार्यमंत्रविद्या वर्धमानविद्या परकायप्रवेशविद्या सकुनिविद्या दृशविद्या अदृशविद्या रूपपरावर्त्तिनीविद्या आकर्षणी, मोचनी, स्तभिनी, तालोद्घाटिनी, सजीविनी, खेचरी, सरसवस्वर्णसिद्धि आकाशगामिनी, वैक्रियादि विद्याओंसें अणिमादि अष्टसिद्धिओंमें सेवित होनेवाले, अति-वृष्टि अनावृष्टि आदि ७ ईतियाँ स्वचक्र परचक्रादि ७ भयसे प्राणिगणको मुक्तकरनेवाले, स्वसिद्धान्त परसिद्धान्त पारगामी कठविराजित सरस्वती दादा जगमे श्री जिनदत्तसूरींद विघ्नहरण मगलकरण, सपतकरण, करो पुण्य आणद एसे महाप्रभाविक पुन्यपवित्र चारुगात्र अतिशुद्ध मोक्ष-मार्गके आराधन करनेसें और पूर्वभवोपार्जित अतिशुद्ध युगप्रधान-

प्रद्के परिपाकसें स्वर्ग मृत्यु पातालवासी सर्व जीवजिणोंकी आणा
स्वशिरपर धारनेवाले भये, और सर्वोत्कृष्टपणें श्री वीरशासनकी प्रभा-
वना करनेवाले ऐसे परम पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय जंगमयुगप्रधान
श्रीमज्जिनदत्तसूरिजी महाराज वडेदादासाहेबका आमूलचूलापर्यन्त,
इतिहासरूप, यहचरित्र सिद्ध हूवाहै, सो सहर्ष सादर आपलोकोंके कर-
कमलोंमे पूर्वार्ध प्रथम भाग रूप श्री पूज्यपादका चरित्र समर्पण करता
हुं सो इसकों दत्तावधान होकर एक चित्तसें पढें, और श्रीगुरुमहारा-
जकी भक्तिमें लयलीन होवें, भवसागरका पार पावें इत्याशास्महे उ ।
जयसागर गणिः ॥ यह पूज्यपाद आचार्य महाराज कबसें कबतक
विद्यमानथे, इस शंका पर पूज्यपादश्रीका सत्ता समय देखातें है, श्री
वीरात् १६०२ विक्रमार्क ११३२ जन्म, वीरात् १६११ वि० ११४१
दीक्षा, वी० १६३९ वि० ११६९ आचार्यपद वी० १६८१ वि०
१२११ स्वर्ग सर्वायु ७९, जन्मस्थान, दीक्षास्थान, धवलकपुर, प्रतिबो-
धक चारित्रोदयमें सहायक गीतार्था धर्मदेवोपाध्यायसत्का श्रीमती
आर्या, दीक्षागुरु धर्मदेवोपाध्यायाः, बृहद्गच्छीय खरतरविरुदधारक
श्रीमज्जिनेश्वराचार्य सुशिष्याः, श्रीपूज्यपादके मातुश्री का नाम श्रीमती
बाहडदेवी, पितृनाम श्रीमद् वाछिगमंत्रीश्वरः, हुंवड गोत्रीयः श्रीमतां
विद्याभ्यास पंजिकादिरूप लक्षणादि शास्त्र जैन भावडाचार्यसे, और
श्रीआवश्यकादि सूत्र सिद्धान्त योगविधि पूर्वक स्वगुरु समीपे पढे,
सूरिपद प्राप्तिस्थान, चित्रकूट दुर्ग, आचार्यपद चितोडगढमे, स्वर्गारो-
हणस्थान हर्षपुर याने अजमेर, १२११ में श्रीवीरात् चुमालीसमेपाटे

श्रीसुधर्मात् तेंतालीसमेपाटे मुख्यशाखामे नवागवृत्तिकर्त्ता श्रीजिनाभयदेव सूरिसुशिष्यः श्रीमज्जिनवल्लभसूरिजीके पट्टकों अलंकृतकरतेथे, इसतरे सर्वायु गुणयासी (७९) वर्षकापालके १२११ आषाढ सुद ११ गुरु सौधर्ममेगये इत्यादि विशेष अधिकार तो गणधरसार्ध शतकादिकसें जाणना, तथाचोक्त युगप्रधानपदभृत्, श्रीजिनवल्लभसूरयः सूरिः श्री-जिनदत्ताह्वः । तेषां पट्टे दिदीपिरे ॥ १ ॥ युगप्रधानपदभृत्, सूरिः श्रीमज्जिनदत्ताह्वः। श्रीवीराचतुश्चत्वारिंशत्तमे पट्टे च समभवत् ॥२॥ इति सूरिसत्तासमयः ।

श्रीवीरात्सुधर्म्माच्च, वेदाग्नि ४३ वेदधर्म ४४ तमपट्टे, युक्ते समभवन्पूज्याः श्रीजिनदत्तसूरय· ॥ १ ॥ श्रीसद्गुरुके शोभननामाक्षरोको धारन करनेवाले श्रीवीरशासनप्रभावक श्रीगुरुमहाराजके नामाक्षरोंको सत्यार्थ शोभित करनेवाले श्रीवीरशासनमे यथार्थसिद्धान्तरहस्यार्थ जाणनेवाले, शुद्धप्ररूपक, शुद्धश्रद्धानयुक्त भिन्न भिन्नगच्छोमे अनेकाचार्य हूवेहैं, आगे इस पचम आरेमे श्रीसुगुरुके नामाक्षरोंको यथार्थ सत्य-शोभितकरनेवाले, आचार्य महाराज निसंदेह होनेवाले हैं और श्री सद्गुरुका नाम हि ऐसा प्रभावशाली है, इस लिये श्री गुरुके नामकाहि निरन्तर स्मरण ध्यान भव्योंको कल्याणकारि है इसमे अहो सज्जनो सादर भक्तिभावपूर्वक निरन्तर तुम एक श्रीगुरुमहाराजके नामका स्मरण करो इस भवमें योगक्षेम परभवमें स्वर्ग अपवर्गादि सर्व संपदाको प्राप्त होवोगे इत्यल विस्तरेण श्रीमान् चरित्रनायक पूज्यपादका पट्टक्रम न्यास इसतरे है, तथाहि—

१ श्रीवीरवर्धमानः
२ श्रीइन्द्रभूतिसुधर्मौ १
३ श्रीजंबूस्वामी २
४ श्रीप्रभवस्वामी ३
५ श्रीशय्यंभवसूरिः ४
६ श्रीयशोभद्रसूरिः ५
७श्रीविजयसंभूतिसूरिः६
८ श्रीभद्रबाहुसूरिः ७
९ श्रीस्थूलभद्रसूरिः ८
१० श्रीआर्यमहागिरि-सूरिः ९
११ श्रीआर्यसुहस्ति-सूरिः १०
१२श्रीसुस्थितसुप्रतिबद्ध-सूरिः ११
१३ श्रीइन्द्रदिन्नसूरिः १२
१४ श्रीदिन्नसूरिः १४
१५ श्रीसिंहगिरिसूरिः १४
१६ श्रीवज्रसूरिः १५
१७ श्रीवज्रसेनसूरिः १६
१८ श्रीचंद्रसूरिः १७
१९ श्रीसमंतभद्रसूरिः १८
२० श्रीदेवसूरिः १९
२१ श्रीप्रद्योतनसूरिः २०
२२ श्रीमानदेवसूरिः २१
२३ श्रीमानतुंगसूरिः २२
२४ श्रीवीरसूरिः २३
२५ श्रीजयदेवसूरिः २४
२६ श्रीदेवानंदसूरिः २५
२७ श्रीविक्रमसूरिः २६
२८ श्रीनरसिंहसूरिः २७
२९ श्रीसमुद्रसूरिः २८
३० श्रीमानदेवसूरिः २९
३१ श्रीविबुधप्रभ-सूरिः ३०
३२ श्रीजयानंदसूरिः ३१
३३ श्रीरविप्रभसूरिः ३२
३४ श्रीयशोभद्रसूरिः ३३
३५ श्रीविमलचंद्रसूरिः ३४
३६ श्रीदेवसूरिः ३५
३७ श्रीनेमिचंद्रसूरिः ३६
३८ श्रीउद्योतनसूरिः ३७
३९ श्रीवर्धमानसूरिः ३२
४० श्रीजिनेश्वरसूरिः ३९
श्रीबुद्धिसागरसूरिः
४१ श्रीजिनचंद्रसूरिः ४०
४२ श्रीजिनाभयदेव-सूरिः ४१
४३ श्रीजिनवल्लभसूरिः ४२
४४ श्रीजिनदत्तसूरिः ४३
४५ श्रीजिनचंद्रसूरिः
४६ श्रीजिनपतिसूरिः
४७ श्रीजिनेश्वरसूरिः
शाखांतरमें
श्रीजिनसिंहसूरिः
तत्पट्टे श्रीजिनप्रभसूरिः

विशेष खुलासापूर्वक निर्णय चरित्रसें अथवा गणधर सार्धशतकसें जाणना और यहां चरित्रके आदिमे शोभायमान चरित्रनायकके गुरुवर्यका तथा श्रीमान् पूज्यपादश्रीमज्जिनदत्तसूरिजीमहाराजका यथार्थावबोधकसचित्रजरूर देना अत्यावश्यक है और निष्कारण परमोपकारी श्रीमान् दादासाहिब जब कि इसमनुष्य लोकमे विद्यमान थे, तब जैनधर्मानुरागी भव्योंकी वृद्धिकरनेवालेथे, और अनेकतरहकी संपत्तिकों प्राप्तकरानेवाले, अनेकतरहकी विपत्तिका नाश करनेवालेथे, और जैनधर्मद्वेषी प्राणिगणके तरफसें

केरी हूइ धर्मकी हानिरूप दूषणरूप आश्चर्यरूप वा चमत्कारप्रवृत्तिरूप अनेकतरहके दोषोंको दूर हटाकर असद्वापत्तियोंका नाशकरनेवालेथे, श्रीवीरशासनका स्तंभभूत महान् समर्थपुरुषभये, तिसकारणसें सर्वत्र हिन्दुस्थानमे याने आर्यावर्त्तखंडमे हरेक राजधानी हरेकशहर हरेकग्राममें सर्वत्र चरण स्थापनाभईहै, और मूर्तिभि कहाकहाहै यह आचार्यश्रीके स्वर्गारोहण अनंतरहि मणिधारि श्रीजिनचंद्रसूरिजीभि अत्यंतउपगारी भये इसीसेंहि चरित्रनायक बडेदादासाहिबके नामसें श्रीजैनसंघमें प्रसिद्ध भया है, इसलिये सर्वगच्छका श्वेताम्बर जैनसंघ वगेरह अभेदबुद्धिसें मानते पूजते स्मरणकरते कराते आयें हैं, और इससमय कितनेक जैनभाइ दृष्टिरागीगुर्वोंके उपदेशसें भेदभाव रखतें हैं, भेदभाव करतेंहैं, करातेंहैं, सो लाजिम नहींहै, किंतु उनोकी भूलहै, सो सुधारलेनी चाहिये, यह उनोंके आत्माका परात्माओंकाभी कल्याणहै, और यह कुतर्क कुशकार्य नहिंकरनी चाहिये, श्रीगुरुका अवर्णवादरूपनिंदाहै, और भोले भद्रीक जीवसंदेहरूप भरमजालमेंगिरतें हैं, तथाहि—दादाजीका काउस्सग्गक्योंकरतेहो, करते हो तो दूसरे आचार्योंकाहि करो, श्रीगौतमस्वामिका और श्रीसुधर्मस्वामिकाभी करो, वेभी परमोपकारी है, श्रीस्तंभनपार्श्वनाथजी काहि निरंतर परमोपकारी पणेंसें चैत्यवंदन करते हो तो श्री महावीर स्वामिकाभी आसन्नोपकारीपणेंसें करो, बोल्वा बोलतें हैं गोंरणी करते है उसमेसें थोडाक भाग चढायदेतेहो बाकीसब वैचदेते हो या खायजाते हो, यह तो सर्वाहि गुरुद्रव्यहै, तो श्रावक केसा खायसके, इत्यादि अनेकतरहकी कुयुक्तिया दृष्टान्त देकर देव गुरु धर्मकी भक्तिभावमें प्राणियोंका परिणाम हीयमान करतें हैं, करवाते है, उन प्राणियोंने जन्मान्तरमें कडवाफल होने-

वाला है, अहो सज्जनो ऊपरोक्त कुतर्क कुशंका कुसंगत कुदृष्टिराग कुग्राह कदाग्रह पक्षपात स्थित्यादिकका त्यागकरके शुद्ध प्ररूपक गुणयुक्त सुगुरुके उपदेशसें यथा संप्रदाय सिद्धान्तानुसार सुविहितविधिमार्गमें प्रवृत्ति करो शुद्ध सूत्रार्थ पाठ उच्चारणसहित प्रधानभावपूर्वक श्रीदेवगुरु धर्मकी त्रिकरण योगसें आराधना निरन्तर करो जिससें इसभवमें परभवमें सर्वोत्कृष्ट सुख प्राप्त हो और ऊपर देखाई हूइ कितनीक कुशंकाओंका परिहार यथाअवसर यथासंप्रदाय समाधान युक्ति हेतु दृष्टान्तपूर्वक करदीया जावेगा, इहांपर प्रस्तावना जादा वढजावै इस्सें नहिं लिखा है, इत्यलं पल्लवितेन, और इहांपर चरित्र लेखकके गुरुवर्यका यथार्थ सचित्र और चरित्र लेखकमुनिगण वृषभः पं० श्रीमान् आनंदमुनिजीमहाराजका सचित्र देना अत्यावश्यक है, नम्रशिरोहि इति विज्ञपयति जयमुनिः ॥ अथ ग्रंथलेखकः स्वगुरुचरित्र परिचयं संक्षिप्तमात्रम् दर्शयति ॥ तथाहि देश मरु राजधानी जोधपुर राजा श्रीमान् तखतसिंहजी विजयराज्ये जोधपुर जिल्हे पश्चिम भागमे वरग्रामहै, उसका नाम चतुर्मुख याने चामुं है, पिताकानाम श्रीमेघरथ गोत्र वाँफणा वृद्ध शाखा ज्ञाति ओशयाल, मूल वंश ऊकेश, माताकानाम श्री अमरादेवी जन्म १९१३ जन्म नाम श्रीकीर्त्तिचंद्रकुमारः किसीसमय शहर आनाहूवा, तत्र श्रीमती आर्या धर्मश्रीजीके समागमसे मातासहितपुत्रकों प्रतिबोधहूवा, वहसाल याने वर्ष १९२६का था, उससमय आपश्रीकी अवस्था करीव १३ वर्षकीथी, तिससमय आपश्रीकी भवविरक्ति परिणति भइ, परन्तु **पढमंनाणं तओदया, एवं चिट्ठइ सव्वसंजए, अन्नाणी किं काही, किंवा नाहीइ, छेअपावगं, १०सोच्चाजाणइ कल्लाणं, सोच्चा जाणइपावगं, उभ-**

यंपि जाणइ सोचा, जंसेयं तं समायरे ११ ज्ञानक्रियाभ्याम् मोक्षः, सच सर्वकर्मक्षयरूपोमोक्षः सर्वकर्मक्षयश्च सम्यग्ज्ञानपूर्विकयाक्रियया-विना न भवति, तत्सम्यग्ज्ञानं क्रमायातसुगुरुसमीपे अभ्यसनात् भवति इति अध्यवस्यता तेन कथितं, आर्या प्रति, हे भगवति मां सुगुरुसमीपे शीघ्रं प्रेषयतु इत्यादि अर्थः पहिलाज्ञानपीछेक्रिया सवरूप-होवे, इसतरे सर्वमुनिरहे, षड्द्रव्यके ज्ञानविना मुनि नहोवे, द्रव्यमें मस्तक मुडाकर घरवासका त्यागकर जंगलमेरहेणेसे मुनि न होने नाणेण मुणि होइ, न हु रणवासेणं इसवचनसें सम्यग्ज्ञानसेहिमुनिहोतेहै' केव-लवेषमात्रसे मुनि नहिं होवेहै, किन्तुयथार्थसत्यासत्यबोधजनकसम्यग्ज्ञान-सेहि सर्वेष्टसिद्धि होवेहै' इसवास्तेकहाहेकि सम्यग्ज्ञानसहितसम्यक् क्रिया-सेहिमोक्षहोवेहै अर्थात् सर्वकर्मोंसे रहित जीवहोवेहै और वह मोक्ष सर्व-कर्मक्षयरूपहै, सर्वकर्मका क्षय तो सम्यग्ज्ञानसहितक्रियाविना प्राये नहिं सभवेहै' वहसम्यग्ज्ञानअविछिन्नपरपरामेंआयेहूवे, सुगुरुकेपास अभ्यास करणेसें होवे, एसाविचार करतेहूवे कुमरनें साध्वीजीसे कहाकि हे भगवति मुजकों शुद्धस्वरूपकसुगुरुकेपास विद्याभ्यासकरनेके लिये जलदि भेजो, साध्वीनें समजाकि यह कोइ विनयसहित पूर्वभवारा-धितज्ञानचरणशीलजीवहै, इसलिये इसकेयोग्यसुगुरुगछमे कोण है, यह उपयोग देके इसके योग्य श्रीसमुद्रसोमजीके सुशिष्य इसकुमा-रकेयोग्यसुगुरुहै, उनोकेपासहि विद्याअभ्यासकेलिये भेजना टीक है, यहविचारके और माताकों पूछके, अछे मूहुर्त्तमे श्रीबीकानेररवाने करा, क्रमसें चलतेहूवे, चैत्रसुद ३ के रोज सुगुरुके पास हाजिर हूवा, और श्रेष्ठमुहूर्त्तमें विद्याभ्यास करना शुरुकरा, धार्मिक

व्यावहारिक संस्कृतव्याकरणादिकग्रन्थपढलिखके हूसियारभया, तब गुरुमहाराजनें जैनसिद्धांतपढाणेयोग्य जाणके, संवत् १९३६ की सालमें आषाढ शुदि १० को यतिसंप्रदायिक दीक्षादी, कारण के पात्र आनेपरअनवसरमेभि सिद्धान्तवाचना देना एसाभि सिद्धान्तमें अपवादमार्गसें माना है, कुशिष्यादिकों वाचना देना उनोंकेपासमें वाचना लेना सर्वथा निषेध किया है, अविनीत निरंतरविगईभक्षी उत्कटक्रोधी दुष्ट मूर्ख व्युदग्राहित अन्यतीर्थीग्रस्त परिव्राजकादिक, स्वतीर्थीग्रस्त पासत्थादिक उनोंको वाचनादेना उनोंकेपाससें वाचनालेना करेतो साधु प्रायच्छित्त पावे ऐसा छेद श्रुतमे लिखा है, इत्यादिक विचारके, बहुश्रुत गीतार्थ श्रीगुरुमहाराजनें सांप्रदायिक-दीक्षा देके सिद्धांतोंकी वाचनादी, उससमय आपकी अवस्था करीब २३ सालकीथी जब व्रतग्रहणकिया, सर्वसिद्धान्तोंकी क्रमसें वाचना ग्रहण करके स्वसिद्धान्तमें अत्यंत निपुण भये, तब श्री गुरुमहा-राजसहित शुद्ध सिद्धान्त विध्यनुसार क्रियोद्धार करणेका परिणाम भया, तब पर सिद्धान्तोंका अवगाहन करते हूवे, दर्शनशुद्ध्यर्थ अनेक देश अनेक शहर ग्रामादिकमे जिनेश्वरका दर्शन करते हुवे, पूर्व देश तीर्थोंकी जात्रा करते हूवे अंतरिक्षपार्श्वनाथतीर्थ कुलपाकतीर्थ केसरियाजीतीर्थ श्री गुर्जरदेशीयतीर्थ मांडवगढ मकसी सामलीया अवंती विवडोद ना-कोडा लोद्रवा कापेडा फलोधीपार्श्वनाथ मेदनीपुर जवालीपुर करेडा अद्भूतशांतिनाथ देवलवाडा चित्रकूट राजनगर लघुमरुभूमिसंबंधि अनेकतीर्थ आवु प्रभास वलेच मांगरोल जामनगर गिरनार तीर्थ ओसीयां इत्यादि अनेक जिनगणधर मुनि आदि जन्मदीक्षा ज्ञान समवसरण चतु-

विंध संघस्थापन निर्वाण आदि अनेक कल्याणक भूमियोंमे प्राचीन साति-शायितीर्थभूमियोंमे परिभ्रमणकरते हूवे और भी अनेक तीर्थपूर्व देशीय गुर्जर बृहत्मरु लघुमरु कच्छ काठियावाड कोंकण लाट वढियार मालव छत्तीसगढ वराड मेवाड सिंधुसौवीर पंचालादि अनेकतीर्थोंकी जात्रा करते हूवे, और अनेक शहर ग्रामादिकमे अनेक प्राचीन अर्वाचीन श्री जैनमदिरोंके दर्शन शुद्ध भावसें करते हूवे, श्री शत्रुंजयादि तीर्थ भूमि और कल्याणकादितीर्थभूमियोंको स्पर्शन करके आपश्रीने अपनें शरीर और आत्माको पवित्रकिया, यथार्थ शुद्धसिद्धान्तका अवगाहनकरके निर्वद्यभापा-के स्वीकारपूर्वकशुद्धप्ररूपणाकरणेकरके अपने वचनकों पवित्रकिया पचमहा-व्रत की २५ शुभभावना तथा अनित्यादि १२ भावना मननकरके अपने-मनकों पवित्र कीया और दानशीलतपजपसयमादिकरके त्रिकरणयोगकों पवित्रकिया और यथार्थपणें परसिद्धान्तोंका अवगाहनकिया, षड्दर्शनका प-दार्थ यथार्थ जाणा और परमार्थ ग्रहणकिया और स्वसमय परसमयका अध्य-यनकरके, और प्राचीन अर्वाचीनसातिशयितीर्थभूमियोंको और कल्याण-कादि तीर्थभूमियोको स्पर्शकरके अपने समकितकों निर्मलकिया, विनया-दियुक्तज्ञानग्रहण और शुद्ध प्ररूपणाकरके ज्ञानकों निर्मलकिया, आलोयण प्रायश्चितशुद्धभावसें, शुद्धव्रतग्रहणकरके अखंडपालनेसें चारित्रकों निर्मल-किया, बाह्यरहित बाह्यअभ्यतर इच्छानिरोधरूपयथाशक्तितपकरके, अ-नंततपरूप आत्मगुणकों निर्मलकिया, और सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रतपरू-पमोक्षमार्गकों देशकालादिकके अनुसारे यथाशक्ति आराधनकरना यहि म-नुष्यभवका सारहै, इसीलिये आप श्रीने सम्यग्ज्ञानसहिततपसंयम आराध-नपरनेपर दृढ निश्चय किया, और आप श्रीने अहोरात्रिकसाध्वाचार विचार

नित्यक्रियाकांडरूपचारित्रकी तुलना करनाभी चालु करदीया, आप श्रीका आसरे ३५ वर्षका विद्याभ्यासमे परिश्रम है, स्वसिद्धान्तपरसिद्धान्तका हदपर्यंत कालसें ६१ की सालपर्यंत परिपूर्णज्ञान हासिलकर विराम कियाहै, और तीर्थ विद्या शास्त्र गुण कला देश सहर ग्रामदिक देशकालानुसार यथाशक्ति परिश्रमके आधारपरतो आप श्रीके परिचयमे आया नहो एसातो विरलाहि प्रायें होगा, और आपश्रीका अष्टप्रवचनमाताविषयि उपयोग स्मरणशक्ति व्याख्यानशैली प्रश्नोत्तरपद्धति प्रत्युत्तरशक्ति हेतुदृष्टान्तयुक्ति विरोधखंडन विसंवादसमन इन्साफ युक्तायुक्त विवेचन पंक्तिउच्चारणविनाअर्थशक्ति वचनलाघवादि और धीरकान्तादि अनेक गुण यथार्थपणें वर्त्तमानसमय विद्यमान है, और इससमय तो ऐसा गुणी पुरुष हिंदुस्थान याने आर्यावर्त्तखंडमें दूसरा कमहि होगा और इससमय श्रीजैनधर्म उपदेशक आचार्य एकसें एक गुणाधिक है, परंतु देशकालानुसार सर्व गुणगणालंकृत ऐसे विरले पुरुष होते हैं, और श्रीजीकी यतिसांप्रदायिकपर्यायमे वर्ष ९ रहना हूवा सो केवल स्वसिद्धान्तपरसिद्धान्त अवगाहन निमित्तहि रहना हूवा, ४५ के साल नागपुरमे क्रियाउद्धार कीया और जिसमेभी ७ वर्षतो भावचारित्रपर्यायतुलनामेहि रहै, फक्त एक रेलका संघट्टाखुलाथा, उससमय आप श्रीरायपुरसहरसे (२)दोमंदिरोकी प्रतिष्ठाकरी और नागपुरसहरसें विराजमानथे, इसलियेहि इतना बाकीरखाथा, कारण कि वह देश विहारका न होनसें, उससमय आपश्रीके श्रीगुरुमहाराजका सहवासयोगथा, बादमे ४१ सालने चेत सुदी १५ को आपश्रीके गुरुमहाराजका वियोग हुवा तबहिसें जादातर संवेग परिणति वढतिहि रहि, बाद श्रीमान् कपूरचंद-

जी महाराजका आशीरवाद मिला तदनतर उनोंके पत्रमें श्री इन्दोरके श्रीसघने आगमश्रवणनिमित्तआपश्रीकों नागपुर विनतीपत्र भेजा तब नागपुरमे आपश्री पन्नवणासूत्रवृत्ति प्रवचनसारोद्धार प्रकरणवृत्ति वाचतेथे, सो पूर्णकरके, वाद आप श्री इन्दोर पधारे वहा श्रीसघके आग्रहसें परउपगारार्थ ४५ आगमोंकीवाचना मे कितेनकभगवतीपन्नवणा आवश्यकवृहद्वृत्ति १० पवन्नानदीवगेरह वाचे,वादकुछकालतक विचरतेरहै,अमदावाद पालीताणा गिरनार सखेमर भोयणी तारगाजी विव्रडोद सेमलीयाजीऍवतीजी मकसीजीवगेरा जात्रा करतेहूवे तराणेकायथे पधारे, और वहा आपने वहुत उपगारकिया, वाद आपनें श्रीधुलेवाजीकी जात्राके लिये उपदेश किया, वहउपदेश कायथेवालोनें मिलकरमजूरकिया, अन्दाजन ४०–५० आदमीयोंकि साथ आप श्री धुलेवा पधारे, वादमे आपश्रीनें ५२ की सालका चोमासा उदेपुरकिया, तवमुनिराज दोठाणा थे, सेर वाडेके मदिरकी प्रतिष्ठा करी पचसमितितीनगुपतियुक्त साधुमुनिराजविचरतेभये, वाद यथार्थ साध्वाचारकों पालतेरहै, चोमासे वादक्रमसें विहारकरतेहूवे, आप श्रीदेसुरी पधारे, और गोढवालमे उपदेशकरके नाडलाइ वगेरेके मदिरोंका जीर्णोद्धारका उपदेश कीयाऔरभया वाद त्रेपनकी सालका चोमासा देसुरी किया, वाद ५४–५५–५६–५७–५८ जोधपूर मे भगवतीवांचीजेसलमेरभगवतीवा० फलोधिमें भगवतीवा० वीकानेरमें ठाणागवृत्ति जेतारणमें भगवतीवाची क्रमसे चोमासे किये,वाद गोढवालसथवि मोटी छोटी पचतीर्थीकी जात्राकरतेहूवे, जालोर आहोर गडे कोटडे पावटे जात्रा करतेहूवे, आनदमुनि जय मुनि नामक साधु २ सहित आप श्री सिवगजपधारे, और वहा श्रीफूलचदजी गोलेछाका फलोधीमें सघ आया

उसकेसाथ श्रीसिद्धाचलजी छह(६)साधुसैं पधारे सं० १९५९ मे चैत्री पूनमकी जात्राकरी, बाद महूवा दाटा तलाजावगेरे जात्राकरी, बादबह ५९ सालका चोमासा पालीताणे किया, बादविहारकरतेहूवे श्रीगिरनार वनस्थली मांगरोळ वैरावल प्रभासपाटण वलेच पोरबंदर भाणवड जामनगर जात्राकरके पीछे पोरबंदर आये और ६०की सालका चोमासा पोरबंदर किया जीवाभिगमवांचा सदापर्युपण जैसा वरतताथा, चोमासे बादविहारकरते हूवे गिरनार सेत्रुंजय जात्राकर नवागांव सणोसरापालि-यादसुदामडासायला थान वांकानेर मोरवी होते हूवे, मालियाका रण उत्तरके,कछअंजारगये,भद्रेसरतीर्थकी मेलेपर जात्राकरी, कछमुंद्रा उत्तराध्य यन कछ भुज भगवती कछ मांडवी पन्नवणा कछभिदडा–भगवती वांची भाडिया, कछअंजार, ६१–६२–६३–६४–६५ क्रमसें यह ५, चोमासा किया, सुथरी घृतकल्लोलतीर्थ जखाऊ नलीया तेरा कोठारा वगेरे जात्राकरी, हरसाल ५ वर्षतक उपधानतप हूवा, एकंदर कछ देशमें साधु साधवीयाकी १० आसरेदीक्षाहूइ, और ६५ की सालमे कछमांडवीका नाथाभाइ वजपालकासंघछहरी पालता निकला उसके साथ श्रीसिद्धगिरिजीकी जात्रा१७ठाणेसाथकरी, और६६कीसालका चोमासा पालीताणे किया नंदीसरद्वीपकी रचना भइ साधु२साधवीओं३की दीक्षा-५भइ बाद गिरनारकी जात्राकरी,६७की सालका चोमासा जामनगर किया, भगवतीवांची समवसरणकी रचना उछव पूजा प्रभावना उपधान तपदीक्षा ४ वगेरे हूवे, बाद ६८ का चोमासा मोरवी किया, भगवती व्याख्या-नमें वांची बाद गीरनारसत्रुंजय संखेस्वर भोयणीयात्राकर६९का चोमासा अहमदावाद कोठारीपोल नवाडपासरामे किया,चोमासैबाद पानसर भोयणी

तारगाजी होते हुवे वीसनगर वडनगर लाडोल विजापर माणसा पीथापुर देगाम कपडवज महूधा खेडा श्रीसघादेवमातरमे, संभातमे श्रीस्तभणापार्श्वनाथ स्वामिकीजात्राकरी, बाद ७० का चोमासा रतलामवालासे ठाणीजी सेठ श्रीचांदमलजीकी धणियाणी के आग्रहसें पालीताणे किया, भगवती शत्रुजय महात्मवाचा उपधानतप पूजा प्रभावना सामीवत्सलवगेराहूवे, बाद सीहोर वरतेज भावनगर घोवा तणहो तापस तलाजा जामवाडी श्रीशत्रुजयकीजात्राकरके क्रमसें विहारकरते हूवे वलेमे १ साध्वीकी दीक्षाभइ, खभायत आये, तवसुरतसें जव्हेरी पाना भाइ भगुभाइ वीनती करणेकों आये, तब उनोंकी वीनती मानकर सुरततरफ विहार किया, क्रमसें वडोदा पालेज जिनोरहोते जगडीयाकी जात्राकरते हूवे मार्गमे १ साधुहुवा सुरतपधारे प्रवेश उत्सव साथ गोपीपुराके नवा उपासरामे पधारे देशनादी, ७१ सालका चोमासा सुरतमें किया, नदीव्याख्यारमें वाचा १ साधुकी दीक्षाहुइ बाद विहार करके कतारगाम कठोर वगेरा फरसते हूवे, तीर्थ जगडीयापधारे, जात्राकरी, साडवे होके भरुअच्छकी जात्राकरी, बाद क्रममें पालेज पधारे, बाद वहासें आमोदजबूसर होते गंधार तथा कावीतीर्थोंकी जात्राकरके क्रमसें पादरा दरापरा पधारे परन्तु वहा अमाताके उदयसें, बुखार मुदती हूवा, परन्तु पन्यास आणंदसागरजीकी शास्त्रार्थके लिये आणेकी प्रतिज्ञाथी, तिसकारणपोषी १५ की म्याद पूरण करनेके लिया, आपश्री शहर वडोदाकेपास ५ कोसपर ठहरे हुवेथे, आगे विहार नहिं किया, प्रतिज्ञाहानिके भयसें, आपश्रीके ज्यादा तकलीफ होनेपरभी आपश्री स्वप्रतिज्ञा पर्यंत वहाहि रहे, परतु पडिताभिमानी वह पन्यास आणदसागरजी स्वप्रतिज्ञापर हाजरनहिं हूवा,

वाद वैद्यके आग्रहसें इलाजकरानेंकों शहरवडोदापधारे, वैद्यनें तनमनसें इलाज किया, तीन महिनेसें तवियत कुछ विहारलायक हूइ, तव मुंवईकी फरसनाके प्रवलतासें वैशाखमासमे वडोदासेंविहार किया, क्रमसें डभोइ सीनोर जगडीवा सुरत नवसारी विल्लीमोरा वरसाड वापीश्रीगांव देणु अगासी भयंडर अंदेरि महिम वगेरा गामोंकों फरसते हूवे, श्रीजिनमंदिरकों जात्रा- करते हूवे, श्री मुंवई शहर भायखलामें प्रथम पधारे वाद प्रवेशम- होत्सव के साथ लालवागमे पधारे, वहां हि आपका चोमासा सकारण दोय ७२–७३सालका हूवाथा, उससमय आप भगवती सूत्रवृत्ति भावनामे अभय कुमारचरित्र पांडवचरित्र फरमातेथे, उसवाणीकों आपके मुखारविंदसें श्रवण करतेंहि पूर्वसूरियोंका स्मरणहूवा तिसकारण श्रीमुंवई संघने सांप्रदायिक क्रमागत महोत्सवसहित यथाविधि सूरिमंत्रपूर्वक आचार्यद्वारा आचार्यपदमें स्थापितकिये, पौषी १५ पुष्यनक्षत्रे आठसें ११ पर्यंत समय मैं हुवे, मुख्यनाम श्रीमज्जिन कीर्तिसूरीश्वरः, अपरनाम श्रीमज्जिनकृपाचंद्रसूरीश्वरः नामसें प्रसिद्ध भये, उससमय भगवतीसमाप्त्यर्थ आचार्यपदनिमित्त पंचतीर्थोत्सव पंचपहाडरूप १६ दिनमहोत्सवसामिवत्सलप्रभावनावगेरा वहुतसें धर्मकृत्य हूवेथे, ७३ के चोमासेवाद माघ मासमे विहार किया, क्रमसे धीरे धीरेविहार करते हूवे, अगासी देणुं वापी दमण वलसाड गणदेवी होते हूवे, सुरत जिल्लेमे पधारे मार्गमें ३ साधुकी दीक्षाभइ तिस अवसरमे सुरत निवासनी कमला- गुलावनामकवाईने वुहारी पधारणेंके लिये विनती करी, वाद आप अष्टगांव सातम होते हूवे कडसलिये पधारे, वहांवुहारीसें मुख्यलोक आकर विनती करी, तवसवकी विनती मानकर, वुहारी पधारे उहां श्री

वासुपूज्यस्वामीका तीनमजलका देरासरमे ३ बिंब श्रीशीतलनाथस्वामी वगैरे ऊपरले मजलमे प्रतिष्ठितकरवाकर विराजमान वाई कमलाने किये, वादशातीस्नात्रकराइ, वाद संघने मिलकर चोमासेकेलिये आग्रहकियाथा १ दीक्षासाधुकी वाजीपुरेमेहुइ इसलिये ७४ कीमालका चोमासा बुहारीमें किया, २ दीक्षासाधुकी चोमासेवाद हुइ वाद फरमनासाथ कडसलीया सावम अष्टगाव नवसारी जलालपुर फरसते हूवे, सुरत पधारे, और सुरतमें वहुतसे धार्मिककारणोंसे ७५=७६ साल के दोय (२) चोमासे किने, ५ साधु २ साधवीकीदीक्षाभई जिसमे जवेरि पानाभाइ भगुभाइ वोथरागोत्रीयसुश्रावकने आसरे ३६००० रुपिया खरचके प्राचीन शीतलवाडीउपासरेकाजीर्णोद्धारकराया श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञानमदिर वधाया और प्रेमचदभाइ केसरिभाइ धमाभाइ मंछुभाइ वगेरे ने ऊजमणा किया, भूरियाभाइने यात्रियोके उतरणेकी १ धर्मशाला कराइ वाद विहार करते हूवे, कतारगाम कठोर क्रमसे जगडीया तीर्थमें श्रीरिपभदेवस्वामीके जन्मोत्सवकेदिनयात्राकरी सुकलतीर्थ जीनोर पाछापुरा पालेज मियागाव वगेरा स्थलोंकों फरसते हूवे, क्रमसें विहार करते हूवे, आपाढ वदि १० भृगुरेवतीके रोज शहर वडोदामें पधारे, और ७७ सालका चोमासा शहरवडोदामें किया, भगवतीवाची चोमासे वाद विहार करते हूवे छाणी वासद आणद नडीयाद मातरमें सचादेव खेडानगेरामें जिनदर्शनकरतेहूवे श्रीराजनगरपधारे, वाद नरोडा वगेरा होतेहूवे, कपडवजपधारे, वाद गोधरा देहद क्रमसे रंभापुर झाबुआ राणापुर पिटलाद कर्मदीहोतेहूवे मालवादेशमें शहररतलाम जेठमास के व० ४ कुं पधारे, यहा ७८ सालका चोमासा किया जिसमे भवगतीसूत्र वखाणमें वाचा उपधानतप साधु ३ साधवी-

वाद वैद्यके आग्रहसें इलाजकरानेंकों शहरवडोदापधारे, वैद्यनें तनमनसें इलाज किया, तीन महिनेसें तवियत कुछ विहारलायक हूइ, तव मुंवईकी फरसनाके प्रवलतासें वैशाखमासमे वडोदासेंविहार किया, क्रमसें डभोइ सीनोर जगडीवा सुरत नवसारी विह्लीमोरा वरसाड वापीश्रीगांव देणु अगासी भयंडर अंदेरि महिम वगेरा गामोंकों फरसते हूवे, श्रीजिनमंदिरकों जात्रा-करते हूवे, श्री मुंवइ शहर भायखलामें प्रथम पधारे वाद प्रवेशम-होत्सव के साथ लालवागमे पधारे, वहां हि आपका चोमासा सकारण दोय ७२–७३सालका हूवाथा,उससमय आप भगवती सूत्रवृत्ति भावनामे अभय कुमारचरित्र पांडवचरित्र फरमातेथे, उसवाणीकों आपके मुखारविंदसें श्रवण करतेंहिं पूर्वसूरियोंका स्मरणहूवा तिसकारण श्रीमुंवई संघने सांप्रदायिक क्रमागत महोत्सवसहित यथाविधि सूरिमंत्रपूर्वक आचार्यद्वारा आचार्यपदमे स्थापितकिये, पौपी १५ पुष्यनक्षत्रे आठसें ११ पर्यंत समय में हुवे, मुख्यनाम श्रीमज्जिन कीर्तिसूरीश्वरः, अपरनाम श्रीमज्जिनकृपाचंद्रसूरीश्वरः नामसें प्रसिद्ध भये, उससमय भगवतीसमाप्त्यर्थ आचार्यपदनिमित्त पंचतीर्थोत्सव पंचपहाडरूप १६ दिनमहोत्सवसासिवत्सलप्रभावनावगेरा वहुतसें धर्मकृत्य हूवेथे, ७३ के चोमासेवाद माघ मासमे विहार किया, क्रमसे धीरे धीरेविहार करते हूवे, अगासी देणुं वापी दमण वलसाड गणदेवी होते हूवे, सुरत जिह्लेमे पधारे मार्गमें ३ साधुकी दीक्षाभइ तिस अवसरमे सुरत निवासनी कमला-गुलावनामकवाईने वुहारी पधारणेंके लिये विनती करी, वाद आप अष्टगांव सातम होते हूवे कडसलिये पधारे, वहांवुहारीसें मुख्यलोक आकर विनती करी, तवसंवकी विनती मानकर, वुहारी पधारे उहां श्री-

वासुपूज्यस्वामीका तीनमजलका देरासरमे ३ बिंब श्रीशीतलनाथस्वामी वगैरे ऊपरले मजलमे प्रतिष्ठितकरवाकर विराजमान बाई कमलाने किये, बादशातीस्त्रात्रकराइ, बाद सबने मिलकर चोमासेकेलिये आग्रहकियाथा १ दीक्षासाधुकी वाजीपुरेमेहुइ इसलिये ७४ कीसालका चोमासा बुहारीमें किया, २ दीक्षासाधुकी चोमासेबाद हुइ बाद फरमनासाथ कडसलीया सातम अष्टगाव नवसारी जलालपुर फरसते हूवे, सुरत पधारे, और सुरतमें बहुतसे धार्मिककारणोंसे ७५=७६ साल के दोय (२) चोमासे किये, ५ साधु २ साधवीकीदीक्षाभई जिसमे जवेरि पानाभाइ भगुभाइ वोथरागोत्रीयसुश्रावकने आसरे ३६००० रुपिया खरचके प्राचीन शीतलवाडीउपासरेकाजीर्णोद्धारकराया श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञानमंदिर बधाया और प्रेमचंदभाइ केसरिभाइ धमाभाइ मछुभाइ वगेरे ने ऊजमणा किया, भूरियाभाइने यात्रियोके उतरणेकी १ धर्मशाला कराइ बाद विहार करते हूवे, कतारगाम कठोर क्रमसें जगडीया तीर्थमें श्रीरिषभदेवस्वामीके जन्मोत्सवकेदिनयात्राकरी सुकलतीर्थ जीनोर पाछापुरा पालेज मियागाव वगेरा स्थलोंकों फरसते हूवे, क्रमसें विहार करते हूवे, आषाढ वदि १० भृगुरेवतीके रोज शहर वडोदामे पधारे, और ७७ सालका चोमासा शहरवडोदामें किया, भगवतीवाची चोमासे बाद विहार करते हूवे छाणी वासद आणद नडीयाद मातरमे सचादेव खेडावगेरामे जिनदर्शनकरतेहूवे श्रीराजनगरपधारे, बाद नरोडा वगेरा होतेहूवे, कपडवजपधारे, बाद गोधरा देवद क्रमसे रंभापुर झाबुआ राणापुर पिटलाद कर्मदीहोतेहूवे मालवादेशमें शहररतलाम जेठमास के व० ४ शु पधारे, वहा ७८ सालका चोमास किया जिसमें भवगतीसूत्र वग्वाणमें वाचा उपधानतप साधु ३ साधवी-

२ की दीक्षावगेरा बहुतसे धर्मकृत्यहूवे, चोमासेबाद बांगडोद सेमलीया, सरसी जावरा रोजाणा रिंगणोद गुणदी ताल आलोट पधारे बाद पीछे रिंगणोद पधारे वै० व० ७ की यात्राकरी, बादशीतामहु में मानपुर ताल वगेरा होते हुवे महिदपुर पधारे वहां १ साधवीकीदीक्षा हुइ, बादक्रमसें विहारकरते हूवे, उज्जयनपधारे, श्रीएवंतिपार्श्वनाथजीकीयात्राकरी उज्जेनसें कायथा होतेहूवे श्रीमकसीपधारे, यात्राकरी क्रमसें देवासवगेरा होते हूवे, आषाढ वदि १० को इन्दोरमें आपश्री पधारे, वहां आपका ७९ सालका चोमासा हूवा, जिसमें भगवती सूत्रवृत्तिकी वाचनाकरी, तप-उपधान हूवा, चोमासेमे १ ज्ञानभंडार हूवा, जिसमे बहुत पुस्तक कपाट वगेराका संग्रहकीयागया है, महोपाध्याय १ वाचक २ पं० ३ पदवी दीया १ साधुकीदीक्षाभइ चोमासेबाद संघसाथ तीर्थमांडवगढजात्राकरके धारा नगरी पधारे, बाद अमीजरा भोपावरमें श्रीसांतिनाथस्वामी राजगढमें श्रीमहावीरस्वामीकी यात्राकरी बाद देशाइ कडोद वगेरा होते हुवेवखतगढ बदनावर वडनगर वगेरा फरसते हुवे, क्रमसें खाचरोद पधारे १९८० में चैत्रकी ओलीकरी बाद खाचरोद से विहारकर क्रमसें सेंमलीया नामली पंचेड सह्नाणा आये दरबारको उपदेशकरा बाद पीपलोदा सुंखेडा अरुणोद-वगेरा होते हुवे, आपश्री प्रतापगढ पधारे, बाद प्रतापगढसें क्रमसें तीर्थ वईपार्श्वनाथस्वामिकी यात्राकरी, वईसें क्रमसें आपश्री दशपुर नगर याने मंदसोर पधारे, वहां आपश्रीका ८० सालका चतुर्मासक हूवा, नंदी-सूत्रवृत्तिः शत्रुंजयमहात्मकी वाचना भइ, मंदसोरसें विहार करते हूवे क्रमसें वई कणगेटी जीरण नीमचछावणी जावद केसरपुरा नीवाडा शतखंडा वगेरा देखते हूवे, चित्रकूटगढ पधारे, चितोडसें सिंगापुर कपासण तीर्थ-

करेडामे श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी १४ साधुसाथ यात्राकरी सणवाड मावली पल्हाणो देवलवाडा नागदा एकलिंगशैवतीर्थकेपास जैनअद्भुतश्रीशान्तिनाथस्वामीका स्याममूर्तिरूपतीर्थ है इत्यादिजात्रा करते हूवे, क्रमसें उदेपुर पधारना हूवा था, वादकुछ ठेरकर आपश्री कलकत्ते निवासी वाबू चपालाल प्यारेलाल वगेरेके सघसाथ श्रीकेसरियाजी पधारेथे, वहा कारणवसात् मास २ ठेरनाहूवाथा औरवहा आपश्रीके परिश्रमसे श्रीजैनश्वेताम्वरोंकाहक्क समर्थक १ शिलालेख प्राप्तकियाथा, फिरवापीस उदेपुर पधारे, श्रीसघके आग्रहसे ८१ सालका चतुर्मासक २५ ठाणासे उदेपुरकिया, चोमासेवाद महेता गोविंदसिंघजीकी सरायमे ४ दिन ठहरे वादवेदला मदार गोगुदा नदेसमा ठोल कमोल सायरा भाणपुरा होते राणकपुर पधारे औरजात्राकरी, वादसादडी घाणेंराव महावीर स्वामिकीजात्राकरी, वाद देसुरीसोमेसर णादलाइ नाडोल वरकाणापार्श्वनाथस्वामिकी जात्राकरी, वादराणी इसस्टेसन् राणीगाम खीमेल साडेराव दुजाणा सिमाणदी भारुदो कोरटपुर वाकली तखतगढ पादरली चादराइ चूडा सरावाली आहोर गोदण गढजवालिपुर याने जालोरदेवावास भमराणी रायस्थल मोकलसर सीवाणेगढ कुशीव आओत्तरा वालोत्तरा नगरवीरमपुर याने महेवामें, श्रीनाकोडापार्श्वनाथस्वामिकीयात्रा ४ वक्तकरी जसोलवालोत्तरा पचभद्रा वालोत्तरा वादक्रमसें वालोतरे ८२ सालका चोमासा वर्त्तमान है, अव आपश्रीके साधुसाध्वीयोंकाएकदर समुदाय करीवन् ४५–५० का है, जिसमे १० या १२ आपश्रीके साथविचरतें हैं, वाकी साधु अलगदेशोमे विचरतें है, एकसाधुनवावामकळमे ६३ के साल काल धर्म प्राप्त हूवा था, श्रीमतीसौभागश्रीजी नामक मुख्यसा-

ध्वीजी अमदावाद चोमासे के पहलां ६९ में काल धर्म प्राप्त हुइथी, मुनि-कुंजर श्रीमान् पं० आणंदमुनिजी महाराज ७० का चैत्र वद २ शुक्रवारकों उमरालेमें स्वर्गवास प्राप्त हुवे थे आसरे ३१ साध्वीयां आपश्रीकी विद्यमान हैं और आसरे २५ साधु आपश्री के विद्यमान हैं और कितनेक शिष्य यति वेषमेभि विद्यमान हैं, और आपश्रीके तीनठिकाणे पुस्तकोंका संग्रहरूप ज्ञानभंडार विद्यमान हैं प्रथम बीकानेर २ सुरतबंदरमें ३ मालवा शहर इन्दोरमें है, और आप श्रीके चारित्र पर्यायमें एकंदर चोमासा ४६ व्यतीतहुवा है, और सैतालीसमाचालु हैं, और आप श्री नित्य एकल आहारी हैं और आप श्री सदा अप्रमादी हैं, आपश्रीकी ६९ आसरे वर्षकी अवस्था हैं, तथापि आप श्री जराभि प्रमाद नहिं करतें हैं, और आपश्री परिपूर्ण ज्ञानहासिलकरके पीछे सर्वअशुभक्रियाका त्यागरूप संवर चारित्रकी आराधनाकरनेवाले भये हैं, सम्यक्चारित्र या भावचारित्र इसीकों कहतेंहैं, इसीकों सम्यक्ज्ञानी चारित्री शास्त्र कारफरमातें हैं, इसीलिये दरेक धार्मिकक्रिया ज्ञानपूर्वकहि करना चाहिये, तथाहि शास्त्रसंमति, प्रथमज्ञपरिज्ञा पश्चात् प्रत्याख्यान परिज्ञा पूर्वकहि व्रतादिक करना ऐसा श्रीआचारांग है, और प्रथमज्ञान अने पीछे दया यानेजीवरक्षादि क्रिया है, एसा श्रीदशवैकालिक है, ज्ञानपूर्वक त्याग सुपच्चक्खाण रूपसें श्रीभगवती है इत्यादिअनेक सिद्धान्त हैं, इसीलिये सिद्धान्तानुसार आपश्रीकी सम्यक्प्रवृत्ति हैं, अतः सम्यक्ज्ञानी शुद्धप्ररूपक कंचन कामिनी के परिहारक श्रेष्ठ मोक्षमार्गाराधक स्वपरात्मोपकारक सुगुरु हैं, अतः अहो सज्जनो एसे सुगुरुवोंकी आणापालणी शुद्धचित्तसें सेवाकरणी विनयवैयावच्चकरणी तपसंयमादिक

श्रीमद् जैनाचार्य श्री श्री १००८ श्री जिन कृपाचंद्र
सूरी/श्वरजी महागज के शिष्य

स्वर्गीय पंडित श्री आनंदमुनिजी महाराज.
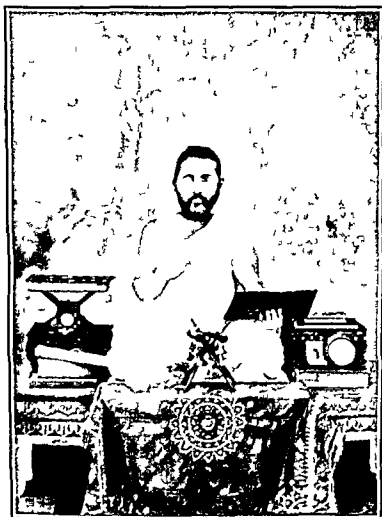
जन्म सवत १९४२ दीक्षा सवत १९५६ स्वर्ग १९७१

ग्रहण करणा भक्ति भावना करणें कराणें अनुमोदनेंसें इहलोक परलोक आत्मा शरीरादिक निर्मल होवे है, स्वर्ग अपवर्ग की प्राप्ति होवे यह निः-सदेह है, और आपश्री वयस्थविर पर्यायस्थविर श्रुतस्थविरभीहै, अतः महान् पुरुषहै, नमोस्तु भगवते श्रीवर्द्धमानाय सर्वकर्मक्षयायच नमोनमः श्रीइन्द्रभूत्यादि एकादशगणधरेभ्यः नमोस्तु अनुयोगवृद्धेभ्यः सर्वसूरिभ्यः नमोनमः कोटिकगणवज्रशाखखरतरविरुदचान्द्रादिकुलधारकेभ्यः नमोस्तुयुगप्रधानपदभृत, श्रीमज्जिनभद्रसूरये श्रीमज्जिनकीर्तिरत्नसूरये च नमोनम. नमोस्तु श्रीसघभट्टारकाय, इति श्रीकीर्तिरत्नसूरिशाखाया तत्परम्परायाच युगप्रवरागमश्रीमज्जिनकृपाचंद्रसूरिवराणा नाममात्रेण चरित्रलेशोय दर्शित:

सारंसारं स्फुरद्ज्ञानधामजैनं जगन्मतं, कारकारं क्षमाभोजे, गौरवे प्रणतिं पुनः ॥ १ ॥ यथा स्मृत्यनुसारेण, श्रीमदानंदमुनेः चरितमिदमुपदर्श्यतेत्र मयाका, भव्यहितं स्वपरोपकाराय ॥ २ ॥

श्रीमदानंदमुनेः चरित्र लेशो यथा—अहो सज्जनो युगप्रवरागमसत्संप्रदायिसत्क्रियोद्धारकारकः श्रीमज्जिनकृपाचद्रसूरिवराणा विद्वत्शिरोमणि जेष्ठातेवासी श्रीमद् आनदमुनिजी महाराजका लेशमात्र मेरी बुद्धि अनुसार याने स्मृतिधारणानुसार चरित सुणाता हू सो आपलोक सावधान होकर सुणिये, इसीजबुद्वीपका यह दक्षिणार्धभरतक्षेत्रके मध्यखडमे बृहत्मरु नामकदेशहै, उसमे शहर जोधपुरसे पश्चिम भागमे वारणाऊ नामक वरग्रामहै, तत्र भोगवशे सर्वसपत्तिसमन्वितो वलश्रीः नाम्नः अभवत्कुलपुत्रक', इत्यादि उसग्राममे भोगवशमे उत्पत्ति जिसकी एसा सर्व संपदायुक्त वलश्री नामका एक कुलपुत्रीया रहाता था,

उसके उग्रकुलसंभूता शीलसुंदरी नामकी प्रधान स्त्रीथी, उणोके सुखसें काल जातां थकां कालक्रमकरके शुभस्वप्नसूचित एक पुत्र हूवा, कुल-क्रमागत मर्यादारूप पुत्रका जन्मोत्सवकिया, वाद सूतक निकालके, स्वजातिवगेराकों भोजनकराके पीछे सर्वलोकोंके सामने माता पिताने यह विचार कियाकि यह पुत्र अपने कुलकों अतिशय आनंदकरनेवाला है, इसलिये कुमरका नाम आनंदकुमार होवो, वाद समय जन्मका जोतिषी-कों देखाया, तव जोतिषीने ग्रह मिलाकर विचारके कहा इसकी माताने वृषभका स्वप्नदेखा है, यह वालक तुमारे कुलमे दीपक समान होगा राजा-ओंकाराजा होगा अथवा विद्वान शिरोमणि भावितात्मा आणगार होगा, और इसका १५ में वर्षमें विवाहहोगा वाद कर्म दोषसें संपदा क्षीयमाण होगा, और तुमारे काल धर्म प्राप्त हूवे वादभी यह कुमार विदेश गम-नसें महान् लाभ प्राप्त होगा, और स्त्री सुहवदेवी होगा, उसके पतिका संयोग करीवन् डेढ वर्ष पर्यंत रहेगा, वाद विदेशगमन करेगा, और यह कन्याऊंवर पर्यंत सौभाग्यवती हि पिताके घरमे रहिथकी आपना आयु पूर्ण करेगी, और यह कुमर आयु ३३ वर्षके भीतर हि भोगवेगा, और इसकी माताने वृषभका स्वप्नदेखा यह अत्युत्तम है, और शुभ स्वप्न-के देखणेसें अल्पायुरादि दोष नहिंहोनाचाहिये, परंतु इसके ग्रहोंसें यह दोष स्पष्टहि मालूम होवे है इसलिये यह हीयमानकालका हि प्रभाव है, इत्यादि निमित्तभावि कहके शुभाशीर्वाददेके जोतिषी रवाना हूवा, वाददूसरेदिन वहुत हि तपासकरी परंतु वह नैमित्तीयातो नहिं मिला तव वडे हि आश्चर्यकों प्राप्त हूवे, और विचार किया कि इस वाल-कके तकदीरसें आयाथा सोचलागया, नहितो विद्वान विदेशी कहांसें

इहा आवे, इसतरे विचारकरके अपने सासारिक कार्यमे लगगये, वाद कितनाक काल वीतने पर नैमित्तीयेके वचनानुसार भाव होने शरु हूवे तथापि मोहके वश होकर सुहवदेवी नामुकी कन्याके साथ सगाइ करी, वाद क्रमसें विवाहभी हूवा, वाद माता पिता समाधिसें कालधर्म प्राप्त हूवे, वाद अपने माता पिताका स्वकुलोचित लोकिक व्यवहार निपट करके, तिसकेवाद दायभागादिकभी देलेकर निश्चित हूवाथका अपनी स्त्री सुहवदेवीकों उसके पीहर पोहोचाके, अपना हार्दिक अभिप्राय किसीके आगेनहिं कहके विदेशगमनकेलिये किया है मनमे निश्चय जिसनें ऐसा यह आनदकुमार अपने घर आयके रहा, और चोथ शनि रोहिणी का सयोग आनेपर रात्रिके पश्चिम भागमे अर्थात् ऊषाकालमे विदेशजानेका मन ऐसा यह आनदकुमार चद्रनाडी वहता थका डावा पाव आगे करके अपने घरसें उत्साह सहित निकला तव माघ मास था, अनुक्रमसें ग्रामनगर आकरादिक फिरता हूवा यह आनदकुमार श्रीफल-वर्धिक पुरमे प्राप्तहूवा और तिसनगरसे स्वेछासें फिरता हूवा धर्म स्थानोंकोदेखरहा है, तिसअवसरमे उसके प्रवल पुन्यसेंहिमानु खेंचा हूवा होवे एसा एक मुनि अकस्मात् उपाश्रयसें वाहिर निकला, तव उस मुनिकों देखकर यह आनदकुमार अनहद हर्षकों प्राप्त हूवा, और कहा आपलोक कोनहो, और क्या करोहो, तवमुनि वोला हे भद्र हमलोक जैनीसाधू हैं, और ज्ञान ध्यानतप संयम करतें हैं, और तेरेकोभि यह करना होतो हमारेपास आव, तव वह धर्म श्रद्धालु आनदकुमार शीघ्रहि सर्व मुनियोंसहित श्रीगुरुमहाराजके समीपमे आकर नमस्कार करके इसतरे वोला कि हे भगवन् आपकावेश चचन धर्मकृय मुझे भिगचा

है, बहुतहि अछा है, मेंभी आपकी सेवामेरहूं, अर्थात् मेंभी आपका शिष्य होवुं, तव गुरु महाराज वोले, हे भद्र जैसा सुखहोवे वेसाकरो परंतु शुभकार्यमें देरीनहिंकरणी ऐसा महाराजश्रीका वचन सुणके जैनधर्म ऊपर परिपूर्ण श्रद्धाभइ, और क्रमसें गुरुवचनानुसार चारित्रग्रहणकरके और धार्मिकशास्त्र न्याय व्याकरण वगेरे शास्त्रोंकी शिक्षा ग्रहण करके विचक्षण भये और सर्वमुनिमंडलमे शिरोमणि हूवे और जैनमुनियोंमें पंडितशिरोमणि थे, और कितनेक जैन सिद्धान्तोंका गुरुमुखसें अवगाहनकियाथा और कितनेक कर रहेथे, इस अवसरमे हमारे अभाग्यके दोषसें और जैन प्रजाके गुणीव्यक्तिका अभाव ज्ञानि देखा था इस कारणसे आपका देहान्त हुवा, और आपने चारित्रग्रहण करके १४ चोमासे श्रीगुरुमहाराजके साथहि कियेथे, ५७–५८ वीकानेर शहर और जेतारणमें हुवाथा, देश मारवाड, ५९–६० यह चोमासे देश काठियावाड पालिताणा और पोरवंदरमें हुवेथे, वाद ६१–६२–६३–६४–६५ कछ मुंद्रा कछभुजराजधानी कछमांडवीवंदर, कछभिद्‌डा कछअंजारशहर, यह ५ चोमासे कछदेशमे अनुक्रमसें हुवेथे, वाद ६६ का चोमासा फिर पालिताणेमें हुवा था, देश काठियावाड, वाद ६७–६८ जामनगर और मोरवी राजधानी मे हुवे थे, चोमासे, वाद ६९ का चोमासा देश गुजरात राजनगर याने अमदावाद मे हुवा था, वादरतलामवाले सेठाणी साहबके जादातर आग्रहसें फिर पालिताणे मे हुथा, यह ७० की सालका चोमासा देश काठियावाड मे (सोरठ) अपश्चिम हुवाथा, और आपकी ऊंबर तो छोटीथी, परन्तु बुद्धि और प्रतिभा बहुतहि अतिशायिनीथी, और

आप आचार्य नेमविजयजी पं० मणिविजयजी मु० वल्लभविजयजी मु० चारित्रविजयजी मु० बुद्धिसागरजी अजितसागरादि वहुतसें ज्ञानवृद्ध मुनियोंसें मुलाकात रुवरुलेकर अपनेज्ञान गोष्टिका परिचयदिया करते थे, और आप मुक्तकंठसें प्रशंसाभि वहुतसीहिहासिल करतेथे, और आपकी अतिशयिनी ज्ञानवगेराकी शक्तियोंको देखकर मुनिमंडल आश्चर्यकों प्राप्तहोते थे, अहो इति आश्चर्ये यह मुनि क्या देवसूरिहैं, या निर्जितशुक्रमति है अथवा साक्षात् देवसूरिहि या देवसूरिही इस मर्त्यलोकमे यह मुनिरूप धारण करके आया है क्या, अन्यथा मनुष्य तो इससमय ऐसा होना दुर्लभ हैं, कारणके स्वरउच्चारण रूप आकार इंगित चेष्टित प्राये मनुष्यका एसा होना इस समये असभव है, इत्यादि सदेहकों प्रेक्षकवर्ग या मुनिमंडल प्राप्त हुवा करते थे, आप थोडेहि अरसेमे श्रीशासनप्रभावक वडे भारी विद्वान समर्थपुरुषहोनेवाले थे, परतु इसतरेके पडित महामुनिका कालचक्रने थोडे हि समयमे सहरणकरलिया यह जैनसमाजके लिये वडे अपशोचकी वात भई ॥ आपका गुरु सह सगमस्थान फलोधि हैं आपका जन्मस्थान वारणाऊ हैं, आपका दीक्षास्थान खीचद है आपका स्वर्गवास स्थान ऊंनराला नामक ग्राम है, देश काठियावाड मे पालिताणासे १२ कोश है साल ७० चैत्रवदि २ शुक्रवार दिनमें ३ वजे आमरे हैं नमोस्तु भगवते श्रीपार्श्ववीराय जन्मजरामरणातीताय नमोस्तु सर्वसूरये नमोनमः श्रीमज्जिनभद्रसूरये श्रीमज्जिनकीर्तिरत्नसूरये च ॐनमः श्रीसघ भट्टारकायेति श्रीमज्जिनकीर्तिरत्नसूरिशाखायां तत्परम्परायां च श्रीमज्जिन कृपाचन्द्रसूरीश्वराणा प्रधानशिष्य–श्रीमदानदमुनेः चरित्रलेशः यथा स्मृतिकथित· भद्र भूयात् अनयोः गुरुशिष्ययो. चरितस्य विशेपविस्तार

तु यथावसरं चिंतयिष्यामः अतः प्रकृतमनुश्रियते इति कहांपर क्या प्रकृत है, इहांपर यह प्रकृत है कि ग्रन्थकारकों अपने ग्रंथ लिखणेमें छादमस्तिक भावसें या बुद्धिमांद्यतादिकसें अथवा छापेका दोप या दृष्टि दोष वगेरा दोषोंकी संभावनाका मिछामि दुक्कडं देना चाहिये एसा शिष्ट-जन समाचरण है, यह यहां प्रकृत है और सहायकका सहायकपणाभी उपगारित्व भावसें स्मरण जरूर करणाचाहिये, इसलिये चरित्रकार इसीका अनुसरण करते हैं नमोस्तु श्रीश्रमणसंघभट्टारकाय, नमोस्तु श्री चतुर्विधसंघायेति अहो सज्जनो मैनें जो यह समर्थमहान्पुरुषोंका लेशमात्र यथामति गुणवर्णनरूपचरित्रआपलोकोंके समक्ष उपस्थित किया है, सो आपलोक सावधानहोकर उपयोग देकर पढें, और श्री-गुरुभक्तिरूप लाभ हासिल करें और इस पुस्तकमें या इसकी प्रस्ताव-नामे जो मेने जादा कम जिनाज्ञाविरुद्ध शास्त्रविरुद्ध संप्रदाय विरुद्ध अर्थ लिखा होवे, उसका श्रीसंघसमक्ष मिछामिदुक्कडं होवो, और जो मेने इस पुस्तकमे श्रीगुरुगुणवर्णन रूप सदर्थ लिखा है, सो अवश्यहि ग्रहणकरणा, और छापादोष दृष्टिदोष वगेरा भयाहोवे-सो सुधारकर पढें, और छादमस्तिक भावसें भूल वगेरा रहनेका संभव है, सो सज्जन विद्वान पुरुषोंको मेरेपर कृपाकर सुधारलेना, और कोइतरहकी गलती अर्थवगेराकीत्रुटीरहगइ होवे तो पूरण कर समाधानकरणा और मिथ्याअर्थका त्रिकरणयोगसें मिछामिदुक्कडं है, यह सज्जन विद्वानोसें नम्र प्रार्थना है, और यह पुस्तक लिखणेकी छपाणेकी प्रेरणा तथा सहायता वगेरा शहर दक्षिण हैदरावाद निवासी रा० रा० माननीय रायबाहादुर दीवानबाहादुर राजाबाहादुर श्री

लूणीया गोत्रावत्तसक श्रीमान् सद्गृहस्थ सेठ श्रीस्थानमल्लजी तथा सहर जेतारण निवासी, श्रीगुरुदेवमहाराजके परम भक्त, सुश्रावक सेठ श्री छगनमल्लजी हीराचंदजीने वर्तमान भट्टारक आचार्य महाराजकों आग्रह कियाथा, वह उनोंका मनोर्थ आजरोज सफल होनेपर आया है, इसलिये अत्यानंदका समय है, और जगत ईश्वरादि कर्त्तृत्वविषयिसप्रश्नोत्तर विशेषप्रस्तावना समग्रग्रथपूर्णहोनेपरदीजावेगी, और ऊपरोक्त श्रीमानोंकी पूर्णआर्थिकसहायतासें यह महद् श्रीदादासाहेवका चरित्र सिद्ध हुवा है, और दक्षिण हेदरावादमे रहनेवाले अनेक देश शहर निवासी श्रीमघकी द्रव्यसहायतासें वडे दादासाहेव युगप्रधान श्रीमज्जिनदत्तसूरीश्वरजीका चरित्र सिद्धहुवाहै श्रीरस्तु शुभ भवतु योगक्षेम भवतु भद्र भूयात् कल्याणमस्तु नमः श्रीवर्धमानाय श्रीमते च सुधर्मणे । सर्वानुयोगवृद्धेभ्यो वाण्यै सर्वविदस्तथा ॥१॥ अज्ञानतिमिरांधानां ज्ञानाञ्जनशलाकया, नेत्रमुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ २ ॥ श्री वर्धमानस्य जिनेश्वरस्य, जयन्तु सद्वाक्य सुधाप्रवाहाः । येषां श्रुतिस्पर्शनजः प्रसत्तेः, भव्या भवेयुर्विमलात्मभाजः ॥ ३ ॥ श्रीगौतमो गणधरः प्रकटप्रभावः सल्लब्धिसिद्धिनिधिरञ्जितवाक्प्रबंधः, विघ्नांधकारहरणे तरणिप्रकाशः, सहाय्यकृत् भवतु मे जिनवीरशिष्यः ॥ ४ ॥ दासानुदासा इव सर्वदेवा यदीयपादाब्जतले लुठन्ति, मरुस्थली कल्पतरुः स जीयात्, युगप्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥ ५ ॥ सिद्धान्तसिन्धुः जगदेकबन्धुर्युगप्रधानप्रभुतां दधानः कल्याणकोटीः प्रकटीकरोतु, सूरीश्वरः श्रीजिनभद्रसूरिः ॥ ६ ॥ ... रत्नाकरनिलय. श्रीशखवालान्वयः, प्रस्फु-

ह्वामलनीरसंभवगणव्याकोशहंसोपमाः, क्षोणीनायकनम्रकम्रदलनाः दीपाख्यसाध्वंगजाः शर्मःश्रेणिकरा जयन्तु जगति श्रीकीर्तिरत्नाह्वयाः ॥ ७ ॥ पुंडरीकगोयमप्रमुहा, गणहरगुणसंपन्न, प्रहऊठीने प्रणमतां, चवदेसे बावन्न ॥ ८ ॥ मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमप्रभुः, मंगलं स्थूलभद्राद्याः, जैनो धर्मोस्तु मंगलं ॥ ९ ॥ उपसर्गाः क्षयं यान्ति, छिद्यन्ते विघ्नवल्लयः, मनः प्रसन्नतामेति, पूज्यमाने जिनेश्वरे ॥ १० ॥ सर्वमंगलमांगल्यं, सर्वकल्याणकारणं, प्रधानं सर्वधर्माणां, जैनं जयति शासनम् ॥ ११ ॥

श्रीमद् जैनाचार्य श्री श्री १००८ श्री जिन कृपाचन्द्र
सूरीश्वरजी महाराज के पट्ट शिष्य

उपाध्याय जयसागरजी गणि.

जन्म संवत १९४३ दीक्षा संवत १९५६ उपाध्यायपद १९७२

अथ चरित्रस्थविविधविपयानामनुक्रमो यथा—

अक	विषयार्थ	पृष्ठसंख्या
१	मगलाचरणम्	१
२	भूमिका .. .	४
३	तिर्यक् लोकप्रमाणम्	..
४	मनुष्यलोकादिस्वरूपम्	४
५	बावनबोलगर्भितश्रीरिपभदेवाधिकारः . ..	८
६	रुचकपर्वत ५६ दिक्कुमारीनामानि	९—१०
७	श्रीरिपभदेव जन्मोत्सवे ६४ इन्द्रनामानि ...	११
८	श्रीरिपभदेवनामस्थापनम् .	१३
९	इक्ष्वाकुवशस्थापन विवाहसतानोत्पत्तिः ..	१४
१०	श्रीरिपभदेवशतपुत्रनामानि	१५
११	राज्याभिपेकविनीतानगरी अधिकार.	१६
१२	पचकर्मज्ञापन पुरुप ७२ कलानामानि . .	१९
१३	स्त्रीणा ६४ कलानामानि १८ लिपीनामानि ..	२०—२१
१४	श्रीरिपभदेवदीक्षा प्रथमपारणाधिकारः ...	२३—२४
१५	विद्याधरोत्पत्ति	२५
१६	समवसरणस्वरूपम् ..	२७
१७	सांख्यदर्शनोत्पत्तिः	२९
१८	जैनपडित ब्राह्मणोत्पत्तिः	३२

अंक. विषयार्थ. पृष्ठसंख्या.

१९ जिनोपवीताधिकारः ३५
२० आर्य अनार्य ४ वेदोत्पत्तिः भगवानकानिर्वाणपर्यंतअधिकार ३६
२१ श्रीअजितनाथजीअधिकारः ४३
२२ किंचित्सगर चक्रवर्त्ति अधिकारः ४४
२३ संभवनाथजी अधिकारः ४६
२४ श्रीअभिनंदनजी अधिकारः ४८
२५ श्रीसुमतिनाथजी अधिकारः ४९
२६ श्रीपद्मप्रभुजी अधिकारः ५१
२७ श्रीसुपार्श्वनाथजी अधिकारः ५३
२८ श्रीचंद्राप्रभुजी अधिकारः ५४
२९ श्रीसुविधिनाथजी अधिकारः ५६
३० श्रीशीतलनाथजी अधिकारः ५८
३१ श्रीश्रेयांसनाथजी अधिकारः १ वासुदेववलदेव प्रतिवासुदेव० ५९
३२ श्रीवासुपूज्यजी अधिकारः २ वासुदेववलदेव प्रतिवासुदेव० ६२
३३ श्रीविमलनाथजी अधिकारः ३ वासुदेववलदेवप्रतिवासुदेव० ६४
३४ श्रीअनन्तनाथजी अधिकारः ४ वासुदेववलदेवप्रतिवासुदेव० ६६
३५ श्रीधर्मनाथजीअधिकारः ५ वासुदेववलदेवप्रतिवासुदेव०— ६८
—३—४ चक्री.—
३६ श्रीशांतिनाथजी अधिकारः ५ चक्री. ... ७०
३७ श्रीकुंथुनाथजी अधिकारः ६ चक्री. ... ७२
३८ श्रीअरनाथजी अधिकारः ७ चक्री. १८ मां १९ केअंतरमे
६ वासुदेववलदेव प्रतिवासुदेव० ८ माचक्री. ... ७४

अंक	विषयार्थ	पृष्ठसंख्या
३९	श्रीमल्लिनाथजी अधिकारः ७ वासुदेवबलदेव प्रतिवासुदेव०	७६
४०	श्रीमुनिसुव्रतजी अधिकारः ८ मावासुदेवबलदेव प्रतिवा० ९ माचक्री०	७८
४१	श्रीनमिनाथजी अधिकारः १० माचक्री ११ माचक्री०	८०
४२	श्रीनेमिनाथजी अधिकारः ९ मावासुदेवबलदेवप्रतिवासु०	८२
४३	श्रीपार्श्वनाथजी अधिकारः १२ माचक्री० २२ मा २३ माके अंत २ मे....	८४
४४	श्रीमहावीरजी अधिकारः	८६
४५	द्वादशचक्रवर्त्ति अधिकारः	८९
४६	द्वादशचक्रवर्तिसमानरिद्धि अधिकार.	९३
४७	नववासुदेवबलदेव प्रतिवासुदेव अधिकार•	९४
४८	अथैकादशरुद्रगतिविचारः	१०४
४९	इग्यारमारुद्रसत्यकीकादृष्टान्तः	१०५
५०	अथद्वितीय सर्गः	११२
५१	गणधरादि अधिकारः आचार्योंका संबन्धः	११३
५२	श्रीसुधर्म जम्बू अधिकार•	१२४
५३	श्रीप्रभवसूरि अधिकारः	१२५
५४	श्रीशय्यँभवसूरि यशोभद्रसंभूतादि अधिकारः	१२६
५५	तृतीयः सर्गः श्री आर्यमहागिरिसैं श्रीनेमिचंद्रसूरि पर्यन्त अधिकार•	१३२
५६	श्रीसिद्धसेन दिवाकरकासंबन्ध.	१३५
५७	अथ चतुर्थः सर्गः	१५४
५८	श्रीउद्योतनसूरि ८४ गच्छ स्थापना	..

अंक. विषयार्थ. पृष्ठसंख्या.

५९ चोरासी(८४)आशातना वर्धमानसूरि चारित्रउपसंपद १५४
६० ८४ गछकेनाम १६६
६१ वर्धमानसू० आबूप्रबंध १६७
६२ वर्धमानसूरिजी जिनेश्वरसूरिजी प्रमुख पाटणमे जाते मार्गका विचार भामह सार्थसाथ १७२
६३ पाटणपोहचै १७३
६४ पंचासरेचैत्यमें सभादुर्लभराजसमक्ष १८४
६५ चैत्यवासिसूराचार्यकापूर्वपक्षचैत्यमेरहणेविपयिलाभ ... १८६
६६ चैत्यवासनिराकरणजिनेश्वरसूरिकाउत्तरपक्ष ... १९०
६७ चैत्यवासीनिरुत्तरभये १९८
६८ खरतरविरुदतथाव्युत्पत्ति २०१
६९ विमलमंत्रीप्रतिवोध आवूतीर्थस्थापन २०६
७० जिनेश्वरसूरिआदि अधिकार २०७
७१ जिनचंदसूरि अ० ... ... २१३
७२ जिनअभयदेवसूरिथंभणापार्श्वनाथप्रगटकर्त्ता नवांगवृत्तिकर्त्ता २१५
७३ टिप्पनी वहुविषयिअंतरगत २१८
७४ जिनवल्लभअधिकारअध्ययनअभयदेवसूरिपासचारित्रग्रहण आचार्यपद विहार प्रतिवोधस्वर्ग गमन २४५
७५ पंचमसर्गगणधणसार्ध शतक ३०६
७६ युगप्रधानाधिकार ३४५
७७ जिनदत्तसूरिकाजन्मदीक्षा अभ्याशवडीदीक्षा वाचकपद आचार्यपदविहार प्रतिबोधयुगप्रधानपद अंबादत्तअ० ३५८

अर्हम् ।

श्रीयुगप्रधानपदोपबृंहितसमस्तजगदोद्धरणेसमर्थ श्रीमज्जिन-
दत्तसूरिचरित्रम्

विद्वच्छिरोमणिश्रीमदानंदमुनिभिः संकलितं
पं० मुनिश्रीजयमुनिना संस्कृतं
लोकभाषोपनिबद्धं च ।

श्रीमज्जिनदत्तसूरिचरित्रम् ॥

स्वस्तिश्रीजयकारकं जिनवरं कैवल्यलीलाश्रितं
शुद्धज्ञानसुदानयानप्रकरैर्निस्तीर्णभव्यव्रजम् ।
प्रोल्लासाद्भुतप्रातिहार्यसहितं रागादिविच्छेदकं
तीर्थेशं प्रथमं नमामि सुतरां श्रीआदिनाथाभिधम् ॥१॥

॥ शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं ॥

श्रीशांतिः कुशलं ददातु भविनां शांतिं श्रिताः सर्वके
यस्मातः शांतिजिनेन कर्मनिचयो नित्यं नमः शांतये ।
शांतेः शांतिसुखं गता च सरिका शांतेस्तथा शांतता
शांतौ सर्वगुणाः सदा सुरतरुः श्रीशांतिनाथो जिनः ॥२॥

॥ द्रुतविलंबितं वृत्तं ॥

विहितसंवरभानजगज्जनं नरसुरेश्वरसेवितपत्कजं ।
प्रवरराजिमती हितकारकं नमत नेमिजिनं भवतारकम् ॥ ३ ॥

॥ द्रुतविलंबितं वृत्तं ॥

प्रवरनिर्मलधर्मविबोधकं भुवनदुःकृततापविशोधकम् ।
ज्वलदहेः परमेष्टसुखप्रदं श्रयत पार्श्वजिनं शिवकारकम् ॥ ४ ॥

॥ शिखरिणी वृत्तं ॥

सदेवेंद्रैः पूज्योह्यतिशयविभूत्या पुनरपि
तपस्तीव्रं तप्तं क्षपितभवदाहः शमतया ।
बहूनां भव्यानां जनितजिनधर्मो भवहरः
महावीरो देवो जयतु जितरागो जिनपतिः ॥ ५ ॥

॥ पुनः शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं ॥

सर्वाभीष्टवरप्रदानप्रथमः सर्वस्य सिद्धिस्ततः
आख्येयस्य च संतिकामसुदुघा कल्पद्रुचिंतामणिः ।
ध्यायेत् गौतमनाममंत्रमनिशं स स्यान्महासिद्धिभाक्
सर्वारिष्टनिवारको ददतु सः श्रीगौतमः केवलं ॥ ६ ॥

वंदिता सर्वदेवैः सा वाग्देवी वरदायिनी ।
यस्याः प्राप्तौ जनाः सर्वे ज्ञाततां पूज्यतां ययुः ॥ ७ ॥

॥ पुनः शार्दूलविक्रीडितं वृत्तं ॥

अंबोद्भासियुगप्रधानपदवीविभ्राजमानः पुनः
ज्योतिर्व्यंतरदेवनागसुसुरैः संसेवितः सन् सदा ।
आप्तोक्तिं स्मरता च जैनसुकुला लक्ष्मीकृताः श्रावकाः
भूयाच्छ्रीजिनदत्तसूरिगणभृत् सर्वार्थकल्पद्रुमः ॥ ८ ॥

॥ आर्या ॥

सूरिश्रीजिनकुशलः क्षितितललब्धोदग्रयशःप्रसरः ।
सेव्यः सैव गुरुभक्त्या भवंतु श्रीजित् किमन्यदेवेन ॥ ९ ॥

एते सर्वेपि देवेशा मंगलक्षेमकारकाः ।
भवंतु श्रीजितां नित्यं विघ्नव्यूहप्रणाशकाः ॥ १० ॥

शौर्यादिसद्गुणगणावलिभूषितात्मा
तेजोभरेण सवितेव विराजमानः ।
इंद्रो यथा परमविक्रमभूतिशाली
जीयाचिर द्युतिपतिः कृपाचन्द्रसूरिः ॥ ११ ॥

पितामहस्य चाद्भुतं क्रियते लोकभाषया ।
श्रीजिनदत्तसूरेः सत् चरितं तस्य सुंदरम् ॥ १२ ॥

इह हि सकलप्रामाणिकमौलिलौकिकप्रकृष्टाचारविशिष्टाः कचिदभीष्टकार्य्ये प्रवर्त्तमानाः समस्तसमीहितवितरणविहितसुरकारस्कराहंकारतिरस्कारस्वामीष्टदेवतानमस्कारपुरस्कारमेव प्रवर्त्तते अतः प्रस्तुतचरित्रकारः समस्तयोगिनीचक्रदेवदेवताव्रातविहितशासनाः नानाप्रभावनाप्रभावितश्रीजिनशासनाः महर्द्धिकनागदेवश्रावकसमाराधितश्रीअम्बिकालिखितश्रीजिनदत्तसूरियुगप्रधानेत्यक्षरनाचनमार्जनसमुपार्जितयुगप्रधानपदसत्यताप्रधानाः सकलातिशायिप्रगुणगुणगणमणिखनयः सकलशिष्टचूडामणयः प्रबोधितान्यगच्छीयातुच्छभूरिसूरयः श्रीजिनदत्तसूरयः श्रीजिनशासनेऽत्युच्छोपकारकाः समस्तभव्यानां महान्प्रभावकाः संजाताः अतो

तेषां चरित्रं गुणगणमनोहरं सम्यक् दर्शनादिहेतुभूतं वक्ष्ये समासेन सुगुरुक्रमायातं यथाश्रुतं यथामति पूर्वसूरिविनिर्मित-चरितानुसारेण च शिष्टाचारसमाचरणार्थं "मंगलादियुक्तं शास्त्रं श्रोता श्रोतुं प्रवर्त्तते" इति न्यायात् फलादिकमभिधाय पुण्य-पवित्रं चरित्रं पितामहानां प्रस्तूयते-

॥ तत्रादौ भूमिका ॥

तिहां प्रथमचरित्रके आदिमें स्वाभाविक लोकभाषामें भूमिका लिखतें हैं ॥

इह तिर्य्यक् लोक इत्यादि ॥

अहो भव्यो यह रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अने ८० हजारयोजन जाडी और एक [1]राजप्रमाणे लांबी और पोहोली है ॥

---

१ टिप्पणी–राजकाप्रमाण सौधर्म देवलोकसें नांखाहूवा लोहका गोला ६ महिनोंमें जितने क्षेत्रकूं उल्लंघे उतने क्षेत्रकूं १ राजकहतें हैं ॥ और इस रत्नप्रभा पृथ्वीके ऊपर १८सो योजन उंचाइ मे १ राज लांबा और चोडा गोल आकारवाला कांइक विशेषाधिकात्रिगुणी परिधि जिस्की ऐसा यह तिरछा लोक है इस्के विषे गोलाकृतिवाला पृथ्वीमंडल है उस पृथवीमंडलमे सर्व धर्म कर्मोंका निदानभूत और महापुरुषोंके चरणकमलोंकरके पवित्र और सर्व १ राजप्रमाणे पृथवीसें सारभूत और वलयाकृति ४५ लाख योजन लांबा पोहोला

अने एक क्रोड ४२ लाख ३० हजार २०० उगणपचास योजनकी परिधि है और १७ सो २१ योजन ऊंचो और २२०० दस योजन मूलमें और चारसो २४ योजन शिखरके ऊपर विस्तार-वाला और जाम्बूनद लाल सुवर्णमय और ४ सिद्धायतन कूटों करके सहित और साक्षात् अढाइद्वीपकी पृथवीकी रक्षाके लिये जगति समान अर्थात् कोटके सदृश ऐसा मानुषोत्तर नाम वृत्ताकार पर्वत करके वेष्टित है और ५ प्रकारके चरज्योतिषी देवोंकी मर्यादा करनेवाला और सर्व १२ सो ५७ पर्वतों करके सहित और २१ सो ४३ कूटों करके सहित और १६० विजय ५ मेरु २० गजदंतगिरि ८० वखारा पर्वत ६० अंतर नदीयों करके भरतादि ४५ क्षेत्रों करके जम्बू आदि १० वृक्ष ३० महाद्रह सर्व ८० द्रह महानदी ४५० सर्व ७२ लाख ८० हजार नदियों करके सहित और धातकी खंड और आधेपुष्करावर्त्तद्वीपके मध्यभागमे दक्षण और उत्तर दिशामे दक्षणोत्तर लांबा सर्व ४ ईक्षुकार पर्वत लालसोने मय हैं इस कारणसें धातकीखंड और पुष्करावर्त्तद्वीपके २–२ खंड पूर्व-पश्चिम विभागसे है और २० वन और २० वनमुख करके सहित मागधादि ५ सो १० तीर्थ और ६ सो ८० श्रेणियों और २० वृत्ताकार वैताढ्य और १७० दीर्घ वैताढ्य करके सहित दशसो कंचनगिरि और चित्रविचित्रयमक शमक २० पर्वतों करके सुशोभित और दोयसमुद्र और अढाइद्वीप ४ महापाताल-कलशा और ७८८४ लघुपातालकलशा–हेमवत और शिखरी पर्वत सनधि ८ दाढाके ऊपर ७–७ द्वीप हैं सर्व ५६ अंतर द्वीप, ३०

अकर्म भूमि, १५ कर्म भूमि करके युक्त और भी अनेक साश्वता
पदार्थ कुंड जगति वनखंड दरवाजा परिधि अंतर वगैरे सहित
और रात्रिदिनका जो विभाग उस करके सहित और तीर्थंकर
चक्रवर्त्ती प्रतिवासुदेव वासुदेव बलदेव नारद रुद्र गणधर केवली
चरमशरीरी १४ पूर्वधारी स्वस्वगुणों करके भावितात्मा युगप्रधान
आचार्य उपाध्याय साधु आदिक अनेक पुरुषोंके होनेकी मर्यादा
करनेवाला और सर्व मनुष्योंका जन्ममरणादि कालकी मर्यादा
करनेवाला और १ राजप्रमाणे सर्व पृथ्वी रूपी स्त्रीके ललाटमें
तिलक समान सर्वोत्तम समय नामका क्षेत्र है ॥ इस समय क्षेत्रका
२ नाम है तथा हि मनुष्यक्षेत्र अढाइद्वीप समयक्षेत्र इस समय
क्षेत्रमे ३० अकर्म भूमि ५६ अंतरदीप १५ कर्म भूमि यह १०१ क्षेत्र
है इन क्षेत्रोंमे अवस्थित अनवस्थित २ प्रकारका काल है उसमे ३०
अकर्म भूमि ५६ अंतरदीप ५ महाविदेह इन ९१ क्षेत्रोंमें अवस्थित
काल है हेमवत ऐरण्यवत हरिवर्ष रम्यक् देवकुरु उत्तरकुरु और अंतर
दीप और महाविदेह नामक क्षेत्रोंमें अनुक्रमसें अवसर्पणी संज्ञक-
कालके प्रथम ४ आरोंके सदृश सदा अवस्थित नित्यकाल है ५६
अंतरदीपोंसे उत्तरते ३ आरेसदृशसदा अवस्थित नित्यकाल है ८००
धनुष देहमान एकांतर आहार ६४ पांशलि गुणयासी ७९ दिन
अपत्य पालना करतें है और ५ भरत ५ ऐरावत यह १० क्षेत्रोंमें
सदा अनवस्थित १०-१० कोडाकोड सागरका उत्सर्पणी
अवसर्पणी भेदसें १ प्रकारका काल है और उत्सर्पणी कालका
६ आरा अवसर्पणी कालका ६ आरा एवं १२ आरामयि

२० कोडा कोड सागर प्रमाणे काल है उसकुं १ कालचक्र करके कहेतें हैं ऐसा कालचक्र अतीत कालमें अनंता हूवा और अनागत कालमें अनता होगा यह प्रसंगसें कहा अब प्रकृत अधिकारका आश्रय करते हैं और भरतादिक १० क्षत्रोमें दरेक उत्सर्पणी तथा अवसर्पणी कालमें व्यवहारनीति राजनीति धर्मनीति क्षत्रिय ब्राह्मण वैश्य शूद्र ४ वर्णोंकी तथा चतुर्विध संघकी उत्पत्ति और २४ तीर्थंकर १२ चक्रवर्त्ती ९ वासुदेव ९ वलदेव ९ प्रतिहरि ११ रुद्र याने महादेव ९ नारद गणधर १४ पूर्वधारी मनपर्यवज्ञानी अवधिज्ञानी केवली चरमशरीरी सत्ता सत्तीयों आचार्य उपाध्याय साधु युगप्रधानाचार्य संवेगपक्षी श्रावक वगेरे अनेक महापुरुष हूवा करतें हैं और उत्सर्पणी कालके ६ आरोंमे पुण्य प्रकृति दानादि धर्म शरीर संस्थान संघयण वल आयु आदिक सर्व शुभ भाव वर्द्धमान होवे हैं अवसर्पणी कालके ६ आरोंमे पुण्य प्रकृत्यादिक हीयमान सर्व शुभ भाव हूवा करतें हैं और उत्सर्पणी अवसर्पणी के दुपमदुपमादि और सुपमसुपमादि छ छ आरोंका स्वरूप और पूर्वोक्त पदार्थोंका विशेष वर्णन शास्त्रांतरसें जाणना इहां ग्रंथ गौरवके भयसें नहिं लिखाहै अब वर्त्तमान इस अवसर्पणी कालमें सर्वोत्तम सनातन जैनधर्म की उत्पत्ति जगदीश्वर श्रीऋषभादिक २४ तीर्थंकरोंसे है इसलिये श्रीऋषभादि महापुरुषोंका संक्षिप्तपणें स्वरूप इहां लिखतें हैं।

१ टिप्पणी—भावार्थ—यह भाव है कि पांच महाविदेह क्षेत्रोंमें

॥ अब ५२ बोल गर्भितश्री—ऋषभदेवजीका अधिकार लिख्यते ॥

इक्ष्वाकु भूमीके विषै, श्रीनाभिनामें, सातमा कुलकर हुवा जिसके मरुदेवी नामें पट्टराणी हुई, तिसकी कूखमें, सर्वार्थसिद्ध विमानथकी चवके, मिति आषाढ वदि ४ के दिन, भगवान उत्पन्न भए तब मरुदेवी मातायें, वृषभकों आदलेके, अग्निशिखा पर्यंत, १४ स्वप्न प्रगटपणें मुखमें प्रवेश करता देखा सो इस प्रमाणे १४ स्वप्नोंका नाम लिखतें हैं, तंजाहा—गय—वसह—सिंह—अभिसेअ—दाम—ससि—दिणयरं—झयं पउमसर—सागर—विमाण भवण—रयणुच्चय सिहिंच ॥ वृषभ गज सिंह श्रीदेवता पुष्पमाला युग्म चंद्रमा सूरज इंद्रध्वज पूर्णकलश पद्मसरोवर क्षीरसमुद्र देवविमान भवन

सुदर्शनविजय मंदर अचल विद्युन्मालि इन ५ मेरु आश्रित १६० विजय हैं इन क्षेत्रोंमे जैनधर्मादि भाव प्रायेंकरके अनादि अनंत है और भरतादिक १० क्षेत्रोंमे जैन धर्म पुण्यप्रभाव धर्मप्रणेता श्रीतीर्थंकरादिक सर्व अनियत भाव सादि सांत होतें हैं और भरतादि १० क्षेत्रोंमें जो जो अनियत भाव नियत भाव है सो सर्व अनादि अनंत जाणना और इन सिवाय जो क्षेत्र हैं उनोंमे सर्व भाव प्रायेंकरके अनादि अनंत भांगेमे हैं यह जगत्स्थितिस्वभाव अनादिसें है अनंत कालतक रहेगा एसा लोक स्वभाव है और जीव पुद्गल पुण्य पापके कारणसें इस जगतमे विचित्रता देखणे में आवे है परंतु १४ रज्वात्मक इस लोकका कोइ कर्त्ता नहिं अनादि लोकानुभावसें हि बणा हूवा है यह निसंदेह है

रत्नराशि अग्निशिखा, यह १४ स्वप्ना देखा, और गर्भके प्रभावसें उत्तम उत्तम जो जो डोहला, मरुदेवी माताकों उत्पन्नहुवा, सो इंद्र आयके पूर्ण किया पीछे सर्व दिशायें सुभिख्य समें, मिति चैत्रवदि ८ के दिन, उत्तरापाढा नक्षत्रके विषे, भगवानका जन्म हुवा उसी वखत, रुचक नामकाद्वीप उसके मध्यभागे वलयाकारगोल ८४ हजार योजन उंचो और (१००००) दसहजार २२ योजन मूलमे, और (४०००) चार हजारने २४ योजन शिखरऊपर विस्तार है तद् यथा—

वहुसंख, विगप्पे, रुयगद्दीव, उचत्ति सहस्स चुलसीई,
नर नग सम रुयगो पुण, वित्थरि सयठाण सहसंको २५९
तस्स सिहरंमि चउदिसि, वीयसहस्स इगिगु चउत्थि अट्ठऽट्ठ,
विदिसि चउ इय चत्ता, दिसि कुमरि कूड सहस्सुचा २६०

अवतरण—रुचकद्वीपके संख्याका घणा विकल्प मेद है ८४ हजार योजन उंचो है' और मानुपोत्तर पर्वत सदृश रुचक पर्वत है, विस्तारमे सो अकके स्थानमे, हजारका अंक जाणना, २५९, और रुचक द्वीप संख्या विकल्प मूल पाठ देते है, दोकोडी सहस्साइं, छचेनसयाइं डकवीसाइ, चउयालसयसहस्साइ, विसंभो कुंडलोदीनो, १, दसकोडी सहस्साइं, चत्तारिसयाइं पंचसीयाइ' वावत्तरिंचलख्खा,, विक्खभोरुयगदीनस्स,, २,, यह द्वीपपन्नतिकीनिर्युक्तिमाहे कुंडलद्वीप और रुचकद्वीपको विष्कंभ कह्यो है,, १, जवुधायई पुक्खर, वारुणी खीर घय खोय नदी सरा, सरा अरण रूणनाय कुडल, सरसरुयगभुयग कुस कुचा, ।

११ ए संघयणीकी गाथाके अनुसारे ११ मो कुंडल द्वीप और १३ मो रुचकद्वीप, २, तिपडोयारातहारुणाईया,, इसप्रमाणसें एक नामका ३ नामहोणसें १० मो कुंडलद्वीप आवे है, और २१ मोरुचकद्वीप है, ३ विकल्प, जंबूदीवे लवणे, धायइ कालोय पुक्खरे वरुणे, खीर घय खोय नंदी, अरुणवरे कुंडले रुयगे, यह ४ विकल्प है,, पूर्वोक्त ४ संख्याके विकल्पोंकरके विराजमान रुचकपर्वत है,, उस रुचकपर्वतके शिखरकेविपे' पूर्वादिक ४ दिशाकेविपे, २ हजार योजन जांहांपर होवे है, वहां १-१ कूट है, और चोथा ४ हजारके विपे, पूर्वादि ४ दिशामें, ८-८ कूट है, यह कूट दिशाकुमारीका जाणना,, और ९ मुं सिद्ध कूट है,, तथा विदिशाके विपे जे ४ कूट है,, सो १ हजार योजन मूलमें विस्तार है,, और १ हजार योजन उंचा है,, शिखर ऊपर ५०० योजनका विस्तार है,, एसर्वे ४० कूटके विपे रुचकवासिनी, दिसिकुमरीके तांदिशिके विपे जे कुमरीवसे है,, उणोंका नाम इस प्रमाणे है,, १७ नंदोत्तरा १८ नंदा १९ सुनंदा २० नंदवर्द्धनी २१ विजया २२ वैजयंती २३ जयंती २४ अपराजिता यह ८ पूर्व रुचकके विपेवसे है, २५ समाचारा २६ सुप्रदत्ता २७ सुप्रवुद्धा २८ यशोधरा २९ लक्ष्मीवती ३० शेषवती ३१ चित्रगुप्ता ३२ वसुंधरा यह ८ दक्षिण रुचकके विपेवसे है,, ३३ इलादेवी ३४ सुरादेवी ३५ पृथ्वी ३६ पद्मावती ३७ एकनाशा ३८ अनवमिका ३९ भद्रा ४० अशोका यह ८ पश्चिम रुचकके विपेवसे है, ४१ अलंवुसा ४२ मिश्रकेशी ४३ पुंडरीका ४४ वारुणी ४५ हासा ४६ सर्वे प्रभा

४७ श्री ४८ ह्री यह ८ उत्तर रुचकके विपेवसे है,, ४९ चित्रा ५० चित्रनाशा ५१ तेजा ५२ सुदामिनी यह ४ विदिगाके रुचकमेवसे है,, ५३ रूपा ५४ रूपांतिका ५५ सुरूपा ५६ रूपवती यह ४ मध्यरुचकके विपेनसे है,, इयचत्ताकेतां, यह सर्व ४० दिशाकुमारी रुचक नामा पर्वतके ऊपर रहे है,, ओर पहिली १६ दिशा कुमारी मेरुके हेठे-ऊपर अधोलोक और उर्ध्वलोकमे रहे है, उणोकानाम यह है, १ भोगंकरा २ भोगवती ३ सुभोगा ४ भोगमालिनी ५ सुवत्सा ६ वत्समित्रा ७ पुष्पमाला ८ अनंदिता यह ८ अधोलोकवासीनी है, और मेरुपर्वतके पास गजदंता पर्वत है, उणोके नीचे भवनोंमे वसे है।

तद् यथा—

अहोलोगवासिणीउं, दिसाकुमारीउं।
अट्ठ एएसिं, हिट्ठा चिट्ठंति, भवणेसु ॥

१२८ यह गाथा सुगम है, ९ मेघंकरी १० मेघवती ११ सुमेघा १२ मेघमालिनी १३ सुवत्सा १४ वत्समित्रा १५ वलाका १६ वारिषेणा, यह ८ ऊर्ध्वलोकवासीनी है, मेरुपर्वतके ऊपर नंदन नामा वन है, उसमे ८ दिशाकुमारीका कूट है उणोंके ऊपर भवनोंमेवसे है, तद् यथा, नवरं भवण पासायंतरट्ठ दिसिकुमरि-कूडावि, १२२, अवतरण-जिनभवन और प्रासादके ८ आतरोंमे ८ दिशाकुमारीका कूट है, सोमनसवनसें नदनवनमें इतना विशेष है, १२२ यह सर्व ५६ दिक्कुमारी देव्यां आयके, सूतिका जन्मोच्छव किया, पीछे उसीवखत रात्रिकों १ अच्युतेंद्र २ प्राण-

तेंद्र ३ सहस्रारेंद्र ४ शुक्रेंद्र ५ लांतकेंद्र ६ ब्रह्मेंद्र ७ माहेंद्र ८ सनत्कुमारेंद्र ९ ईशानेंद्र १० सौधर्मेंद्र ११ वलींद्र १२ चमरेंद्र १३ भूतानेंद्र १४ वेणुदालींद्र १५ हरिस्सहेंद्र १६ अग्निमाणवेंद्र १७ विसिष्टेंद्र १८ जलप्रभेंद्र १९ मितवाहनेंद्र २० प्रभंजनेंद्र २१ महाघोषेंद्र २२ धरणेंद्र २३ वेणुदेवेंद्र २४ हरिकांतेंद्र २५ अग्निशिखेंद्र २६ पूर्णेंद्र २७ जलकांतेंद्र २८ अमितगतींद्र २९ वेलंबेंद्र ३० घोषेंद्र ३१ चंद्रेंद्र ३२ सूर्येंद्र ३३ कालेंद्र ३४ महाकालेंद्र ३५ सरूपेंद्र ३६ प्रतिरूपेंद्र ३७ पूर्णभद्रेंद्र ३८ माणिभद्रेंद्र ३९ भीमेंद्र ४० महाभीमेंद्र ४१ किंनरेंद्र ४२ किंपुरुषेंद्र ४३ सत्पुरुषेंद्र ४४ महापुरुषेंद्र ४५ अतिकायेंद्र ४६ महाकायेंद्र ४७ गीतरतींद्र ४८ गीतयशेंद्र ४९ सन्निहितेंद्र ५० सामानिकेंद्र ५१ धात्रेंद्र ५२ विधात्रेंद्र ५३ ऋषींद्र ५४ ऋषिपालेंद्र ५५ ईश्वरेंद्र ५६ महेश्वरेंद्र ५७ सुवत्सेंद्र ५८ विशालेंद्र ५९ हास्येंद्र ६० हास्यरतींद्र ६१ श्वेतेंद्र ६२ महाश्वेतेंद्र ६३ पतकेंद्र ६४ पतकपतींद्र इन ६४ इंद्रोंका आसन कंपायमान हुवा, तव अवधिज्ञानसें प्रथम भगवानका जन्म हुवा जाणके जन्मोत्सव करनेकों, मेरुपर्वत ऊपर आए, जिसमे पहिला सौधर्मेंद्र भगवानकी माताके पासे आयके, मंगलीकके अर्थ माताके पासे, भगवानके समान, दूसरा प्रतिबिंब रखके, भगवानकों मेरुगिरिके ऊपर लेगया ५ रूपसें उहां वडे उच्छवसें स्नात्रकरायके अष्टद्रव्यसें, पूजाकरके, अगाडी ३२ वद्ध नाटक करके, भगवानकों, पीछा माताके पासें लायके स्थापन किया, क्रोडों सोनइयां की तथा और वस्त्र धान्य हिरण्यादिककी वर्षाकरके

नाभि राजाका वर भरदिया पीछे सर्व इंद्र आठमा नंदीश्वर द्वीप जायके अट्ठाहि उच्छव करके, अपनें २ स्थान गए। (फेर) नाभि राजानें दश दिनपर्यंत जन्मके उच्छव किये (उस वखत) युगलिया लोक कुछभी जाणते नहीं थे (इसवास्ते) सोधर्म इन्द्रनें, वहुतसे देवता देव्योकों भगवानकेपास रखदिये (सो) सर्व व्यवहार चलाते करते रहे ॥ (पीछे) ११ मे दिन, कल्पवृक्षोंका दिया हुवा, नानाप्रकारका भोजन, सर्व युगलियाको जिमायके, नाभि राजाये, रिषभ कुमर नाम स्थापन किया। नाम स्थापनका ये हेतु हैं (कि) भगवानकी दोनुंसाथलोंमे वृषभका लाछन था। (दूसरो) मरुदेवी मातानें, चवदे सुपनाके प्रथम स्वप्नमे, वृषभ देखा था (इसमेती) रिषभ कुमर नाम स्थापन किया ॥ बाल अवस्थामे श्रीऋषभदेवकों जब भूख लगती थी (तब) अपने हाथका अंगूठा, मुखमे लेके चूसलेते थे। उस अंगुठेमें, इन्द्रने अमृतसंचार कर दिया था। जब ऋषभदेवजी बडे हुए (तब) देवता उनकों कल्पवृक्षोंके फललयाकर देते थे। वे फल खाते थे। जब ऋषभदेव, कुछन्यून एक वर्षके हुए (तब) इन्द्र आया। खाली हाथसें स्वामिके पास न जाना। इसें इक्षुदंड हाथमे लेके आया (उसवखत) श्रीऋषभदेव कुमर, नाभि कुलकरकी गोदीमें बैठे थे। तब भगवानकी दृष्टि इक्षुदंडपर पडी। तब इन्द्रनें कहा (कि) हे भगवन् इक्षु भक्षण करोगे (तब) श्रीऋषभदेव कुमरने हाथ पसार्या। तब इन्द्रने, ऋषभदेव कुमारके, इक्षुकी इच्छा उत्पन्न होणेमें, भगवान्का इक्ष्वाकु कुल स्थापन करा (यासे इक्ष्वाकु

वंशकी उत्पत्ति भई) और श्रीऋषभदेवजीके वंशवालोनें, काश्य वनस्पति विशेषका रस पीया (इसवास्ते) काश्यपगोत्र प्रसिद्ध हुवा ॥ श्रीऋषभदेवजीके, जिस जिस वयमें जो जो काम उचित था, सो सर्व इन्द्रनें आयके करा (यह) अनादिकालसें, जो जो इन्द्र होते आये है उन सबका येही आचार है। कि प्रथम भगवान्के वयोचित सर्व काम करना ॥

(इस अवसरमें) एक लडकी, एक लडका, अर्थात् स्त्री और पुरुष रूप जोडा बालअवस्थामें, तालवृक्षके हेठे खेलते थे। उहां तालके फल गिरनेंसें लडका मरगया (तब) लडकीकुं नाभिकुलकरकूं लायके सोंपी (तब) उसनें ऋषभदेवके विवाह योग्य जाणके, यतनसें अपणेपास रक्खी। तिसका नाम सुनंदा था (और) दूसरी ऋषभदेवकेसाथ जन्मी थी। उसका नाम सुमंगला था। इस दोनोंकेसाथ ऋषभदेव बाल्यावस्थामें खेलते हुए, यौवनवयमें प्राप्त हुए। (तब) इन्द्रनें विवाहका प्रारंभ करा। आगे युगलीयांके समयमें विवाहविधि नहीं थी। (इसवास्ते) यह विवाहमें, पुरुषके कृत्य तो सर्व इन्द्रनें करे (और) स्त्रीयोंकी तरफसे सर्व कृत्य इन्द्राणीनें करे (तबसें) विवाहविधि सर्व जगत्मे प्रचलित भया। तब ऋषभदेव दोनों भार्योंकेसाथ संसारिक विषयसुख भोगवतां, छलाख पूर्ववर्ष व्यतीत भए (तब) सुमंगला राणीके, भरत (और) ब्राह्मी, यह युगल जन्मा। (तथा) सुनंदाके बाहुबली (और) सुंदरी यह युगल जन्मा। पीछेसें सुनंदाके तो और कोइ पुत्रपुत्री नहिं हुवे (परंतु) सुमंगला देवीके उगणपचास (४९) जोडे पुत्रोंहीके हुवे। यह सब मिलकर सो (१००) पुत्र (और) दो पुत्रियों भई ॥

॥ अब सो पुत्रोंके नाम लिखते हैं ॥

१ भरत । २ बाहुबली । ३ श्रीमस्तक । ४ श्रीपुत्रांगारक । ५ श्रीमल्लिदेव । ६ अगज्योति । ७ मलयदेव । ८ भार्गवतार्थ । ९ वंगदेव । १० वसुदेव । ११ मगधनाथ । १२ मानवर्चिक । १३ मानयुक्ति । १४ वैदर्भदेव । १५ वनवासनाथ । १६ महीपक । १७ धर्मराष्ट्र । १८ मायकदेव । १९ आसक । २० दडक । २१ कलिंग । २२ ईषकदेव । २३ पुरुषदेव । २४ अकल । २५ भोगदेव । २६ वीर्यभोग । २७ गणनाथ । २८ तीर्णनाथ । २९ अबुदपति । ३० आयुवीर्य । ३१ नायक । ३२ काक्षिक । ३३ आनर्त्तक । ३४ सारिक । ३५ ग्रहपति । ३६ करदेव । ३७ कच्छनाथ । ३८ सुराष्ट्र । ३९ नर्मद । ४० सारस्वत । ४१ तापसदेव । ४२ कुरु । ४३ जंगल । ४४ पंचाल । ४५ शूरसेन । ४६ पुटदेव । ४७ कालिंगदेव । ४८ काशीकुमार । ४९ कौशल्य । ५० भद्रकाश । ५१ विकाशक । ५२ त्रिगर्त्तक । ५३ आवर्प ५४ साल्नु । ५५ मत्स्यदेव । ५६ कुलियक । ५७ मुपकदेव । ५८ बाल्हीक । ५९ कांबोज । ६० मृदुनाथ । ६१ मांद्रक । ६२ आत्रेय । ६३ यवन । ६४ आभीर । ६५ वानदेव । ६६ वानस । ६७ कैकेय । ६८ सिंधु । ६९ सोवीर । ७० गंधार । ७१ काष्टदेव । ७२ तोपक । ७३ शौरक । ७४ भारद्वाज । ७५ शूरसेन । ७६ प्रस्थान । ७७ कर्णक । ७८ त्रिपुरनाथ । ७९ अवंतिनाथ । ८० चेदीपति । ८१ विष्कंभ । ८२ नैषध । ८३ दशार्णनाथ । ८४ कुसुमवर्ण । ८५ भूपालदेव । ८६ पालप्रभु । ८७ कुशल । ८८ पद्म । ८९ महापद्म । ९० विनिद्र ।

९१ । विकेश । ९२ वैदेह । ९३ कच्छपति । ९४ भद्रदेव । ९५ वज्रदेव । ९६ सांद्रभद्र । ९७ सेतज । ९८ वत्सनाथ । ९९ अंगदेव । १०० नरोत्तम (यह) श्रीऋषभदेवजीके १०० पुत्रोंका नाम कहा ॥

॥ अथ राज्याभिषेक, विनीता नगरी अधिकारः ॥

(इस अवसरमें) जीवोंके कषाय प्रबल होजानेसें । पूर्वोक्त हकारादि तीनों दंडनीतिका, लोक भय नहिं करनें लगे (इस अवसरमें) लोकोंनें सर्वसें अधिक, ज्ञानादि गुणों करके संयुक्त, श्रीऋषभदेवकों जानके, युगललोक, श्रीऋभदेवकों कहते हुए । (कि) अब सर्व लोक दंडका भय नहि करते हैं । (तब) मति १ । श्रुति २ । अरु । अवधि ३ । यह ज्ञानकरके युक्त (ऐसे) आदिकुमर युगलियोंकुं कहते हुए (कि) जो राजा होता है (सो) दंडकर्त्ता है । फेर उसकी आज्ञा कोई उल्लंघन नहिं कर सकता है । ऐसे वचन सुनकर, वे युगलिये बोले (कि) ऐसा राजा हमारेभी होना चाहिये । (तब) आदिकुमर बोले । जो तुमारी इछा ऐसी है (तो) नाभि कुलकरसें याचना करो । (तब) तिनोंने नाभिकुलकरसें वीनती करके (तथा) आज्ञा लेके, आदिकुमरकुं राज्याभिषेक करणेके लिये,—गंगाका जल लेनेंकुं गए (इस समें) सौधर्मइंद्रका आसन कंपमान हुवा । तब अवधि ज्ञानसें, राज्याभिषेकका अवसर जानके, बहुतसे देवता देवीयोंके संग सौधर्मेंद्र आके, श्रीआदिकुमरका राज्याभिषेक, संपूर्ण विधिसंयुक्त, महोत्सवके साथ करा । (जिसवखत) छत्र, मुकुट, कुंडलादिक,

आभरण सहित, रत्नजडित सिंहासनपर बेठे है । उस्समय, वे युगल लोक, कमलके पत्तोंमें जल लेके आये । (वहा) वस्त्राभरण सहित सिंहासनपर बेठे देखके, अंगूठेपर जलाभिषेक किया (तब) इंद्रनें विचारा (कि) यह युगल लोक बडे विनयवान है। ऐसा जानके वैश्रमण नामा देवकुं आज्ञादीनी (कि) आदिराजाके (तथा) इस विनीत पुरुषोंके, रहनेके योग्य, विनीता नामसें, १ नगरी स्थापित करो (तब) वैश्रमण देवने, गढ, मढ, प्रोल, प्राकारादिक, संयुक्त, वर्णन योग्य, १२ योजन, ४८ कोसमें लंबी ९ योजन चवडी नगरी बनाई। जिसके मध्य भागमें २१ भूमिकाका मकान श्रीआदि राजाके रहने योग्य बनाया (और) सर्व भाई बेठाके योग्य, सात सात भूमिके मकान (और) दूसरोंके योग्य, तीन २ भूमिये मकान बनाये। इसका विस्तार संबंध, सेत्रुंज महात्म्यसे जाण लेना (अब) आदि राजा, चतुरंगिणी सेनाकेवास्ते प्रथमतोहोतवसे । हाथी, घोडे, गाय, भेंसे, प्रमुख, उपयोगी जानवरोंकुं, वनसे मगायके संग्रह करे (और) च्यार वंशकी स्थापना करी । उग्र १। भोग २। राजन्य ३। क्षत्रिय ४। जिसकुं कोटवालकी पदवी दीनी (सो) उग्र दंडके करनेसें, उग्रवंशी कहलाने १ (तथा) जिसकुं आदि राजानें, गुरुतुल्य बडे करके माने, तिनसे वो भोगवंशी कहलाए २ (तथा) आदि राजाके, स्वजनसंबंधि मित्रादिकके, राजन्य वंश कहलाए ३ (और) प्रजागणके सर्व क्षत्री वंश कहलाए ४ (अब युगलियोंके आहारकी विधि कहते है) हीन कालके प्रभावसें, कल्पवृक्ष

२ दत्तसूरि०

फल देनेसें रह गए। तब लोक, और वृक्षोंके, कंद मूल पत्र फल फूल खाने लगे। केईक इक्षुका रस पीने लगे (तथा) सतरे जातिका कच्चा अन्न खाने लगे (परंतु) कितनेक दिनोंतक कच्चा अन्न उनकों जीर्ण न होनेसें, ऋषभदेवजीनें उनकों कहा (कि) तुम हाथोंसे मसलके, तूंतडा दूर करके, खाओ (फेर) कितनेक दिनों पीछें, वैसेभी पाचन न होने लगा। तब अनेक भांतसें कच्चा अन्न खानेकी विधि वताई। तोभी काल दोषसें अन्न पाचन न होनें लगा (इस अवसरमें) जंगलोंमे वांसादिक घसनेसें अग्नी उत्पन्न हुवा। पहली कितनेक कालतक अग्नि विछेदथा (क्युं कि) एकांत स्निग्ध कालमें (और) एकांत रुक्ष कालमें, अग्नी किसी वस्तूसें उत्पन्न नहिं होसक्ती है (कदाचित्) कोई देवता विदेह क्षेत्रसें अग्नीकों लेभी आते (तोभी) इहां तत्काल बुझ जाता था (इसवास्ते) पहले अग्नीसें पकाके खानेका उपदेश नहिं दिया (पीछे) तिस अग्नीकों तृणादि दाह कर्त्ता देखके, अपूर्व रत्न जानके पकडने लगे। जब हाथ जले, तब भयसें आदि राजाकूं आयके कहा (और) अपणा हाथ जला हुवा देखाया (तब) आदि राजानें अग्नी ले आनेका, और फल फूल पकायके खानेका विधि वताया। फेर आप हाथीपर बेठे हुवे वनमें आये। युगलियोंकेपास लीली मट्टी मंगायके, हस्तीपर बेठे हुवे सर्वके सामने एक हांडी वनायके दीवी (और) कहा कि, इसकुं अग्नीमें रखके पकावो। हांडी पकके तैयार भई (तब) उसमें धान्यका, जलका प्रमाण, रांध-

नेका सर्व विधि बताया । जिसके हाथसें मट्टी मगाई । और हांडी पकवाई (जिमसें) कुंभकार कर्म प्रगट हुवा । इससेती कुंभकारकुं, प्रजापति (तथा) पर्याप्ति कहते हैं (फेर) सनें सने, सर्व आहार पकाके खानेका विधि प्रगट हो गया (औरभी) संपूर्ण कर्म, कला मात्र, अपना पुत्रादिक प्रजा गणकुं बताई । आदि राजाके उपदेशसें, पांच मूल शिल्प (अर्थात्) कारीगर बने । कुंभकार १ । लोहकार २ । चित्रकार ३ । तंतुकार वस्त्र बणनेंवाले ४ । नापित ५ । (इम) एकेक शिल्पका, अवांतर २० बीस भेद रहें हैं । (इससें) सब मिलके १०० भेद शिल्पके प्रसिद्ध हुवे (तथा) कर्षण कर्म, खेती आदिक करणा । (तथा) वाणिज्य कर्म, व्यापारादिक करनेंकी रीति, तिससें धन उपार्जन करणा । धनका ममत्व करना । धनकों शुभ क्षेत्रादिकमें लगाना (इत्यादि) संपूर्ण जगत् प्रसिद्ध कर्म बताये । (प्रथम) मट्टीके संचयोंमे, अहरण हथोडी प्रमुख बनाये (पीछे) उससें उपयोगी काम लायक सर्व वस्तु बनाई गई ॥ (और) भरतादि प्रजा लोकोंको बहोत्तर कला सिखलाई (तथा) स्त्रियोंकों चोसठ कला सिखलाई (इन सर्व कलाके नाममात्र लिखते हैं) ॥

॥ पुरुषोंकी ७२ कलाका नाम ॥

१ लिखनेंकी कला । २ पटनेंकी कला । ३ गणितकला । ४ गीतकला । ५ नृत्य । ६ ताल बजाना । ७ पटह बजाना । ८ मृदंग बजाना । ९ वीणा बजाना । १० वंशपरीक्षा । ११ भेरीपरीक्षा । १२ गजशिक्षा । १३ तुरंगशिक्षा । १४ धातु-

वाद । १५ दृष्टिवाद । १६ मंत्रवाद । १७ वलिपलितविनाश । १८ रत्नपरीक्षा । १९ नारीपरीक्षा । २० नरपरीक्षा । २१ छंदबंधन । २२ तर्कजल्पन । २३ नीतिविचार । २४ तत्वविचार । २५ कविशक्ति । २६ ज्योतिप शास्त्रका ज्ञान । २७ वैद्यक । २८ षट्भापा । २९ योगाभ्यास । ३० रसायणविधि । ३१ अंजनविधि । ३२ अठारह प्रकार की लिपि । ३३ स्वप्नलक्षण । ३४ इंद्रजालदर्शन । ३५ खेती करणी । ३६ वाणिज्य करणा । ३७ राजाकी सेवा । ३८ शकुनविचार । ३९ वायुस्थंभन । ४० अग्निस्थंभन । ४१ मेघवृष्टि । ४२ विलेपन विधि । ४३ मर्दनविधि । ४४ ऊर्द्धगमन । ४५ घटबंधन । ४६ घटभ्रमण । ४७ पत्र छेदन । ४८ मर्मभेदन । ४९ फलाकर्षण । ५० जलाकर्पण । ५१ लोकाचार । ५२ लोकरंजन । ५३ अफल वृक्षोंकों सफल करणा । ५४ खड्गबंधन । ५५ छुरीबंधन । ५६ मुद्राविधि । ५७ लोहज्ञान । ५८ दांतसमारण । ५९ काललक्षण । ६० चित्रकरण । ६१ बाहुयुद्ध । ६२ मुष्टियुद्ध । ६३ दंडयुद्ध । ६४ दृष्टियुद्ध । ६५ खड्गयुद्ध । ६६ वाग्युद्ध । ६७ गारुडविद्या । ६८ सर्पदमन । ६९ भूतदमन । ७० योग, सो द्रव्यानुयोग अक्षरानुयोग, व्याकर्ण, औषधानुयोग, ७१ वर्षज्ञान, ७२ नाममाला ॥

॥ स्त्रीयोंकी ६४ कलाका नाम ॥

१ नृत्यकला । २ औचित्यकला । ३ चित्रकला । ४ वादित्र ५ मंत्र । ६ तंत्र । ७ ज्ञान । ८ विज्ञान । ९ दंभ । १० जलस्थंभ । ११ गीतगान । १२ तालमान । १३ मेघवृष्टि । १४ फलाकृष्टि ।

१५ आरामारोपण। १६ आकारगोपन। १७ धर्मविचार। १८ शकुनविचार। १९ क्रियाकल्पन। २० संस्कृतजल्पन। २१ प्रसादनीति। २२ धर्मनीति। २३ वाणिवृद्धि। २४ स्वर्णसिद्धि। २५ तैलसुरभिकरण। २६ लीलासंचरण। २७ गजतुरंगपरिक्षा। २८ स्त्रीपुरुषके लक्षण। २९ कामक्रिया। ३० अष्टादश लिपि परिच्छेद। ३१ तत्कालबुद्धि। ३२ वस्तुसिद्धि। ३३ वैद्यकक्रिया। ३४ सुवर्णरत्नभेद। ३५ घटभ्रम। ३६ सारपरिश्रम। ३७ अजनयोग। ३८ चूर्णयोग। ३९ हस्तलाघव। ४० वचनपाटव। ४१ भोज्यविधि। ४२ वाणिज्यविधि। ४३ काव्यशक्ति। ४४ व्याकरण। ४५ शालिखंडन। ४६ मुखमंडन। ४७ कथाकथन। ४८ कुसुमगुंथन। ४९ वरवेष। ५० सकल भाषा विशेष। ५१ अभिधान परिज्ञान। ५२ आभरण पहरण। ५३ भृत्योपचार। ५४ गृहाचार। ५५ शाठ्यकरण। ५६ परनिराकरण। ५७ धान्यरंधन। ५८ केशबंधन। ५९ वीणादिनाद। ६० वितंडावाद। ६१ अंकविचार। ६२ लोकव्यवहार। ६३ अंत्याक्षरिका। ६४ प्रश्नप्रहेलिका॥ यह स्त्रीकी ६४ कला कही॥

अनकी सर्व संसारीक कला पूर्वोक्त कलायोंका प्रकारभूत है (इसवास्ते) सर्व कला इनहीके अंतर्भाव हैं (जैसें) प्रथम लिपि कला के १८ भेद दक्षिण हाथसें ब्राह्मी पुत्रीकों सिखाया। तिनके नाम कहते हैं॥ १ हंस लिपि। २ भूत लिपि। ३ यक्ष लिपि। ४ राक्षसी लिपि। ५ यावनी लिपि। ६ तुरकी लिपि। ७ किरी लिपि। ८ द्रावडी लिपि। ९ सैंधवी लिपि। १० मालवी लिपि।

११ नडी लिपि । १२ नागरी लिपि । १३ लाटी लिपि । १४ पारसी लिपि । १५ अनिमित्ती लिपि । १६ चाणकी लिपि । १७ मूलदेवी लिपि । १८ उड्डी लिपि ॥ (यह) अठारह प्रकारकी ब्राह्मी लिपि, देश विशेपके भेदसें, अनेक तरहकी हो गई। (जैसेंकी) १ लाटी । २ चोडी । ३ डाहली । ४ कानडी । ५ गौर्जरी । ६ सोरठी । ७ मरहठी । ८ कौंकणी । ९ खुरासाणी । १० मागधी । ११ सिंहली । १२ हाडी । १३ कीरी । १४ हम्मीरी । १५ परतीरी । १६ मसी । १७ मालवी । १८ महायोधी । (इत्यादि) लिपि सिखाई (तथा) सुंदरी पुत्रीकों वाम हाथसें अंक विद्या सिखाई । (और) जो जगतमें प्रचलित कला है । जिनोंसे कार्य सिद्ध होते हैं । (वे सर्व) श्रीऋपभदेवनें प्रवर्त्ताई है । तिसमें कितनीक कला, कई वार लुप्त हो जाती है । फिर समय पाकर प्रगटभी हो जाती है (परंतु) नवीन कला, वा विद्या, कोइभी उत्पन्न नहिं होती है । जो कला व्यवहार, श्रीऋपभदेवजीनें चलाया है । उसका विस्तार, सर्व आवश्यक सूत्रसें देख लेना ॥

श्री आदिराजायें, भरतकेसाथ ब्राह्मी जन्मी थी । तिसका विवाह तो, बाहुबलीकेसाथ किया (और) बाहुबलीकेसाथ, जो सुंदरी जन्मी थी । उसका विवाह भरतके साथ कर दिया । तबसें माता पिताकी दीवी हुई कन्याका विवाह प्रचलित हुवा । (इससें) पहले एक उदरके उत्पन्न हुवे, भाई बहिनके संबंध होता था (वो) दूर किया ॥ (तब) लोकभी इसीतरे विवाह

करनें लगे (और) विवाहका विधि, सर्व आदिराजाके विवाहममे, इंद्र, इंद्राणियोनें करा था। उसीमुजब करने लगे ॥ श्री आदिराजाने बहुत कालतक राज्य किया । संपूर्ण राज्यनीतीसें, प्रजोके अर्थ, मवतरेके सुख उत्पन्न किये। (इस हेतुसें) श्रीऋषभदेव स्वामीकों सर्व जगत्स्थितिका कर्त्ता, जैनी लोक मानते हैं (दूसरे मतवाले) जो ईश्वरकी करी सृष्टी मानतेहैं । (वेसी) ईश्वर, आदीश्वर, जगदीश्वर, योगीश्वर, जगत्का कर्त्ता, ब्रह्मा आदि, विष्णु आदि, योगी आदि, भगवान् आदि अर्हत, आदि तीर्थकर, प्रथम बुद्ध, महादेव (इत्यादि) जो नाम ओर महिमा गाते हे (वे सर्व) श्री ऋषभदेवजीकेही गुणानुवाद है (ओर) कोई सृष्टीका कर्त्ता नही है ॥ सर्व जगत्का व्यवहार चलाकर शेषमें भरतपुत्रकुं, विनीता नगरीका राज्य दीया ॥ बाहुबली पुत्रकु, तक्षशिला नगरीका राज्य दीया ॥ शेप ९८ पुत्रोंको उनोंके नामसें, जूदे २ देश वसायके राज्य दीये (जनसें) अंग, बंग, कलिंगादि देशोंके नाम प्रसिद्ध हुवे। (ओर) सर्व गोत्रियोंकुभी, यथायोग्य आजीविकाके विभाग कर दिये (इससमे) नव लोकांतिक देवताने भगवानकुं दीक्षाका अवसर जनाया । भगवान् आप अपणे ज्ञानसें दीक्षाका अवसर जानते हे (तथापि) लोकांतिक देवोंका यहहीज जीत व्यवहार है (पीछे) संवत्सरी दान देके, चैत्र वदि ८ के दिन, मच्छ, कच्छ, प्रमुख ४ हजार सामंत पुरुषोंकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी। दीक्षाका महोत्सव सर्व, ६४ इंद्रोंने मिलके करा (तब) भगवानकुं चोथा मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न

भया। दीक्षा लिये बाद, १ वर्षतक शुद्ध आहार साधूके लेनें योग्य नहिं मिला। जहां भगवान् जावें (वहां) हाथी, घोडे, आभूषण, कन्या, इत्यादिक बहुतसे भेट करे। (परंतु) शुद्ध आहार देनेकी विधि कोइ नही जानें (क्यूं कि) आगे कोइ भिक्षाचर देखा नही था॥ और भगवान् उससमय त्यागी थे (इसवास्ते) आहार विगर कोइभी पदार्थ ग्रहण करा नहिं। (पीछे) १ वरषके बाद, वैशाख सुदि ३ कुं, हथनापुर आये। (तहां) श्री ऋषभदेव स्वामीका पडपौत्र, श्रेयांसकुमरनें जातिस्मरण ज्ञानके बलसें, भगवानकुं इक्षुरसका पारणा कराया। उस वखतमें, ५ दिव्य देवतानें प्रगट करे। साढा १२ क्रोड सोनइयांकी वरषा करी। श्रेयांसका जश तीन भवनमें फेला। तव लोकोंनें आयके पूछा (कि) तुमने ऋषभदेव स्वामीकुं भिक्षार्थी केसेंजाने। तव श्रेयांस कुमरनें आपणे (अरु) ऋषभदेव स्वामीकेसाथ, ८ भवोंका संबंध कहा (इससेती) भगवान्कुं साधु मुद्रामें देखके, मेरेकुं जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न भया। तिनसें ८ भवोंका संबंध, तथा भिक्षार्थीपणा जाना॥ इसका विस्तार सर्व आवश्यक सूत्रसें जाण लेना॥ जब भगवानकुं एक वर्षतक शुद्ध आहार न मिला (तव) मच्छ, कच्छ प्रमुख ४ हजार पुरुष, जो साथमें दीक्षा लीवी थी (सो) भूखसें पीडित हुवे थके, वनमें गंगाके दोनूं किनारे, तापशपणा धारके, कंद मूल फल फूल खाते हुवे रहनें लगे (और) श्री ऋषभदेवस्वामीका ध्यान जप आदि, ब्रह्मादि शब्दोंसे करनें लगे (इहांसे) तापशादिककी

उत्पत्ति हुई ॥ (जब) श्रेयांस कुमरनें आहार दिया । उस दिनसें सब लोक साधूकूं शुद्ध आहार देनेकी विधि जाननें लगे ॥

॥ अथ विद्याधरोंकी उत्पत्ति कहते है ॥

श्री ऋषभदेवस्वामी दीक्षा लियांकेबाद, १ हजार वर्षतक, देशोमे छद्मस्थपणे विचरते रहे। तिस अवस्थामें। कच्छ (और) महाकच्छके बेटे । नमि, और विनमीने, आकर, भगवान्की बहुत सेवा भक्ति करी (तब) धरणेंद्र संतुष्टमान होके, ४८ हजार पठित सिद्धविद्या उनकुं देकर, वेताढ्यगिरीकी, दक्षिण और उत्तर, यह दोनूं श्रेणीका राज्य दीया । (तब) तिनके वंशी सब विद्याधर कहलाए (इनही) विद्याधरोंके संतानमे रावण, कुंभकर्ण, वालि, सुग्रीव, हनूमानादि, सर्व विद्याधर भए हैं ॥

(एकदा) छद्मस्थ अवस्थामें भगवान् विहारकर्त्ते, तक्षशिला नगरी गए। वहां बाहिर, बागमें काउस्सग्ग करके खडे रहे। यह खबर उहाके राजा, बाहुबलजीकुं हुई । (तब) बाहुबलीने मनमें विचार करा। कि प्रभातसमें वडे आडंबरके साथ, पिता श्री ऋषभदेवजीकुं वांदनेकु जाउंगा ॥ जब प्रभातसमे, वडे आडंबरसें वांदनेकुं गया (तो) वहां भगवानकुं न देखा। वनमालीसें सुना (कि) भगवान् तो, सूर्य उगतेही विहार कर गए (तब) बाहुबली बहुत उदास हुयके, जहां भगवान्काउस्सग्ग मुद्रामें ऊभे थे । उसजगे कानूंमे अंगुली घालकें (बाबा आदम, बाबा आदम) ऐसे ऊचे स्वरसें पुकारके, उसी चरनूंके ठिकाने, रत्न मई

थुंभ बनाके, धर्मचक्र तीर्थ स्थापितकरा। (यह) धर्मचक्र तीर्थ विक्रम राजाके राज्यतक तो रहा (पीछे) म्लेच्छादिकके बहुतसे प्रचारसें, धर्मचक्र तीर्थ, ऐसा नाम तो नष्ट भया (और) यवन लोकोंने उसका नाम, मक्का, ऐसा प्रसिद्ध करा (और) अवलसें तो यवनादिकभी, मद्यमांसादिक अभक्ष नहिं खाते थे। यवनोंके सतमेंभी, नसादिक अभक्ष खाना नहि कहा है (तथापि) जो केइ खाते है। सो धर्मसें विरुद्ध है॥ और श्रीऋषभदेव स्वामी। जिन २ देशोंमे विचरे। वहांका लोकतो प्राये सरलस्वभावी दयावंत हुवे (और) भगवान् जिनदेशोंमे न गए (अरु) जिनूंनें भगवानके दर्शन नहिं करे (वो) सर्व म्लेच्छ, अनार्य, निर्दयी, हो गए। अनेक अपनी कल्पनाके मंत मानने लगे। उनका व्यवहार औरतरहका हो गया॥

(इस कारणसें) सर्व वरणोंका (तथा) सर्व मत मतांतरका (तथा) सर्व वैद्यक, ज्योतिष, मंत्र, तंत्रादिक, संपूर्ण कलाकौशल्यका मूल उत्पत्तिकारण, श्रीऋषभदेवस्वामी भए॥ (जब) श्रीऋषभदेवस्वामीकुं चारित्र लियेबाद, १ हजार वर्ष व्यतीत भए (तब) विहार करके विनीता नगरीके पुरिमताल नामा बागमें आये (जिसकुं) इससमय प्रयागजी कहते है (उहां) वड वृक्षके नीचे, तेलेकी तपस्यायुक्त, मिति फाल्गुन वदि ११ के दिन, प्रथम प्रहरमें, संपूर्ण लोकालोकप्रकाशक, केवलग्यान, केवलदर्शन, उत्पन्न हुवा (उसीवखत) ६४ इंद्र। भुवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिकके देवगण, सर्व आयके समवसरनकी रचना करी॥

॥ अब समवसरनका किंचित स्वरूप लि० ॥

प्रथम भुवनपति, वायुकुमारदेवता, १ योजन पृथ्वीका कचरादिक दूरकरके शुद्ध करे (तदनंतर) भुवनपति मेघकुमार नामे देवता १ योजन पृथ्वीपर सुगंधि जलकी वर्षा करे (तदनंतर) व्यंतर देवता उसी पृथ्वीपर गोडे प्रमाण सुगंधि पुष्पोंकी वर्षा करे (पीछे) व्यंतरदेव पुष्पोंके ऊपर, वनस्पतिकु बाधा रहित, १ योजनमे, रत्नोंकी पीठका बनावे । इस पीठकाके ऊपर, भुवनपति देवता, रूपेमई गढ, सुवर्णमई कांगरांकी रचना करे ॥ तिसके च्यारंदिशे, ४ दरवाजा । छत्र, चामर, तोरण, ८ मंगलीक, धूपघटी (प्रमुख) वर्णनसहित करे (तिसके अदर) ज्योतिषी (देवता) रत्नमई कागरायुक्त, सुवर्णमई कोट, ४ दरवाजासहित करें । (तिसके अंदर) वैमानिक देवता, मणि रत्नमई कागरासहित, रत्नमई कोट ४ दरवाजासहित करे ॥ दरवाजाका वर्णन पूर्ववत् जाण लेना, (अब) इसकोटके मध्यमें, रत्नोंमई १ पीठका बनावे । तिसके ऊपर मध्यभागमे १ रत्नमई स्थटक, वृक्षका थांणा बनावे । तिसके ऊपर, छत्र चामरादि विभूति सहित अशोकवृक्षकी रचनाकरै जिस अशोकवृक्षके नीचे, रत्नजडित सुवर्णमई ४ दिशे ४ सिंहासन स्थापना करे । तिसऊपर, तीन छत्र (अरु) दोनुं तरफ चामर रहे । (और) इसी तरह वर्णनसहित भगवानूके बैठनेके लिये, स्वर्णरत्नमई मध्यकोटके बीचमें देवछंदेकी रचना करे । ऐसा वर्णन सहित समोसरणमें, भगवान् श्रीऋषभदेवस्वामी पूर्वके दरवाजेमें प्रवेशकरके, चैत्य वृक्षके चौत-

रफ, प्रदक्षिणाभूत फिरते हुवे, नमस्तीर्थाय, ऐसा वचन बोलके पूर्वाभिमुख बैठे (शेष) तीन दिशाके सिंहासनपर, भगवान्के समान, प्रतिबिंब व्यंतर इंद्र, स्थापित करे (परंतु) भगवानके अतिशयसें (और) देवानुभावसें चारे दिशासें आनेवाले लोकोंकूं, साक्षात् ऋषभदेव स्वामी, सन्मुख बैठे, उपदेश देते मालुमहूवे (जब) चार मुखसें धर्मोपदेश देते देखके, लोकोंनें ऋषभदेव स्वामीकुं, चतुर्मुख ब्रह्मा, ऐसे नामसें कहनें लगे (धनंजयकोशमेंभी, ऋषभदेव स्वामीका नाम ब्रह्मा लिखा है) जबीसें भगवानका नाम, ब्रह्मा प्रसिद्ध हुवा ॥

(जब) श्री ऋषभदेव स्वामीने केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा सुना (तब) भरत चक्रवर्ति राजा परिवार सहित, वंदन नमस्कार करनेकूं, और धर्मोपदेश सुणनेकूं, आते, रस्तेमें हाथीपर बैठी ऊई, मरुदेवी माता, समवसरण, छत्र चामरादि, अपनें पुत्रका अतिशय देखतेही शुद्ध भावसें केवल ज्ञान पायके, मोक्षकुं प्राप्त भई (तब) भरत राजा, हर्ष शोच सहित समवसरणमें आया। वहां भगवानूके मुखसें धर्मोपदेश सुनके, भरत राजाके ५०० पुत्र, और ७०० पोतूंने दीक्षा ग्रहण करी (तथा) ऋषभ देव स्वामीकी पुत्री, ब्राह्मी प्रमुख, अनेक स्त्रीयोंने दीक्षा ग्रहण करी (इनूंमे) भरत राजाके, वडे पुत्रका नाम, ऋषभसेन पुंडरीक था (वो) भगवानके प्रथम गणधर ऊवा (यह) पुंडरीक गणधर, शत्रुंजय पर्वतउपर अंतमें मोक्षगया (इससें) शत्रुंजय तीर्थका नाम पुंडरीक गिरि प्रसिद्ध भया (इसी मुजब) शत्रुंजय तीर्थके अनेक नाम हुये (वोहोतसे)

स्त्री, पुरुषोंने, देशविरति श्रावक धर्म अंगीकार करा (इस तरह) साधु, साधवी, श्रावक, श्राविकारूप चतुर्विध संघ स्थापित करा। आगे कितनेकवरसोंमें विछेद हुवा थका, इहांसे फिर, साधु श्रावक धर्म प्रवर्त्तन हुवा (इस समयमें) परिव्राजक सांख्य मत-वालेकी उत्पत्ति भई

॥ अब सांख्यमतका स्वरूप लिखते हे ॥

भरतजीके ५०० पुत्रोंने दीक्षा लीथी (उसमे) एकको नाम मरीची था (सो) साधुपना पालना महाकठिन देखके, नवीन मन कल्पित वेष धारन करा (क्यूं कि) पीछा गृहवास करनेमें तो, अपनी हीनता जानके, आजीविका चलानेके लिये मत स्थापित कीया॥ इस रीतिसे अपना व्यवहार वनाया (कि) साधु तो, मन-दंड, वचनदड कायदंड, इन तीनों दंडोसे रहित है (और) में तो इन तीनों दंडो करके संयुक्त हु। इसवास्ते मुजकों त्रिदड रखना चाहिये (दूसरा) साधू तो द्रव्य अरु भाव करके मुंडित हैं। सो लोच कर्ते हे (अरु) मे तो द्रव्य मुंडित हुं (इसवास्ते) मुझे उस्तरे पाछनेसें मस्तक मुंडवाना चाहिये। शिखाभी रखनी चाहियै (तीसरा) साधु तो पंचमहा व्रत पालते हे (अरु) मेरे तो सदा स्थूल जीव की हिंसाका त्याग रहो॥ (चौथा) साधु तो निःकंचन हैं (अर्थात्) परिग्रह रहित हैं। अरु मुझकों एक पवित्रिकादि रखनी चाहिये। (पांचमा) साधु तो शीलसें सुगंधित हैं। अरुमे ऐसा नही हु (इसवास्ते मुझे चदनादि सुगंधि लेनी ठीक हैं (छठा) साधु तो मोह रहित हे (अरु) में मोह संयुक्त हु। इसवास्ते मुझे

(जिनकुं) पुस्तकशून्य,आचारमात्र,ज्ञान बतलाया। शिष्यूंके ऊपर बहु-तसा प्रेम रखता थका, कपिल मुनि, शेषमें काल करके, ५ मा ब्रह्म देवलोकमें देवता हुवा। उत्पत्तिके अनंतर, तत्काल अवधि ज्ञानसें देखा। कि मेनें परभवमें क्या दान पुन्य करा है। तब पूर्व भव देखनेसें, अपणा आसुरी शिष्यकूं ग्रंथज्ञानशून्य देखा। तब विचार कीया। की मेरा शिष्य कुछ जानता नही है (इसवास्ते) में इस कुं कुछ तत्वोपदेश करुं। ऐसा विचार करके, कपिल देव आकाशमें, पंचवर्णा मंडलमें रहकर, तत्वज्ञानका उपदेश कर्त्ता भया। अव्यक्तसें व्यक्त प्रगट होता है (इत्यादि) धर्मका स्वरूप आकासवानीसें सुनके, आसुरीनें तिस अवसरमें, षष्टि तंत्र, प्रमुख अनेक ग्रंथ बनाये (फेर) इसकी संप्रदायमें एक संख नामा आचार्य हुवा। (तबसें) इस मतका सांख्यण साताम हुवा सांख्य परिव्राजक संन्यासियोंके लिंगका, आचारादिकका मूल, यह मरीचि हुवा। एक जैन मतके बिगर सब मतोंकी जड, इसकूं समजना चाहिये ॥

॥ अब जैन पंडित ब्राह्मणोंकी उत्पत्ति लि० ॥

(जिस दिन) श्री ऋषभदेव स्वामीकूं केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा। उसी वखत भरत राजाके, आयुधशालमें हजार देवा धिष्टित चक्ररत्न उत्पन्न हुवा। दोनू तरफका वधाईदार साथमें आया। उन दोनुंकूं वधाई देके धर्मकूं मोटा जानके, प्रथम केवल ज्ञानका उच्छव करके पीछे चक्ररतका उच्छव करा (औरभी) हजार हजार देवाधिष्ठित १३ रत्न उत्पन्न भया। इस १४ रत्नोंके

संयोगसें, भरत क्षेत्रके, छउं खंडमें, अपनी आज्ञा मनाई (इस वास्ते) इसका नाम, भरतखंड, ऐसा प्रसिद्ध हुवा॥ (जब) छखंड साधके, भरत पीछा विनीता नगरीमें आया। (तथापि) चक्ररत्न आयुधशालामें प्रवेश करे नहिं (जब) अपणे ९९ भाइयां कूं अपणी आज्ञा मनाणेके लिये दूत भेजा। (तब) बाहुबलजी विगर ९८ भाइयांने विचार किया (कि) राज्य तो हमकूं, पिता ऋषभदेव स्वामी देगए हैं (तो) इस भरत की आज्ञा कैसें माने। चलो, अब पिताकूं पुछें। जो पिता आज्ञा देवेगा सो करेगें। ऐसा विचारके भगवान्‌केपास गए (तब) ऋषभदेव स्वामीनें उनके मनका अभिप्राय जानके, ऐसा उपदेश करा। जिनसें ९८ भाइयोंनें दीक्षा ग्रहण करी। सब झगडे छोड दीये (और) बाहुबलजी दूतके मुख सें सुनके, बहुतसे क्रोधमें आयके युद्धकी त्यारी करी (तब) भरतजीभी चढके आये। दोनूंके आपसमें बडा युद्ध हुवा॥ भरत तो चक्रवर्त्ती था (और) बाहुबलजी बहोत बल पराक्रमका धरनेवाला था। इसवास्ते बाहुबली युद्धमे हारा नहिं। चक्ररत्न, गोत्रपर चले नहि। इसवास्ते भरतजी जीतसके नहीं (शेषमे) बाहुबलजी आपसें समझके दीक्षा ग्रहण करी। तब लोकोंमे भरतजीकी अपकीर्ति भई (पीछे) भरतजीभी अपणा सब भाईयोंकूं दीक्षालीवी सुनके, चित्तमें उदास होके, उनोंकूं राजी करणेकेलिये, भोजन करानेकों, पकवानोंके गाडे भरायके, भगवान्‌के, समोसरणमे आया (और) केनें लगा, कि अपने भाइयोंकूं भोजनकरायके, मेरा अपराधकूं

मोहाच्छादितकों छत्री रखनी चाहियें (सातमा) साधू जूते रहित है। मुजकों पगोंमे खडावुं प्रमुख चाहियें (आठमा) साधू तो निर्मल है। इसवास्ते उनके शुक्लांबर है (अरु) में तो क्रोध मान माया अरु लोभ, इन च्यारों कषायों करकें मेला हुं (इस वास्ते) मुजे कषायला वस्त्र, (अर्थात्) गेरुंसें रंगे हुवे भगमे वस्त्र रखने चाहिये (नवमा) साधु तो सचित्त जलके त्यागी है। (इस वास्ते) में छाणके सचित्त जल पीउंगा। स्नानभी करुंगा । (इस तरे) स्थूल मृषावादादिकसें निवृत्त हुवा। इस प्रकारसें मरीचिने स्वमतसें अपणी आजीविकाकेवास्ते लिंग बनाया। यहीं लिंग परि-व्राजकोंका उत्पन्न भया। यह मरीचि इस भेषसें भगवान्‌केसाथ विचरता रहा (तब) लोक इसका साधुवोंसे विसदृश लिंग देखके पूछा (तब) मरीचि, साधुका धर्म यथार्थ बतायके कहा (कि) ऐसा कठिन धर्म, मेरेसें पला नही (तब) मेंनें यह लिंग धारण किया है। यह मरीचि समोसरणके बाहिर प्रदेशमें बैठा रहताथा (उहां) जो कोई इसकेपास उपदेश सुनताथा, उसकूं यथार्थ धर्मसें प्रतिबोध देके, भीतर भगवान्‌केपास भेजदेताथा (पीछे) एक दासमें मरीचि रोगाग्रस्त हुवा। तब विचार कीया (कि) में कुलिंगी हुं। इसवास्ते साधू लोक तो मेरी वेयावच्च नहिं करते है (और) मुझे कराणीभी युक्त नही है। इससें अबके शरीर अच्छा होनेसे, मेरे लायक कोइ शिष्य करुंगा (जब) मरीचि अच्छा हुवा। पीछे थोडा दिनके बाद, एक कपिल नामे राजपुत्र, मरीच केपास धर्म सुणनेकूं आया (तब) मरीचनें यथार्थ साधु धर्मका

सरूप वर्णन कीया। तब कपिल बोला (कि) साधू धर्म उत्तम है (तो) तुमने ऐसा भेष काहेकूं धारणकरा। तब मरीचि बोला (कि) साधु धर्म मेरेसें पल नही सका। इससे मैंनें यह लिंग स्वमतिकल्पित धारण कीया है। (इस सेती) तुम भगवान्के पास जायके दीक्षा ग्रहण करो। तब कपिल राजपुत्र समवसरणकेभीतर गया (वहां) श्री ऋषभ देव स्वामीको, छत्र चामरादि सिंहासन युक्त राज्यलीला भोगवता देखके, पीछा मरीचिकेपास आयके केनेलगा (कि) श्री ऋषभदेव स्वामी तो राज्यलीला सुख भोगवते हैं। इसवास्ते उसका धर्म तो मुजकूं रुचे नही। अब तेरेपास कुछ धर्म है, या नही। तब मरीचिने जाना (कि) यह भारि कर्मा जीवहै। मेराही शिष्य होने योग्य है। इस लोभसें मरीचिने कहा वहांभी धर्म है। और मेरेपासभी देशे धर्म है। (तब) कपिल मरीचकेपास दीक्षा लेके शिष्य हुवा (शरिपाः शरिपेण रच्यते इति वचनात्)॥ यह सांख्य मतके प्रवर्त्तक, कपिल मुनिकि उत्पत्ति कही ॥ (उस्समय) मरीचिके तथा कपिलकेपास कोईभी उसके धर्मसंबधी पुस्तक नही था॥ निःकेवल जो कुछ आचार मरीचिने बताया उस प्रकारे कपिल कर्त्ता रहा॥ (और) मरीचिने, शिष्यके लोभसें मेरे पासभी किंचित् धर्म है (ऐसे) उत्सूत्र भाषणेसे एक कोटाकोटि सागरोपमलग जन्म मरण करके, अंतमें २४मा तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी हुवा उस मरीचिके काल करे पीछे, कपिल मरीचिके बताया यथार्थ ज्ञानशून्य आचारमें चलता रहा। उस कपिलमुनीके आसुरी नामे-शिष्य हुवा। और भी बहोतसे शिष्य हुए

माफ कराउंगा (तब) भगवान् श्री ऋषभदेवस्वामी कहनें लगें (कि यह) आहार, साधुवोंके लेनें योग्य नांहिं (तब) भरतजी मनमे उदास होके केनें लगे (कि) यह आहार किसकूं देउं (तब) भगवाननें कहा, जो तेरेसें गुणोंमें अधिक होय, ऐसे वृद्धश्रावक साधर्मीयांकूं भोजन करावे । तो तुजको पूर्ण लाभ होवे तब भरतजीनें बहुत गुणवान् श्रावकोंकूं वो भोजनजिमाया (और) उन श्रावकोंकूं ऐसा कह दीया (कि) तुह्म सब जनें मिलकर सदैव मेरे इहां भोजन कर लियां करो । (औरभी) जो खरच तुमारे चहीये (सो) मेरे भंडारसें लेलीयां करो ॥ (और) वाणिज्यादिक सर्व काम छोडके, स्वाध्याय करनेमें, पढानेंमें, भगवान्को धरम प्रवर्त्तन करनेमें, सदाकाल सावधान रहो (और) मेरे महिलूंकेपास रहते हुवे मेरेकूंभि ऐसे वचन सुनाते रहो । (जितो भवान् वर्द्धते भयं । तस्मात् माहन माहन) तब जो वृद्धश्रावक भरतजीके कहनेसें सब काम छोडके निःकेवल धरमकार्य करणेमें उद्यमवंतभए (तबसें) जैनी पंडित, वृद्धश्रावकोंकी उत्पत्ति भई । श्री अनुयोगद्वारजी सूत्रमेंभि, जैनी पंडित श्रावकोंका नाम, वुड्डसावया ऐसा लिखाहै, यह वृद्धश्रावक भरतजीके महिलोंकेपास बैठे हुवे (जितो भवान्) इस पूर्वोक्त वचनकूं सदाकाल उच्चारन कर्त्तेरहे । (और) भरतजी तो सदा काल भोगविलासमें मग्न रहते थे (तथापि) वृद्धश्रावकोंका वचन सुनके, मनमें चिंतवन करनें लगे । कि मुझकुं किसनें जीताहै । तब सरन हुवा । कि मेरेकुं । क्रोध, मान, माया, लोभ, कषायादिकसें, मोहराजा जीतरयाहै

(इससेती) हूं संसारमें मग्न होयरह्यो हूं। मेरे भाइयादिक सर्व धन्य है। जिनोनें राज्य छोडके चारित्र ग्रहण कीया है। इत्यादिक धर्मकी वार्त्ता स्मरण करनेसें, दिलमें वैराग्य उत्पन्न होता था (और) वृद्ध श्रावक, वेरवेर, माहन माहन, पूर्वोक्त वचन कहनेसें, लोक सर्व, उन वृद्धश्रावकांकूं, माहन ऐसे नामसें कहने लगे (तवसें) यह जैनी ब्राह्मण उत्पन्न भए। प्राकृत भाषामे ब्राह्मणकूं माहन नामसें लिखा है। प्राकृत व्याकरणसें, ब्राह्मण शब्द, बंभण (अरु) माहन, इस दोय नामसे सिद्ध होता है। ऐसे श्रावक माहन भोजन करनेवाले, दिन २ बहुतवधे। तब रसोईदार भरतजीकु कहा। कि इनोंमे श्रावककी, वा अन्य पुरुषकी, क्या मालम पडे। तब जितने श्रावक थे। उनकु बुलायके सर्वकी परीक्षा करी। श्रावक जानके भरतजीनें उनोंके शरीरमें, काकणी रत्नसें तीन २ रेखाका चिन्ह कीया (इससे) जिनोपवीत धारनकी रीति प्रशिद्ध भई॥ (पीछे) भरतजीका वेटा सूर्ययशा हुवा। जिसके सतानवाले, भरतक्षेत्रमे, सूर्यवंशी कहे जाते हे (अरु) बाहुवलीका वडा पुत्र, चद्रयशा था (तिसके) संतानवाले, चद्रवशी कहे जाते हे। श्रीऋषभदेवजीके कुरुनामे पुत्रके संतानवाले सर्व कुरुवशी कहे जाते हैं। (जिनमें) कौरव, पाडव हुये हे (जव) भरतका वेटा. सूर्ययशा सिंहासनपर वेठा था। तब तिसकेपास कांकणी रत्न नहि था (क्यों कि) काकणीरत्न चक्रवर्त्ति शिनाय और किसीकेपास नहि होता है। (इसवास्ते) सूर्ययशा राजाने, ब्राह्मण श्रावकाके गलेमें, सुवर्णमय जिनोपवीत

करवा दीया । तथा भोजन प्रमुख सर्व भरतमहाराजकीतरे देते रहे (जब) सूर्यजशाका बेटा, महा यश, गद्दीपर बेठा (तब) तिसने रूपेके जिनोपवीत बनवा दीया । आगे तिनके संतानोंने पंचरंगे रेशमी पट्टसूत्रमय जिनोपवीत बनाते रहे । इस पीछे सादे सूतके बनाये गये । यह जिनोपवीतकी उत्पत्ति कही ॥

॥ अब चार वेदोंकी उत्पत्ति लिखते हैं ॥

जब भरतजीनें, ब्राह्मणोकूं बहुतसा मान्या पूज्या (तब) दूसरे भी लोक ब्राह्मणाकूं दानादिक देनें लगे (और) धर्मकृत्य सर्व उनीकेपास सीखनें लगे । तथा करानें लगे (तब) भरत चक्रवर्त्तिनें, ऋषभदेवस्वामी के वचनानुसारे, तिन ब्राह्मणूंके, स्वाध्याय करनेंकेवास्ते, श्री भगवान् ऋषभ देवस्वामीकी स्तवनागर्भित, (और) पूजा, प्रतिष्ठादि, श्रावक धर्मका, संपूर्ण स्वरूप गर्भित, ८ कर्म, ७ नय, ४ निक्षेपा, ९ तत्व, क्षेत्र प्रमाणादिक गर्भित, बहुत मंत्रयुक्त ४ वेद रचे (तिनके यह नाम) १ संसार दर्शन वेद । २ संस्थापना परामर्शन वेद । ३ तत्वावबोधन वेद । ४ विद्या प्रबोध वेद । इन च्यारोंमें, सर्व नय वस्तूके कथन संयुक्त तिन ब्राह्मणांकों पढाये । भरत के ८ पाटतक तो, ब्राह्मणोंकी भक्ति भरतजीकी तरे करते रहे । (पीछे) प्रजा भी ब्राह्मणांकों भोजन करानें लगी (तबसें) सर्व जगे ब्राह्मण पूजनीक समजे गये । इस पीछे (आठमा) तीर्थंकर, श्री चंद्रप्रभ स्वामीकें वखततक, सर्व ब्राह्मण जैनधर्मी श्रावक रहे (अरु) सुविधि भगवान्के पीछे, कितनाक काल व्यतीतभये, इस भरतखंडमें,

जैन धर्म (अर्थात्) चतुर्विधसंघ, और सर्वशास्त्र विच्छेद हो गये । (तब) तिन ब्राह्मणा भासोंकों लोक पूछनें लगे । (कि) धर्मका स्वरूप हमकों बतलावो । तब तिनोंने जो मनमे माना । (और) अपणा जिसमे लाभ देखा सो धर्म बतलाया । अनेक तरहके ग्रंथ बनाते रहे (जब दशमा) श्री सीतलनाथ अरिहंत हुए । तिनोंने जब फेर जैनधर्म प्रगट करा (तथापि) कितनेक ब्राह्मणभासोंने न माना स्वकपोल कल्पित मतहीका कदाग्रह-रक्खा (जबसें) अन्य मति ब्राह्मण भए (और) उलटे जिन धर्मके साधुवाके द्वेषी बन गए (इसी तरे) ८ भगवानके ७ अतर कालमे जिनधर्म विच्छेद होता रहा (इससें) बहुत मिथ्या धर्म बढता गया ॥ (यदुक्तं आगमे) सिरिभरहचक्कवट्टी । आय रियवेयाण विस्सुउप्पत्ती । माहण पढणत्थमिणं । कहिय सुहझाण विवहार ॥ १ ॥ जिणतित्थे वुच्छिन्ने । मिन्छत्ते माहणेहिं ते ठविया । अस्संजयाण पूआ । अप्पाणंकाहियातेहिं ॥ २ ॥ (इत्यादि) ॥ (फेर) कितनेक काल पीछे, याज्ञवल्क्य, सुलसा, पिप्पलाद, अरु पर्वत, प्रमुख ब्राह्मणाभासोंने, धनके लोभसें, तिन वेदोंमे जीवहिंसा प्रमुख प्ररूपणा करके उलट पुलट कर डारे । जैन धर्मका नामभी वेदांमेसे निकाल दीया । बलकी अन्योक्ति करके (दैत्यदस्युवेदबाह्य) इत्यादिनामोंसे, साधुवाकी निंदा गर्भित, १ ऋग् । २ यजु । ३ साम । ४ अथर्वण, ये ४ नाम कल्पन कर दीये । (यही बात) बृहदारण्य उपनिषदके भाष्यमे लिखा है (कि) यज्ञोंका कहनेवाला सो

यज्ञवल्क्य । तिसका पुत्र याज्ञवल्क्य । इस कहनेसेंभी यही प्रतीत होता है। जो यज्ञोंकी रीति, प्राय याज्ञवल्क्यसेंही चली है (तथा) ब्राह्मण लोकांके शास्त्रमेंभी लिखा है (कि) याज्ञवल्क्यनें पूर्वली ब्रह्मविद्या वमके, सूर्यपासे, नवीन ब्रह्मविद्या सीखके प्रचलित करी (इस्से) यही अनुमान निकलता है (जो) याज्ञवल्क्यनें, प्राचीन वेद छोडके नवीन वेद वनाये । (इस्सें) वर्त्तमान ४ वेद (और) जीवहिंसायुक्त यज्ञकी उत्पत्ति, प्रायः याज्ञवल्क्यादिकोंसें हुई संभव है ॥

(तथा) श्री तेसठ शलाका पुरुष चरित्र ग्रंथमें, आठमें पर्व के दूसरे सर्गमें, ऐसा लिखा है (कि) काशपुरीमें, दो सन्यास-णियां रहती थीं, तिसमें एकका नाम सुलसा था (अरु) दूसरीका नाम सुभद्रा था, (यह) दोनूंही वेद अरु वेदांगोंकी जानकार थी । (तिस) दोनुं वहिनोंनें वहुतसे वादियोंको वादमें जीते । (इस अवसरमें) याज्ञवल्क्य परिव्राजक, तिनके साथ वाद करनेंकों आया, आपसमें ऐसी प्रतिज्ञा करी (कि) जो हार जावै । वो जीतनेंवालेकी सेवा करै । (तव) याज्ञवल्क्यनें, सुलसाकों वादमें जीतके, अपनी सेवा करनेंवाली वनाई ॥ सुलसाभी रात दिन याज्ञवल्क्यकी सेवा करनें लगी । (अरु) दोनुं युवान थे, इससें कामातुर होके, आपसमें भोगविलास करनें लग गए । (सच्च है) कि अग्निकेपास, घी रहनेंसें पिघलैईगा (तथा) घी, घास, फूस, मिलनेंसें, अग्नि वधैईगा (निदान) दोनुं काम क्रीडामें मग्न होकर, काशपुरीके निकट, कुटीमें वास

करते थे (तब) याज्ञवल्क्य, सुलसाके पुत्र उत्पन्न भया, (तब) लोकोंके उपहासके भयसें, उस लडकेकों, पींपलके वृक्ष नीचे छोडकर, दोनुं भागके कहाइं चले गए ॥ (यह वृत्तांत) सुलसाकी बहन, सुभद्रानें सुना । (तब) तिस बालकके पास आई (जब) बालककों देखा (तो) पींपलका फल स्वयमेव मुखमें पडा हुवा चबोल रहा है (तब) तिसका नामभी पिप्पलाद रक्खा । (और) तिसकों अपनें स्थानमे ले जाके यत्नसें पाला (अरु) वेदादि शास्त्र पढाए (तब) पिप्पलाद बडा बुद्धिमान् हुवा । बहुत वादियोका अभिमान दूर किया (पीछे) तिस पिप्पलादकेसाथ सुलसा (और) याज्ञवल्क्य, यह दोनुं वाद करनेंकों आए (तब) तिस पिप्पलादनें दोनुंकों वादमें जीत लिया (और) सुभद्रा मासीके कहनेंसें जान गया (कि) यह दोनुं मेरा माता, पिता है ॥ और मुझे जन्मतेको निर्दयी होकर छोड गये थे (इससें) बहुत क्रोधमे आया (तब) याज्ञवल्क्य (अरु) सुलसाके आगे । मातृमेध, पितृमेध, यज्ञोंकों युक्तियोंसें स्थापन करके, मातृपितृमेधमे, सुलसा याज्ञवल्क्यकों मारके होम करा (यह) पिप्पलाद, मीमांसक मतका मुख्य आचार्य हुआ ॥ इसका वातली नामे शिष्य हुवा (तबसें) जीव हिंसा संयुक्त यज्ञ प्रचलित हुए (इससें) याज्ञवल्क्यके वेद बनानेंमे कुछभी संका नही (क्यों कि) वेदमें लिखा है (याज्ञवल्केति होवाच) अर्थात् याज्ञवल्क्य ऐसें कहता हुवा (तथा) वेदमे जो साखा है, वे वेदकर्त्ता मुनियोंकेही सब वंस हैं (इसी तरे) श्री आवश्यकजी मूल

सूत्रमें लिखा है (कि) जीव हिंसा संयुक्त, जो वेद है (सो) सुलसा (अरु) याज्ञवल्क्यादिकोंनें बनाये हैं (और) कितनीक उपनिषदोंमें पिप्पलादकाभी नाम है (तथा) और मुनियोंकाभी कितनेक जगेमें नाम है । जमदग्नि, काश्यपतो वेदोंमें खुद नामसें लिखे हैं । फेर वेदोंके नवीन होनेंमें कुछ संका नहीं ॥ (इस पीछे) महाकाल असुरके सहायसें, पर्वतनें, बहुत जीव हिंसा संयुक्त वेद प्रचलित किये हैं। उसका विशेषअधिकार आवश्यक सूत्र, तेसठ शलाका चरित्रादिकमें लिखा है। उहांसें देख लेना (यह) जैन ब्राह्मण, जैन वेद, (तथा) प्रसंगसें, अन्यमत वेदोत्पत्ति कही ॥ (अब) श्री ऋषभदेवस्वामीके परिवारकी संख्या कहते हैं ॥ भगवान् श्री ऋषभदेव स्वामीके सर्व चोरासीहजार (८४०००) साधु हुए (जिसमें) पुंडरीकजी प्रमुख ८४ गणधर हुए ॥ ब्राह्मीजी प्रमुख तीनलाख (३०००००) साध्वी हुई ॥ वीसहजार छसो (२०६००) वैक्रिय लब्धिधारक हुए ॥ बारेहजार छसै पन्नास (१२६५०) वादी विरुद धारक हुए ॥ नवहजार (९०००) अवधिग्यानी हुए ॥ वीसहजार (२००००) केवल ग्यानी हुए बाराहजार साढासातसे (१२७५०) मनपर्यव ग्यानी हुए ॥ च्यारहजार साढासातसे (४७५०) चौदे पूर्वधारी हुए ॥ ३ लाख ५० हजार (३५००००) श्रावक हुए ॥ ५ लाख ५४ हजार (५५४०००) श्रावकण्यां (इत्यादि) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें कैलास पर्वतके ऊपर ६ उपवास तप करके संयुक्त, अनशन किया। पद्मासन मुद्रायें, आ-

त्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्माकों खपायके, मिति माघ वदि १३ के दिन, १० हजार (१००००) पुरुषांके साथ, ८४ पूर्व लाख वरसको आऊपो पूरण करके, सिद्धिस्थानको प्राप्त भए ॥ (जब) श्री ऋषभदेव स्वामीका कैलाम (तथा) दूसरा नाम अष्टापद पर्वत ऊपर, निर्वाण हुवा (तब) ६४ इंद्रादि सर्व देवता निर्वाण उच्छव करनेंकों आए, तिन सर्व देवताओंमेंसुं, अग्निकुमार देवतानें श्री ऋषभदेवकी चितामें अग्नि लगाई (तबसेंही) यह श्रुति लोकमें प्रसिद्ध हुई है (अग्नि मुखावै देवा) अर्थात्, अग्नि कुमार देवता, सर्व देवताओंमे मुख्य है (और) अल्प बुद्धियोंनें तो इस श्रुतिका ऐसा अर्थ बना लिये हे (कि) अग्नि जो है, सो तेतीस कोड देवताओका मुख हे ॥ भगवानके निर्वाणका स्वरूप, सर्व आवश्यक सूत्र, (तथा) जंबुद्वीपपन्नत्तीसे जान लेना (जब) भगवानकी चितामेंसें, दाढां दांत वगैरे सर्व इंद्र, देवतादिक, अपनें २ देवलोकमे, पूजाके निमत्त लेजाने लगे (तब) वृद्ध श्रावक ब्राह्मण लोक मिलकर, बहुत विनय संयुक्त, देवताओंसें याचना करनें लगे (तब) देवता लोक अहो याचका २, ऐसा बोलके देनें लगे (तबसें) ब्राह्मणांकों याचक कहनें लगे (और) ब्राह्मणोंने, श्री ऋषभदेवकी चितामेंसें अग्नि लेकर, अपनें २ घरोंमें स्थापन करते हुए (इससें) ब्राह्मणाकों आहिताग्नय कहनें लगे ॥ श्री ऋषभदेवकी चिता जले पीछे, दाढादिक तो सर्व इंद्रादिक ले गए (बाकी) मसी अर्थात् राख रह गई, सो ब्राह्मणोंनें थोडी थोडी सर्व लोकोंकों दीनी (तब) उस राखकों लेके सर्वने, अपनें

मस्तकपर त्रिपुंडाकारसें लगायी (तवसें) त्रिपुंड लगाना सरू हुवा। (और जव) भरतजीनें कैलास पर्वतके ऊपर, सिंहनिषद्या नामें मंदिर वनाया (उसमें) श्री ऋषभदेवस्वामीकी (और) आगे होनेंवाले २३ तीर्थंकरोंकी, सर्व चौवीश प्रतिमा, अपना २ वर्ण प्रमाणमुजव, चारेइं दिशामें संस्थापन करी (और) दंड रत्नसें पर्वतकों ऐसें छीला (कि) जिस ऊपर कोई पुरुष पांवासें न चढ सके। (उसमें) एकेक जोजन ऊंचा ८ पगथिया रक्खा (इससें) कैलास पर्वतका, दूसरा नाम अष्टापद हुवा॥ और तवसेंही कैलास, महादेवका पर्वत कहलाया॥ मोटा जो देवसो महादेव, श्री ऋषभदेवस्वामी, जिसका निर्वाण स्थान कैलास हुवा॥ (पीछे) श्री भरत चक्रवर्त्ति केवलज्ञान पायके मोक्ष गए (तव) श्री भरतजीके पाटे, सूर्ययशा राजा भया। तिसकी औलाद सूर्यवंशी कहलाए। सूर्ययशाके पाटे महायशा राजा गद्दीपर वैठा (ऐसें) अतिबल, महावल, तेजवीर्य, दंडवीर्य (इत्यादि) अनुक्रमसें अपनें २ पिताकी गद्दीपर, वैठे (परंतु) भरतजीसें आधा राज्य (अर्थात्) भरत क्षेत्रका तीन खंडके भीतर २ राज्य रहा अंतमें (भरतजीकी तरै) आठ पाटतक तो, आरीसा महलमें, केवलग्यान पाय, दिक्षा लेके मोक्ष गए (इस पीछे) दूसरा तीर्थंकर, श्री अजितनाथ स्वामीका पिता, जितशत्रु राजातक असंख्य पाट हुए। जिन सवका अधिकार सिद्धांतगंडिकासें जाण लैना॥ इति ५५ वोल गर्भित श्री ऋषभ देवस्वामी (तथा) पहला चक्रवर्त्ति भरतजीका अधिकार कहा॥

॥ अब दूसरा श्री अजितनाथस्वामी अधिकारः ॥

अजोध्यानगरीमें, भरतजीकेपीछे, असंख्य राजा हो चुके (तब) इक्ष्वागवंशी जितशत्रु राजा भया। तिसके विजयानामे राणी। तिसकी कूखमे, विजय अनुत्तर विमानसें, वैशाखसुद १३ के दिन, भगवान अवतार लिया ॥ माताये गजादि अग्निशिखापर्यंत, १४ स्वमा प्रगटपणें मुखमे प्रवेश करता देखा। गर्भमें ८ मास २५ दिन रहके। मिति माघ शुक्र ८ के दिन, रोहिणी नक्षत्रे जन्म हुवा (तब) जितशत्रु राजाये १० दिन पर्यंत जन्म उच्छव करके, अजितकुमर, नाम स्थापन किया। लाछन हस्ती। शरीरमान ४५० धनुष। कचनसमानवर्ण, तीन ज्ञानयुक्त, महातेजस्वी। भोगावलीकर्म निर्जरार्थे, विवाहकरके, क्रमसें राज्यपदकों प्राप्त हुवे (पीछे) अवसर आये, लोकातिक देवताके वचनसें, संवत्सरपर्यंत मोटो दान देके, माघ कृष्ण ९ के दिन, अयोध्या नगरीमें, छठतप करके, शालवृक्षके नीचे १ हजार (१०००) पुरुषोंकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी। (उसीवखत) भगवानकों चोथा मनपर्यव ग्यान उत्पन्न भया। प्रथम छठका पारणा, परमान्नसें, ब्रह्मदत्त व्यवहारीके घरे हुवा ॥ १२ वरष छद्मस्थपणे विहार करके, अयोध्या नगरीमध्ये (तब) वहा मिती पोषवदि ११ के दिन, लोकालोक प्रकाशक केवल ज्ञान उत्पन्न भया। (तब) देवगणका कीया हुवा, समवसरणमध्ये बैठके, १२ परषदाके सन्मुख, धर्मोपदेश करके, चतुर्विधसघकी स्थापना करी। भगवान्के सिंहसेन प्रमुख ९५ गणधर हुवे ॥ १ लाख (१०००००) सर्व

साधु मुनिराज भए। ३ लाख ३० हजार (३३००००) फल्गुश्री प्रमुख साधवी हुई॥ २० हजार च्यारसै (२०४००) वैक्रियलब्धि धारक हुवे॥ ९ हजार च्यारसै (९४००) अवधि ज्ञानी भए॥ २२ हजार (२२०००) केवल ज्ञानी भए॥ १२ हजार साढा-पांचसो (१२५५०) मनपर्याय ज्ञानी भए॥ सैंतीससै वीश (३७२०) चवदे पूर्वधारी भए। १२ हजार च्यारसो (१२४००) वादी विरुद धरनेंवाले भए। २ लाख ९८ हजार (२९८०००) व्रत-धारी श्रावक भए॥ ५ लाख ४५ हजार (५४५०००) व्रतधारक श्रावकण्यां भई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें समेत शिखरपर्वतऊपर १ हजार (१०००) साधुवोंके साथ, १ मासकी संलेखना करके, काउसग्ग मुद्रासें, सर्व कर्म खपायके, मिती चैत्रसुदि ५ पंचमीके दिन, ७२ पूर्वलाखवरषको आउषो पालकें सिद्धिस्थानकों प्राप्त भए॥ शासनदेव महायक्ष। शासनदेवी अजितबला मानवगण। सर्पयोनि। वृषराशि। भग-वान् सम्यक्त पाये बाद तीसरे भवमें मोक्षगए (इस समयमें) दूसरा चक्रवर्त्ति सगरनामें हुवा॥

॥ अब किंचित् सगर चक्रवर्त्तिका अधिकारः॥

श्री अजितनाथ स्वामीके, पिताका भाई, सुमित्र नामें युवराजा हुवा॥ जिसके यशोमतीराणीयें। १४ स्वप्न पूर्वक, सगरनामें पुत्रकों जन्मा (जब) भगवान्‌ने दीक्षा लीवी। (तब) अपना भाई सगर युवराजाकों राजगद्दीपर स्थापन किया। पीछे नवनिधान (और) चक्र वगेरे १४ रत्न प्रगट होनेसें, भरतक्षेत्रका छखंडसा-

थकें। दूसरा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके, जन्हुकुमार प्रमुख ६० हजार (६००००) पुत्रभए। वो सर्व समुदाई कर्मकेयोग, एकदा भरत-चक्रवर्त्तिका कराया हुवा, सुवर्णमई अष्टापद पर्वतके ऊपर, रत्नमई, निज २ प्रमाणोपेत २४ भगवान्का मंदिर देखकें, पर्वतकी रक्षाके निमित्त, वहुत ऊंडी खाई खोदकें, गंगानदीके जलसें चउफेर भरदीनी। तब उस जमीनके अधिष्ठित, देवगणकों तकलीब होनेसें एकसाथ ६० हजार (६००००) पुत्रोंको भस्म कर दीया। इसकी मालुम होनेसें, सगरचक्रवर्त्तिकों वहुतसा दुःखमया (पीछे) सौधर्मेंद्रके मुखसें भवस्थितिका स्वरूप सुणकें दुःख दूर किया (पीछे जब) सगर पुत्रोंके लाया हुवा, गंगा-काजल वढता थका, अष्टापद पर्वतके चौफेर देशोंमे उपद्रव करने लगा (तब) जन्हुकुमारका पुत्र, भागीरथ, सगर चक्रवर्त्तिकी आज्ञा पायके, दंडरत्नसें जमीनकों खोदके, गंगाजलका प्रवाहकु, पूर्व समुद्रमे मिला दिया (इसीसें) गंगाका नाम लोकीकमे जान्हवी (तथा) भागीरथी कहनें लगे॥ और यह खारासमुद्र पिण, देवमहायसें, सगरका लाया हुवा सत्रुंजयकी रक्षाकेलिये भरत-क्षेत्रमे मालुम हो रहा है (और) सगर चक्रवर्त्तिकी आज्ञासें वैताढ्य पर्वतसें आयके, लंकाके टापूमें, प्रथम घनवाहन राजा हुवा (इस) घनवाहन राजाके वंशमे, रावण, विभीषणादिक भए हैं (सो) राक्षसी विद्यासें राक्षस कहलाए (इसीसें) लंकाके टापूका नाम राक्षसदीप हुवा (और) सिद्धगिरीके ऊपर, मंदिरोंका दूसरा उद्धार, सगरचक्रवर्त्तिनें करा (अरु) वडा दा-

नेसरी हुवा। अंतमें श्री अजितनाथ स्वामीकेपास दीक्षा लेके, शुद्ध चारित्रसें केवल ज्ञान पायके, मोक्षकों प्राप्त भया॥ श्री ऋषभदेव स्वामीके निर्वाणसें, पंचासलाख कोड सागरोपम व्यतीत होनेसें, श्री अजितनाथ स्वामीका निर्वाण हुवा॥ इति ५५ बोलगर्भित दूसरा अजितनाथस्वामी (तथा) दूसरा सगर चक्रवर्त्तिका अधिकारः संपूर्णः॥

॥ अथ ३ श्री संभवनाथस्वामी अधिकारः॥

सावत्थी नगरीमें, इक्ष्वाकवंशी, जितारी नामे राजा हुवा (तिसके) सेना नामे पटराणी, जिसकी कूखमें, ऊपरला ग्रैवेयक विमानसें आयके, मिति फाल्गुन शुक्ल ८ के दिन, भगवान् उत्पन्न भया (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्षसमें। मिति मिगसर शुक्ल १४, मृगशिर नक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा (तब) जितारी राजायें १० दिन पर्यंत उच्छव करके, संभव कुमर नाम स्थापन किया। अश्वका लंच्छन युक्त, कंचनवर्ण, शरीर प्रमाण चारसै (४००) धनुष हुवा। तीन ज्ञानयुक्त। महा तेजस्वी। १ हजार ८ आठ (१००८) लक्षणालंकृत। भोगावली कर्म निर्जरार्थे, विवाह करके, क्रमसें राज्यपद धारन किया। अवसर आये, लोकांतिक देवताके वचनसें, संवत्सर पर्यंत मोटो दान देके, मिति मिगसर शुद १५ के दिन, सावत्थी नगरीमें छठ तप करके, प्रियालु वृक्षके नीचे, १ हजार (१०००) पुरुषोंकेसाथ, दिक्षा ग्रहण करी (उस बखत) चोथा, मनपर्यवज्ञान, उत्पन्न भया। प्रथम छठका पारणा, परमान्न क्षीरसैं, सुरिंद्रदत्त

व्यवहारीयाके घरे हुवा । १४ वर्ष । छद्मस्थपणे विहार करकें, फेर सावत्थी नगरीमें चतुर्मास रहे । वहां छठ तप सयुक्त, मिति कार्त्तिक कृष्ण ५ के दिन, लोकालोक प्रकाशक, केवलज्ञान उत्पन्न भया (तिस वखत) चतुर्निकाय देवगणके किया हुवा समवसरणमे, १२ परपदाके सन्मुख धर्मोपदेश देके, चतुर्विधसंघकी स्थापना करी (जिसमें) २ लाख (२०००००) सर्व साधु मुनिराज भए (तिसमे) चारु प्रमुख १०२ गणधर पद धारक भए ॥ १९ हजार ८ सै (१९८००) वैक्रिय लब्धि धारक भए ॥ १२ हजार (१२०००) वादीविरुद धारक भए ॥ ९ हजार छसै (९६००) अवधि ज्ञानी भए ॥ १५ हजार (१५०००) केवल ज्ञानीभए ॥ १२ हजार दोडसो (१२१५०) मन पर्यव ज्ञानी भए ॥ २ हजार दोडसो (२१५०) चउदे पूर्वधारी भए ॥ ३ लाख ३६ हजार (६३६०००) श्यामा प्रमुख सर्व साध्वी हुई ॥ २ लाख ९३ हजार (२९३०००) श्रावक हुए ॥ ६ लाख ३६ हजार (६३६०००) श्राविका भई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अतसमे समेत शिखर पर्वत के ऊपर, १ हजार (१०००) साधुवोंकेसाथ, १ मासका अणसण ग्रहण कीया ॥ काउसग्ग मुद्राये, आत्मगुणके ध्यानसे, सर्व कर्मकों खपायके, मिति चैत्र शुद ५ के दिन, ६० लाख पूर्वका आऊखा पूरण करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्त भए ॥ शासनदेव त्रिमुख यक्ष । शासन देवी दुरितारी । देवगण । सर्पयोनि । मिथुन राशि । अतरकाल १० लाख कोटि सागरोपम । सम्यक्त पायेवाद, तीसरे भवमे मोक्ष गए ॥ इति ५५ बोल गर्भित श्री संभवनाथ स्वामी अधिकारः ॥

॥ अथ ४ था अभिनंदन स्वामी अधिकारः ॥

अयोध्या नगरीमें, इक्ष्वाकवंशी, संवर नामें राजा हुवा । तिसके सिद्धार्था नामें पट्टराणी । जिसकी कूखमें, जयंत नामा अनुत्तर विमानसें आयके, मिति वैशाख शुद्ध ४ के दिन उत्पन्न भया (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्षसमें, मिति माघ शुद २, पुनर्वसु नक्षत्रे, जन्मकल्याणक हुवा (तब) संवरराजायें दशदिनका जन्म उच्छव करके, अभिनंदनकुमर, नाम स्थापन किया । वानरके लंछन युक्त, कंचनवर्ण, शरीरप्रमाण ३५० धनुप हुवा । तीन ज्ञानयुक्त, महातेजस्वी, १ हजार ८ (१००८) लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, विवाह करकें, क्रमसें राज्यपद धारण किया । अवसर आये लोकांतिक देवतांके वचनसें, संवत्सर पर्यंत मोटो दान देकें, मिति माघ शुक्क १२ के दिन, अयोध्यानगरीमें, छठ तप करके, प्रियंगु वृक्षके नीचे, १ हजार (१०००) पुरुषोंकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी । उसवखत, चोथो मनपर्यवज्ञान उत्पन्नभयो । प्रथम छठको पारणो, परमान्न क्षीरसें, इंद्रदत्त व्यवहारीके घरे हुवो । १८ वरप छद्मस्थपणें विहार करके (फेर) अयोध्यानगरीमें आए (वहां) छठतप संयुक्त, मिति पोप शुक्क १४ के दिन, लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान उत्पन्न भया । उसवखत चतुर्निकाय देवगणका किया हुवा समवसरणमें, १२ परिषदाके सन्मुख, धर्मोपदेश देकें, चतुर्विध संघकी स्थापना करी ॥ ३ लाख (३०००००) सर्व साधु मुनिराज भए (तिसमें) वज्रनाभ प्रमुख ११६ गणधर भए ॥ १९ हजार (१९०००) वैक्रिय लब्धिधारक भए ॥ ९ हजार ८ सै

(९८००) अवधि ज्ञानीभए ॥ ११ हजार ६ सै पन्नास (११६५०) मनपर्यत्र ज्ञानीभए ॥ १४ हजार (१४०००) केवल ज्ञानी भए ॥ १५ सै (१५००) चउदे पूर्वधारीभए ॥ ११ हजार (११०००) वादी विरुदधारक भए ॥ ६ लाख ३० हजार सोल (६३००१६) अजिताप्रमुख साधवी हुई ॥ २ लाख ८८ हजार (२८८०००) श्रावक हुए ॥ ४ लाख २७ हजार च्यारसै (४२७४००) श्राविका हुई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करकें, अंतसमें समेत-शिखरजी पर्वतके ऊपर १ हजार (१०००) साधुवोंके साथ, १ माशका अणशण ग्रहण किया। काउसग्ग मुद्रायें सर्व कर्मको खपायके, मिति वैशाख शुक्र ८ के दिन, ५० लाख पूर्वका आउखा पूरण करके, सिद्धिस्थानकों प्राप्ति भए ॥ शासनदेव नायक यक्ष। शासनदेवी कालिका। देवगण। छागयोनि। मिथुनराशि, अंतर-मान ९ लाख कोडि सागरोपम, सम्यक्तपायेवाद तीसरे भवमें मोक्षगए ॥ इति ५५ वोलगर्भित अभिनंदन स्वामीका अधिकारः ॥

अथ ५ मा श्री सुमतीनाथ स्वामी अधिकारः ॥

अयोध्यानगरीमे, इक्ष्वाकुवंशी, मेघनामें राजा हुवा। तिसके मंगलानामे पट्टराणी। जिसकी कूखमे, जयंत नामा अनुत्तरवि-मानसें आयके, मिति श्रावण शुक्र २ के दिन, भगवान उत्पन्न हुवा गर्भस्थिति संपूर्ण होनेमें वैशाख शुदि ८ जन्म भया (जन्म) ट्यादिनका उच्छव करके मेघराजायें, सुमतिकुमर नाम स्थापन किया ॥ क्रोंचपक्षीके लछनयुक्त, कंचनवर्ण, शरीरप्रमाण ३०० धनुष हुवा। तीन ज्ञानयुक्त, महातेजस्वी, १००८ लक्षणालकृत,

भोगावली कर्मनिर्जरार्थं विवाहकरके क्रमसें राज्यपद धारण कीया। अवसर आये, लोकांतिक देवताके वचनसें संवत्सरपर्यंत मोटो दान देके, मिति वैशाख शुक्ल ९ के दिन अयोध्यानगरीमें, नित्य भक्तसें, शालवृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंके साथ दिक्षा ग्रहण करी (उसवखत) चोथो मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम पारणो परमान्नक्षीरसें, पद्मशेखरके घरे हुवो। २० वरष छद्मस्थपणें विहार करकें, फेर अयोध्यानगरीमें चातुर्मास रहें। वहां छठ तपसंयुक्त, मिति चैत्र शुक्ल ११ के दिन, लोकालोका प्रकाशक केवलज्ञान उत्पन्न भया। उसवखत चतुर्निकाय देवगणके किया हुवा, समवसरणमें वैठके, १२ परिपदाके सन्मुख, धर्मोपदेश देके, चतुर्विधसंघकी स्थापना करी॥ भगवान्के सर्वसाधु तीन लाख वीस हजार (३२००००) हुए (जिसमें) चरम प्रमुख सो (१००) गणधरपदधारक भए॥ १८ हजार च्यारसें चालीस (१८४४०) वैक्रियलब्धि धारक भए॥ ११ हजार (११०००) अवधिज्ञानीभए॥ १० हजार साढाच्यारसै (१०४५०) मन पर्यवज्ञानी हुए॥ १३ हजार (१३०००) केवल ज्ञानीभए॥ चोवीससे २४०० चवदे पूर्वधारक भए॥ १० हजार च्यारसै (१०४००) वादीविरुद धरनेंवाले भए॥ ५ लाख ३० हजार (५३००००) काश्यपीप्रमुख साधवी हुई॥ २ लाख ८१ हजार (२८१०००) श्रावक हुए॥ ५ लाख १६ हजार (५१६०००) श्राविका हुई॥ (इत्यादिक) वहुतसे जीवोंका उद्धार करके अंतसमें समेतशिखर पर्वतके ऊपर, १ हजार (१०००) साधुवोंके साथ १ माशका अण-

शण ग्रहण कीया ॥ काउसग्ग मुद्रायें, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मकों खपायके, मिति चैत्र शुक्ल ९ के दिन, ४० लाख पूर्वका आउखा पूरणकरके, सिद्धिस्थानकों प्राप्त भए ॥ शासनदेव तुंबरु-यक्ष । शासनदेवी महाकाली । राक्षसगण । मूषक योनि । सिंह-राशी । अंतरकाल ९० हजार कोड सागरोपम । सम्य क्तपाए बाद तीसरे भवमें मोक्षगए ॥ इति ५५ बोलगर्भित श्री सुमतीनाथ स्वामीका अधिकारः ॥

॥ अथ ६ ठा श्री पद्मप्रभु अधिकारः ॥

कोसंबी नगरीमें, इक्ष्वागवंशी, श्रीधरनामें राजा (जिसके) सुसीमा पट्टराणी, तिसकी कूखमें, उपरिम ग्रैवेयक देवविमानसें चवके, मिति माघ कृष्ण ६ के दिन उत्पन्न हुवा । मातायें १४ स्वप्ना देखा (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्ष समें, मिति कार्त्तिक कृष्ण १२ के दिन, चित्रा नक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा (तब) श्रीधर राजायें १० दिन पर्यंत उछव करके, सर्व गोत्रियोंके सन्मुख, पद्मकुमर नाम स्थापनकिया (नाम स्थापनका येहेतू हे) माताने पद्म सज्यापर सोनेंका डोहला उत्पन्न हुवा था (और) भगवान्‌का पद्म कमलके समान रंग था (इससें) पद्मकुमर नाम हुवा । कमलका लछन युक्त । रक्तवर्ण । शरीर प्रमाण २५० धनुष हुवा । तीन ज्ञानयुक्त । महातेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत, भोगावलि कर्म निर्जरार्थे, विवाह करके, क्रमसें राज्यपद धारण किया । अवसर आयेसें, लोकांतिक देवताके वचनसें, सवत्सरपर्यंत मोटो दानदेके, मिति कार्त्तिक कृष्ण १३ कों, कोशंबीनगरीमें,

एक उपवास करकें, छत्र वृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंकेसाथ, दीक्षा ग्रहण करी (उस वखत) चोथो मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम पारणो, सोमदेव ब्राह्मणके घरे, परमान्न क्षीर सेती भयो। छ माश छद्मस्थ पणे विहार करके, फेर कोशंवी नगरीमें आए (वहां) चोथभक्त संयुक्त चैत्र शुद १५ के दिन, लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान उत्पन्न भया। उस वखत चतुर्निकाय देव गणका किया हुवा, समवसरणमें वेठकें, १२ परषदा के सन्मुख, धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी॥ भगवान्के सर्व ३ लाख ३० हजार (३३००००) साधु हुए॥ (जिसमें) एकसो दो (१०२) प्रद्योतन प्रमुख गणधर भए॥ सोलेहजार एकसो आठ (१६१०८) वैक्रिय लब्धि धारक हुए॥ १० हजार (१००००) अवधि ज्ञानी भए॥ १० हजारं ३ सै (१०३००) मन पर्यव ज्ञानी भए॥ १२ हजार (१२०००) केवल ज्ञानी भए॥ २३०० चउदे पूर्वधारी हुए॥ ९६०० वादी विरुद धरनेंवाले हुए॥ ४ लाख २० हजार (४०२०००) रति प्रमुख साधवी हुई॥ २ लाख ७६ हजार (२७६०००) श्रावक हुए॥ ५ लाख ५ हजार (५०५०००) श्राविका हुई। (इत्यादिक) वहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें, समेत शिखरजी पर्वतके ऊपर, ३०८ साधुवोंकेसाथ, १ माशका अणशण ग्रहण किया। काउसग्ग मुद्रायें, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्म कों खपायकें, मिति मिगसर वदि ११ के दिन, ३० लाख पूर्वका आउखा पूरण करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्ति भए॥ शासनदेव कुसुम यक्ष। शासन देवी शामा। राक्षसगण।

महिप योनि । कन्या राशि । अंतर काल ९ हजार कोड सागरोपम । सम्यक्त पाएबाद तीसरे भवमें मोक्ष गए ॥

॥ इति ५५ बोल गर्भित ६ श्री पद्म प्रभुका अधिकारः ॥ ६ ॥

॥ अथ ७ श्री सुपार्श्वनाथजी अधिकारः ॥

बनारशी नगरीमें, इक्ष्वाकवंशी, प्रतिष्ट नामें राजा हुवा (तिशके) पृथ्वी नामें पट्टराणी, जिसकी कूखमें, सप्तम ग्रेवेयक देव विमानसें आयके। मिति भाद्रवा वदी ८ के दिन, भगवान् उत्पन्न भया (तव) मातायें चवदं स्वप्न देखा। पीछे सर्व दिशा सुभिक्ष समें, मिति जेष्ट शुद २ के दिन विशाखा नक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा। साथियेका लाछन युक्त। कंचन वर्ण, सरीर प्रमाण २ से (२००) धनुप हुवा। तीन ज्ञानयुक्त। महा तेजस्वी। एक हजार आठ लक्षणालकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, निवाह करके, क्रमसें राज्यपद धारण किया। अवसर आए लोकातिक देवताके वचनसें, संवत्सर पर्यंत मोटो दान देके, मिति जेष्ट सुदी १३ के दिन, वणारशी नगरीमें, छठ तप करके, सरीश वृक्षके नीचे, एक हजार पुरुषोंकेसाथ, दिक्षा ग्रहण करी (उस वखत) चोथो मनपर्यवज्ञान उपज्यो। प्रथम छठको पारणो, माहेंद्रदत्तके घरे, परमान्नसें हुवो। नवमाश छद्मस्थपणें विहार करके, फेर वनारशी नगरीमें आये। वहा छठ तप संयुक्त, फागुण वदी ६ के दिन, लोकालोक प्रकाशक, केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा (उस वखत) चतुर्निकाय देवगणका किया भया, समवसरणमें, वारह परखदाके सन्मुख भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी ॥

भगवानकै (३०००००) तीन लाख सर्व साधू हुए (जिसमें) विदर्भ प्रमुख ९५ गणधर भए ॥ १५ हजार तीनसै (१५३००) वैक्रीयलब्धि धारक भए ॥ ९ हजार (९०००) अवधि ज्ञानी हुए ॥ ८ हजार दोढसो (८१५०) मनपर्यव ज्ञानी हुए ॥ ११ सै (११००) केवल ज्ञानी हुए २ हजार तीस (२०३०) चवदै पूर्वधारी हुए ॥ ८ हजार ४ सै (८४००) वादी विरुद धारक हुए ॥ ४ लाख ३० हजार ८ (४३०००८) सोमा प्रमुख साधवी हुई ॥ २ लाख ५७ हजार (२५७०००) श्रावक हुए ॥ ४ लाख ९३ हजार (४९३०००) श्राविका हुई (इत्यादिक) वहोतसे जीवोंका उद्धार करकै, अंतसमें, समेत शिखरजी पर्वतकै ऊपर, पांचसै ५०० साधुवोंकैसाथ, एक माशका अणसण ग्रहण कीया ॥ काउसग्ग मुद्रायें, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्म खपायकै, मिति फाल्गुण वदी ७ के दिन, वीस लाख पूर्वका आयुष्य पूर्ण करकै, सिद्धि स्थानकुं प्राप्त भए ॥ सासन देव मातंगजक्ष । सासन देवी सांता । राक्षस गण मृग योनी । तुल राशी । अंतर्काल ९ सो कोडी सागरोपम । सम्यक्त पायेवाद, तीसरै भवमें मोक्ष गए ॥ इति ५५ बोल गर्भित श्री सुपार्श्वनाथस्वामी अधिकार संपूर्ण ॥

॥ अथ ८ श्री चंद्राप्रभू स्वामी अधिकारः ॥

चंद्रपुरी नामा नगरीमें, इक्ष्वाकवंशी, महसेन नामें राजा (जिसकै) लक्ष्मणा नामें पट्टराणी । जिसकी कूखमें, जयंतनामें विमानसें आयकै, मिति चैत्र कृष्ण ५ के दिन उत्पन्न भया । मातायें चवदै स्वप्न देखा पीछे सर्व दिशा सुभिक्ष समें, मिति पोष

वद् १२ के दिन, अनुराधा नक्षत्रे जन्म कल्याणक हुवा (तत्र) महसेन राजायें, १० दिनकाउछव करके, चंद्रप्रभ कुमर नाम दिया। चंद्रमाके लाछनयुक्त, स्वेतवर्ण, शरीर प्रमाण १५० धनुष, तीन ज्ञानयुक्त, महा तेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, विवाह करके, क्रमसें राज्यपद धारण कीया। अवसर आये, लोकांतिक देवताके वचनसें, संवत्सर पर्यंत मोटो दान देके, मिति पोष वदी १३ के दिन, चंद्रपूरी नगरीमें, छठ तप करके, नागवृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी (उस वखत) चोथो मनपर्यन ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठको पारणो, सोमदत्तके घरे, परमान्न क्षीरसे हुवो ॥ ३ माश छद्मस्थपणें विहार करके चंद्रपुरी नगरीमें आए (वहां) छठ तप संयुक्त, मिति फागुण वदि ४ के दिन, लोकालोक प्रकाशक, केवल ज्ञान उत्पन्न भया (उस वखत) चतुर्निकाय देवगणका किया हुवा, समवसरणमें बेठके, १२ परपदाके सन्मुख, धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी। भगवानके सर्व २ लाख ५० हजार (२५००००) साधु भए (जिसमे) ९३ दिन्न प्रमुख गणधर हुए ॥ १४ हजार (१४०००) वैक्रिय लब्धि धारक हुए ॥ ८ हजार (८०००) अवधि ज्ञानी हुए ॥ ८ हजार (८०००) मनपर्यव ज्ञानी हुए ॥ १० हजार (१००००) केवल ज्ञानी हुए ॥ २ हजार (२०००) चवदे पूर्वधारी हुए ॥ ७ हजार ६ सें (७६००) वादी विरुदधारक भए ॥ ३ लाख ८ हजार (३०८०००) सुमना प्रमुख साधवी हुई ॥ २ लाख ५० हजार (२५००००) श्रावक हुए ॥

४ लाख ७९ हजार (४७९०००) श्राविका हुई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करकें, अंतसमें समेतशिखरजी पर्वतके ऊपर, १००० साधुवोंकेसाथ, १ माशका अणसण ग्रहण कीया। काउसग्ग मुद्रायें, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मकों खपायकै, मिति भाद्रवा वदि ७ के दिन, दश लाख पूर्वका आउखा पूरण करकें, सिद्धिस्थानकों प्राप्त भए ॥ शासनदेव विजय यक्ष। सासनदेवी भृकुटी। देवगण। मृग योनि। वृश्चिक राशि। अंतरकाल ९० कोडी सागरोपम। सम्यक्त पाएबाद, तीसरे भवमें मोक्ष गए ॥

इति ८ मा श्री चंद्राप्रभु स्वामीका अधिकारः।

॥ अथ ९ मा श्री सुविधनाथ स्वामी अधिकारः ॥

काकंदी नगरीमें, इक्ष्वाकवंशी, सुग्रीवनामें राजा हुवा (तिसके) रामा नामें पट्टराणी। जिसकी कूखमें, नवमा आनत नामा देवलोक ऐसें चवके, मिति फागुण वदि ९ के दिन भगवान् उत्पन्न भया। तब मातायें १४ स्वप्ना देखा (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्षसमें, मिति पोष वद १२, मूलनक्षत्रे जन्मकल्याणक हुवा (तब) सुग्रीव राजायें १० दिनपर्यंत जन्म महोच्छव करके, सर्व गोत्रियोंके सन्मुख, सुविधिकुमर नाम स्थापन किया ॥ मगरमच्छका लंछनयुक्त, स्वेतवर्ण, शरीरप्रमाण १०० धनुष हुवा। तीन ज्ञानयुक्त, महातेजस्वी १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे विवाहकरके, क्रमसें राज्यपद धारण किया। अवसरआये। लोकांतिक देवताके वचनसें, संवत्सर पर्यंत मोटो दान देके, मिति पोस वदि

१३ के दिन, काकंदी नगरीमें, छठ तप करके, शालवृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंके साथ, दीक्षा ग्रहण करी (उसवखत) चोथो मनपर्यवज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठको पारणो, पुष्पदत्तकेघरे, परमान्नसें हुवो। ४ वरस छद्मस्थपणे विहार करके, फेर काकंदी नगरी आए (वहां) छठ तप संयुक्त, मिति कार्तिकशुद ३ केदिन, लोकालोक प्रकाशक केवलग्यान केवल दर्शन उत्पन्न हुवा (उस-वखत) चतुर्निकाय देवगणका किया हुवा समवसरणमें, १२ परखदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी। भगवान्के २ लाख (२०००००) सर्व साधु भए (जिसमे) वराह प्रमुख ८८ गणधर भए॥ १३ हजार (१३०००) वैक्रियलब्धि धारक भए॥ ८ हजार ४ से (८४००) अवधिज्ञानी भए॥ ७ हजार ५ से (७५००) मनपर्यव ज्ञानीभए॥ ७ हजार ५ से (७५००) केवल ज्ञानीभए॥ पनरसे (१५००) चौदे पूर्वधा-रीभए॥ छ हजार (६०००) वादीविरुद धरनेवालेभए॥ २ लाख २० हजार (१२००००) वारुणीप्रमुख साधवी हुई॥ २ लाख २९ हजार (२२९०००) श्रावक हुए॥ ४ लाख ७१ हजार (४७१०००) श्राविका हुई (इत्यादिक) वहुतसे जीवोंका उद्धार करके, कर्मशत्रुवोंसे छोडायके, अतसमें समेतशिखरजी पर्वतके ऊपर, १ हजार (१०००) साधुवोंके साथ, १ मासका अणशण ग्रहण किया। काउसग्ग मुद्रायें, आत्मगुणके ध्यानसें, सवकर्मोंको खपायके, मिति भाद्रवा शुद ९ के दिन, २ लाख पूर्वका आउखा पूरण करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्ति भए॥ शासनदेव अजितयक्ष।

रणमें बेठके, १२ परखदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेशदेके, चतुर्विधसंघकी स्थापना करी ॥ भगवान्के १ लाख (१०००००) सर्व साधुभए (जिसमें) नंद प्रमुख ८१ गणधर हुए ॥ १२ हजार (१२०००) वैक्रियलब्धि धारक भए ॥ ७ हजार २ सै (७२००) अवधि ज्ञानीभए ॥ ७ हजार ५ सै (७५००) मनपर्यवज्ञानीभए ॥ १४ सै (१४००) चवदे पूर्वधारीभए ॥ ५ हजार ८ सै (५८००) वादी विरदधारीभए ॥ १ लाख ४० हजार (१४००००) सुयशा-प्रमुख साधवी हुई ॥ दोलाख तयासीहजार (२८३०००) श्रावक-भए ॥ ४ लाख ५८ हजार (४५८०००) श्राविकाभई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतममे समेतशिखरजी परवतके ऊपर, १ हजार (१०००) साधुवोंके साथ, १ मासका अणमण ग्रहण किया॥ काउसग्ग मुद्रायें, आत्मगुण के ध्यानसें, सर्वकर्मोंको खपायके, मिति वैशाखवदि २ केदिन, १ लाख पूर्वको आयुपूरण करके, सिद्धिस्थानकों प्राप्तभए ॥ शासनदेव ब्रह्मायक्ष । शासनदेवी अशोका । मानवगण । नकुलयोनि । धनराशि । अतरकाल १ कोटि सागरोपम, सम्यक्त पाण्वाद, तीसरे भवमे मोक्षगए (इनों-की वखतमें) हरिवंशकुलकी उत्पत्तिभई (जिसमें) वसुराजादि हुने है । इसका विस्तार संबध जैनसिद्धांतोंसें जाणना ॥ इति ५५ बोलगर्भित श्री शीतलनाथ स्वामी अधिकारः ॥

॥ अथ ११ मा श्री श्रेयांसनाथस्वामी अधिकारः ॥

सिंहपुरी नगरीमें, इक्ष्वाकुवंशी, विष्णु नामें राजा हुवा (तिसके) विष्णु नामें पटराणी, जिसकी कुक्षमें, अच्युतनामा १२ मा

देव लोकसें चवके, मिति ज्येष्ट वदि १४ के दिन, भगवान् उत्पन्न हुवा (तब) मातायें, गजादि अग्निशिखा पर्यंत, १४ स्वमा प्रगट-पणें मुखमें प्रवेश कर्त्ता देखा (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्षसमें, मिति फागुन वदि १२ कों, श्रवणनक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा (उसी वखत) ५६ दिशकुमरी मिलके सूतिका महोच्छव किया (और पीछे) ६४ इंद्र, मेरु पर्वतपर भगवान्कों ले जायके जन्म महोच्छव किया (तिस पीछे) विष्णु राजा १० दिवसपर्यंत मोटो जन्म महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजा गणकों, मनसा भोजन करायके, सर्वके सन्मुख श्रेयांस कुमर नाम दिया ॥ नाम स्थापनका यह हेतु हैं (कि) विष्णु राजाके महिलमें, देव अधि-ष्ठित १ सज्याथी । उस देवसय्यापर जो सूवे वेठे, तो अकस्मात् कोई उपद्रव हुवे विगर रहै नही (जब) भगवान् विष्णु माताके गर्भमें आये (तब) माताकों उस देवसय्यापर, सोनेका डोहला उत्पन्न भया (इस सेती) विष्णु माता जब देवसय्यापर सूती, तब देवता प्रसन्न होके माताकी सेवामें हाजर भया । कोइ तरहका उपद्रव नहिं हो सका (इसवास्ते) पितायें श्रेयांसकुमर नाम दिया । गेंडेका लंछन युक्त, कंचन वर्ण, शरीर प्रमाण ८० धनुष हुवा । तीन ज्ञान सहित, महा तेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, विवाह करके, क्रमसें राज्यपद धारन किया । अवसर आये, लोकांतिक देवताके वचनसें । संवत्सर पर्यंत मोटो दान देके, मिति फाल्गुन वदि १३ के दिन, सिंहपुरी नगरीमें, छठ तप करके, तिंदुक वृक्षके नींचे, १००० पुरषोंकेसाथ

दीक्षा ग्रहण करी। उस वखत चोथो मनपर्येव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठको पारणो, नंदरायके घरे, परमान्न क्षीरसें हुवो॥ दो वर्ष छद्मस्थपणें विहार करके (फेर) सिंहपुरी नगरीमें आए वहां छठ तप सहित, मिति माघ वदि ३० के दिन, लोकालोक प्रकाशक केवल ग्यान उत्पन्न भया (उस वखत) चतुर्निकाय देवगणका किया भया समवसरणमे, १२ परषदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी॥ भगवान्के ८४ हजार (८४०००) सर्व साधु हुए (जिसमें) कच्छप प्रमुख ७६ गणधर पद धारक भए॥ ११ हजार (११०००) वेक्रियलब्धि धारक भए॥ ६ हजार (६०००) अवधिज्ञानी भए॥ ६ हजार (६०००) मनपर्यव ज्ञानी भए॥ ६ हजार ५ सें (६५००) केवल ज्ञानी भए॥ १३ सै (१३००) चौदै पूर्वधारी हुए॥ ५ हजार (५०००) वादी विरुदधारक भए॥ १० लाख ३ सें (१००३००) साधवीयो भई॥ २ लाख ७८ हजार (२७८०००) श्रावक भए॥ ४ लाख ४८ हजार (४४८०००) श्राविका हुई॥ इत्यादिक बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, (अतसमे) समेत सिखरजी पर्वत ऊपर, १००० साधुवोंकेसाथ, एक मासका अणसण ग्रहण किया॥ काउसग्ग मुद्रायें, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मोकों खपायके, मिति श्रावण वदि ३ के दिन, ८४ लाख वरषका आयुष्य पूरण करके सिद्धि स्थानको प्राप्त हुए॥ शासनदेव यक्षराज। शासनदेवी मानवी। देवगण। वानर योनी। मकर राशि। अतरमान ५४ सागरोपम। सम्यक्त पाये बाद तीसरे भवमे मोक्ष गए॥

इति ५५ बोल गर्भित श्री श्रेयांस जिन अधिकारः॥

(इनोंके वखतमें) त्रिपृष्ट नामें पहला वासुदेव, अचल नामें बलदेव हुवा (जिणोंनें) अपना वैरी, अश्वग्रीव प्रति वासुदेवकों मारके, भरत क्षेत्रके तीन खंडका राज करा ॥ (और) इनोंके समयमें, वैताढ्य पर्वतसें, श्रीकंठ नामा विद्याधरके पुत्रनें पद्मोत्तर विद्याधरकी बेटीकों अपहरण करके, अपना बहनोई राक्षसवंशी, लंकाका राजा, कीर्त्तिधवलके शरणमें गया (तब) कीर्त्तिधवलनें तीनसे जोजन प्रमाण, वानर द्वीप, उनके रहनेकों दिया। तिनके संतानोमेंसें चित्र विचित्र, विद्याधरोनें, विद्यासें बंदरका रूप बनाया, (तब) वानरद्वीपके रहनेसें, और वानरका रूप बनानेसें, वानरवंशी प्रसिद्ध हुये। तिनोंकी ओलादमें वाली, सुग्रीवादिक भए है ॥

॥ अथ १२ मा श्री वासुपूज्यस्वामी अधिकारः ॥

चंपापुरीनामा नगरीमें, इक्ष्वाकुवंशी, वसुपूज्यनामे राजा हुवा (उसके) जयानामें पट्टराणी, जिसकी कूखमें, प्राणतनामा १० मा देवलोकसें चवके, मिती ज्येष्टसुदि ९ के दिन, भगवान् उत्पन्न हुये। तब मातायें, गजादि अग्निशिखापर्यंत, १४ स्वप्न प्रगटपणें मुखमें प्रवेश कर्त्ते देखे। पीछे सर्व दिशा सुभिक्षसमें, मिति फाल्गुनवदि १४, शतभिषानक्षत्रे, जन्मकल्याणक हुवा (उसी-वखत) ५६ दिशाकुमारीयों मिलके सूतिकामहोच्छव कीया (पीछे) ६४ इंद्र मेरुपर्वतपर भगवानकों लेजायके जन्ममहोच्छव कीया (तिस पीछे) वसुपूज्य राजायें, १० दिनपर्यंत, मोटो जन्म महोच्छव करके, सर्व न्याती प्रजागणकुं मनसाभोजन करायके,

वासुपूज्य कुमरनाम स्थापन किया (नाम स्थापनका यह हेतु है) वासवनाम इंद्र, जब भगवान् माताके गर्भमे आये, तब इंद्रनें भगवान्‌की माताकों वारवार पूज्या । इस्सें वासुपूज्यनाम (अथवा) वसुकहिये रत्नवासव कहिये वैश्रमण, जब भगवान गर्भमें आये । तब वैश्रमण देवनें राजाके घरमें वारवार रत्नांकी वृर्षा करी, इत्यादि कारणोसें, वासुपूज्य नाम दिया । पाडेका लंछनयुक्त, लालवर्ण, शरीरप्रमाण ७० धनुष हुवा । तीन ज्ञानसहित, महातेजस्वी, १००८ लक्षणालकृत, भोगावलीकर्म निर्जरार्थे विवाह किया । अवसर आये, लोकांतिक देवताके वचनसें, कुमारावस्थामें संवत्सरपर्यंत मोटो दान देके, फाल्गुन सुदि १५ दिन चंपानगरीमें, छठतप करके, पाडलवृक्षके नीचे, ६०० पुरुषोंके साथ, दीक्षा ग्रहण करी । उसवखत चोथो मनपर्यवज्ञान उत्पन्न भयो । प्रथम छठको पारणो सुनंदके घरे, परमान्नक्षीरसें हुवो । १ वरस छद्मस्थपणे विहार करके, फेर चंपानगरीमे आये । वहां छठतप सहित, मिति माघसुदि २ के दिन, लोकालोक प्रकाशक, केवलज्ञान केवलदर्शन उत्पन्न हुवा, तब चतुर्निकाय देवगणका कीया हुवा समोसरणमे, १२ पर्षदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी । भगवान्‌के ७२ हजार (७२०००) सर्व साधु हुये (जिसमें) सुभूम प्रमुख ६६ गणधर पदधारक हुये ॥ धारणी प्रमुख १ लाख (१०००००) साधवियों हुई ॥ १० हजार (१००००) वैक्रियलब्धि धारक हुये ॥ चोपनसो (५४००) अवधि ज्ञानीभये ॥ ६ हजार (६०००) केवल ज्ञानीभये ॥ पैंसठसो (६५००) मनपर्यव

ज्ञानीभये ॥ १२ सो (१२००) चवदे पूर्वधारीभये ॥ सैंतालीससो (४७००) वादी विरुदधारीभये ॥ २ लाख १५ हजार (२१५०००) श्रावक हुये ॥ ४ लाख २६ हजार (४२६०००) श्राविका हुई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें चंपानगरीमें, ६०० साधुवोंकेसाथ, १ मासका अनशन ग्रहण कीया। काउसग्ग मुद्रायें, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मकों खपायके, आषाढसुदि १४ के दिन, ७७ लाख (७७०००००) वर्षको आयुष्य पूरण करके। सिद्धि स्थानकों प्राप्ति भये। शासनदेव कुमारयक्ष। शासनदेवी चंडा। राक्षसगण अश्वयोनी। कुंभराशि। अंतरमान ३० सागरोपम। सम्यक्तपायेबाद तीसरे भवमें मोक्ष गये। इनोके वखतमें दूसरा द्विपृष्टनामा वासुदेव (अरु) विजय नामें बलदेव हुवा। इनका वैरी, तारक नामें दूसरा प्रतिवासुदेव हुवा। इति ५५ बोलगर्भित श्री वासुपूज्यस्वामी अधिकारः ॥ १२ ॥

॥ अथ १३ मा विमलनाथस्वामी अधिकारः ॥

कंपिलपुरी नगरीमें, इक्ष्वाकुवंशी, कृतवर्मनामें राजा हुवा (तिसके) श्यामानामें पट्टराणी। जिसकी कूखमें, सहस्रारनामें ८ मा देवलोकसें चवके, मिति वैशाखसुदि १२ के दिन भगवान उत्पन्न हुये, तब मातायें गजादि अग्निशिखापर्यंत १४ स्वप्ना, प्रगटपणें मुखमें प्रवेशकर्त्ता देखा पीछे सर्वदिशा सुभिक्षसमें, मिति माघसुदि ३ के दिन, उत्तराभाद्रपद नक्षत्रे जन्मकल्याणक हुवा (उसीवखत) ५६ दिशा कुमारीयों मिलके, सूतिका महोच्छव किया पीछे ६४ इंद्र मिलके, मेरु पर्वतपर, भगवानकों लेजायके, जन्म महोच्छव

कीया। तिम पीछे कृतवर्म राजायें, १० दिवस पर्यंत, मोटो जन्म-महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजागणकुं मनसा भोजन करायके, विमल कुमर नाम स्थापन किया। (नाम स्थापनका यह हेतु है) कि जब भगवान् माताके गर्भमे आये। तब माताकी बुद्धि, अरु शरीर, दोनुं निर्मल हो गये (इस्सें) विमल कुमर नाम स्थापन किया। वाराहका लंछनयुक्त, कंचनवर्ण, शरीर प्रमाण ६० धनुष हुवा। ३ ज्ञान सहित, महा तेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, विवाह करके, क्रमसें राज्यपद धारण किया। अवसर आवे, लोकांतिक देवताके वचनसें, संवत्सर पर्यंत वडो दान देके, मिति माघ सुदि ४ के दिन, कंपिलपुर नामा नगरमें, छठ तप करके, जंबू वृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंकेसाथ, दीक्षा ग्रहण करी। उस वखत चोथो मन पर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठको पारणो, जय राजाके घरे, परमान्न क्षीरसे हुवो। दो मास छद्मस्थपणे विहार करके, कंपिलपुरी नगरीमे आवे। छठ तप सहित, पोषसुदि ६ के दिन, लोकालोक प्रकाशक, केवल ज्ञान, केवल दर्शन उत्पन्न हुवा। (तब) चतुर्निकाय देवगणका किया हुवा, समोसरणमें, १२ परषदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी॥ भगवानूके ६८ हजार (६८०००) सर्व साधु हुवे (जिसमे) मंदर प्रमुख ५७ गणधर पद धारक हुये॥ धरा प्रमुख १ लाख ८ सो (१००८००) सर्व साध्वी हुई॥ ९ हजार (९०००) वैक्रिय लब्धि धारक भये॥ छत्तीससो (३६००) वादी विरद धारक हुये॥

अडतालीससो (४८००) अवधिज्ञानी हुये ॥ पच्चावनसो (५५००) मनपर्यव ज्ञानी हुये ॥ पच्चावनसो (५५००) केवल ज्ञानी हुये ॥ (११००) चवदे पूर्वधारी हुये ॥ २ लाख ८ हजार (२०८०००) श्रावक हुये ॥ ४ लाख २४ हजार (४२४०००) श्राविका हुई (इत्यादिक) वहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें, समेत शिखरजी पर्वत ऊपर, ६०० साधुवोंकेसाथ, १ मासका अनशन ग्रहण किया काउसग्ग मुद्रायें, आत्म गुणके ध्यानसें, सर्व कर्मकों खपायके, मिति आषाढ वदि ७ के दिन, ६० लाख (६००००००) वर्षको आयुष्य पूरन करके सिद्धि स्थानकों प्राप्त भये। शासन देव षण्मुख यक्ष। शासन देवी विदिता। मानवगण छागयोनि। मीन राशि। अंतर्मान ९ सागरोपम, सम्यक्त पाये-वाद तीसरे भव मोक्ष गये ॥ इनोंके वारे तीसरा स्वयंभू वासुदेव, अरुभद्र नामा वलदेव तथा मेरक नामा प्रति वासुदेव हुवा ॥ इति ५५ वोल गर्भित श्री विमल स्वामी अधिकारः ॥ १३ ॥

॥ अथ १४ मा श्री अनंतनाथ स्वामी अधिकारः ॥

अयोध्या नगरीमें, इक्ष्वाकवंशी, सिंहसेन नामें राजा हुवा तिसके सुयशा नामें पट्टराणी। जिसकी कूखमें, प्राणत नामा, देवलोकसें चवके, मिति श्रावण वदि ७ के दिन, भगवान् उत्पन्न हुवा। तव मातायें गजादि अग्नि शिखापर्यंत, १४ स्वप्न प्रगटपणें मुखमें प्रवेश कर्त्ता देखा (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्षसमें, मिति वैशाख वदि १३ के दिन, रेवती नक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा (उसी वखत) ५६ दिशा कुमारीयों मिलके, सूतिका महोच्छव

किया (पीछे) ६४ इंद्र मेरु पर्वतपर भगवान्‌कों ले जायके, जन्म महोन्छव कीया (तिस पीछे) सिंहसेन राजायें १० दिवसपर्यंत मोटो जन्म महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजागणकों मनसा भोजन करायके, सर्वके सन्मुख, अनंतनाथ नाम स्थापन कीया (नाम स्थापनका यह हेतु हे) कि भगवान् गर्भमें आये, तव रत्नजडित चित्रविचित्र मोटी दाममाला, स्वप्नमें माताये देखी । तिस कारणसें, अनंतनाथ नाम स्थापन किया सींचाणेका लछनयुक्त, कंचनवर्ण, शरीर प्रमाण ५० धनुप हुवा। तीन ज्ञानसहित, महा तेजखी, १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे विवाह कीया, क्रमसें राज्यपद धारन कीया। अवसर आये, लोकांतिक देवताके वचनसें, संवत्सरपर्यंत मोटो दान देके, वैशाख वदि १४ के दिन, अयोध्या नगरीमें, छठ तप करके, अशोक वृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंके साथ दीक्षा ग्रहण करी । उस वखत चोथो मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठको पारणो, विजय राजाके घरे परमान्न क्षीरसें हुवो ॥ ३ वर्ष छद्मस्थपणें विहार करके, अयोध्या नगरीमें आये । वहां छठ तप सहित, वैशाख वदि १४ के दिन, लोकालोक प्रकाशक केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा । उस वखत चतुर्निकाय देवगणका कीया हुवा समोसरणमें १२ परपदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी । भगवान्‌के ६६००० सर्व साधु हुवे (जिसमे) जस प्रमुख ५० गणधर पद धारक भए । पद्मा प्रमुख ६२००० सर्व साध्वी हुई । ८०००

वैक्रिय लब्धि धारक भए ॥ ३२०० वादीविरुद धारक भए ॥ ४३०० अवधिज्ञानी भए ५००० मनपर्यवज्ञानी भए ॥ ५००० केवलज्ञानी भए ॥ १००० चवदे पूर्वधारी भए ॥ २०६००० श्रावक भए ॥ ४१४००० श्राविका भई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके अंतसमें, समेतशिखरजी पर्वतपर, ७०० साधुवोंकेसाथ १ मासका अनशन ग्रहण कीया । काउसग्गमुद्रायें, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्वकर्मोंकूं खपायके, मिति चैत्रसुदि ५ के दिन, तीसलाख (३००००००) वर्षको आयुष्य पूरन करके, सिद्धिस्थानकों प्राप्त भए ॥ शासनदेव पाताल यक्ष । शासनदेवी अंकुशा । देवगण । हस्तियोनि । मीनराशि । अंतर्मान ४ सागरोपम । सम्यक्तपायेवाद तीसरे भवमें मोक्ष गये ॥ इनोंके वारे, चोथा पुरुषोत्तमनामा वासुदेव (अरु) सुप्रभनामा बलदेव (तथा) मधुकैटभनामा प्रतिवासुदेव हुवा ॥ इति ५५ वोलगर्भित श्री अनंतनाथस्वामी अधिकारः ॥ १४ ॥

॥ अथ १५ मा श्री धर्मनाथस्वामी अधिकारः ॥

रत्नपुरीनामा नगरीमें, इक्ष्वाकुवंशी, भानुनामें राजा हुवा (तिसके) सुव्रतानामें पट्टराणी । जिसकी कूखमें, विजयनामा अनुत्तर विमानसें चवके, मिति वैशाख सुदि ७ के दिन, भगवान् उत्पन्न हुवा । तव मातायें गजादि अग्निशिखापर्यंत १४ स्वप्ना प्रगटपणें मुखमें प्रवेशकर्त्ता देखा (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्षसमें, मिति माघसुदि ३ के दिन, पुष्यनक्षत्रे, जन्मकल्याणक हुवा ॥ उसीवखत ५६ दिशा कुमारीयों मिलके सूतिका

महोच्छव कीया । (पीछे) मेरुपर्वतपर भगवानकों लेजायके जन्म महोच्छव कीया । तिस पीछे भानुराजायें, १० दिवस-पर्यंत वडो जन्ममहोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजा-गणकों, मनसा भोजन करायके, सर्वके सन्मुख, श्री धर्मनाथ नाम स्थापन किया ॥ नाम स्थापनाका यह हेतु है । कि पर-मेश्वरके गर्भमें आनेसें, माता दानादिक धर्ममें तत्पर भई (इस्सें) धर्मकुमर नामस्थापन कीया । वज्रका लाछन युक्त, कंचनवर्ण, शरीरप्रमाण ४५ धनुप हुवा । तीन ज्ञानसहित, महातेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्मनिर्जरार्थे विवाह करके, क्रमसें राज्यपद धारन कीया । अवसर आये लोकांतिक देवताके वचनसें, संवत्सरपर्यंत मोटो दान देके, मिति माघसुदि १३ दिन, रत्नपुरीनगरीमें, छठ तप करके, दधिपर्णनामा वृक्षके नीचे, १००० पुरुपांकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी उसवखत चोथो मनप-र्यवज्ञान उत्पन्न भयो । प्रथम छठको पारणो, धनसिंहके घरे, परमान्नक्षीरसें हुवो । दो वर्ष छद्मस्थपणे विहार करके, रत्नपुरी नगरीमे आये । छठतप सहित, पोप सुद १५ के दिन, लोका-लोक प्रकाशक, केवल ज्ञान केवल दर्शन उत्पन्न हुवा (उस-वखत) चतुर्निकाय देवगणका कीया हुवा समोसरणमे, १२ परपदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी । भगवान्के ६४००० सर्व साधु हुवे (जिसमें) अरिष्ट प्रमुख ४३ गणधर हुये ॥ आर्यशिवा प्रमुख ६२४०० सर्व साधवीयों हुई ॥ ७००० वैक्रिय लब्धि धारक हुवे ॥ २८००

वादी विरुद धारक हुवे ॥ २६०० अवधि ज्ञानी हुवे ॥ ४५०० केवल ज्ञानी हुवे ॥ ९०० चवदे पूर्वधारी हुवे ॥ २०४००० श्रावक हुवा ॥ ४१३००० श्राविका हुई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें, समेत शिखरजी पर्वतपर, १००८ साधुवोंकेसाथ, १ मासका अनशन ग्रहण कीया काउसग्ग मुद्राइं, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मोंकुं खपायके, मिति ज्येष्ट सुदि ५ के दिन, १० लाख वर्षको आयुष्य पूरन करके, सिद्धिस्थानकों प्राप्त भए ॥ शासनदेव किन्नर यक्ष । शासन देवी कंदर्पा । देवगण । मंजार योनी । कर्कराशि । अंतरमान ३ सागरोपम । सम्यक्तपायेवाद तीसरे भवमें मोक्ष गये ॥ (इनोंकेवारे) ५ मा पुरुष सिंहनामा वासुदेव (अरु) सुदर्शन नामा बलदेव (तथा) निशुंभ नामा प्रति वासुदेव हुवा ॥

॥ इति ५५ वोल गर्भित श्री धर्मनाथाधिकारः ॥ १५ ॥

१५ मा श्री धर्मनाथ स्वामीके पीछे, अरु १६ मा श्री शांतिनाथ स्वामीके पहिले, तीसरा मघवा नामा चक्रवर्त्ति (और) चोथा सनत्कुमार नामा चक्रवर्त्ति हुवा ॥

॥ अथ १६ मा शांतिनाथ स्वामी अधिकारः ॥

हस्तनापुर नामा नगरमें, इक्ष्वाकुवंशी, विश्वसेन नामें राजा हुवा (तिसके) अचिरा नामें पट्टराणी, जिसकी कूंखमें, सर्वार्थसिद्ध नामा देवलोकसें चवके, मिति भाद्रवा वदि ७ के दिन, भगवान् उत्पन्न भए । तब मातायें, गजादि अग्निशिखापर्यंत, १४ स्वप्न प्रगटपणें मुखमें प्रवेश कर्त्ता देखा (पीछे) सर्व दिशा

सुभिक्षसमें, ज्येष्ट वदि १३ के दिन, भरणी नक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा ॥ उसी वखत ५६ दिशा कुमारीयों मिलके सूतिका महोच्छव कीया (पीछे) ६४ इंद्र मेरु पर्वतपर, भगवानकों ले जायके, जन्म महोच्छव कीया (तिस पीछे) विश्वसेन राजायें १० दिनमपर्यंत, मोटो जन्म महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजागणकों मनसा भोजन करायके, सर्वके सन्मुख शांतिकुमर नाम स्थापन कीया ॥ नाम स्थापनका यह हेतु है, गर्भमे भगवान्के उत्पन्न होनेसें, पूर्वे जो मरीआदिक रोगोपद्रव वहुतथा, वो शांति हो गया (इस कारणसें) शाति कुमर नाम दिया। हिरणका लाछनयुक्त, कंचनवर्ण, शरीरप्रमाण ४० धनुप हुवा। ३ ज्ञान सहित, महातेजस्वी, १००८ लक्षणालकृत, भोगावलीकर्म निर्जरार्थे, चक्रवर्त्तिपद धारण करके, ६४ हजार स्त्रियांकों परण्या (पीछे) अवसर आये लोकांतिक देवताके वचनसें, मिति ज्येष्ठ वदि १४ के दिन, हस्तनापुर नगरमें, छठ तप करके नदीवृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी (उस वखत) चोथो मनपर्यवज्ञान उत्पन्न हुवो । प्रथम छठको पारणो, सुमित्रके घरे परमान्नक्षीरसें हुवो । १ वर्ष छद्मस्थपणें विहार करके, फिर हस्तनापुर नगरमें आये । वहा छठ तप सहित, पोषसुदि ९ के दिन, लोकालोक प्रकाशक केवल ज्ञान केवल दर्शन उत्पन्न हुवा (उस वखत) चतुर्निकाय देवगण का कीया हुवा समोसरणमें, १२ परषदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके चतुर्विध संघकी स्थापना करी । भगवान्के ६२ हजार सर्व साधु हुवे

(जिसमें) चक्रायुध प्रमुख ३६ गणधर पदधारक हुये ॥ सुचि-प्रमुख ६१६०० साधवीयों हुई ॥ ६००० वैक्रिय लब्धिवंत भए ॥ २४०० वादी विरुद धारक भए ॥ ३००० अवधि ज्ञानी भए ॥ ४००० मनपर्यव ज्ञानी भए ॥ ४३०० केवल ज्ञानी भए ॥ ८०० चवदे पूर्वधारी हुये ॥ २ लाख ९० हजार श्रावक हुवा ॥ ३ लाख ९३ हजार श्राविका हुई ॥ (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें समेत शिखरजीपरवतपर, ९०० साधुवों-केसाथ, १ मासका अणशन ग्रहण कीया । काउसग्ग मुद्राइं आ-त्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मोंकों खपायके, मिति ज्येष्ट वदि १३ के दिन, १ लाख वर्षको आयुष्य पूरण करके, सिद्धिस्थानकों प्राप्त भए । शाशनदेव गरुड यक्ष । शासनदेवी निर्वाणी । मानव गण । हस्ति योनी । मेष राशि । अंतरमान अर्द्धपल्योपम । सम्यक्त पायेवाद १२ मे भवमें मोक्ष गए ॥ इति ५५ वोल गर्भित ५ मा चक्रवर्त्त, १६ मा श्रीशांतिनाथ स्वामी अधिकारः ॥ १६ ॥

॥ अथ १७ मा श्री कुंथुनाथ स्वामी अधिकारः ॥

गजपुर नामा नगरमें, इक्ष्वाकुवंशी, सूरनामा राजा हुवा (ति-सके) श्री नामा पट्टराणी । जिसकी कूखमें, सर्वार्थसिद्ध नामा देवलोकसें चवके, मिति श्रावण वदि ९ के दिन, भगवान् उत्पन्न भए । तव मातायें, गजादि अग्नि शिखापर्यंत, १४ स्वप्न प्रगट-पणें मुखमें प्रवेश कर्त्ता देखा (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्षसमें, वैशाख वदि १४ के दिन, कृत्तिका नक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा । इसी वखत ५६ दिशा कुमारीयों मिलके सूतिका महोच्छव कीया

(पीछे) ६४ इंद्र मेरुपर्वतपर भगवानकों ले जायके जन्म महोच्छव कीया (तिस पीछे) सूर राजायें १० दिवस पर्यंत, मोटो जन्म महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजागणकों मनसा भोजन करायके, सर्वके सन्मुख, श्री कुंथु कुमर नाम स्थापन कीया ॥ नाम स्थापनका यह हेतु है कि भगवान् गर्भमे आया, तब माता रत्नमई कुंथुवोंकी राशि देखती भई । इससे, कुंथ कुमर नाम दिया ॥ चकराका लंछनयुक्त, कनकवर्ण, शरीर प्रमाण ३५ धनुष हुवा । ३ ज्ञानसहित, महा तेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत भोगावली कर्मनिर्जरार्थे, चक्रवर्त्ति पद धारण करके, ६४ हजार स्त्रियांकों परण्या (पीछे) अवसर आये लोकांतिक देवताके वचनसें, मिति चैत्रवदि ५ के दिन, हस्तनापुर नगरमे, छट तप करके, भीलक वृक्षके नीचे १००० पुरुषोंकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी (उसवखत) चोथो मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो । प्रथम छठको पारणो, व्याघ्रसिंघके घरे, परमान्नक्षीरसे हुवो । १६ वर्ष छद्मस्थपणे विहार करके, फिर हस्तनापुर नगरमे आये । वहां छठ तप सहित, चैत्रसुदि ३ के दिन लोकालोक प्रकाशक केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा (उसवखत) चतुर्निकाय देवगणका कीया भया समोसरणमे १२ परषदाके सन्मुख भगवान् धर्मोपदेश देके चतुर्विध संघकी स्थापना करी ॥ भगवानके ६० हजार सर्व साधु हुये (जिसमे) सांब प्रमुख ३५ गणधर पदधारक भये ॥ दामिनी प्रमुख ६०६०० साध्वी हुई ॥ ५१०० वैक्रियलब्धिवंत भए ॥ २००० वादी विरुदपद धारक भए ॥ २५०० अवधि ज्ञानी

भए ॥ ३३४० मनपर्यव ज्ञानी भए ॥ ३२०० केवल ज्ञानी भए ॥ ६७० चवदे पूर्वधारी भए ॥ १ लाख ७९ हजार श्रावक हुआ ॥ ३ लाख ८१ हजार श्राविका हुई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें समेतशिखरजी पर्वतऊपर, १००० साधुवोंकेसाथ, १ मासका अनशन कीया । काउसग्ग मुद्राइं, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्वकर्मोंकुं खपायके, मिति वैशाखवदि १ दिन, ९५ हजार वर्षको आयुष्य पूरण करके सिद्धिस्थानकों प्राप्ति भए । शासनदेव गंधर्व यक्ष । शासनदेवी बला । छागयोनी । वृषराशि । अंतरमान पावपल्योपम । सम्यक्त पायेवाद तीसरेभवमें मोक्ष गये ॥ इति ५५ बोलगर्भित ६ ठा चक्रवर्त्ती, १७ मा श्री कुंथुनाथ स्वामीका अधिकार संपूर्णम् ॥

॥ अथ १८ मा श्री अरनाथस्वामी अधिकारः ॥

गजपुरनामा नगरमें, इक्ष्वाकुवंशी, सुदर्शननाम राजा हुवा (तिसके) देवीनामें पट्टराणी हुई । जिसकी कूखमें सर्वार्थसिद्ध नामा देवलोकसें चवके, मिति फागणसुदि २ के दिन भगवान् उत्पन्न भए । तब मातायें गजादि अग्निसिखापर्यंत १४ स्वप्न प्रगटपणें मुखमें प्रवेशकर्त्ता देखा । पीछे सर्व दिशा सुभिक्षसमें, मिगसर सुद १० के दिन, रेवतीनक्षत्रे जन्मकल्याणक हुवा । उसी वखत ५६ दिशा कुमारीयों मिलके सूतिका महोच्छव कीया पीछे ६४ इंद्र मेरुपर्वतपर भगवानकों ले जायके जन्म-महोच्छव कीया । तिस पीछें सुदर्शनराजायें १० दिवसपर्यंत मोटो जन्ममहोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजागणकों मनसा-

भोजन करायके, सर्वके सन्मुख, श्री अरनाथ कुमर नाम स्थापन कीया। नाम स्थापनका यह हेतु है, कि भगवान् जब गर्भमें स्थित हुवा, तब मातायें स्वप्नमें, सर्व रत्नमई अरदेख्या (इस कारणसें) अरकुमर नाम दीया। नंद्यावर्त्तका लंछनयुक्त, कनकवर्ण, शरीरप्रमाण ३० धनुष हुवा। ३ ज्ञानसहित, महातेजस्वी, १००८ लक्षणालकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, चक्रवर्त्ति पदधारण करके, ६४ हजार स्त्रियाकों परण्या (पीछे) अवसर आये लोकांतिक देवताके वचनसें, मिति मिगसरसुदि ११ के दिन, हस्तनापुर नगरमे, छठतप करके, आवाका वृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी (उसवखत) चोथो मनपर्यवज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठकोपारणो, अपराजितके घरे परमान्नक्षीरसें हुवो। तीनवर्ष छद्मस्थपणे विहार करके, फिर हस्तनापुरमें आये। वहा छठतप सहित, कार्त्तिकसुदि १२ के दिन, लोकालोक प्रकाशक केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा (उस वखत) चतुर्निकाय देवगणका कीया हुवा समोसरणमे १२ परिषदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके चतुर्विध संघकी स्थापना करी। भगवानके ५० हजार सर्व साधुभये (जिसमे) कुंभ प्रमुख ३३ गणधर पदधारक भये। रक्षिता प्रमुख ६० हजार साध्वी हुई। ७३०० वैक्रिय लब्धिवंत भये॥ १६०० वादी विरुदपद धारकभये॥ २६०० अवधि ज्ञानीभये॥ २५५१ मनपर्यव ज्ञानीभये २८०० केवल ज्ञानीभये॥ ६१० चवदे पूर्वधारीभये॥ १ लाख ८४ हजार श्रावक हुये। ३ लाख

७२००० श्राविका हुई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें समेत शिखर जी पर्वतपर, १००० साधुवोंके साथ, १ मासका अनशन कीया। काउसग्ग मुद्राइं, आतम-गुणके ध्यानसें, सर्व कर्मोकों खपायके, मिति मिगसरसुदि १० के दिन, ८४००० वर्षको आयुष्यमान पूरो करके, सिद्धि-स्थानकों प्राप्ति भये। शासनदेव यक्षराज। शासनदेवी धारणी। देवगण। हस्तियोनी। मीनराशि। अंतरमान १ हजार कोड-वर्ष। सम्यक्त पायेबाद तीसरे भवमें मोक्ष गये॥ इहां १८ मा, तथा १९ मा, तीर्थंकरके बीचमें, ६ ठा पुरुष पुंडरीक वासुदेव, तथा आनंदनामा बलदेव, बलिनामा प्रतिवासुदेव हुये इस पीछे ८ मा सुभूमनामें चक्रवर्त्ति हुवा। इस पीछे, दत्तनामा ७ मा वासुदेव, तथा नंदनामा बलदेव, और प्रह्लादनामा प्रति-वासुदेव भये॥ इति ५५ बोलगर्भित ७ मा चक्रवर्त्ति, १८ मा श्री अरनाथ स्वामीका अधिकार संपूर्ण॥ १८॥

॥ अथ १९ मा श्री मल्लिनाथस्वामी अधिकारः॥

मिथिला नामा नगरीमें, इक्ष्वाकुवंशी, कुंभनामें राजा हुवा। तिसके प्रभावतीनामें पट्टराणी हुई। जिसकी कूखमें, जयंत विमा-नथी चवके, मिति फागुण सुदि ४ के दिन, भगवान् उत्पन्न भये। तब मातायें, गजादि अग्निशिखापर्यंत, १४ स्वप्न प्रगट-पणें मुखमें प्रवेशकर्त्ता हुवा देखा (पीछे) सर्व दिशा सुभि-क्षसमें, मिगसर सुदि ११ के दिन, अश्विनीनक्षत्रे जन्म कल्याणक हुवा। उसीवखत ५६ दिशा कुमारीयों मिलके

सूतिका महोच्छव कीया । पीछे ६४ इंद्र, मेरुपर्वतपर भगवानकों लेजायके, जन्ममहोच्छव कीया (तिस पीछे) कुंभराजायें १० दिनसपर्यंत मोटो जन्ममहोच्छव करके, सर्व न्याती गौती प्रजागणकों मनसा भोजन करायके, सर्वके सन्मुख श्री मल्लिकुमर नाम स्थापन कीया (नाम स्थापनका यह हेतु है) कि भगवान् जब गर्भमे आया तब भगवान्की माताकों सुगंधवाले फूल मालाकी सय्याऊपर, सोनेंका दोहद उत्पन्न भया । सो देवताने पूरण कीया (इस कारणसें) मल्लिकुमर नाम दीया । कलशका लंछनयुक्त, नीलवर्ण, शरीर प्रमाण २५ धनुष हुवा । ३ ज्ञानसहित, महातेजस्वी, १००८ लक्षणालकृत, विवाह कियेविगर, कुमार अवस्थामे रया (पीछे) अवसर आये लोकांतिक देवताके वचनसें, मिति मिगसरसुदि ११ के दिन, मथुरा नगरीमें, अष्टमतप करके, अशोकवृक्षके नीचे, ३०० कुमरी ३०० पुरुषोंकेसाथ दीक्षा ग्रहण करी (उस वखत) चोथो मनपर्यवज्ञान उत्पन्न भयो । प्रथम छठको पारणो, विश्वसेनकेघरे, परमान्नक्षीरसें हुवो । फिर उसीदिन मिथिलानगरीमें । छठतपसहित, मिगसर सुदि ११ के दिन लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान उत्पन्न हुवा (उसवखत) चतुर्निकाय देवगणका कीया हुवा समोसरणमें १२ परिषदाके सन्मुख भगवान धर्मोपदेश देके चतुर्विध संघका स्थापना करा भगवानके ४० हजार सर्व साधु भये । (निर्मम) अभिक्षक (किंशुक) प्रमुख २८ गणधर पदधारक हुवे ॥ बंधुमती प्रमुख ५५ हजार सर्व साध्वी हुई ॥

२९०० वेक्रियलब्धिवंत भये ॥ १४०० वादी विरुद धारक भये ॥ २२०० अवधिज्ञानी भये ॥ १७५० मनपर्यव ज्ञानी भये ॥ २२०० केवलज्ञानी भये ॥ ६६८ चवदे पूर्वधारी हुये ॥ १ लाख ८३ हजार श्रावक भये ॥ ३७०००० श्राविका हुई, इत्यादिक वहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें समेतसिखरजी पर्वतऊपर, ५०० साधुवोंकेसाथ १ मासका अनशन कीया । काउसग्ग मुद्राइं, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्वकर्मांकों खपायके, मिति फागुणसुदि १२ के दिन, ५५ हजार वर्षको आयुष्यमान पूरो करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्ति भये । शासनदेव कुवेरयक्ष । शासनदेवी धरणप्रिया । देवगण । अश्वयोनि । मेषराशि । अंतरमान ५४००००० वर्ष, सम्यक्तपायेवाद तीसरे भवमें मोक्ष गया ॥ मल्लिनाथस्वामी अधिकारः ॥ १९ ॥

॥ इति १९ मा श्री मल्लिनाथस्वामी अधिकारः ॥

॥ अथ २० मा श्री मुनिसुव्रतस्वामी अधिकारः ॥

राजगृही नामा नगरीमें, हरिवंशी, सुमित्र नामें राजा हुवा (तिसके) पद्मावती नामें पट्टराणी भई । जिसकी कूखमें, अपराजित नामा अनुत्तर विमानसें चवके, मिति श्रावण सुदि १५ के दिन, भगवान् उत्पन्न भया । तव मातायें गजादि अग्नि शिखापर्यंत, १४ स्वप्न प्रगटपणें मुखमें प्रवेश कर्त्ता हुवा देखा, पीछे सर्व दिशा सुभिक्षसमें, ज्येष्ट वदि ८ के दिन, श्रवण नक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा (उस वखत) ५६ दिशा कुमारीयों मिलके, सूतिका महोच्छव कीया (पीछे) ६४ इंद्र, मेरु पर्वतपर भगवान् कों ले जायके, जन्म महोच्छव कीया । तिस

पीछे, सुमित्र राजाये १० दिवसपर्यंत, वडो जन्म महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजागणको मनसा भोजन करायके, सर्वके, सन्मुख, मुनिसुव्रत कुमर नाम स्थापन कीया। (नाम स्थापनका यह हेतु हे) कि भगवान् गर्भमे स्थित हुवा, तव माता मुनिकी तरे, भले व्रतवाली होती भई (इस हेतुसें) मुनिसुव्रत नाम दीया। कच्छपके लंछनयुक्त। श्यामवर्ण, शरीर प्रमाण २० धनुप हुवा। ३ ज्ञान सहित, महा तेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, विवाह करके, क्रमसें राज्यपद धारण कीया। पीछे अवसर आये, लोकांतिक वचनसे, मिति फागुण शुदि १२ के दिन, राजगृही नगरीमे, छठ तप करके, चंपेका वृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंकेसाथ, दीक्षा ग्रहण करी (उस वखत) चोथो मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठ को पारणो, ब्रह्मदत्तके घरे, परमान्न क्षीरसें हुवा। ११ मास छद्मस्थपणें विहार करके, फिर राजगृही नगरीमे आये। वहा छठ तप सहित, फागुण वदि १२ के दिन, लोकालोक प्रकाशक, केवल, ज्ञान उत्पन्न हुवा (उस वखत) चतुर्निकाय देवगणका कीया हुवा समोसरणमे, १२ परिपदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी। भगवानके ३० हजार सर्व साधु भये (जिसमें) मल्लि प्रमुख १८ गणधर हुये पुष्पवती प्रमुख ५० हजार सर्व साध्वी भई ॥ २००० वैक्रिय लब्धिवंत भये ॥ १२०० वादी विरुद धारक भये ॥ १८०० अवधि ज्ञानी भये ॥ १५०० मनपर्यव ज्ञानी भये ॥ १८०० केव-

लज्ञानी भये ॥ ५०० चवदे पूर्वधारी भये ॥ १ लाख ७२ हजार श्रावक भये ॥ ३ लाख ५० हजार श्राविका भई (इत्यादिक) वहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें समेत शिखरजी पर्वतऊपर, १००० साधुवोंके साथ, १ मासका अनशन कीया ॥ काउसग्ग मुद्राइं, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मोंकों खपायके, मिति ज्येष्ट वदि ९ के दिन, ३० हजार वर्षको आयुष्य मान पूरो करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्ति भये । शासनदेव वरुण यक्ष । शासनदेवी नरदत्ता । देवगण । वानर योनि मकर राशि । अंतरमान ६ लाख वर्ष । सम्यक्त पायेवाद, तीसरे भवमें मोक्षगये ॥ इणोकेवारे रामचंद्र लक्ष्मण ८ मां वलदेव वासुदेव रावणप्रति वासुदेव हुवा ॥

॥इति५५ वोल गर्भित २० माश्री मुनि सुव्रतस्वामी अधिकारः२०॥

॥ अथ २१ मा श्री नमिनाथस्वामी अधिकारः ॥

मथुरा नामा नगरीमें इक्ष्वाकुवंशी, विजय नामा राजा हुवा तिसके वप्रा नामें पट्टराणी भई । जिसकी कूखमें, प्राणत नामा देव लोकसें चवके, मिति आशोज सुदि १५ के दिन, भगवान् उत्पन्न भया । (तव) मातायें गजादि अग्नि शिखापर्यंत, १४ स्वप्न प्रगटपणें मुखमें प्रवेश कर्त्ता हुवा देखा (पीछे) सर्व दिशा सुभिक्षसमें, मिति श्रावण वदि ८ के दिन, अश्विनी नक्षत्रे जन्मकल्याणक हुवा (उसीवखत) ५६ दिशा कुमारीयों मिलके, सूतिका महोच्छव कीया (पीछे) ६४ इंद्र मेरु पर्वतपर भगवानकों ले जायके जन्म महोच्छव कीया (तिस पीछे) विजय

राजायें १० दिवसपर्यंत मोटो जन्म महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजा गणकों मनसा भोजन करायके, सर्वके सन्मुख, श्री न्मीनाथकुमर नाम स्थापन कीया (नाम स्थापनका यह हेतु हे कि) भगवान् माताके गर्भमें आये, तव वैरी राजायोंनेभी नमस्कार करा (इस कारणसें) नमी कुमर नाम दीया। कमलका लछनयुक्त। पीतवर्ण। शरीरका प्रमाण १५ धनुप हुवा। ३ ज्ञान सहित, महा तेजस्वी. १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, विवाह करके, राज्यपद धारन किया। पीछे अवसर आये, लोकांतिक देवताके वचनसें, मिति आषाढ वदि ९ के दिन, मथुरा नगरीमें छठ तप करके, १ हजार पुरुषोंकेसाथ, वकुल वृक्षके नीचे, दीक्षा ग्रहण करी। उस वखत चोथो मन पर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठको पारणो, दिन्न कुमारके घरे, परमान्न क्षीरसें हुवो। ९ मास छद्मस्थपणें विहार करके फिर मथुरा नगरीमें आये। वहां छठतप सहित, मिगसर सुदि ११ के दिन, लोकालोक प्रकाशक, केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा (उसवखत) चतुर्निकायदेवगणका कीया हुवा समोसरणमें, १२ परिषदाके सन्मुख भगवान् धर्मोपदेश देके चतुर्विध संघकी स्थापना करी। भगवान्के २० हजार सर्व साधु भये (जिसमें) शुभप्रमुख १७ गणधर हुये। अनिला प्रमुख ४१ हजार सर्व साध्वी भई ॥ ५००० वैक्रियलब्धिवंत भये ॥ १००० वादी विरुद्ध धारक भये ॥ १६०० अवधि ज्ञानी भये १२५० मनपर्यव ज्ञानी भये ॥ १६०० केवल ज्ञानीभये ॥ ४५० चवदे पूर्वधारीभये ॥ १ लाख ७० हजार श्रावक भये ॥ ३ लाख

बहुतसे जीवोंका उद्धार
४८ हजार श्राविका हुई (इत्यादिक) बहुतसे जीवोंका उद्धार
करके, अंतसमें समेतशिखरजी पर्वतऊपर १००० साधुवोंके
साथ १ मासका अनशनकीया । काउसग्ग मुद्राइं आत्मगुणके
ध्यानसे, सर्व कर्मोंकों खपायके, मिति वैशाखवदि १० के दिन,
१० हजार वर्षको आयुष्यमान पूरो करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्त
भये । शासनदेव भृकुटीयक्ष शासनदेवी गंधारी । देवगण ।
अश्वयोनि । मेषराशि । अंतरमान ५००००० वर्ष, सम्यक्त
पायेवाद तीसरेभवमें मोक्षगये ॥ इनोंके वारे हरिषेणनामा १०
मा चक्रवर्त्ति हुवा ॥ और २१ मा (तथा) २२ मा तीर्थंकरके
अंतरमें, ११ मा जयनामा चक्रवर्त्ति हुआ ॥ इति २१ मा श्री
नमिनाथस्वामी अधिकार संपूर्णम् ॥

॥ अथ २२ मा श्री नेमिनाथस्वामी अधिकारः ।

सोरीपुरनामा नगरमें, हरिवंशी, समुद्रविजयनामें राजा हुवा
तिसके शिवादेवी नामें पट्टराणी । जिसकी कूखमें, अपराजित-
नामें देव लोकसें चवके, मिति कार्त्तिकवदि १२ के दिन, भग-
वान् उत्पन्न भया । तव मातायें गजादि अग्निशिखापर्यंत १४
स्वप्ना प्रगटपणें मुखमें प्रवेशकर्त्ता देखा । पीछे सर्व दिशा सुभि-
क्षसमें, मिति श्रावणसुदि, ५ के दिन, चित्रा नक्षत्रे, जन्मकल्याणक
हुवा (उसीवखत) ५६ दिशा कुमारीयों मिलके सूतिका महो-
च्छव कीया (पीछे) ६४ इंद्र मेरुपर्वतपर भगवानकों लेजायके
जन्ममहोच्छव कीया । तिस पीछे समुद्रविजय राजायें १० दिन
पर्यंत मोटो जन्ममहोच्छव करके सर्व न्याती गोती प्रजागणकों

मनसा भोजन कराके, सर्वके सन्मुख, श्री-अरिष्टनेमि कुमर नाम स्थापन कीया (नाम स्थापनका यह हेतु है कि) भगवान् जब गर्भमें आया, तब मातानें अरिष्ट रत्नमय वडा नेमी (चक्रधारा) आकाशमे उत्पन्न स्वप्नमें देखा। तिस कारणसें अरिष्टनेमि नाम दिया। शंखके लंछनयुक्त, श्यामवर्ण, शरीरका प्रमाण १० धनुष हुवा। ३ ज्ञानसहित, महातेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत विवाहकिये विगर कुमारअवस्थामें रहैं (पीछे) काकेका वेटा श्रीकृष्ण, तथा बलभद्रनें बहुत हठ करके, मनविगर राजीमतीके साथ विवाह ठहराया। जब जान लेके भगवान् सुसराके घरे तोरणकेपास आये। उहां मारणके निमत्त बहुतसे जानवर वाडा पींजरामें भरे हुवे देखे। तब दया करके सर्व जीवों कों बंधमेसे छोडाए। और आप पीछा घिरके दिक्षा लेनेकों तैयार भए, फेर लोकांतिक देवताके वचनसें, मिति श्रावणसुदि ६ के दिन, द्वारका नगरीके बाहिर गिरनारपर्वतपर, छठ तप करके, वेडमवृक्षके नीचे, १००० पुरुषोंके साथ, दीक्षा ग्रहण करी (उसवखत) चोथो मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठको पारणो, वरदिन्नके घरे, परमान्नक्षीरसें हुवो। ५४ दिन छद्मस्थपणें विहार करके, फिर गिरनार पर्वतपर आये वहा अट्ठम तपसहित, आशोजवदि अमावसकेदिन, लोकालोक प्रकाशक केवलज्ञान उत्पन्नभया। उसवखत चतुर्निकाय देवगणका कीया भया समोसरणमें, १२ परिषदाके सन्मुख, भगवान धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी। भगवानके १८ हजार सर्व साधुभये (जिसमे)

वरदत्त प्रमुख १८ गणधर पदधारक हुये । यक्षणी प्रमुख ४० हजार सर्व साध्वी हुई ॥ १५०० वैक्रियलब्धिवंत भये ॥ ८०० वादीविरुदपद धारक भये ॥ १५०० अवधि ज्ञानी भये ॥ १००० मनपर्यव ज्ञानी भये ॥ १५०० केवल ज्ञानी भये ॥ ४०० चवदै पूर्वधारी भये ॥ १ लाख ६४ हजार श्रावक भये ॥ ३ लाख ३६ हजार श्राविका भई (इत्यादिक बहुतसे जीवोंका उद्धार करके अंतसमें गिरनारजी पर्वतपर, ५३६ साधुवोंकेसाथ १ मासका अनशन कीया । पद्मासन मुद्राइं, आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मांकूं खपायके, मिति आपाढ सुदि ८ के दिन १ हजार वर्षको आयुष्यमान पूरण करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्ति भये । शासनदेव गोमेध यक्ष । शासनदेवी अंबिका । राक्षस गण । महिप योनि । कन्या राशि । अंतरमान ८३ हजार ६ से ५० वर्ष, सम्यक्त पायेबाद नवमें भवमें मोक्ष गये ॥ इनोंके वारें, इनोंके चाचेका बेटा, श्रीकृष्ण नवमा वासुदेव, तथा बलभद्र बलदेव भया ॥ और बाईशमा भगवान पीछे, तेवीसमा भगवान पहले इस अंतरमें १२ मा ब्रह्मदत्त नामें चक्रवर्त्ति भया ॥ इति ॥

॥ अथ २३ मा श्री पार्श्वनाथस्वामी अधिकारः ॥

वणारसी नामा नगरीमें, इक्ष्वाकुवंशी, अश्वसेन नामे राजा हुवा । जिसके वामा देवीनामें पट्टराणी, जिसकी कूखमें, प्राणतनामा देवलोकसें चवके, मिति चैत्र वदि ४ के दिन, भगवान् उत्पन्न भये । तब मातायें, गजादि अग्निशिखा पर्यंत, १४ स्वप्न प्रगटपणें मुखमें प्रवेश कर्त्ता देखा । पीछे सर्व दिशा सुभिक्षसमें,

मिति पोष वदि १० के दिन, विशाखा नक्षत्रे जन्म कल्याणक हुवा। उसी वखत ५६ दिशा कुमारीयों मिलके सूतिका महोच्छव कीया। पीछे ६४ इंद्र, मेरु पर्वतपर भगवानकों ले जायके, जन्म महोच्छव कीया। तिस पीछे अश्वसेन राजाये १० दिवसपर्यंत मोटो महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजागणकों, मनसा भोजन करायके सर्वके सन्मुख श्री पार्श्व कुमर नाम स्थापन कीया। नाम स्थापनाका यह हेतु हे, कि भगवान जब गर्भमें आया, तब माताये अंधारी रात्रीकों पासमे सर्प जाता हुवा देखा, इससें माता पितायें विचारा कि ए गर्भका प्रभाव है॥ इस कारणसें पार्श्वनाथ नाम दिया। सर्पका लंछनयुक्त, नीलवर्ण, शरीरका *प्रमाण* ९ *हाथ* हुवा। ३ ज्ञान सहित, महा तेजस्वी, १००८ लक्षणालकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे विवाह कीया। राज्यपद नहिं धारण करके, लोकांतिक देवताके वचनसें, मिति पोष वदि ११ के दिन, वणारसी नगरीमें, छठ तप करके, धातकी वृक्षके नीचे, ३०० पुरुषोंकेसाथ, दीक्षा ग्रहणकरी। उस वखत चोथो मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो। प्रथम छठको पारणो, धन्नाके घरे, परमान्न क्षीरसें हुवो। ८४ दिन छद्मस्थपणें विहार करके फिर वणारसी नगरीमें आये, वहा अट्टम तपमहित, चैत्रवदि ४ के दिन, लोकालोक प्रकाशक केवल ज्ञान केवल दर्शन उत्पन्न भया। उस वखत, चतुर्निकाय देवगणका कीया हुवा, समोसरणमे, १२ परिषदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके चतुर्विध संघकी स्थापना करी। भगवान्के १६ हजार सर्व साधु भये। जिसमें, आर्यदिन्न प्रमुख १० गणधर

पद धारक हुये । पुष्पचूडा प्रमुख ३८ हजार सर्व साध्वी भई ॥ ११०० वैक्रिय लब्धिवंत भये ॥ ६०० वादी विरुद पद धारक भये ॥ १००० अवधि ज्ञानी भये ॥ ७५० मनपर्यव ज्ञानी भये ॥ १००० केवल ज्ञानी भये ॥ ३५० चवदे पूर्वधारी भये ॥ एक लाख ६४ हजार श्रावक भये ॥ ३ लाख ३९ हजार, श्राविका भई ॥ इत्यादिक वहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें समेत शिखरजी पर्वतऊपर, १ मासका अनशन कीया । काउसग्ग मुद्राइं आत्मगुणके ध्यानसें, सर्व कर्मोकों खपायके, मिति श्रावण सुदि ८ के दिन, ३३ साधुवोंकेसाथ, १०० वर्षका आयुष्य मान पूरण करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्त भए ॥ शासनदेव पार्श्व यक्ष, शासन-देवी पद्मावती, राक्षस गण, मृग योनी, तुल राशि, अंतरमान २५० वर्ष, सम्यक्त पायेवाद १० में भवे मोक्ष गया ॥ इति २३ मा श्री पार्श्वनाथ स्वामीका ५५ वोल गर्भित अधिकारः ॥

॥ अथ २४ मा श्री वर्द्धमानस्वामी अधिकारः ॥

ब्राह्मण कुंडग्रामनामा नगरमें, कोडालश गोत्रका धरणहार ऋषभदत्त नामें ब्राह्मण हुवा, जिसके देवानंदानामें भार्या भई, जिसकी कूखमें प्राणतनामा देवलोकसें चवके, मिति आशाढ सुद ६ के दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रकेविषे भगवान् उत्पन्न भया । तब देवानंदा ब्राह्मणीयें चउदै स्वप्ना देखा (पीछे) सौधर्म इंद्र ब्राह्मणोंके कुलमें पूर्वकर्मकेयोग भगवान् कों उत्पन्न हुवा देखके, आश्चर्यभूत संबंध हुवा जानके, अपना आग्याकारी हरणेगमेषी देवताकों भेजा, सो हरणेगमेषी देवता आयके देवमाया करके

देवानदाकी कूखसें भगवान्कों करसंपुटमे ग्रहण करके, क्षत्रियकुंड ग्रामानगरकेविषे, इक्ष्वाकुवंशी, सिद्धार्थनामे राजा, जिसके त्रिशला नामे पट्टराणी, जिसकी कूखमे मिति आशोजवद १३ के दिन अवतारण किया। और त्रिशला माताकी कूखसे पुत्रीको अपहरण करके, देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखमे संक्रामण किया। इसीतरे हरणेगमेषी देवता इंद्रकी आग्या करके अपने स्थानक गया (और) जिसवखत देवतानें देवानंदाकी कूखसे त्रिशला क्षत्रियाणीकी कूखमे संक्रामण किया, तब देवानंदाये तो अपना १४ स्वप्न त्रिशला क्षत्रियाणीकेपास जाता हुवा देखा, और त्रिशला क्षत्रियाणीने प्रगटपणे १४ स्वप्न मुखमे प्रवेश होता देखा। पीछे सर्व दिशा सुभिक्षसमे, मिति चैत्र शुदि १३ के दिन, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रे, जन्म कल्याणक हुवा। उसी वखत, ५६ दिशा कुमारीयों मिलके सूतिकामहोच्छव कीया। पीछे ६४ इंद्र मेरु पर्वतपर भगवानकों ले जायके, जन्म महोच्छव कीया। तिस पीछे सिद्धार्थ राजायें १० दिवसपर्यंत मोटो महोच्छव करके, सर्व न्याती गोती प्रजागणको, मनसा भोजन करायके, सर्वके सन्मुख, श्री वर्द्धमान कुमर नाम स्थापन कीया। नाम थ्यापनका यह हेतु है, कि जब भगवान् गर्भमे आया, तब सिद्धार्थ राजा धनसें राज्यसे परिवारसें बहुत वधता रहा, इससें वर्द्धमान कुमर नामदिया। तथा इंद्रादिक देवतावोंनें मेरु पर्वतपर भगवानका जन्म महोच्छव करनेके समय अनंत बली देखके, महावीर नाम स्थापन किया॥ केशरीसिंह लछन, पीतवर्ण, शरीरका प्रमाण ७ हाथ हुवा तीन

ज्ञान सहित, महा तेजस्वी, १००८ लक्षणालंकृत, भोगावली कर्म निर्जरार्थे, विवाह कीया । राज्यपद धारण न किया । अवसर आये, लोकांतिक देवताके वचनसें, मिति मिगशर वदि १० के दिन, क्षत्रीकुंड नामा नगरमें, छठ तप करके, साल वृक्षके नीचे, एकाकीपणें दीक्षा ग्रहण करी, उस वखत चोथो मनपर्यव ज्ञान उत्पन्न भयो । प्रथम छठको पारणो, वहुल ब्राह्मणके घरे, परमान्न क्षीरसें हुवो । १२ वर्ष छद्मस्थपणें विहार करके, ऋजुवालका नदीपर आये, वहां छठ तप सहित, वैशाख सुदि १० के दिन, लोकालोक प्रकाशक, केवल ज्ञान उत्पन्न भया । उस वखत चतुर्निकाय देवगणका कीया भया समोसरणमें, देशना दीया ११ के दिन पावापूरिवाहिर १२ परिषदाके सन्मुख, भगवान् धर्मोपदेश देके, चतुर्विध संघकी स्थापना करी । भगवान्के सर्व साधु १४ हजार भये । जिसमें इंद्रभूति प्रमुख ११ गणधर पद धारक भये ॥ चंदनवाला प्रमुख ३६००० सर्व साध्वी भई ॥ ७०० वैक्रिय लब्धिवंत भये ॥ ४०० वादी विरुद धारक भये ॥ १३०० अवधि ज्ञानी भये ॥ ५०० मनपर्यव ज्ञानी भये ॥ ७०० केवल ज्ञानी भये ॥ ३०० चवदे पूर्वधारी भये ॥ १ लाख ५९ हजार श्रावक भये ॥ ३ लाख १८००० श्राविका भई ॥ इत्यादिक वहुतसे जीवोंका उद्धार करके, अंतसमें पावापुरी नगरीमें, छठ तपका अनशन कीया ॥ पद्मासन मुद्राइं, आत्मगुणकेध्यानसें, सर्व कर्मोंको खपायके, मिति कार्त्तिकवदि अमावशके दिन, एकाकी,

७२ वर्षका आयुष्यमान पूरण करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्त भये शासनदेव ब्रह्मशांति यक्ष। शासनदेवी सिद्धायिका। मानव गण। महिषयोनि। कन्या राशि। सम्यक्त पायेबाद २७ मे भव मोक्ष गये श्री महावीरस्वामी मोक्ष गये पीछे, तीन वर्ष, साढी आठ महिना गए, चौथा आरा उतरा और पाचमा आरा सरू हुवा ॥

इति २४ श्री वर्द्धमान स्वामीका ५५ बोल गर्भित अधिकारः इसी तरे चोवीश भगवान्का नाम दष्टांत कहा॥ अब २४ भगवान्के, १२ चक्रवर्त्ति, ९ वासुदेव, ९ बलदेव, ९ प्रति वासुदेवादि बडे २ उत्तम पुरुष मोक्षगामी राजादिक भए, जिन सर्वका नाम मात्र दष्टांत इहां लिखतां हुं ॥

अथ १२ चक्रवर्त्ति अधिकारः ॥

॥ पहला श्री भरत चक्रवर्त्तिः ॥

विनीता नगरीमे प्रथम भगवान् श्री ऋषभदेव नामें राजा हुवा जिनोंके सुमंगला नामें राणी, जिसका पुत्र भरत नामें पहला चक्रवर्त्ति हुवा इनके ६४ हजार स्त्रीयों हुई, जिनमें मुख्य स्त्रीरत्न सुभद्रा नामें भई। जब चक्रादिक १४ रत्न उत्पन्न हुवा, तब इस भरत क्षेत्रके छ खंड मे राज्य किया। जिनमें आरीसा भवनमें, शुद्ध भावनासें केवलज्ञान पायके चारित्र ग्रहण करके. ८४ पूर्व लाख वर्षको आयुष्य पूरण करके मोक्षकों प्राप्त हुवा॥ १ ॥ इति ॥

॥ दूसरा सगर चक्रवर्त्तिः ॥

अयोध्या नगरीमें, सुमित्र नामें राजा हुवा, जिसके जसवती नामें पट्टराणी, जिनके पुत्र सगर नामें दूसरा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके भद्रा नामें स्त्रीरत्न भई। जब चक्ररत्नादिक, १४ रत्न उत्पन्न हुए, तब भरत क्षेत्रके ६ खंडकों साधके राज्य किया। अंतमें चारित्र ग्रहण करके ७२ पूर्व लाख वरषको आयुष्य पूरण करके, सिद्धि स्थानकों प्राप्त हुवा ॥

तीसरा मघवा नामें चक्रवर्त्तिः ॥

सावत्थी नगरीमें, समुद्रविजय नामें राजा, जिसके सुभद्रवती नामें पट्टराणी हुई, जिनके पुत्र मघवानामें तीसरा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके सुभद्रानामें स्त्रीरत्न हुई। अंतमें शुभभावसें चारित्र लेके सर्व पांच लाख वरषको आयुष्य पूरण करके देवलोककों प्राप्त हुवा ॥ इति ॥ ३ ॥

॥ चोथा सनत्कुमारनामें चक्रवर्त्तिः ॥

हथनापुरनामा नगरमें, अश्वसेननामें राजा, जिसके सहदेवीनामें पट्टराणी, जिनकेपुत्र सनत्कुमार नामें चोथा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके जया नामें स्त्रीरत्न भई। ६ खंडका राज्य किया, अंतमें शुभभावसें चारित्र ग्रहण करके, तीन लाख वरषका आयुष्य पूर्ण करके देवलोककों प्राप्त हुवा ॥ इति ॥

॥ अथ पांचमा, श्री शांतिनाथ चक्रवर्त्तिः ॥

हथनापुरनामा नगरमें, विश्वसेननामें राजा, जिसके अचिरानामें

पट्टराणी, जिनकेपुत्र शोलमा भगवान्, पांचमां चक्रवर्त्ति श्री शातिनाथ स्वामी हुवा, इनके विजयानामे स्त्रीरत्न भई, छ खंडका राज्य किया, अवसर आये चारित्र लेके केवल ग्यानपायके सर्व एक लाख वरपको आयुष्य पूरण करके सिद्धिस्थानकों प्राप्त हुवा ॥ इति ॥ ५ ॥

॥ ६ ठा, श्री कुंथुनाथचक्रवर्त्तिः ॥

हथनापुरनामा नगरमे, सूरनामें राजा, जिसके श्रीनामें पट्टराणी जिनके पुत्र १७ मा भगवान्, छठा चक्रवर्त्ति श्री कुंथनाथस्वामी हुवा। इनके कन्हसीरीनामें स्त्रीरत्न हुई, छ खंडका राज्य किया। अवसर आवे चारित्र लेके केवल ग्यान पायके, ८५ हजार वरपका आयुष्य पूरन करके मोक्षकों प्राप्त हुवा ॥ इति ॥ ६ ॥

॥ ७ मा श्री अरनाथनामें चक्रवर्त्तिः ॥

हथनापुरनामा नगरमे, सुदर्शननामे राजा, जिसके देवीनामे पट्टराणी, जिनकेपुत्र १८ मा भगवान्, ७ मा चक्रवर्त्ति श्री अरनाथस्वामी हुवा। इनके पद्मश्रीनामे स्त्रीरत्न हुई। ६ खंडमे राज्य किया, अंतमे चारित्र लेके केवल ग्यान पायके ६० हजार वरपका आयुष्य पूरण करके मोक्षकों प्राप्त हुवा ॥ इति ॥ ७ ॥

॥ ८ मा सुभूमनामे चक्रवर्त्तिः ॥

हथनापुरनामा नगरमे, कीर्त्तिवीर्यनामे राजा जिसके तारानामे पट्टराणी, जिनके पुत्र सुभूमनामें आठमा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके सुश्रीनामे स्त्रीरत्न हुई। छ खंडका राज्य किया। अंतमे ३०

हजार वरषका आयुष्य पूरण करके सातमी नरक पृथ्वीमें उत्पन्न हुवा ॥ इति ॥ ८ ॥

॥ ९ मा पद्मनामें चक्रवर्त्तिः ॥

वणारसी नामें नगरीमें, पद्मोत्तर नामा राजा, जिसके ज्वाला नामें पट्टराणी, जिसके पुत्र महापद्म नामें नवमा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके वसुंधरा नामें स्त्रीरत्न भई। अंतमें १९ हजार वरषको आयुष्य पूरण करके मोक्षकों प्राप्त हुवा ॥ इति ॥ ९ ॥

॥ १० मा हरिषेण नामें चक्रवर्त्तिः ॥

कंपिलपुर नामा नगरमें, हरि नामें राजा, जिसके मेरा नामें पट्टराणी, जिनके पुत्र हरिषेण नामें दशमा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके देवी नामें स्त्रीरत्न भई। अंतमें दश हजार वरषको आयुष्य पूरण करके सिद्धि स्थानकों प्राप्त हुवा ॥ इति ॥ १० ॥

११ मा, जय नामें चक्रवर्त्तिः ॥

राजगृही नामें नगरीमें, विजय नामें राजा, जिसके विप्रा नामें पट्टराणी, जिसके पुत्र जय नामें इग्यारमा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके वलच्छीनामें स्त्रीरत्न भई। अंतमें तीन हजार वरषको आयुष्य पूरण करके सिद्धि स्थानकों प्राप्त हुवा ॥ इति ॥ ११ ॥

१२ मा ब्रह्मदत्त नामें चक्रवर्त्तिः ॥

कंपिलपुर नामा नगरमें, ब्रह्म नामें राजा, जिसके चूलणी नामें पट्टराणी, जिसके पुत्र ब्रह्मदत्त नामें बारमा चक्रवर्त्ति हुवा। इनके कुरमती नामें स्त्रीरत्न भई। अंतमें ७ से वरषको आयुष्य

पूरण करके सातमी नरक पृथ्वीमें नारकी पणें उत्पन्न हुवा ॥ इति ॥ १२ ॥

॥ १२ चक्रवर्त्ति समानशुद्धी अधिकारः ॥

ये १२ चक्रवर्त्ति काश्यपगोत्रमें हुये, इन सर्वका कंचनसमान शरीरकावर्ण हुवा। इस भरतक्षेत्रका ६ खंडमें राज्य किया। नवनिधान १४ रत्न, १६ हजार यक्ष, ३२ हजार मुगट बद्धराजा, ६४ हजार अंतेउरी, एकेक राणीसाथे दोदो वरागना होय, तत्र एक लाख ५२ हजार वरागना, ८४ लाख हाथी, ८४ लाख घोडा, ८४ लाख रथ, ९६ कोटि प्यादा। ३२ हजार नाटक, ३२ हजार बडादेश, ३२ हजार वेलाउल। १४ हजार जलपंथ। २१ हजार सन्निवेम। १६ हजार राजधानी ५६ अतरद्वीप। ९९ हजार द्रोणमुख। ९६ कोटि ग्राम। ४९ हजार उद्यान। १८ हजार श्रेणि प्रश्रेणी। ८० हजार पडित। ७ कोडि कौटविक। १६ हजार आगर। ३२ कोडि कुल। १४ हजार महामंत्रवी, १४ हजार बुद्धिनिधान। १६ हजार म्लेच्छराज्य। २४ हजार कर्पट। २४ हजार सवाधन। १६ हजार रत्नाकर। २४ हजार खेडा सुन्य। १६ हजार द्वीप। ४८ हजार पाटण। ५० कोडि दीवटिया। ८४ लाख महानिसाण। १० कोडि धजापताका। ३६ कोडि जगमर्दक। ३६ कोडि आभरण धारक। ३६ कोडि सूपकार। तीन लाख भोजन थानक। एक कोडि गोकुल। तीन कोटि हल। ३६० सुधार। ९९ कोडि माटंविक ९९ कोडि दासीदास। ९९ लाख अगरक्षक। ९९ कोडि भोई। ९९ कोडि

कावडिया । ९९ कोडि मल्लरिया । ९९ कोडि अङ्गायत । ९९ कोडि पटतारक । ९९ कोडि मीठाबोला, १ कोडि ८० हजार रासभ । १२ कोडि सुखासण । ६० कोडि तंबोली, ५० कोडि पखालिया ॥ इत्यादि अनेक प्रकारकी शुद्धी सर्व चक्रवर्तिके समान होती है ॥ इति ॥

अथ नववासुदेव, बलदेवका दृष्टांत लि० ॥

॥ १ तृपृष्ट वासुदेवः १ अचल बलदेवः ॥

११ मा भगवान् श्री श्रेयांसनाथ स्वामीके वारे, शोभनपुरनामा नगरमें, प्रजापतिनामें राजा हुवा, जिसके मृगावतीनामें पट्टराणी, जिसकी कूखसें सातमादेवलोकसें आयके, ७ स्वप्नासूचित तृपृष्टनामें पुत्र हुवा ॥ और दूसरी भद्रानामें राणी, जिसकी कूखसें ४ स्वप्ना सूचित अचलनामें पुत्र हुवा । ये क्रमसें वधता थका अपना वैरी अश्वग्रीव प्रतिवासुदेवकों युद्धसें मारके, पहला वासुदेव हुवा । चक्रवर्तिसें आधा अर्थात् इस भरतक्षेत्रका तीन खंडमें राज्य किया । नीलेवर्ण, देहमान ८० धनुषका हुवा, अंतमें ८४ लाख वरषका आयुष्य पूरण करके तृपृष्ट वासुदेव सातमी नरक पृथ्वीमें गया । और बलदेवका उज्वलवर्ण, शरीर प्रमाण ८० धनुष हुवा, अंतमें भाईका मरण देख वैराग्यसें चारित्र ग्रहण किया, क्रमसें केवलज्ञान पायके ८५ लाख वरषका आयुष्य पूरण करके मोक्ष गया ॥ इति ॥ १ ॥

॥ द्विपृष्ट वासुदेवः, २ विजय वलदेवः ॥

१२ मा तीर्थकरके वारे, द्वारामतीनामा नगरमें, वंभनामें राजा, जिसके ऊमानामे पट्टराणी, जिसकी कूखमें १० मा देवलोकसें आयके, ७ स्वप्ना सूचित, द्विपृष्टनामें पुत्र हुवा ॥ और दूसरी सुभद्रानामे राणी, जिसकी कूखसें ४ स्वप्ना सूचित विजय नामें पुत्र हुवा । ये क्रमसें युवान अवस्थाकों प्राप्त हुवा, तव अपना वैरी तारकनामें प्रतिवासुदेवकों मारके, दूसरा वासुदेव, वलदेव हुवा । तीन खंडमें राज्य किया, वासुदेवका नीला वर्ण, देहमान ७० धनुष हुवा । अतमे ७२ लाख वरपका आयुष्य पूरण करके, छठी नरक पृथ्वीमें गया । और विजयवलदेवका उज्वलवर्ण, शरीरप्रमाण ७० धनुप हुवा, अतमे शुद्धभावसें चारित्र लेके केवलज्ञान पायके ७२ लाख वरपको आयुष्य पूरण करके मोक्षमें गया ॥ इति ॥

॥ ३ स्वयंभुः वासुदेवः ३ भद्र वलदेवः ॥

१३ मा तीर्थकरके वारे, द्वारका नामा नगरीके विषे, रुद्र नामे राजा हुवा । जिसके पुहवी नामे पट्टराणी, जिसकी कूखमें, ६ ठा देवलोकसे आयके, ७ स्वप्ना सूचित स्वयंभू नामे पुत्र हुवा । और सुप्रभा राणीके ४ स्वप्ना सूचित भद्र नामका पुत्र भया । ये क्रमसें युवान अवस्थाकों प्राप्त भया, तव अपना वैरी मेरुक नामें प्रति वासुदेवकों मारके, तीसरा वासुदेव वलदेव हुआ । इस भरत क्षेत्रके तीन खडमें राज्य किया । वासुदेवका नीलावर्ण, देहमान ६० धनुप हुआ । अतमे ६० लाख वरपका आयुष्य

पूरण करके, छठी नरक पृथ्वीमें गया। और भद्र बलदेवका उझल वर्ण, शरीरप्रमाण ६० धनुषभया, अंतमें चारित्र अंगीकार करके, केवल ग्यान पायके, सर्व ६५ लाख वरपको आयुष्य पूरण करके मोक्ष गया ॥ इति तीसरा वासुदेव, बलदेव दृष्टांतम् ॥

॥ अथ ४ मा पुरषोत्तम वासुदेवः, सुप्रभु बलदेवः ॥

१४ मा तीर्थंकरके वारे, बारवई नामा नगरीमें, एक सोम नामें राजा हुआ। जिसके सीता नामें पट्टराणी, उसकी कूखसें ८ मा देव लोकसें आया हुवा, ७ स्वप्न सूचित, पुरषोत्तम नामें पुत्र हुआ। और दुसरी सुदर्शना नामें राणी, जिसकी कूखसें ४ स्वप्न सूचित सुप्रभु नामें पुत्र हुआ। ये जब युवान अवस्थाकों प्राप्त भया, तब अपना वैरी, मधु नामें प्रति वासुदेवकों मारके, चोथा वासुदेव, बलदेव, इस भरत क्षेत्रमें हुआ। तीन खंडमें अखंड राज्य किया। वासुदेवका नीलावर्ण, और शरीर प्रमाण ५० धनुषका हुवा। और अंतमें ३० लाख वरषको आयुष्य पूरण करके छठी पृथ्वीमें गया ॥ और बलदेवका उझलवर्ण शरीर प्रमाण ५० धनुष हुवा। अंतमें ५५ लाख वरषको आयुष्य पूरण करके मोक्ष गया ॥ इति चोथा वासुदेव, बलदेव, प्रति वासुदेव, दृष्टांतम् ॥

॥ अथ ५ मा पुरषसिंह वासुदेवः, सुदर्शन बलदेवः ॥

१५ मा तीर्थंकरके वारे, अश्वपुरी नामा नगरीमें, शिव नामें राजा हुवा। जिसके अम्मा नामें पट्टराणी, उसकी कूखसें, चोथा देवलोकसें आया हुवा, ७ स्वप्न सूचित, पुरषसिंह

नामें पुत्र हुवा । और दूसरी विजया नामें राणी, जिसकी कूखसें ४ स्वप्न सूचित, सुदर्शन नामें पुत्र हुवा । ये जब युवान अवस्थाकों प्राप्त हुवा । तब अपना वैरी निसुंभ नामा प्रतिवासुदेवकों मारके पांचमा वासुदेव, बलदेव इस भरत क्षेत्रमें भया । तीनखंडमे राज्यकिया इसमें वासुदेवका नीला वर्ण, शरीरप्रमाण ४५ धनुष हुवा, अंतमें १ लाख वरपका आयुष्य पूरण करके, छठी नरक पृथ्वीमे गया ॥ और बलदेवका उज्वलवर्ण, शरीर प्रमाण ४५ धनुप हुवा । अंतमें एक लाख ७० हजार वर्षको आयुष्य पूरण करके मोक्ष गया ॥ इति पाचमा वासुदेव, बलदेव, प्रति वासुदेव दृष्टांतम् ॥

अथ ६ पुरुषपुंडरीक वासु० आनंदबलदेवः ॥

अठारमा उगणीसमा तीर्थंकरके अंतरमें, चक्रपुरीनामा नगरीमें महाशिवनामे राजा, जिसके लक्ष्मीनामे पट्टराणी, उसकी कूखसें पांचमा देवलोकमें आया हुवा, सात स्वप्न सूचित, पुरुष पुंडरीकनामे पुत्रहुवा । और दूसरी वैजयतीनामें राणी, उसकी कूखमें, चार स्वप्न सूचित आनद नामे पुत्र हुवा । ये दोनुं जब युवान अवस्थाकों प्राप्त भये । तब अपना वैरी, बलीनामा छठा प्रतिवासुदेवकों मारके छठा वासुदेव बलदेव हुये । तीन खंडमें राज्य किया । इसमें वासुदेवका नीलावर्ण, शरीरप्रमाण २९ धनुप हुवा । अंतमें ६५ हजार वरपका आयुष्य पूरण करके, छठी नरक पृथ्वीमें गया और बलदेवका उज्वलवर्ण, शरीरप्रमाण २९ धनुप हुवा । अतमें शुभभावसें चारित्र लेके, केवलग्यान

पायके, सर्व ८५ हजार वरषका आयुष्य पूरण करके सिद्धिगतिमें गया ॥ इति छठा वासुदेव वलदेव दृष्टांतम् ॥

अथ ७ मा दत्त वासुदेवः नंदन वलदेवः ॥

१८ मा तीर्थंकरके वारे, वणारसीनामा नगरीमें, अग्निसिंहनामें राजा हुवा । जिसके सेसवतीनामें पट्टराणी, उसकी कूखसें, पहला देवलोकसें आया हुवा, सात स्वप्न सूचित दत्तनामें पुत्र हुवा । और दूसरी जयंती नामें राणी जिसकी कूखसें चार स्वप्न सूचित नंदननामें पुत्र हुआ, ये दोनुं जब युवान अवस्थाकों प्राप्त भये, तब अपना वैरी प्रह्लादनामा प्रतिवासुदेवकों चक्ररत्नसें मारके, सातमा वासुदेव वलदेव, हुये । तीन खंडमें राज्य किया ॥ इसमें वासुदेवका नीलावर्ण, सरीर २६ धनुष हुआ । अंतमें ५६ हजार वरषका आयुष्य पूरण करके, पांचमी नरकपृथ्वीमें गया ॥ और- नंदन वलदेव, अपना भाईका मरण देखके, वैराग्यसें चारित्र ग्रहण किया । क्रमसें केवल ग्यान पायके सर्व ६५ हजार वरषका आयुष्य पूरण करके मोक्ष गया इति सातमा वासुदेव वलदेव दृष्टांतम् ॥

॥ ८ मा लक्ष्मणवासुदेवः, रामचंद्र वलदेवः ॥

२० मा तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत स्वामीकेवारे, अयोध्यानामा नगरीमें, दशरथनामें राजा हुवा, जिसके सुमित्रानामें पट्टराणी, उसकी कूखसें तीसरा देवलोकसें आया हुवा, सात स्वप्न सूचित लक्ष्मणनामें पुत्र हुवा । और दूसरी अपराजिता नामें राणी जिसकी कूखसें चार स्वप्न सूचित रामचंद्र नामें पुत्र हुवा । ये दोनुं जब

युवान अवस्थाकों प्राप्त भये । तव शीताकों अपहरण करनेवाला, अपना वैरी, लंकाका राजा, रावण प्रतिवासुदेवको मारके, आठमा वासुदेव वलदेव हुये । इस भरतक्षेत्रके ३ खंडमें राज्य किया, इसमे लक्ष्मण वासुदेवका नीलावर्ण, सरीर प्रमाण १६ धनुपका हुवा । अतमे १२ हजार वरपका आयुष्य पूरण करके चोथी नरक पृथ्वीमें उत्पन्न भया । और रामचंद्र वलदेव, अपना भाईका मरण देखके, वैराग्यसें चारित्र ग्रहण किया । क्रमसें केवल ज्ञान पायकें, सर्व १५ हजार वरपका आयुष्य पूरण करके, सिद्धगिरी पर्वत ऊपर मोक्ष गया ॥ इसी रामचद्रजीकों वहुतसे हिंदू लोक, अपना ईश्वरावतार मानते हैं ॥ और रावणकों दशमुखवाला राक्षस कहते हे, तथा लोकीक रामायणमेभी रावणके १० मुख लिखे हे, सो ठीक नहीं हैं, क्योंकि मनुष्यके स्वाभाविकही दशमुख कदापि नहीं होसक्ते हें, पद्मचरित्रादिकमे लिखा हे, कि रावणके वडे वडेरोंकी परंपरासें, एक वडा नवमाणिकरत्नका हार चला आताथा, सो रावणनें वालावस्थासें अपने गलेमे पहनलिया था । और वे नौंही माणक वहुत वडे थे। चार चार माणक दोनु स्कंध तरफ जडे हुये थे । एक वीचमेथा, ऐसें नवमुख माणकमें नया दीखता था, और एक रावणका असली मुख था इसवास्ते दशमुखवाला रावण कहा जाता हे। और रावणके समयसेंही हिमालयके पहाडमें वद्री नाथका तीर्थ उत्पन्न हुआ हे । तिसकी उत्पत्ति जैन धर्मके शास्त्रोंसें ऐसे जानी जाती हे, कि यह असली पार्श्वनाथकी मूर्त्ति थी, तिसकाही नाम वद्रीनाथ रक्खागया है। इसका विशेष

अधिकार देखना होय तो पद्मचरित्र ओर पार्श्वनाथचरित्रसें जाण लैना ॥ इति आठमा वासुदेव, वलदेव दृष्टांतम् ॥

॥ अथ ९ मा कृष्ण वासुदेवः, वलभद्र, वलदेवः,

२२ मा श्री नेमिनाथ भगवान्के वारे, शोरीपुर नामा नगरमें, समुद्रविजयजी नामें राजा, जिसका छोटा भाई वसुदेवजी हुवा, जिसके पूर्व नियाणेंके योगसें ७२ हजार स्त्रीयों हुई, जिसमें मुख्य देवकी नामें राणी, जिसकी कूखसें सातमा देवलोकसें आया हुवा सात स्वप्न सूचित कृष्ण नामें पुत्र हुवा। और दूसरी रोहणी नामें राणी। जिसकी कूखसें चार स्वप्न सूचित वलभद्र नामें पुत्र हुवा, इन दोनुंकों कंसके भयसें वसुदेवजीने अपना गोकुलमें, नंद गोवालियेके घरे, कितनेक वरष छिपे हुवे रक्खे। जव ये दोनुं युवानावस्थाकों प्राप्त भये। तव प्रथम तो अपना भाइयोंको मारनेंवाला, कंसकों वैरी जानके मल्ल अखाडेमें आयके, कंसकों मारा, जव यादव लोक वहुतसे भयकों प्राप्त हुवे, कि कंसका सुसरा जरासिंध प्रति वासुदेव अभी सर्वमें मोटा राजा है, इससें कदाच यादवोंको क्षय नहिं कर देवै, इस भयसें शोरीपुर, तथा मथुरा नगरीसें, यादव सर्व निकल के पश्चिम समुद्रके किनारै जायके, उहां द्वारिका नगरी वसायके कितनेक वरष सुखसें रहा। पीछे जव जरासिंध अपनी सेना लेके युद्ध करनेंकों आया। तव कृष्ण वलभद्र युद्धमें जरासिंधप्रतिवासुदेवकों मारके, नवमा वासुदेव, वलदेव हुवा। इसमें वासुदेवका श्यामवर्ण, सरीरप्रमाण १० धनुष हुवा। ये, श्रीनेमिनाथस्वामीका

बडा भक्त अविरति सम्यग् दृष्टि श्रावक हुवा। अंतमें सर्व एक हजार वरषका आयुष्य पूरण करके तीसरी नरक पृथ्वीमे उत्पन्न भया। और बलदेवका उज्जल वर्ण, सरीरप्रमाण १० धनुष हुवा। जब द्वारकानगरी, यादवोंका क्षय हुवा, और अपना भाई श्रीकृष्णका कौसंबवनमें जराकुमरके हाथसें मरण हुवा देखके, वैराग्यसें संसारको असार जाणके, शुद्धभावसें चारित्र ग्रहण किया। क्रमसें सोवर्ष चारित्र पालके, सर्व १२०० वरषको आयुष्य पूरण करके, पाचमा ब्रह्मदेवलोकमे देवतापणें उत्पन्न भया। आवती चौवीसीमे बारमा, चौदमा तीर्थंकरहोके दोनुं मोक्ष जावेंगे॥ ये कृष्ण, बलभद्र, जगतमे बहुत प्रसिद्ध है। क्योंकि बहुतसे लोक श्रीकृष्ण वासुदेवकों साक्षात् ईश्वर तथा ईश्वरका अवतार, जगत्का कर्त्ता मानते है। सो यह बात श्रीकृष्ण वासुदेवके जीते हुये न हुई, किंतु उनके मरे पीछे लोक कृष्ण वासुदेवकों ईश्वरावतार मानने लगे है॥ तिसका हेतु श्री त्रेसठसलाका पुरुष चरित्रमे ऐसें लिखा है। कि जब कृष्ण वासुदेवनें कौसबवनमे शरीरछोडा, तब कालकरके तीसरी वालुकाप्रभा पृथ्वी (पातालमे) गये, और बलभद्रजी एकसौ वर्ष जैन दिक्षा पालके पाचमा ब्रह्मदेवलोकमे देव हुये, उहा अवधि ज्ञानसे अपना भाई श्रीकृष्णको पातालमे तीसरी पृथ्वीमे देखा। तब भाईके स्नेहसे वैक्रिय शरीर बनाकर श्रीकृष्णकेपास पोंहचा और श्रीकृष्णसें आलिंगन करके कहा। कि मे बलभद्र नामा तेरे पिछले जन्मका भाई हुं, मे काल करके पांचमा

देवलोकमें देवता हुआ हुं, और तेरे स्नेहसें इहां तेरेपास मिलनेंकों आया हुं, सोमें तेरे सुखवास्ते क्या काम करूं ॥ इतना कहकर जब बलभद्रजीनें आपनें हाथों ऊपर कृष्णजीकों लिया, तब कृष्णका शरीर पारेकी तरे हाथसें क्षरके भूमि ऊपर गिर पडा, फेर मिलकर संपूर्ण शरीर पूर्ववत् हो गया ॥ इसीतरे प्रथम आलिंगन करनेंसें, फेर विरतांत कहनेंसें, और हाथोंपर उठानेंसें जान लिया । कि यह मेरे पूर्व भवका अति वल्लभ बलभद्र भाई है तब श्रीकृष्णजीनें संभ्रमसें उठके नमस्कार करा । बलभद्रजीनें कहा, हे भाई, जो श्रीनेमिनाथ स्वामीनें कहा था । यह विषय सुख महा दुःखदाई है सो प्रत्यक्ष तुमकों प्राप्त हुआ । तुज कर्म नियंत्रितकों में स्वर्गमेंभी नहिं लेजा सक्ता हुं । परंतु तेरे स्नेहसें तेरेपास में रहा चाहता हुं तब कृष्णजीनें कहा, हे भ्राता तेरे रहनेंसेंभी मैनें करे हुये कर्मका फल तो मुझकों अवश्य भोगवनाही है । परंतु मुझकों इस दुःखसें वो दुःख बहुत अधिक है । जोमें द्वारिका, और सकल परिवारके दग्ध हो जानेसें, एकला कौशंबवनमें जरा कुमरके तीरसें मरा । और मेरे शत्रुवोकों सुख, तथा मेरे मित्रोंकों दुःख हुआ, जगत्में सर्व यदुवंशी बदनाम हुये, इसवास्ते हे भ्राता, तूं भरतखंडमें जाकर, चक्र, शारंग, शंख, गदाका धरनेंवाला, और पीला वस्त्र; तथा गरुड ध्वजाका धरनेवाला, ऐसा मेरा रूप बनाकर विमानमें बैठाकर लोकोंकों दिखलाव । तथा नीला वस्त्र हल मूशल शस्त्रका धरनेंवाला ऐसा रूपसें तूं विमानमें बैठके अपना

सागीरूप सर्व जगे दिखलाकर लोकोंको कहो, कि रामकृष्ण दोनुं हम अविनाशी पुरुष हैं। और स्वेच्छा विहारी हैं। जब लोकोंको यह सत्य प्रतीत हो जावेगा तब अपना सर्व अपयश दूर हो जावेगा। यह श्रीकृष्णजीका कहना सर्व श्री बलभद्रजीने अंगीकार किया। और भरतखंडमें आकर कृष्ण, बलभद्र, दोनुंका रूप करके सर्व जगे विमानारूढ दिखलाया, और ऐसे कहने लगा, कि अहोलोको तुम कृष्ण, बलभद्र, अर्थात् हमारे दोनोकी सुंदर प्रतिमा बनाकर, ईश्वरकी बुद्धीसें बडे आदरसे पूजो, क्यों कि हमही जगत्के रचनेंवाले, और स्थिति संहारके कर्त्ता हे, और हम अपनी इच्छासें स्वर्ग (वैकुंठसें) चले आते हैं। और द्वारिका हमनेही रचीथी, तथा हमनेंही उसका संहार करा है, क्यों कि जब हम, वैकुंठमे जानेकी इच्छा करते हैं, तब अपना सर्व वंश द्वारिका सहित दग्ध करके चले जाते हैं। हमारे उपरांत और कोई अन्य कर्त्ता, हर्त्ता, नहीं है। ऐसा बलभद्रजीका कहना सुनके प्रायें केट-ग्राम, नगरके लोक कृष्ण बलभद्रजीकीप्रतिमा सर्व जगे बनाकर पूजने लगे, तब अपनी प्रतिमाकी भक्ति करनेंवालोकों बलभद्रजीनें बहुत धनादिक सुख देके आनंदित किए। इसवास्ते बहुतसे लोक हरिभक्त हो गए। जबसें भक्त हुये तबसें पुस्तकोंमें श्रीकृष्णजीको पूर्णब्रह्म परमात्मा ईश्वरादि नामोसे लिखाहे लोकिकमें श्रीकृष्ण होयेकों पाच हजार बरप कहते हैं, इससें क्या जाने जबसें बलभद्रजीनें कृष्णजीकी पूजा करवाई, तबसेंही लोकोंनें

कृष्णकों ईश्वरावतार माना होय, और उस समयकों पांच हजार वरप हुआ होय, तो इस वातकों पांच हजार वरप हुआ होगा ॥

इसी तरे ६२ तेसठ शिलाका पुरुपोंका दृष्टांत इहां नाममात्र लिखा है । इन सर्वका विस्तारसें संवंध देखना होय, तो श्री हेमाचार्यजी महाराजकृत तेसठ शलाका पुरपोंका चरित्रादिकसें देख लेना ॥

और जितनें कालमें २४ भगवान हुए हें, उतनें कालमें इग्यारे रुद्र हुए हें, जिनका किंचित संवंध लिखता हुं ॥

॥ अथ ११ रुद्र नाम, गति विचार लि० ॥

१ श्री ऋपभदेव स्वामीके वारे, महारुद्रपरणामका धरनेंवाला भीमवल नामें पहला रुद्र हुआ, अंतमें मरके सातमी नरक पृथ्वीमें गया ॥ इति ॥ २ श्री अजितनाथ स्वामीके वारे जितशत्रु नामें दूसरा रुद्र हुवा, सो अंतमें मरके सातमी नरक पृथ्वीमें गया ॥ इति २ ॥ ९ श्री सुविधिनाथ स्वामीके वारे, रुद्रवल नामें तीसरा रुद्र हुआ । अंतमें मरके छठी नरक पृथ्वीमें गया ॥ इति ॥ १० मा श्रीशीतलनाथ स्वामीके वारे, विश्वानर नामें चोथा रुद्र हुआ । अंतमें छठी नरक पृथ्वीमें गया ॥ इति ॥ ११ मा श्री श्रेयांशनाथ स्वामीके वारे, सुप्रतिष्ठनामें पांचमा रुद्र हुआ । अंतमें मरके छठी नरक पृथ्वीमें गया ॥ इति ॥ १२ मा श्री वासुपुज्य स्वामीके वारे, अचल नामें छठा रुद्र हुआ । अंतमें मरके छठी पृथ्वीमें गया ॥ इति ॥ १३ मा श्री विमलनाथ स्वामीके वारे, पुंडरीक नामें सातमा रुद्र हुआ । अंतमें मरके छठी नरक पृथ्वीमें

गया ॥ इति ॥ ७ ॥ १४ श्री अनंतनाथ स्वामीके वारे, अजितधर नामें आठमा रुद्र हुआ । अंतमें मरके पांचमी नरक पृथ्वीमे गया ॥ इति ॥ ८ ॥ १५ मा श्री धर्मनाथ स्वामीके वारे, अजितबल नामे नवमा रुद्र हुआ । अंतमें मरके चोथी नरक पृथ्वीमें गया ॥ इति ॥ १६ मा श्रीशांतिनाथ स्वामीके वारे, पेढाल नामें दशमा रुद्र हुआ । अंतमें मरके चोथी नरक पृथ्वीमे गया ॥ इति १० ॥ २४ मा भगवान् श्री महावीरस्वामीके वारे, सत्यकी नामें इग्यारमा रुद्र हुआ । अंतमें मरके तीसरी पृथ्वीमे गया ॥ ये इग्यारमा रुद्र लोकीकमें बहुत मान्यताको प्राप्त हुआ थका है, इससें इनका इहां किंचित विस्तारसें दृष्टांत लिखते हैं ॥

॥ अथ ११ मा रुद्र सत्यकी दृष्टांत लि० ॥

विशाला नगरीके, चेटक राजाकी छठी पुत्री सुज्येष्टा नामा कुमारी कन्यानें दिक्षा लीनीथी, अर्थात् जैन मतकी साध्वी हो गई थी, वो किसी अवसरमे उपाश्रयके अंदर सूर्यके सन्मुख आतापना लेती थी, इस अवसरमे पेढाल नामा परिव्राजक अर्थात् संन्यासी विद्यासिद्ध था, सो अपनी विद्या देनेकेवास्ते पात्रपुरुषको देखता था । और उसका विचार ऐसा था, कि यदि ब्रह्मचारणीका पुत्र होवे तो सुनाथ होवेगा । तब तिस सन्यासीने, रात्रीमे सुज्येष्टाको, नग्नपणे शीतकी आतापना लेतीको देखा, तब धुंध विद्यासें अंधकारमे अचेत करके उसकी योनीमें अपनें वीर्यका संचार करा, तिस अवसरमें सुज्येष्टाको ऋतु धर्म आगयाथा इसवास्ते गर्भ रह गया, तब साथकी साध्वीयोमे गर्भकी चर्चा

होनें लगी, पीछे अतिशय ज्ञानीनें कहा कि, सुज्येष्टानें विषय भोग किसीसें नहीं करा, अरुतिस विद्याधरका सर्व वृत्तांत कहा- तब सर्वकी शंका दूर हो गई, पीछे जब सुज्येष्टाने पुत्र जन्मा, तब तिस लडकेकों श्रावकनें अपनें घरमें लेजाके पाला, तिसका नाम सत्यकी रक्खा, एकदा समय सत्यकी, साध्वीयोंके साथ श्री महा- वीर भगवान्के समवसरणमें गया, तिस अवसरमें एक कालसंदी- पक नामा विद्याधर श्री महावीर स्वामीकों वंदना करके पूछनें लगा, कि मुझकों किससें भय है, तब भगवंत श्री महावीर स्वामीनें कहा कि यह जो सत्यकी नामा लडका है, इससें तुझकों भय है। तब कालसंदीपक सत्यकीके पास गया, अवज्ञासें कहनें लगा, कि अरे तूं मुझकों मारैगा, ऐसें कहकर जोरावरीसें सत्य, कीकों अपनें पगोंमें गेरा, तब तिसके पिता पेढालनें सत्यकीका पालन करा, और अपनी सर्व विद्यायों सत्यकीकों देदई, पीछे जब सत्यकी महारोहणी विद्याका साधन करनें लगा, इस सत्य- कीका यह सातमा भव रोहणी विद्या साधनमें लगरहा था, रो- हणी विद्यानें इस सत्यकीके जीवकों पांच भवमें तो जीवसें मार गेरा, और छठे भवमें छे महिने शेष आयुके रहनेंसें, सत्यकीके जीवनें विद्याकी इच्छा न करी, परंतु इस सातमें भवमें तो तिस रोहणी विद्याकों साधनेका प्रारंभ करा तिसकी विधि लिखते हैं। अनाथ मृतक मनुष्यकों चितामें जलावे, और आले चमडेकों शरीर ऊपर लपेटके पगके वामें अंगुठेसें खडा होकर जहां लग वो चिताका काष्ट जले, तहां लग जाप करे, इस

विधिसें सत्यकी विद्या साध रहा था। उहां कालसंदीपक विद्याधरभी आगया, और चितामे काष्ट प्रक्षेप करके सात दिन रात्रीतक अग्नि बुझनें न दीनी, तब सत्यकी इसीतरे सात दिन वामे अंगूठेसें खडा रहा, ऐसा सत्यकीका सत्य देखके रोहणी आप प्रगट होकर काल संदीपककों कहने लगी कि मत विघ्नकर— क्यों कि में इस सत्यकीके सिद्ध होनेंवाली हु, इसवास्तेमें सिद्ध हो गई हुं, तब रोहणी देवीनें सत्यकीकों कहा, कि मे तेरे शरीरमे किधरसें प्रवेश करुं, सत्यकीनें कहा मेरे मस्तकमें होकर प्रवेश कर, तब रोहणीने मस्तकमे होकर प्रवेश करा तिस्से मस्तकमे खड्डा पडगया, तब देवीने तुष्ट मान होकर तिस मस्तककी जगों तीसरे नेत्रका आकार बना दिया, तब तो सत्यकी तीन नेत्रवाला प्रसिद्ध हुआ, पीछे सत्यकीने सोचा कि पेढालने मेरी माता राजाकी कुमारी वेटी साध्वीको विगाडा हे। ऐसाशोचकर अपने पिता पेढालको मार दिया, तब लोकोंनें सत्यकीका नाम रुद्र (भयानक) रख दिया, क्यों कि जिसनें अपना पिताको मार दिया उससें और भयानक कौन है॥ पीछे सत्यकीनें विचारा कि काल संदीपक मेरा वैरी कहा है, जब सुना कालसदीपक अमुक जगा में है, तब सत्यकी तिसके पास पोंहचा। फेर कालसंदीपक विद्याधर तहासें भाग निकला, तोभी सत्यकी तिसके पीछे लगा, तब कालसदीपक हेठें ऊपर भागता रहा, परतु सत्यकीने उसका पीछा न छोडा, फेर कालसंदीपकनें सत्यकीके भुलानेंवास्ते तीन नगर बनाये, तब सत्यकीनें विद्यासें तीनो नगरभी जला दीये,

तब कालसंदीपक दोडके पाताल कलशमें चला गया, सत्यकीनें तहां जाकर काल संदीपककों मार डाला, तिस पीछे सत्यकी विद्याधर चक्रवर्त्ति हुआ, तीन संध्यामें सर्व तीर्थंकरों कों वंदना करके नाटक करता हुआ, तब इंद्रनें सत्यकीका नाम महेश्वर दीया, तिस महेश्वरके दो शिष्य हुये, एक नंदीश्वर, दूसरा नांदिया, तिनमें नांदीया तो विद्यासें वैलका रूप वना लेता था, और तिस ऊपर महेश्वर चढके अनेक क्रीडा कूतूहल करता था, महेश्वर श्री महावीर भगवंतका अविरति सम्यग् दृष्टि श्रावक था, परंतु वडा भारी कामीथा, और ब्राह्मणों केसाथ उसके बडा भारी वैर हो गया था, इससें विद्याके वलसें सैकडों ब्राह्मणोंकी कुमारी कन्यायोंकों विषय सेवन करके विगाडा, और लोक तथा राजा प्रमुखकी वहु वेटियोंसें काम क्रीडा करनें लगा, परंतु उसकी विद्यायोंके भयसें उसें कोई कुछ कह सक्ता नहीं था, और जो कोई मनाभी करता था सो मारा जाता था, महेश्वरनें विद्यासें एक पुष्पक नामा विमान वनाया तिसमें वैठके जहां इच्छा होती तहां जाता था, ऐसें उसका काल व्यतीत होता था, एकदा प्रस्तावें महेश्वर उज्जयन नगरमें गया तहां चंडप्रद्योतनकी एक शिवानामा राणीकों छोडके, दूसरी सर्वराणीयोंके साथ विषयभोग करा, औरभी सर्व लोकोंके बहु वेटीयोंकों विगाडना शरू करा तब चंडप्रद्योतन राजाकों वडी चिंता हुई, अरु विचारा कि कोई एसा उपाय करीयें कि जिस्सें इस महेश्वरका विनाश (मरणां) हो जावै। परंतु तिसकी विद्याके आगे किसीका कोई उपाय नहीं चलता था, पीछे तिस उज्जइन

नगरमें एक उमा नामे वेश्या बडी रूपवंत रहती थी, उसका यह कौल था कि जो कोई इतना धन मुझे देवे, सो मेरेसें भोग करे, जो कोई उसके कहेमुजब धन देता था सो उसके पास जाता था। एक दिन महेश्वर उस वेश्याके घर गया, तब तिस उमा वेश्यानें महेश्वरके सन्मुख दो फूल करे, एक विकशा हुआ, दूसरा मिचा हुआ, तब महेश्वरनें विकशे फूलकी तर्फ हाथ पसारा, तब उमा वेश्यानें मिचा हुआ कमल महेश्वरके हाथमे दीया, और कहा कि यह कमल तेरे योग्य है, तब महेश्वरने कहा क्यों यह कमल मेरे योग्य है ॥ तब उमानें कहा, इस मिचे हुए कमल समान कुमारी कन्या है सो तुझकों भोग करनेंवास्ते वल्लभ है ॥ और मे खिले हुए फूल समान हु, तब महेश्वरनें कहा तूंभी मेरेकों बहुत वल्लभ है, ऐसा कहकर भोग भोगने लगा, और तिसकेही घरमे रहनें लगा, तिस उमाने महेश्वरको अपने वशमें कर लीया, उमाका कहना महेश्वर उल्लंघन नहीं करसकता था, ऐसें जब कितनाक काल व्यतीत हुआ, तब चंडप्रद्योतनने उमाकों बुलायके उसकों बहुत धन, और आदर सन्मान देकर कहा, कि तूं महेश्वरसे यह पूछे कि ऐसाभी कोई काल है कि जिसकालमे तुमारेपास कोइभी विद्या नहीं रहती ॥ तब उमाने महेश्वरकों पूर्वोक्त रीतिसें पूछा, तब महेश्वरनें कहा कि जब में मैथुन सेवता हुं तब मेरेपास कोइभी विद्या नही रहती अर्थात् कोई विद्या चलती नहीं तब उमानें चंडप्रद्योतन राजाकों सर्व कथनसुना दीया, तब राजाने उमासें कहा कि जब महेश्वर तेरेसें भोग करेगा, तब हम उसकों

मारेंगे, जब उंमानें कहा कि मुझकों मत मारना, तब चंडप्रद्यो-
तननें कहा कि तुझकों नहीं मारेंगे ॥ पीछे चंडप्रद्योतननें अपनें
सुभटोकों छाना, उमाके घरमें छिपा रक्खा जब महेश्वर उमाके-
साथ विषय सेवनमें मग्न होके दोनोंका शरीर परस्पर मिलके
एक शरीरवत् हो गया, तब राजाके सुभटोनें दोनोंहीकों मार
डाला और अपनें नगरका उपद्रव दूर करा, पीछे महेश्वरकी
सर्व विद्यायोंनें उसके नंदीश्वर शिष्यकों अपना अधिष्ठाता बनाया,
जब नंदीश्वरनें अपनें गुरुकों इस विटंबनासें मारा सुना, तब
विद्यासें उज्जयन नगरके ऊपर शिला बनाई, और कहनें लगा
कि हे मेरे दासो, अब तुम कहां जाओगे, में सबकों मा
रुंगा, क्योंकि में सर्व शक्तिमान् ईश्वर हुं, किसीका मारामें मरता
नहिं हुं में सदा अविनाशी हुं, यह सुनकर बहुतसे लोक डरे,
सर्व लोक वीनती करके पगोंमें पडे, अरु कहने लगे, कि हमारा
अपराध क्षमा करो, तब नंदीश्वरनें कहाकि, जो तुम उसी अवस्थामें
अर्थात् उमाके भगमें महेश्वरका लिंग स्थापन करके पूजो तो में
तुमकों जीता छोडुंगा, तब लोकोनें वैसाही बनाकर पूजा करी, पीछे
नंदीश्वरनें इसी तरे प्राय केइ गाम नगरोंमें लोकोंको डरा डराके
मंदर बनवाये, तिनमें पूर्वोक्त आकारे भगमें लिंगस्थापन कराके
पूजा कराई ॥ यह श्रीमहावीर स्वामीका अविरति सम्यग् दृष्टी
श्रावक, इग्यारमारुद्र सत्यकी महेश्वरका दृष्टांत कहा ॥ इसीतरे
६३ शलाका उत्तम पुरुषोंका इहां संक्षेप मात्र अधिकार कहा,
विशेष अधिकार देखना होयतो, आवश्यक, कल्पसूत्र, त्रेशठ

शलाका पुरुष चरित्र, आदिकमे देखलेना,, इतिश्री अंबिकामु खोद्भूत युगप्रधान पदेनोपबृंहित श्रीजंगमयुगप्रधानजिनदत्तसूरि-चरिते, युगप्रवरागम श्रीजिनकीर्त्तिरत्नसूरि शाखायां, युगप्रवर श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरे, रंतेवासी श्रीमदानंदमुनिमंकलिते लोकभाषो-पनिबद्धे पं० जयमुनिसंस्कारिते भूमिकायां त्रिपष्ठि महापुरुष संक्षिप्त चरित्र वर्णनो नाम प्रथमः सर्गः ।

श्रीः

अथ द्वितीयः सर्गः ॥

तत्रादौ मंगलाचरणम् ॥

श्रीतीर्थेशगणेशान्, प्रणिपत्य सम्यग्, इन्द्रभूति प्रमुखानाम्, गणाधिपानाञ्च, चरित्रलेशं, स्वपरोपकृत्यै, विवृणोमि किंचित् ॥१॥ अथसम्प्रति एकादश श्रीवीरस्य गणाधिपाः, इन्द्रभूतिरग्निभूतिर्वायुभूतिश्च गौतमाः ॥ २ ॥ व्यक्तः सुधर्मा मंडितमौर्यपुत्रावकम्पितः अचलभ्राता मेतार्यः प्रभासश्च पृथक्कुलाः ॥ ३ ॥

अथ श्रीवीरनाथस्य, गणधरेष्वेकादशस्वपि, द्वयोर्द्वयोर्वाचनयोः, साम्यादासन् गणा नव ॥ ४ ॥ श्रीजम्ब्वादिसूरीणां, मोक्षमार्गविशुद्धये, चरित्रं कीर्तयिष्यामि, पवित्रं लोकभाषया ॥ ५ ॥ श्रीवैदेहं तीर्थपतिं, वन्दे विश्वगुणाकरं, श्रीसुधर्मं श्रीजम्बूं, निष्ठितार्थं समृद्धये ॥६॥ केवली चरमो जम्बू, अथ श्रीप्रभवप्रभुः' शय्यंभवो यशोभद्रः, संभूतिविजयस्ततः ॥७॥ भद्रबाहुः स्थूलिभद्रः, श्रुतकेवलिनो हि षट्, महागिरिसुहस्त्याद्या, वज्रान्ता दश पूर्विणः ॥ ८ ॥ श्लोकार्धेनाग्रे प्रयोजनं भावि ॥ सारं सारं श्रुतांगीं, कारंकारं गौरवे प्रणतिं च क्रमाच्चरित्रं सर्गे, द्वितीयके वच्मि श्रेयोर्थं ॥ ९ ॥

अब श्रीचौवीशमा भगवान श्रीमहावीर स्वामीसें लेकर आज पर्यंत पट्टपरंपरा, मूलसूरियोंका, अन्याचार्यादिकोंका किंचित् वृत्तांत लिखता हुं ॥

श्रीमहावीर स्वामीके सर्व शिष्य साधुवर्ग १४ हजार हुए जिसमे मुख्य बडे शिष्य गणधरलब्धिकेधारक ११ गणधर हुवे, तिन ११ गणधरोका नाम यहहै, इन्द्रभूति १ अग्निभूति २ वायुभूति ३ व्यक्तस्वामी ४ सुधर्मास्वामी ५ मंडितपुत्र ६ मौर्यपुत्र ७ अकंपित ८ अचलभ्राता ९ मेतार्य १० प्रभास ११ यह ११ गणधर सर्वाक्षरोंके संजोगकुं जाणनेवाले थे, और सर्व साध्वी आर्या चंदना प्रमुख ३६ हजार हुई, और शंख पुष्कली आनंद कामदेवादि सर्वश्रावक १ लाख ५९ हजार हुवे और सुलसा रेवती चेलणा जयंती आदि सर्वश्राविका ३ लाख १८ हजार हुइ और श्रेणिक कोणिक उदायन उदायी चेटक चंडप्रद्योतन नवमल्लकी नवलेछकी दशार्णभद्र महेश्वरादि देशव्रतधर समकत्वव्रतधर बडे बडे अनेक राजालोक श्रीमहावीर स्वामीके लाखोंही सेवक हुवे ॥ ऐसे श्रीमहावीर भगवत विक्रम संवतसें ४७० वर्ष पहिले पावापुरी नगरीमे हस्तिपाल राजाकी पुराणी राज सभामे ७२ वर्षका आयु भोगवके कार्तिक वदि अमावस्याकी रात्रिके पीछले प्रहरमे पद्मासन किये हुए वेदनीयादि चार कर्मकी सर्व उपाधि छोडके निर्वाण हुए (मोक्ष पहुचे) तिस समयमे श्री गौतमस्वामी और श्रीसुधर्मास्वामी, यह दो बडे शिष्य जीते थे, शेष नव बडे शिष्य तो श्री महावीरस्वामीके जीते हुये ही एक मासका अनशन करके केवल ज्ञान पायके मोक्षचलेगये थे, यह इग्यारहही बडे शिष्य जातिके तो ब्राह्मण थे, चार वेद, और छ वेदागादि सर्व शास्त्रोंके जानकार थे, इन इग्यारह पंडितों के चौंमालीससै (४४००) विद्यार्थी थे ॥

इनोका संबंध ऐसे है कि—जब भगवंत श्रीमहावीरस्वामीकों-केवलज्ञान हुआ, तिस अवसरमें मध्यपापा नगरीमें, सोमल नामा ब्राह्मणनें यज्ञ करनेंका आरंभ करा था, और सर्व ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ विद्वान जानकर इन पूर्वोक्त गौतमादि इग्यारेही उपाध्यायोकों बुलाया था ॥ तिस समय तिस यज्ञ पाडाके ईशान कूणमें महासेन नामा उद्यानमें, श्रीमहावीर भगवंतका समवसरण, रत्न सुवर्ण रौप्य-मय क्रमसें तीन गढसंयुक्त देवोंनें बनाया तिसके बीचमें बैठके भगवंत श्रीमहावीरस्वामी उपदेश करनें लगे, तब आकाश मार्गके रस्ते सैंकडों विमानोमें बैठे हुये चार प्रकारके देवताओ भगवंत श्री-महावीरस्वामीके दर्शनकों और उपदेश सुननेकों आते थे, तब तिनों यज्ञ करनेवाले ब्राह्मणोने जाना कि, यह देव सर्व हमारे करे हुये यज्ञ की आहुतीयों लेनें आये हैं, इतनेमें देवता तो यज्ञ पाडेकों छोडके भगवानके चरणोंमें जाकर हाजर हुये, तथा और लोकभी श्रीमहावीर भगवंतका दर्शन करकें और उपदेश सुनकें गौतमादि पंडितोंके आगें कहनें लगे, कि—आज इस नगरके बाहिर सर्वज्ञ सर्वदर्शी भगवान आये हैं, नतो उसके रूपकी कोई तारीफ़ कर सक्ता है, अरु न कोई उसके उपदेशसें संशय रहता है, और लाखों देवता जिनोके चरणोंकी सेवा करते हैं, इससें हमारे बडे भाग्योदय है, जो ऐसे सर्वज्ञ अरिहंत भगवंतका हमने दर्शन पाया, ऐसा जब गौतमजीने सुना कि, सर्वज्ञ आया, तब मनमें ईर्षाकी अग्नि भडकी, अरु ऐसें कहने लगाकि—मेरेसें अधिक और सर्वज्ञ कौन है ? में आज इसका सर्वज्ञपणा उडा देता हुं ?

इत्यादि गर्व संयुक्त भगवान् श्रीमहावीरस्वामीके पास पहुंचा, और भगवानकों चौतीस अतिशय संयुक्त देखा, तथा देवता, इंद्र, मनुष्योंसे परिवृत देखा, तब बोलने की शक्तिसें हीन हुआ, भगवंतके सन्मुख जाके खडा होगया, तब भगवंतने कहा कि—हे गौतम इंद्रभूति तूं आया, तब गौतमजीने मनमे विचारा कि, जो मेरा नामभी ये जानते हैं, तोभी मैं सर्व जगे प्रसिद्ध हूं मुझे कौन नहीं जानताहै इन्नें मेरा नाम लीया इस बातमे कुछ आश्चर्य और सर्वज्ञ इसकों नहीं मानता हूं, किंतु मेरे मनमें जो संशय है तिसकों दूर कर देवे तोमे इसको सर्वज्ञ मानु तब भगवंत नें कहा, हे गौतम। तेरे मनमें यह संशय हैः—जीव है कि नहीं? और यह संशय तेरेकों वेदोंकी परस्पर विरुद्ध श्रुतियोंसें हुवा है वो श्रुतियों यह है, सो कहते है॥

"विज्ञानघनएवैतेभ्यो भूतेभ्यः समुत्थाय तान्येवानुविनश्यति न प्रेत्यसंज्ञास्तीतीत्यादि" इस्से विरुद्ध यह श्रुति है–"सर्वः अयमात्मा ज्ञानमय इत्यादि" इन श्रुतियोंका अर्थ जैसा तेरे मनमें भासन होता है, तैसाही प्रथम श्रुतिका अर्थ कहते है। नीलादि रूप होनेसें विज्ञानही चैतन्य है चैतन्य विशिष्ट जो नीलादि तिस्से जो घन सो विज्ञानघन, सो विज्ञानघन इन प्रत्यक्ष परि-विद्यमान रूप पृथ्वी, अप्प, तेज, वायु, आकाश, इन पांच भूतों से उत्पन्न होकर फेर तिनके साथही नाश होजाता है अर्थात् भूतों के नाश होनेमें उनके साथ विज्ञानघनकाभी नाश होजाता है, इस हेतुसे प्रेत्यसंज्ञा नही अर्थात् मरके फेर परलोक मे और

कोई नर नारक का जन्म नही होता, इस श्रुतिसें जीवकी नास्ती सिद्ध होती है, और दूसरी श्रुति कहती है कि—यह आत्मा ज्ञान मय अर्थात् ज्ञान स्वरूप है इस्से आत्माकी सिद्धी होती है, अब ये दोनों श्रुतियों परस्पर विरोधी होनेसें प्रमाण नही हो शक्ती है और बहुत परस्पर आत्माके स्वरूपमें विरोधी मत हैं, कोई कहता है कि—"एतावानेव पुरुषो, यावानिंद्रियगोचरः ॥ भद्रे वृकपदं पश्य, यद्वदंत्यबहुश्रुताः" ॥ १ ॥ यहभी एक आगम कहता है तथा "न रूपं भिक्षवः पुद्गलः" अर्थात् आत्मा अमूर्त्ति है, यहभी एक आगम कहता है, तथा "अकर्त्ता निर्गुणो भोक्ता आत्मा, अर्थः— अकर्त्ता सत्व, रज अरु तम, इन तीनों गुणोंसें सुख दुःखका भोगनेंवाला आत्मा है, यहभी एक आगम कहता है, अब इनमेंसें किसकों सच्चा और किसकों झूठा मानें परस्पर विरोधी होनेसें, सर्व तो कुछ सच्चे होही नही शक्ते हैं तथा युक्ति प्रमाणसेंभी मरके परलोक जानेवाला आत्मा सिद्ध नहीं होता है ऐसा हे गौतम तेरे मनमें संशय है, अब इसका उत्तर कहता हूं कि, तूं वेद पदोंका अर्थ नही जानता है इत्यादि कहके श्रीगौतमजीके संशयकों दूर करा, ये सर्व अधिकार मूला-वश्यक और श्रीविशेषावश्यकसें जान लेना, मैनें ग्रन्थके भारी और गहन होजानेके सबबसें यहां नहीं लिखा क्योंकि सर्व इग्यारह गणधरोंके संशय दूर करनेंका कथनके चार हजार श्लोक है, पीछे जब गौतमजीका संशय दूर होगया, तब गौतमजी पांचसो अपनें विद्यार्थियोंके साथ दीक्षा लेके श्रीमहावीर भगवंत का प्रथम शिष्य हुवा ॥

इसीतरे इंद्रभूतिको दीक्षित सुनके, दूसरा भाई अग्निभूति बडे अभिमानमें भरकर चला और कहने लगाकि, मेरे भाईकों इंद्र- जालीयेनें छलसें जीतके अपना शिष्यबनालीया, तो में अभी उस इंद्रजालीयेको जीतके अपने भाईकों पीछा लाता हूं इस विचा- रसें भगवंत श्रीमहावीरजीकेपास पहुंचा, जब भगवानको देखा, तब सर्व आइ बाइ भूल गया मुखसें बोलनेंकीभी शक्ति न रही, और मनमें वडा अचंभा हूआ, क्योंकि ऐसा स्वरूप न उसने कभी सुना था और कभी देखा था, तब भगवाननें उसका नाम लीया, अग्निभूतिनें विचारा कि यह मेरा नामभी जानते हैं, अथवा मैं प्रसिद्ध हूं मुझे कौन नहीं जानता है, परतु मेरे मनका संशयदूर करे तो मैं इसकों सर्वज्ञ मानु, तब भगवतनें कहा हे अग्निभूति तेरे मनमें यह सशय है कि कर्म है किंवा नहीं यह संशय तेरेकों विरुद्ध वेदपदोंसें हूआ है क्योंकि तूं वेद पदोंका अर्थ नहीं जानता है, वे वेदपद यह है—"पुरुषएवेदंग्निं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यं उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनाऽतिरोहति यदेजति यन्नेजति यद्दूरे यदु- अंतिके यदंतरस्य यदुत सर्वस्यास्य बाह्यत इत्यादि" इस्सें विरुद्ध यह श्रुति है—"पुण्यः पुण्येनेत्यादि" और इनका अर्थ तेरे मनमें ऐसा भासन होता है कि, पुरुष अर्थात् आत्मा, एव शब्द अवधारणके वास्ते है, सो अवधारण कर्म और प्रधानादिकोंके व्यवच्छेद वास्ते है, "इदं सर्वं" अर्थात् यह सर्व प्रत्यक्ष वर्त्तमान चेतन अचेतन वस्तु "ग्निं" यह वाक्यालंकारमें है यद्भूतं अर्थात् जो पीछे हूआ है और आगेकों होवेगा, जो मुक्ति तथा संसार सो सर्व पुरुष

आत्मा ब्रह्मही है तथा उतशब्द अतिशब्दके अर्थमें है, और अपि-शब्द समुच्चय अर्थमें है अमृतत्वस्य अमरणभावका अर्थात् मोक्षका ईसानःप्रभुः अर्थात् स्वामी (मालक) है, यदिति यचेति च शब्दके लोप होनेसें यदिति चना इसका अर्थ जो अन्न करकें वृद्धिकों प्राप्त होता है, "यदेजति" जो चलता है ऐसे पशुआदिक और जो नहीं चलता है ऐसे पर्वतादिक और जो दूर है मेरु आदिक "यत्उअंतिके" उ शब्दअवधारणार्थमें है, जो समीप अर्थात् नेडे है सो सर्व पूर्वोक्त पदार्थ पुरुष अर्थात् ब्रह्मही है, इस श्रुतिसें कर्मका अभाव होता है अरु दूसरी श्रुतिसें तथा शास्त्रांतरोंसें कर्म सिद्ध होते है, तथा युक्तिसें कर्मसिद्ध होते नहीं क्योंकि अमूर्त्त आत्माकों मूर्त्ति कर्म लगते नहीं, इसवास्ते मैं नही जानता कि कर्म है वा नही यह संशय तेरे मनमें है, ऐसा कह कर भगवाननें वेदश्रुतियोंका अर्थ बराबर करके तिसका पूर्वपक्ष खंडन करा, सो विस्तारसें मूलावश्यक तथा विशेषावश्यकसें जानलेना अग्निभूतिनेंभी गौतमवत् दीक्षा लीनी ॥ २ ॥

अग्निभूतिकी दीक्षा सुनके तीसरा वायुभूति आया, परंतु आगे दोनों भाईयोंके दीक्षा लेलेनेंसे इसकों विद्याका अभिमान कुछभी न रहा, मनमें विचार करा कि मैं जाकर भगवानकों वंदना (नमस्कार) करुंगा ऐसा विचारके आया आकर भगवंतकों वंदना (नमस्कार) करा। तब भगवंतने कहा तेरे मनमें संशयतो है शक्का है, संशय यह है कि जो जीव है विरुद्ध वेदपद श्रुतिसें हूआ है,

और तूं तिन वेदपदोंका अर्थ नहीं जानता है वे वेदपद ये है— "विज्ञानघन इत्यादि" पहिले गणधरकी श्रुति जाननी, इस्से देहसें जीव (आत्मा) सिद्ध नही होता है, और इस श्रुतिसे विरुद्ध यह श्रुति है, (सत्येव लभ्यस्तपसा ह्येपब्रह्मचर्येण नित्यज्योतिर्मयो हि शुद्धोयं पश्यति धीरायतयः संयतात्मान, इत्यादि) इस श्रुतिसें देहसे भिन्न आत्मा सिद्ध होता है, इसवास्ते तुझकों संशय है, पीछे भगवानूनें यह सर्व दूर करा, तब तीसरा वायुभूतिनेंभी अपने पांच सौ विद्यार्थीयोंकेसाथ दीक्षा लीनी ॥ ३ ॥

वायुभूतिकी तरें शेष आठ गणधर क्रमसे आये, तिनमे चौथा व्यक्तजी आया, तिनके मनमे यह सशय था कि पाचभूत है कि नही ए संशय विरुद्ध श्रुतियोंसें हुआ, वे परस्पर विरुद्ध यह है— "स्वप्नोपम वै सकलमित्येष ब्रह्मविधरंजसाविज्ञेयइत्यादीनि" तथा इससे विरुद्ध यह श्रुति है "द्यावापृथिवी जनयन् देवइत्यादि" तथा पृथिवीदेवता, आपोदेवता, इत्यादीनि इनका अर्थ तेरे मनमे ऐसा भासन होता है—अर्थ, स्वप्न सरीखा वैनिपात अव-धारणार्थ संपूर्णजगत है "एष ब्रह्मविधि" अर्थात् यह परमार्थ प्रकार है, अजसा सीधेन्यायमें जाननां योग्य है, यह श्रुति पंचभूतका अभाव कहती है, और श्रुतियों पाचभूतकी सत्ताकों कहती है इसवास्ते तेरेकों संशय है, तेरे मनमे यहभी है कि—युक्तिसें पांचभूत सिद्ध नहीं होते है, पीछे भगवाननें इसका पूर्वपक्ष खडन करा वेद पदोंका यथार्थ अर्थ कहा, यह अधिकार उक्त ग्रंथोंमें

आत्मा ब्रह्मही है तथा उतशब्द अनिशब्दके अर्थमें है, और अपि-शब्द समुच्चय अर्थमें है अमृतत्वस्य अमरणभावका अर्थात् मोक्षका ईसानःप्रभुः अर्थात् स्वामी (मालक) है, यदिति यचेति च शब्दके लोप होनेसें यदिति बना इसका अर्थ जो अन्न करकें वृद्धिकों प्राप्त होता है, "यदेजति" जो चलता है ऐसे पशुआदिक और जो नहीं चलता है ऐसे पर्वतादिक और जो दूर है मेरु आदिक "यन्उअं-तिके" उ शब्दअवधारणार्थमें है, जो समीप अर्थात् नेडे है सो सर्व पूर्वोक्त पदार्थ पुरुष अर्थात् ब्रह्मही है, इस श्रुतिसें कर्मका अभाव होता है अरु दूसरी श्रुतिसें तथा शास्त्रांतरोंसें कर्म सिद्ध होते है, तथा युक्तिसें कर्मसिद्ध होते नहीं क्योंकि अमूर्त्त आत्माकों मूर्त्ति कर्म लगते नहीं, इसवास्ते मैं नही जानता कि कर्म है वा नही यह संशय तेरे मनमें है, ऐसा कह कर भगवाननें वेदश्रुतियोंका अर्थ बराबर करके तिसका पूर्वपक्ष खंडन करा, सो विस्तारसें मूला-वश्यक तथा विशेषावश्यकसें जानलेना अग्निभूतिनेंभी गौतमवत् दीक्षा लीनी ॥ २ ॥

अग्निभूतिकी दीक्षा सुनके तीसरा वायुभूति आया, परंतु आगे दोनों भाईयोंके दीक्षा लेलेनेंसे इसकों विद्याका अभिमान कुछभी न रहा, मनमें विचार करा कि मैं जाकर भगवानकों वंदना (नम-स्कार) करूंगा ऐसा विचारके आया आकर भगवंतकों वंदना (नमस्कार) करा। तब भगवंतने कहा तेरे मनमें संशयतो है परंतु क्षोभसें तूं पूछ नही शक्ता है, संशय यह है कि जो जीव है सो देहही है और यह संशय तेरेकों विरुद्ध वेदपद श्रुतिसें हूआ है,

और तूं तिन वेदपदोंका अर्थ नहीं जानता है वे वेदपद ये है— "विज्ञानघन इत्यादि" पहिले गणधरकी श्रुति जाननी, इस्से देहसें जीव (आत्मा) सिद्ध नही होता है, और इस श्रुतिसें विरुद्ध यह श्रुति है, (सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येपब्रह्मचर्येण नित्यज्योतिर्मयो हि शुद्धोय पश्यंति धीरायतयः संयतात्मान, इत्यादि) इस श्रुतिसें देहसे भिन्न आत्मा सिद्ध होता है, इसवास्ते तुझकों संशय है. पीछे भगवान्नें यह सर्व दूर करा, तब तीसरा वायुभूतिनेंभी अपने पांच सौ विद्यार्थीयोंकेसाथ दीक्षा लीनी ॥ ३ ॥

वायुभूतिकी तरें शेष आठ गणधर क्रमसें आये, तिसमें चौथा व्यक्तजी आया, तिनके मनमें यह संशय था कि पांचभूत है कि नही ए संशय विरुद्ध श्रुतियोंसे हुआ, वे परस्पर विरुद्ध यह है— "स्वप्नोपमं वै सकलमित्येप ब्रह्मविधिरंजसाविज्ञेयइत्यादीनि" तथा इससे विरुद्ध यह श्रुति है "द्यावापृथिवी जनयन् देवइत्यादि" तथा पृथिवीदेवता, आपोदेवता, इत्यादीनि इनका अर्थ तेरे मनमें ऐसा भासन होता है—अर्थ, स्वप्न सरीखा येनिपात अव-धारणार्थे सपूर्णजगत है "एप ब्रह्मविधि" अर्थात् यह परमार्थ प्रकार है, जजसा सांधेन्यायसें जानना योग्य है, यह श्रुति पंचभू-तका अभाव कहती है, और श्रुतियों पांचभूतकी सत्ताको कहती है इसवास्ते तेरेकों संशय है, तेरे मनमें यहभी है कि—युक्तिसें पांचभूत सिद्ध नहीं होते है, पीछे भगवानने इसका पूर्वपक्ष खंडन करा वेद पदोंका यथार्थ अर्थ कहा, यह अधिकार उक्त ग्रंथोंसें

जान लेनां ॥ यह सुनकर चौथा व्यक्तजीनेंभी अपना पांचसैं शिष्योंकेसाथ दीक्षा लीनी ॥ ४ ॥

तब पांचमां सुधर्मा नामा पंडित आया, इसकाभी उसीतरे सर्वा-विकार जानलेना यावत् तेरे मनमें यह संशय है कि मनुष्यादि सर्व जैसें इस भवमें है तैसेंही अगले जन्ममें होते हैं कि, मनुष्य कुछ और पशुआदिभी बन जाते है, यह संशय तेरेकों परस्पर वि-रुद्ध वेद श्रुतियोंसें हुआ है सो वेद श्रुतियों यह है—"पुरुषो वै पुरुषत्वमश्नुते पशवः पशुत्वं इत्यादीनि" यह श्रुति जैसा इस जन्ममें पुरुष स्त्री आदि है वे पर जन्ममेंभी ऐसेही होवेंगे, इस्से विरुद्ध यह श्रुति है "शृगालो वै एष जायते यः सपुरीषो दह्यत इत्यादि" इन सर्व श्रुतिओंका भगवानने अर्थ करके संशय दूर करा, तब अपनें पांचसे शिष्योंके साथ दीक्षा लीनी ॥ ५ ॥

तिस पीछे छट्ठा मंडित पुत्र आया तिसके मनमें यह संशय था, कि बंध मोक्ष है, वा नहीं है यह संशयभी विरुद्ध श्रुतियोंसे हुवा है, सो श्रुतियों यह है "स एष विगुणोविभुर्न बध्यते, संस-रति वा न मुच्यते मोचयति वा ॥ एष बाह्यमभ्यंतरं वा वेदइत्या-दीनि" इस श्रुतिका ऐसा अर्थ तेरे मनमें भासन होता है, "एष-अधिकृतजीवः" अर्थात् यह जीव जिसका अधिकार है "विगुण" अर्थात् सत्वादि गुण रहित सर्वगत सर्व व्यापक पुण्य पाप करकें इसकों बंध नहीं होता है, और संसारमें भ्रमण भी नहीं करता हैं, और कर्मोसें छूटताभी नहीं है, बंधके अभाव होनेसें दूसरोंको कर्म-बंधसें छोडाताभी नहीं है, इस कहनेसें आत्मा अकर्त्ता है, सोई

कहता है, यह पुरुष अपणी आत्मासें बाहिर महत् अहंकारादि और अभ्यंतर स्वरूप अपना जानता नही, क्योंकि जानना ज्ञानसें होता है, और ज्ञानजो है, सो प्रकृतिका धर्म है, और प्रकृति अचेतन है, बंध मोक्ष नही इस श्रुतिसें बंध मोक्षका अभाव सिद्ध होता है। अब इस्से विरुद्ध श्रुति यह है सो कहते हैं "नही वै शरीरस्य प्रियाप्रिययोरपहतिरस्ति अशरीरं वा वसंत प्रियाप्रिये न स्पृशत इत्यादीनि" इसका अर्थ कहते हैं—सशरीरस्य, अर्थात् शरीर सहितकों सुख दुःखका अभाव कदापि नहीं होता है, तात्पर्य यह है कि संसारी जीव सुख दुःखसें रहित नही होता है, और अमूर्त्त आत्माकों कारणके अभावसें सुखदुःखस्पर्शनहीं कर शक्ते हैं, इस श्रुतिसें बंधमोक्षसिद्धहोते है, तथा तेरे मनमें यहभी बात है—कि युक्तिसेंभी बंधमोक्षसिद्धनहीं होते हैं इत्यादि संशय कहकर भगवान् तिसके पूर्वपक्षकों खंडन करके संशय दूर करा, तब मंडितपुत्र साढेतीनसौ विद्यार्थियोंके साथ दीक्षित भया ॥ ६ ॥

॥ ७ ॥ तिसके पीछे सातमा मोर्यपुत्र आया, तिसके मनमें यह संशय था कि—देवता है किंवा नहीं है यह संशय परस्पर विरुद्ध श्रुतियोंसें हुआ वो श्रुतियो यह है "सएपयज्ञायुधीयजमानोंजसास्वर्गलोकं गच्छति इत्यादि" श्रुतियो स्वर्ग तथा देवताओंकी सिद्धि करतीयो है, इससें विरुद्ध श्रुति यह है—अपामसोम अमृता अभूम् अगमामज्योतिर्विदामदेवान् ॥ किनूनमस्मान्तृणवदरातिः किमुधूर्त्तिरमृतमर्त्यस्येत्यादीनि "तथा को जानाति मायोप-

मान् गीर्वाणानि इयंवरुणकुवेरादीन् इत्यादि"—इनका ऐसा अर्थ तेरे मनमें भासन होता है, कि—पाणीकों पीते हुये एतावता सोमलताकारस पीते हूये अमृत (अमरण) धर्मवाले हम हुये हैं ज्योति स्वर्ग और देवताकों हम नही जानते हैं तथा देवता हम हूये हैं, यहभी नहीं जानते देवता तृणेकी तरें हमारा क्या कर शक्ते है, यह श्रुति अभाव प्रतिपादन करती है, और यह भावकी प्रतिपादक है, "धूर्त्तिजराअमृत मर्त्यस्य" अमृतत्व प्राप्तपुरुषकों क्या कर सक्ती है। इन श्रुतियोंका यथार्थ अर्थ करकें, और तिसका पूर्वपक्ष खंडन करके भगवंतनें इनका संशय दूर करा, तव यहभी साढेतीनसो छात्रोंके साथ दीक्षित भया ॥ ७ ॥

॥ ८ ॥ तिस पीछे आठमाअकंपित आया उसके मनमेंभी वेदकी परस्पर विरुद्ध श्रुतियोंके पदोंसें, नरकवासी है कि नही। यह संशय उत्पन्न हूआथा, वो परस्पर विरुद्ध श्रुतियों लिखते हैं—"नारको वै एष जायते यः शूद्रान्नमश्नाति इत्यादि" इसका अर्थ—-यह ब्राह्मण नारक होवेगा जो शूद्रका अन्न खाता है। इस श्रुतिसें नरक सिद्ध होता है, तथा "नह वै प्रेत्यनरके नारका संतीत्यादि" सुगमार्थः। इस श्रुतिसें नरकका अभाव सिद्ध होता है। इनका अर्थ करकें और पूर्वपक्ष खंडन करकें भगवाननें तिसका संशय दूर करा तव अकंपितनेंभी तीनसौ छात्रोंके साथ दीक्षा लीनी ॥ ८ ॥

॥ ९ ॥ तिस पीछे नवमा अचलभ्राता आया, तिसकोंभी परस्पर वेदकी विरुद्ध श्रुतियोंके पदोंसें, पुण्य पाप है कि नही। यह संशय था, सो वेद पद यह—"पुरुष एवेदंग्निं सर्वं इत्यादि" दूसरे

गणधरवत्, इस्सें विरुद्धपद है—"पुण्यं पुण्येन कर्मणा भवति, पापं पापेन कर्मणा भवति इत्यादि" इस्से पुण्यपाप सिद्ध होते है, यह संशयभी भगवाननें दूर करा तब यहभी तीनसौं छात्रोंके साथ दीक्षित भया ॥ ९ ॥

॥ १० ॥ तिस पीछे दशमा मेतार्य आया उसकों भी वेदकी परस्पर विरुद्ध श्रुतियोंसे यह संशय हुवा था, कि परलोक है किंवा नही है वो श्रुतियों यह है—विज्ञानघन, इत्यादि प्रथम गणधरवत् अभाव कथन श्रुति जाननी" तथा "सर्वः अयं आत्मा ज्ञानमय इत्यादि" परलोक भाव प्रतिपादक श्रुति जाननी। इनका तात्पर्य भगवाननें कहा, तब मेतार्यजीने निःशंक होकें तीनसौं छात्रोंके साथ दीक्षा लीनी ॥ १० ॥

॥ ११ ॥ तिस पीछे इग्यारहमा प्रभास नामा उपाध्याय आया तिसके मनमेभी वेद श्रुतियोंके परस्पर विरुद्ध होनेसें यह संशय था कि निर्वाण है कि नही है, वो श्रुतियों यह है—"जरामर्यं वा एतत्सर्वं यदग्निहोत्रं" इस्सें विरुद्ध श्रुति यह है–"द्वेब्रह्मणी वेदितव्ये परमपर च तत्र पर सत्य ज्ञानमनंतंब्रह्मेति" इनका यह अर्थ तेरी बुद्धिमें भासन होता है कि–अग्निहोत्र जो है सो जीव हिंसा संयुक्त है, और जरा मरणका कारण है, अरु वेदमे अग्निहोत्र निरंतर करणा कहा है, तब ऐसा कौनसा काल है, कि जिसमे मोक्ष जानेका कर्म करीये, इसवास्ते आत्माकों मोक्ष (निर्वाण) कदापि नहीं हो शक्ता है, अरु दूसरी श्रुति मोक्ष प्राप्तिभी कहती है, इसवास्ते संशय हुआ है, इसका जब भगवाननें उत्तर देके निशंक

करा तब तीनसौ छात्रोंके साथ दीक्षा लीनी ११ ॥ इसींतरे श्रीमहावीर भगवंतके वैशाख शुदि इग्यारसके दिन मध्यपापानगरीके महासेन वनमे (४४००) शिष्य हुये, तिस पीछे राजपुत्र, श्रेष्टिपुत्रादि, तथा राजपुत्री, श्रेष्टिपुत्री, राजाकी राणीयों आदिकनें दीक्षा लीनी । तथा जब भगवंत श्रीमहावीरजी पावापुरीमें मोक्ष गये, तिसीही रात्रिके प्रभातमें इंद्रभूति, अर्थात् गौतम गणधरकों केवल ज्ञान हुआ । तब इंद्रोंनें निर्वाण महोच्छव करके, ग्यानका उच्छव करा, और सुधर्मास्वामीजीकों श्रीमहावीर स्वामीजीका पट्टऊपर वैठाया । श्रीगौतमस्वामीजीकों पट्ट इसवास्ते न हुवा कि, केवलज्ञानी पुरुष कोई पाट ऊपर नहीं वैठता है, क्योंकि केवली तो जो पूछे उसका उत्तर अपनें ज्ञानसेंही देता है, परंतु ऐसा नहीं कहता है, कि मैं अमुक तीर्थंकरके कहनेसें कहता हुं, इसवास्ते केवलज्ञानी पाट ऊपर नहीं वैठता है, जेकर वैठे तो तीर्थंकरका शासन दूर हो जावे, यह कभी हो नहि शक्ता, जो अनादि रीतिकों केवली भंग करे, इसवास्ते श्रीगौतमस्वामीजी केवलज्ञानी था, इस्सें पट्टऊपर नही वैठे, और श्रीसुधर्मास्वामी वैठे ॥

श्री सुधर्मास्वामी पचास वर्ष तो गृहस्थावास (घरमें) रहे, और तीस वर्ष श्रीमहावीर भगवंतकी चरण सेवा करी, जब श्रीमहावीरस्वामी निर्वाण हुआ, तिस पीछे वारावर्ष तक छद्मस्थ रहे, और आठ वर्ष केवली रहे, क्योंकि श्रीमहावीरस्वामी मोक्षगयेके पीछे केवली होकर वारावर्ष श्रीगौतमस्वामीजी जीते रहे, और श्रीगौतमस्वामीजीके निर्वाण पीछे, श्रीसुधर्मास्वामीजीकों केवलज्ञान हुआ । केवली होकर

आठ वर्ष जीते रहे, श्रीसुधर्मास्वामीजीका सर्वायु एकसौ (१००) वर्षका था. सो श्रीमहावीरस्वामीजीके वीशवर्ष पीछे मोक्ष गये ॥१॥ श्रीसुधर्मास्वामीके पाट ऊपर, श्रीजंबूस्वामी बैठे। सो राजगृह नगरकानामी श्रीऋषभदत्त श्रेष्ठकी धारणी नामा स्त्रीनें जन्मेथे, निन्नानवे क्रोड सोनइये और आठ स्त्रीयोंको छोडकर दीक्षा लेता भया, शोलेवर्ष गृहस्थ वासमे रहे, वीश वर्ष व्रतपर्याय, और चौमालीस वर्ष केवलपर्याय पालके श्रीमहावीरस्वामीके निर्वाणसें चौशठमे वर्ष पीछे मोक्ष गये ॥

यह श्रीजंबूस्वामीके पीछे भरतक्षेत्रमे दश बाते विच्छेद होगई तिसका नाम लिखते हैः—१ मनःपर्यवज्ञान, २ परमावधि ज्ञान, ३ पुलाकलब्धि ४ आहारकशरीर, ५ क्षपकश्रेणि, ६ उपशमश्रेणि, ७ जिनकल्पिमुनिकी रीति, ८ परिहार विशुद्धिचारित्र, तथा सूक्ष्मसंपराय, और यथाख्यात यह तीन तरेंके संयम, ९ केवलज्ञान, १० मोक्ष होना, यह दश वस्तु विच्छेद हो गई, श्रीमहावीर भगवनके केवली हुये पीछे जब चौदहवर्ष बीतेथे, तब जमाली नामा प्रथम निन्हव हुआ और सोलावर्ष पीछे तिष्य गुप्त नामा दूसरा निन्हव हुवा। श्रीजम्बूस्वामीका आयु असी वर्षका था ॥ २ ॥

॥ ३ ॥ जम्बूस्वामीके पाट ऊपर, प्रभवस्वामी बैठे। तिनकी उत्पत्ति ऐसे है, विंध्याचल पर्वतके पास जयपुर नामा पत्तन था, तिसका विन्ध्य नामा राजा था, तिसके दो पुत्र थे, एक बडा प्रभव, दूसरा छोटा प्रभु, विंध्यराजाने किसी कारणसे छोटे पुत्र प्रभुको राज तिलक दे दीया, तब बडा बेटा प्रभव गुस्से होकर

जयपुर पत्तनसें निकलकर, विंध्याचलकी विषम जगामें गाम वसा-कर रहने लगा, और खात्रखनन, बंदिग्रहण रस्तेमें लूटनादि, अनेक तरेंकी चोरीयोंसें अपनें परिवारकी आजीविका करता था, एक दिन पांचसौ चोरोंकों लेकर राजगृह नगरमें जंबूजीके घरकों लूटनें आया, तहां जंबूस्वामीनें तिसकों प्रतिबोध करा, तब तिसनें पांचसौ चोरोंके साथ दिक्षा श्रीजंबूस्वामीजीके साथ लीनी. इत्यादि जंबूस्वामीजीका और प्रभवस्वामीजीका अधिकारजम्बूचरित्र, तथा परिशिष्टपर्वादिग्रंथोंसें जानलेना. प्रभवस्वामी तीसवर्ष गृहस्थ पर्याय, चौमालीश वर्ष व्रतपर्याय, तथा एकादश वर्ष युगप्रधान पदवी, सर्व पंचाशी वर्षकी आयुपूरी करके श्रीमहावीरस्वामीसें पचहत्तर वर्ष पीछे स्वर्ग गया ॥

४ श्रीप्रभवस्वामीके पाट ऊपर, श्रीशय्यंभव स्वामी बैठे, जिनोनें मनक साधुकेवास्ते दशवैकालिक सूत्र बनाया, तिनकी उत्पत्ति ऐसें है एकदा प्रस्तावें प्रभवस्वामीनें रात्रिमें विचार करा कि मेरे पाट ऊपर कौन बैठेगा, पीछे ज्ञान बलसें अपणे सर्वसंघमें पाट योग्य कोई न देखा, तब परदर्शनीयोंको ज्ञान बलसें देखनें लगा, तब राजगृह नगरमें शय्यंभवभट्टकों यज्ञकरते हुयेकों अपने पाट योग्य देखा, पीछे प्रभवस्वामी विहारकरकें, सपरि-वारसें राजगृह नगरमें आये, उहां दो साधुओंकों आदेश दीया कि तुम यज्ञपाडेमें जाकर भिक्षाके वास्ते धर्म लाभ कहो, और यज्ञ करने वालोंकों ऐसे कहो—"अहोकष्टमहोकष्टं तत्वं विज्ञायते नहि" तब तिन साधुओंनें पूर्वोक्त गुरुका कहना सर्व

कीया। जब ब्राह्मणोनें "अहोकष्ट" इत्यादि सुना, और तिस यज्ञ वाडेमें शय्यंभव ब्राह्मणनें यज्ञ दीक्षा लीनी थी, तिसने यज्ञ वाडेके दरवाजेमे खडेथके, अहोकष्टं इत्यादि मुनियोका कहना सुनके विचार करनें लगा, कि ऐसा उपशम प्रधान साधु होते हैं, इसवास्ते यह असत्य (झूठ) नही बोलते है, इस्से मनमे संशय होगया, तब उपाध्यायको पूछा कि तत्व क्या है, तब उपाध्यायनें कहा कि चार वेदमें जो कथन करा है सो तत्व है, क्योंकि वेदोंके शिवाय और कोई तत्त्व नहीं है, तब शय्यंभवनें कहा कि तू दक्षिणाके लोभसें मुझको तत्व नहीं बतलाया है, क्योंकि राग द्वेष रहित, निर्मम, निःपरिग्रह, शांत, दांत, महात मुनियों का कहना झूठा नहीं होता है, और तू मेरा गुरु नहीं तैंने तो जन्मसें इस जगत्कों ठगनाही सीखा है, इस वास्ते तूं शिक्षाके योग्य है, इसवास्ते यातो मुझे तत्व कह दे, नही तो तलवारसे तेरा शिर छेद करूंगा, ऐसें कहके जब मियानसें तलवार काढी, तब उपाध्यायने प्राणात कष्ट देखकें कहा हमारे वेदोंमभी ऐसें लिखा है और हमारी आम्नायभी यही है, जब हमारा कोई शिर छेद किया चाहे तब तत्व कहना नही तो नही कहना तिस वास्तेमे तुमको तत्व कह देता हु कि इस यज्ञ स्थंभ के हेठे अर्हतकी प्रतिमा स्थापन करी है, और नीचेही तिसको प्रच्छन्न होकर पूजते है, तिसके प्रभावसे यज्ञके सर्व विघ्न दूर हो जाते है, जेकर यज्ञस्थंभके नीचे अर्हतकी प्रतिमा न रखे तो महातपा सिद्धपुत्र, और नारद, ये दोनों यज्ञको विध्वंस कर देते

हैं, पीछे उपाध्यायने यज्ञस्थंभ उखाडके अर्हंतकी प्रतिमा दिखाई और कहा कि यह प्रतिमा जिस देवकी है, तिस अर्हंतका कहा हुआ धर्म जीवदया रूप तत्व है, और यह जो वेद प्रतिपाद्य यज्ञ हैं वे सर्व हिंसात्मक रूप होनेसें विडंबना रूप हैं, परन्तु क्याकरें जेकर हम ऐसें न करें तो हमारी आजीविका नहीं चलती है, अब तूं तत्व जानले और मुझको छोड दे, अरु तूं परमार्हत होजा, क्योंकि मैंनें अपने पेटके वास्ते तुझको बहुत दिन बहकाया है, तब शय्यंभवने नमस्कार करके कहा तूं यथार्थ तत्वके कहनेसें सच्चा उपाध्याय है, ऐसा कह कर शय्यंभवने तुष्टमान होकर यज्ञकी सामग्री जो सुवर्णपात्रादि थे, वे सर्व उपाध्यायकों दे दीये, और प्रभवस्वामीके पास जाकर तत्व का स्वरूप पूछकर दीक्षा लेलीनी, शेष इनका वृत्तांत परिशिष्टपर्वादि ग्रंथसें जान लेना शय्यंभवस्वामी अठाईस वर्ष गृहस्थावास में रहे, इग्यारह वर्ष सामान्य साधु व्रतमें रहे, और तेवीस वर्ष युग-प्रधानाचार्य पदवीसें रहे, इसीतरें सर्वायु बाशठ वर्ष भोगके श्रीमहावीर भगवंतके अठानवें वर्ष पीछे स्वर्ग गये ॥

५ श्रीशय्यंभवस्वामीके पाट ऊपर यशोभद्र स्वामी बैठे, सो बावीश वर्ष गृहस्थावासमें रहे, और चौदहवर्ष व्रतपर्यायमें रहे, अरु पचास वर्ष तक युगप्रधान पदवी में रहे, इसीतरें सर्वायु छासी वर्ष का भोगके श्रीमहावीरस्वामीसें (१४८) वर्ष पीछे स्वर्गमें गये ॥

६ श्रीयशोभद्रस्वामीके पाट ऊपर, श्री संभूतविजय स्वामी बैठे,

सो चैंतालीस वर्ष तर्क गृहस्थ रहे, और चालीश वर्ष व्रत पर्याय में रहे, तथा आठ वर्ष युगप्रधान पदवीमें रहे, सर्वायु नव्वे वर्ष भोगके स्वर्गमे गये, ॥ श्रीसंभूतविजयस्वामीके पाट ऊपर, श्री भद्रबाहुस्वामी बैठे सो भद्रबाहुस्वामीने, १ आवश्यक निर्युक्ति, २ दशवैकालिक निर्युक्ति, ३ उत्तराध्ययन निर्युक्ति, ४ आचारांगकी निर्युक्ति, ५ सूत्रकृदंग निर्युक्ति, ६ सूर्यप्रज्ञप्ति निर्युक्ति, ७ ऋषिभाषित निर्युक्ति, ८ कल्प निर्युक्ति, ९ व्यवहार निर्युक्ति, १० दशा निर्युक्ति, ये दशनिर्युक्तियो, और १ कल्प, २ व्यवहार, ३ दशाश्रुतस्कंध, यह नवमे पूर्वसें उद्धार करके बनाये, और एक बहुत बडा भद्रबाहु नामें संहिता ज्योतिष शास्त्र बनाया, उपसर्गहर स्तोत्र बनाया, जैनमतीयों ऊपर बहुत उपकार करा। इनही भद्रबाहुस्वामीजीका सगाभाई वराहमेहर हूआ, वो पहिले तो जैनमतका साधु हुवा था, फेर साधुपणा छोडके वराही संहिता बनाई और जो वराहमिहर विक्रमादित्यकी सभा का पंडित था, वो दूसरा वराहमिहर था, संहिता कारक वो नहीं हूआ, इसका सम्पूर्ण वृत्तात परिशिष्टपर्वसें जानलेना, श्रीभद्रबाहुस्वामी गृहस्थावासमें पंतालीश वर्ष रहे, सत्तरे वर्ष व्रतपर्याय, अरु चौंदह वर्ष युगप्रधान, सर्व मिलकर छहत्तर वर्ष का आयु भोगके श्रीमहावीरस्वामीसें एकसोसित्तर (१७०) वर्ष पीछे स्वर्ग गए ॥

भद्रबाहु स्वामीके पाट ऊपर श्रीस्थूलभद्रस्वामी बैठे इनका बहुत वृत्तात है सो परिशिष्टपर्वग्रन्थसें जान लेना, १ श्री

९ दससूरि०

अभयस्वामी, २ श्री सय्यंभवस्वामी, ३ श्री यशोभद्रस्वामी, ४ श्री संभूतविजयजी, ५ श्री भद्रबाहुस्वामी, ६ श्रीस्थूलभद्रस्वामी, यह छहों आचार्य चौदह पूर्वकेवेत्ता थे, श्रीस्थूलभद्रस्वामी तीस वर्ष गृहस्थावासमें रहे, चौवीस वर्ष व्रत पर्याय, अरु पैतालीस वर्ष युगप्रधान पदवी, सर्वायु निन्नानवें वर्षका भोगके श्रीमहावीर-स्वामीके पीछे (२१५) वर्षे स्वर्ग गये, श्रीमहावीरस्वामीसें दोसौ चौदह वर्ष पीछे आपाढाचार्यके शिष्य तीसरे निन्हव हूये ॥

श्रीस्थूलभद्रस्वामी के वखत में नवनंदों का एकसौ पंचावन (१५५) वर्षका राज्य उछेद करकें चाणिक्य ब्राह्मणनें चंद्रगुप्त राजाकों राजसिंहासनऊपर बैठाया, और चंद्रगुप्तके संतानोनें एकसौ आठ वर्षतक राज्य कीया चंद्रगुप्त मोरपालका बेटा था, इसवास्ते चंद्रगुप्तका मौर्यवंश कहते हैं, यह चंद्रगुप्त जैनमत का धारक श्रावकराजा था, यह चंद्रगुप्त, तथा नवनंदका वृत्तांत देखना होवे, तदा परिशिष्ट पर्व, उत्तराध्ययनवृत्ति तथा आवश्यक वृत्तिसें देख लेनां ॥

श्री स्थूलभद्रस्वामीके पीछे ऊपरले चार पूर्व, प्रथम संहनन, प्रथम संस्थान व्यवछेद हो गये, तथा श्रीमहावीरस्वामीसें दोसौ वीस (२२०) वर्ष पीछे अश्वमित्र नामा चौथा क्षणिकवादि निन्हव हूआ, और श्रीस्थूलभद्रजी के समय में बारा वर्षका दुर्भिक्ष (काल) पडा, उस समयमें चंद्रगुप्तका राज था, तथा श्री महावीरस्वामीके पीछे (२२८) वर्ष व्यतीत हूए तब गंग नामा पांचमां निन्हव हुआ ॥

इति श्रीखरतरगच्छे श्रीजिनकीर्त्तिरत्नसूरिशाखायां क्रमात्तत्परंपरायां वरीवृतति श्रीमज्जिनकृपाचन्द्रसूरयस्तेषामंतेवासी ज्येष्ठः समभवत्, विद्वच्छिरोमणिः श्रीमदानंदमुनिः तत् संगृहीते तस्याऽनुजेन उपाध्यायजयसागरेण संस्कारिते श्रीजंगमयुगप्रधानश्रीमज्जिनदत्तसूरीश्वरचरिते श्रीवीरप्रभोर्गणधरश्रुतकेवलि नाम संक्षिप्तचरित्रवर्णनो नाम द्वितीयसर्गः समाप्तः ॥

अथ तृतीयसर्गः ॥

तत्रादौ मंगलाचरणम् ॥

शिवरतो वरतोपवशान्ततो । मवचताऽघवतामति दूरगः । अमदनो मदनोदनकोविदः । शममलं मम लंभयताज्जिनः ॥ १ ॥ अविकलं विकलंकधियां सुखं । विदधतं दधतं जगदीशिता । अकलहं कलहंसगतिं श्रये । जिनवरं नवरंगतरंगितः ॥ २ ॥ वेल्लत्कल्याणवल्ली-विपिनघनमुचः स्वर्गगंगातरंग, च्छायादायादरोचिः-पटलधवलिताखंड-दिङ्मंडलस्य । नम्रामर्त्यालिमौलिप्रसृतपरिमलोद्गारमंदारमालाभ्यर्च्यश्चंद्रप्रभस्य प्रभवतु भवतां भूतये पादपद्मः ॥ ३ ॥ दिनेशवद्ध्यानवरप्रतापैरनंतकालप्रचितं समंतात् । योऽशोषयत्कर्मविपाकपंकं, देवो मुदे वोऽस्तु स वर्द्धमानः ॥ ४ ॥ ऐंद्रश्रीकरपीडनविधिसिद्धं ध्वस्तकर्मशलभभरं । कल्याणसिद्धिकरणं जैनं ज्योतिर्जयतु नित्यं ॥ ५ ॥ श्रीपार्श्वनाथं फलवर्द्धिकाख्यं, गुरुं तथा श्रीजिनदत्तसूरिं । वाग्देवतायाश्चरणौ च नत्वा समाश्रये चारु तृतीयसर्गं ॥ ६ ॥ अत्र श्री आर्यमहागिरि सूरिजीसें श्रीवज्रस्वामीजीपर्य्यंत पट्टानुगतदशपूर्वधरोंका तथा नवपूर्वधर आचार्योंका तथा श्रीनेमिचन्द्रसूरिजी पर्यंत मुख्यतासें पट्टधर आचार्योंका किंचित् स्वरूप शुद्ध धर्माभिलाषी जीवोंकुं लिखके दिखाताहूं २ ॥

तद्यथा—महागिरिं सुहस्तिं च । सुस्थितसुप्रतिबद्धकौ । इन्द्रदिन्न दिन्नसूरीच । वन्दे सिंहगिरीश्वरं ॥ १ ॥ श्री वज्रं वज्रसेनं च । चंद्रं समंत भद्रकं । देवं प्रद्योतनं वन्दे । मानदेवं नमाम्यहम् ॥ २ ॥

मानतुंगं वीरसूरिं । जयदेवदेवानंदकौ । विक्रमं नरसिंहं च समुद्रविजयं तथा ॥ ३ ॥ मानदेवं विबुधप्रभं । जयानन्दं रविप्रभं । यशोभद्रं विमलचन्द्रं । देवचन्द्र नेमिचन्द्रौ च ॥ ४ ॥

॥ ९ ॥ श्रीस्थूलभद्रजीके पाट ऊपर श्रीआर्यमहागिरिजी बैठे, आर्यमहागिरिजीके शिष्य, १ बहुल २ बलिस्सह हुआ, और बलिस्सह सूरिजीका शिष्य श्रीउमास्वातिसूरिजी हुवे जिनोंने तत्वार्थ सूत्रादि शास्त्र रचे हैं और श्रीउमास्वातिसूरिजीका शीष्य श्रीश्यामाचार्यजी श्रीप्रज्ञापनासूत्र (पन्नवणासूत्रके) कर्त्ता हुवे, यह कालिकाचार्य श्रीमहावीरस्वामीसें तीनसो छिहत्तर वर्ष पीछे स्वर्ग गया, और आर्य महागिरिजी तीस वर्ष गृहवासमें रहे, चालीस वर्ष व्रतपर्याय, और तीसवर्ष युगप्रधानपदवी, सर्वायु सो वर्षका पालके स्वर्ग गया २ ॥

॥ १० ॥ श्री आर्यमहागिरिजीके पाट ऊपर श्रीआर्यसुहस्तिसूरि बैठे जिनोंने एक भिखारीकों दीक्षादीनी, वो कालकरके चंद्रगुप्तराजाका पुत्र बिंदुसारराजा और बिंदुसारका पुत्र अशोकश्री राजा और अशोकश्रीका पुत्र कुणाल, तिस कुणालका पुत्र संप्रति राजा हुआ, तिस संप्रतिराजाने जैनधर्मकी बहुत वृद्धि करी, क्योंकि कल्पसूत्रके प्रथम उद्देसेमें श्री महावीरस्वामिके समयमें अबकी निसपत बहुत थोडे देशोमें जैनधर्म लिखा है, मारवाड, गुजरात, दक्षिण, पंजाब, वगैरे देशोमें जो जैनधर्म है, सो संप्रति राजाहीसें फैला है, यद्यपि इस कालमें जैनी राजाके न होनेसे जैनधर्म सर्व जगें नहि, परतु संप्र-

तिराजाके समयमें वहुत उन्नतिपर था, क्योंकि संप्रतिराजाका राज्य मध्यखंड और गंगापार और सिंधुपारके सर्व देशोंमे था, संप्रतिराजानें अपने नौकरोंको जैनके साधुओंका वेप वनाकर अपने सेवक राजाओंका जो शक, यवन, फारसादि, देशोंथे, तिन देशोंमें भेजे, तिनोंने तिन राजाओंकों जैनके साधुओंका आहार-विहार आचारादि सर्व वताया और समझाया पीछेसें साधुओंका विहार तिन देशोंमें कराकर लोकोंको जैन धर्मी करा, और संप्रतिराजानें (९९०००) निनानवें हजार जीर्णयाने जीरण जिनमंदिरोंका उद्धार कराया, अर्थात् पुराना टूटा फूटांकों नवा वनाया, और छत्तीस हजार (३६०००) नवीन जिनमंदिर वनवाये, और सोने, चांदी, पीतल, पापाण, प्रमुखकी सवाक्रोड प्रतिमा वनवाई, तिसके वनवाये मंदिर नाडोल गिरनार शत्रुंजय रतलाम प्रमुख अनेक स्थानोंमें खडे हमनें अपनी आंखोसें देखे हैं। और संप्रतिराजाकी वनवाई जिन प्रतिमा तो हमनें सेंकडो देखी हैं, इस संप्रतिराजाका परिशिष्ट पर्वादि ग्रंथोंसें समग्र अधिकार जाण लेना २

श्रीआर्यसुहस्ती सूरि आचार्यने उज्जयनकी रहनेवाली भद्रासेठानीका पुत्र अवंतीसुकुमालकों दीक्षा दीनी, और जहां उस अवंती सुकुमालनें काल करा था, तिस जगे तिस अवंतीसुकुमालके महाकाल नाम पुत्रनें जिनमंदिर वनवाया, और तिस मंदिरमें अपने पिताके नामसें अवंतीपार्श्वनाथकी मूर्त्ति स्थापनकरी, कालांतरमें ब्राह्मणोनें अपना जोर पाकर तिस मंदिरमें मूर्त्तिकों नीचे दाबकर ऊपर महादेवका लिंग स्थापन करके महाकाल (महादेवका) मंदिर

प्रसिद्धकर दीया, पीछे जब राजा विक्रम उज्जयनमें हुआ, तिस अवसरमें कुमुदचंद्र, अर्थात् सिद्धसेनदिवाकर नामा जैनाचार्यनें कल्याणमंदिर स्तोत्र बनाया, तब शिवका लिंग फटकर बीचमेंसे पूर्वोक्त श्रीपार्श्वनाथकी मूर्त्ति फिर प्रगट हुइ ॥

इनका संबंध ऐसा है कि, विद्याधर गच्छमे, जब स्कंदिलाचार्यका शिष्य वृद्धवादि आचार्य थे, तिस अवसरमे, उज्जयनका राजा विक्रमादित्य था, तिसका मंत्री कात्यायन गोत्री देवऋपिनामा ब्राह्मण, तिसकी दैवसिका नाम स्त्री, तिनका पुत्र मुकुंद सो, विद्याके अभिमानसें सारे जगतके लोकोंको तृणवत् (घासफुससमान) समजताथा, और ऐसा जानता था कि मेरे समान बुद्धिमान् कोइभी नहीं, और जो मुझको वादमें जीतलेवे, वो मैं उसकाही शिष्य बनजाऊं, पीछें तिसने वृद्धवादीकी बहुत कीर्त्ति सुनी उनके सन्मुख जाने वास्ते सुखासन ऊपर बैठकें भृगुकच्छ (भरुच) कीतरफ चला जाता था, तिस अवसरमें वृद्धवादीभी रस्तेमे सन्मुख आता हुआ मिला, तब आपसमे दोनोंका आलाप संलाप हूआ पीछे मुकुंदजीने कहा कि, मेरे साथ तुम वाद करो, तब वृद्धवादीने कहा कि वादतो करु, परंतु इस जंगलमें जीते हारेका कहनेवाला कोइ साक्षी नहीं, तब मुकुंदजीने कहा कि, यह जो गौ चरानेवाले गोप हैं, येही मेरे तुमारे साक्षी रहे, ये जिसको कहदेंगे हारा सो हारा, तब वृद्धवादीनें कहा बहुत अच्छा येही साक्षी रहे, अब तुम बोलो, तब मुकुंदजीने बहुत संस्कृत भाषा बोली और चुप करी, तब गोपोने कहा यह तो

कुछभी नहीं जानता केवल उंचा बोलके हमारे कानोंकों पीड़ा देता है, तब गोप कहने लगे, हे वृद्ध तुम बोल? पीछे वृद्धवादी अवसर देखकें कच्छा बांधकर तिन गोपोंकी भाषामें कहनें लगे, और थोडे थोडे कूदनेंभी लगे, जो छंद उच्चारा सो कहते हैं "नविमारिये नविचोरियें, परदारागमण निवारियें ॥ थोडाथोडादाइयें, सग्गि मटामटजाइयें ॥१॥ फेरभी बोले, और नाचनें लगे॥ छंद॥ कालो कंबल नीचोवट्ट, छाछैं भरिओ दीवड थट्ट ॥ एवड पडीओ नीले झाड, अवरकिसोछे सग्ग निलाड ॥ २ ॥ यह सुनकर गोप बहुत खुशी हुये और कहनें लगे कि वृद्धवादी सर्वज्ञ है इसनें कैसा मीठा कानोंकों सुखदायी हमारे योग्य उपदेश कहा और मुकुंद तो कुछ नहीं जानता, तब मुकुंदजीने वृद्धवादीकों कहा कि हे भगवन्! तुम मुझकों दीक्षा देकें अपना शिष्य बनावो, क्योंकि मेरी प्रतिज्ञाथी, के जो गोप मुझे हारा कहेंगे, तो में हारा और तुमारा शिष्य बनूंगा, यह सुनकर वृद्धवादीनें कहा, कि भृगुपुरमें राजसभाके बीच तेरा मेरा वाद होवेगा, परंतु यह गोपोंकी सभामें वादही क्या है, तब मुकुंदने कहा, मैं अवसर नहीं जानता आप अवसरके ज्ञाता हो इसवास्ते मैं हारा पीछें वृद्धवादीने राजसभामें उसको पराजय करा, तब मुकुंदनें दीक्षा लीनी, गुरूनें उनका नाम कुमुदचंद्रजी दीया, पीछे जब आचार्य पदवी दीनी, तब फिर सिद्धसेन दिवाकर नाम रक्खा, पीछे वृद्धवादी तो और कहींकों विहार कर गये, और सिद्धसेन दिवाकरकों सर्वज्ञ पुत्र ऐसा विरुद दीया ऐसा विरुद बोलते हुए अवंती नगरीके

चौकमें लाये, तिस अवसरमें राजा विक्रमादित्य हाथी ऊपर चढा सन्मुख मिला तब राजानें सर्वज्ञ पुत्र ऐसा विरुद सुनके तिनकी परीक्षा वास्ते, हाथी उपर बैठेहीनें मनसें नमस्कार करा तब आचार्यनें धर्मलाभ कहा, राजानें पूछा कि विनाही वंदना करे, आप मेरेकों धर्मलाभ क्यों कर कहा, क्या यह धर्मलाभ बहुत सस्ता है, तब आचार्यनें कहा यह धर्मलाभ क्रोडचिंतामणिरत्नोंसेंभी अधिक है जो कोई हमकों वंदना करता है उसकों हम धर्मलाभ कहते हैं और ऐसेंभी नहीं जो तुमने हमकों वंदना नहीं करी तुमनेभी अपनें मनसें वंदना करी, तो मनही सर्व कार्यमें प्रधान है, इस वास्ते हमनें धर्म लाभ कहा है, और तुमनें मेरी परीक्षा वास्तेही मनमें नमस्कार करा है, तब विक्रमराजा तुष्टमान होकर, हाथीसें नीचें उतरकर सर्वसंघकी समक्ष वंदना करी, और एक क्रोड अशर्फी दीनी, परंतु आचार्यनें अशर्फीयों नही लीनी, क्योंकि वे त्यागी थे, और राजाभी पीछा नहीं लेता, तब आचार्यकी आज्ञासें संघपुरुषोनें जीर्णोद्धारमे लगादीनी, राजाके दफतरमें तो ऐसा लिखा है ॥ श्लोक ॥ धर्मलाभ इति प्रोक्ते, दूरादुच्छ्रितपाणये ॥ सूरये सिद्धसेनाय, ददौ कोटिं धराधिपः ॥ १ ॥ श्री विक्रमराजाके आगें सिद्धसेन दिवाकरनें ऐसेंभी कहा था कि ॥ गाथा ॥ पुण्णे वाससहस्से । सयंमि वरिमाण नवनवइगए ॥ होई कुमारनरिंदो, तुहविक्कमराय सारित्थो ॥ १ ॥ अन्यदा सिद्धसेन चित्रकूटमे गये, तहा बहुत पुराने जिनमंदिरमे एक बडा मोटा स्थंभ देखा, तब किसीकों पूछा कि यह स्थंभ किसतराका है,

यह सुनकर किसीनें कहा कि यह स्थंभ औषध द्रव्यमय जलादि करकें अभेद्य वज्रवत् है, इस स्थंभमें पूर्वाचार्योंनें बहुत रहस्य विद्याके पुस्तक स्थापन करे है, परंतु किसीसें यह स्थंभ खुलता नहीं यह सुनकर सिद्धसेन आचार्यनें तिस स्थंभकों सूंघा तिसकी गंधसें तिसकी प्रतिपक्षी औषधीयोंका रस, लगाया तिस्सें वो स्थंभ कमलकी तरें खुल गया तब तिसमें पुस्तक देखा, तिसमें सुं एक पुस्तक लेकर वांचा, तिसके प्रथम पत्रमें दो विद्या लिखी पाई, एक सरसों विद्या, और दूसरी सुवर्णविद्या, तिसमें सरसों विद्या उसकों कहते है कि, जो काम पडे तब मंत्रवादी जितने सरसोंके दाने जपके जलाशयमें गेरे, उतनेही अश्वार बैतालीश प्रकार के आयुधों सहित बाहिर निकलके मैदानमें खडे हो जाते हैं तिनोंसें शत्रुकी सेना भंग हो जाती है, पीछे जब वो कार्य पूरा हो जाता है तब अश्वार अदृश्य हो जाते हैं और दूसरी हेमविद्यासें विनामेहनतके जितना चाहे, उतना सुवर्ण हो जाता है तब ये, दो विद्या सिद्धसेननें लेलीनी, पीछे जब आगे वांचने लगा, तब स्थंब मिल गया सर्व पुस्तक बीचमें रह गये, और आकाशमें देववाणी हुई, कि तूं इन पुस्तकोंके वाचने योग्य नहीं आगे मत वांचना, वांचेगा तो तत्काल मर जायगा, तब सिद्धसेनने डरकें विचार करा कि दो विद्या मिली दोही सही, पीछे चित्रोडसें विहार करके पूर्वदेशमें कुमारपुरमें गये, तहां देवपाल राजा था तिसकों प्रतिबोधके पक्का जैन धर्मी करा, तहां वो राजा सिद्धांत श्रवण करता है, जब ऐसें कितनाक काल व्यतीत हुआ, तब एकदा समय राजा छाना

आया, और आंसुसें नेत्र भरकर कहने लगा कि—हे भगवन् हम बडे पापी हैं क्यों कि आपकी ऐसी उत्तम गोटिका रस नहीं पीसक्ते हैं कारण कि हम बडे संकटमें पडे है, तब आचार्यने कहा तुमको क्या संकट हुआ, राजा कहने लगा कि बहुत मेरे वैरी राजे एकठे होकर मेरा राज्य छीना चाहते हैं तब फेर आचार्यने कहा, कि हे राजन् तू आकुल व्याकुल मत हो, जब मैं तेरा साहायकहों तो फेर तुझे क्या चिंता है यह बात सुनकर राजा बहुत राजी हुआ, पीछे आचार्यनें राजाकों पूर्वोक्त दोनों विद्यायोंसें समर्थ कर दीया, तिन विद्यायोंसें परदल भंग हो गया तिनका डेरा डंडा सर्व राजानें लूट लीया, तब राजा आचार्यका अत्यंत भक्त हो गया, उस्से आचार्य सुखोंमें पडके शिथिलाचारी होगया, यह स्वरूप वृद्धवादीजीनें सुना, पीछे दया करके तिनका उद्धार करने वास्ते तहा आये दरवाजे आगे खडे होकर कहला भेजा कि एक वूढा वादी आया है, तब सिद्धसेननें बुलाकर अपनें आगे बैठाया वृद्धवादीसर्व अपना शरीर वस्त्रसें ढाककर बोलेः—"अण फुल्लियफुल्ल मतोडहिं मारोवामोडिहि मणकुसुमेहि ॥ अच्चिनिरजणं जिण, हिडहिकाइनणेणवणु ॥ १ ॥" इस गाथाको सुनकर सिद्धसेननें विचारभी करा परतु अर्थ न पाया तब विचार करा कि क्या यह मेरे गुरु वृद्धवादी हैं जिनके कहेका मैं अर्थ नही जानता हूं पीछे जब वार वार देखने लगा तब जाना कि यह मेरा गुरु है पीछे नमस्कार करके क्षमापन मांगा, और पूर्वोक्त श्लोकका अर्थ पूछा तब वृद्धवादी कहनें लगे "अणफुल्लियेत्यादि"

अणफुल्लियफुल्ल प्राकृतके अनंत होनेसें अप्राप्त फूल फलोंकों मत तोड, भावार्थ यह है कि योग जो है, सो कल्पवृक्ष है, किसतरे कि जिस योग रूप वृक्षमें तप नियम तो मूल है, और ध्यान रूप बडा स्कंध है, तथा समतापणां कविपणां वक्तापणां, यश, प्रताप, मारण, उच्चाटन, स्तंभन, वशीकरणादि सिद्धियां कि जो सामर्थ्य सो फूल है, अरु केवलज्ञान फल है, इससें अभी तो योगकल्प-वृक्षके फूलही लगे हैं सो केवल ज्ञानरूप फल करकें आगे फलेंगे, इसवास्ते तिन अप्राप्त फल पुष्पोंकों क्यों तोडता है अर्थात् मत तोड ऐसा भावार्थ है, तथा "मारोवा मोडिहिं" जहां पांच महा-व्रत आरोपा है तिनकों मत मरोड "मणुकुसुमेत्यादि" मनरूप फूले करी निरंजनं जिनं पूजय (निरंजन जिनकों पूज) "वनात् वनंकिंहिंडसें" राजसेवादि बुरे नीरस फल क्यों करता है इति पद्यार्थ, तब सिद्धसेन सूरिनें गुरु शिक्षाकों अपने शिर ऊपर धरके और राजाकों पूछके वृद्धवादी गुरुके साथ विहार करा, और नि-विड चारित्र धारण करा, अनेक आचार्योंसें पूर्वोंका ज्ञान सीखा, एकदा सिद्धसेनजीनें सर्वसंघकों एकठो करकें कहा कि तुम कहोतो सर्वागमोंकों में संस्कृत भाषामें कर देउं, तब श्रीसंघने कहा क्या तीर्थंकर गणधर संस्कृत नही जानते थे, जो तिनहोनें अर्द्धमागधी भाषामें आगम करे ऐसी वात कहनेसें तुमको पारांचिक नाम प्रायश्चित्त लागा हम तुमसें क्या कहें तुम आपही जानते हो, तब सिद्धसेननें गुरुका वचन प्रमाण करकें कहा कि, मैं मौन करकें बाराबर्षका पारांचिक नाम प्रायश्चित्त लेकें गुप्त मुख वस्त्रिका, रजो-

हरणादि लिंग करकें और अवधूत रूप धारके फिरुंगा, ऐसें कह कर गच्छकों छोडके नगरादिकोंमें पर्यटन् करने लगे, बारा वर्षके पर्यंतमें उज्जयन नगरीमें महाकालके मंदिरमें शेफालिकाके फूलों करकें वस्त्ररंगे पहने हुए सिद्धसेनजी जाके बैठा, तब पूजारी प्रमुख लोकोंने कहा तुम महादेवकों नमस्कार क्यों नही करता सिद्धसेन तो बोलतेही नहीं है ऐसें लोकोंकी परंपरासें सुनकर विक्रमादीत्यनेभी तहां आकर कहा "क्षीरलिलिक्षो भिक्षो किमिति त्वया देवो न वंद्यते" तब सिद्धसेननें कहा मेरे नमस्कारसे तुमारे देवका लिंग फट जायगा फेर तुमकों महादुःख होवेगा, मैं इस वास्ते नमस्कार नही करता हुं तब राजानें कहा लिंग तो फट जानेदो परंतु तुम नमस्कार करो पीछे सिद्धसेनजी पद्मासन बैठके कहने लगा, तथाहि ॥ श्लोक इंद्रवज्रा वृत्त ॥ स्वयंभुवं भूतसहस्रनेत्र, मनेकमेकाक्षरभावलिंगं ॥ अव्यक्तमव्याहतविश्वलोक, मनादिमध्यातमपुण्यपापं ॥ १ ॥ इत्यादि प्रथमही श्लोक पढनेसें लिंगमेसें धूंआ निकला. तबलोक कहनें लगे शिवजीका तीसरा नेत्र खुला है, अब इस भिक्षुकों अग्निनेत्रसें भस्मकरेगा, तब तो विजलीके तेजकी तरे तडतडाट करता प्रथम अग्नि निकला, पीछे श्रीपार्श्वनाथजीका बिंब प्रगट हूआ, तब वादी सिद्धसेननें कल्याणमंदिर नवीन स्तवन करके क्षमापन मागा तब राजा विक्रमादित्य कहने लगा कि हे भगवन् यह क्या अदृश्यपूर्व देखनेमें आया यह कौनसा नवीन देव है और यह प्रगट क्यों कर हुआ, तब सिद्धसेनजीनें कहा, अवंतीसुकुमालका पुत्र महाकालने पिताके नामसें

अवंती पार्श्वनाथका मंदिर और मूर्त्ति बनाय स्थापन करी थी, तिसकी कितनेक वर्ष लोकोनें पूजा करी, अवसर पाकर ब्राह्मणोंने जिनप्रतिमाकों जमीनमें दाटके ऊपर यह शिवलिंग स्थापनकरा इत्यादि सर्व वृत्तांत कहा, और हे राजन् इस मेरी स्तुतिसें शासन देवताने शिवलिंग फाडके बीचमेंसें यह प्रतिमा प्रगट कर दीनी, अब तूं सत्यासत्यका निर्णय कर ले, तब विक्रमादित्यनें एकसौ गाम मंदिरके खरच वास्ते दीये और देवके समक्ष गुरुमुखसें बाराव्रत ग्रहण करे, और सिद्धसेनकी वहुत महिमा करी अपने स्थानमें गया और चांदीद्र (सिद्धसेनदिवाकरकों) गुरुने जिनधर्मकी प्रभावनासें तुष्टमान होकर संघमें लीया, अरु पूर्ववत् आचार्य बनाया ॥

एकदा प्रस्तावे सिद्धसेन दिवाकर विहार करते हुये मालवेके देशमें जो ओंकारनामें नगर है, तहां गये तिस नगरके भक्त श्रावकोनें आचार्यकों विनती करी, जैसें हे भगवन् इसी नगरके समीप एक गाम था, तिसमें सुंदर नामा राजपुत्र ग्रामणी था, तिसकी दो स्त्रीयां थी, एक स्त्रीके प्रथम पुत्री जन्मी वो स्त्री मनमें खीजी तिस अवसरमें उसकी सौकभी प्रसूत होनेवाली थी, तब तिस बेटीवालीनें विचारा कि इसके पुत्र न होवे तो ठीक है, क्यों कि नही तों यह पतिकों वल्लभ हो जावेगी, तब दाईसें मिलके उस्सें पैदा हुआ पुत्रकों बाहिर गिरा दीया, और तत्कालका मरा हुआ लडका उसके आगें रख दीया, पीछे जो लडका बाहिर गेरा गया था, उसकों कुलदेवीनें गौकारूप करकें पाला जब आठ

वर्षका हुआ तब इस ओंकार नगरके शिवभवनके अधिकारी भर-टनें देखा और अपना चेला बना लीया, एकदा प्रस्तावे कान्यकुब्ज देशका आंखोंसे आंधा राजाने दिग् विजय कार्यसे तहां पडाव करा तब रात्रिमें उस छोटे चेलेको शिवभक्त व्यंतर देवतानें कहा कि शेषभोग राजाकों देना उसकी आंख अच्छी हो जावेगी तैसेंही करा तिस्सें राजाकी आंख अच्छी होगई तब राजाने मो गाम मंदिरके खरच वास्ते दीये और यह बडा ऊंचा जो शिव का मंदिर है सोभी उसीनें बनवाया, और हम इस नगरमें रहते हें परंतु मिथ्या दृष्टियोंके बलवान् होनेंसें हम जिनमंदिर बनाने नही पाते हें इस वास्ते आपसें वीनती करते है, कि इस मंदिरसें अधिक हमारा मंदिर यहां बने तो ठीक है, और आप सर्वतरेंसें समर्थ हो तिनका वचन सुनकर वादींद्रनें अवंतीमे आकर चार श्लोक हाथमें लेकर विक्रमादित्यके द्वार पास आये, दरवाजे दारके मुखसें राजाकों कहाया "दिदृक्षुर्भिक्षुरायात । स्तिष्ठति द्वारवारितः । हस्तन्यस्तचतुःश्लोकः । उतागच्छतु गच्छतु ॥ १ ॥" तिस श्लोकको सुनकर विक्रमादित्यनें बदलेका श्लोक लिखकर भेजा "दत्तानिदशलक्षाणि, शासनानिचतुर्दश ॥ हस्तन्यस्तचतुःश्लोकः ॥ उतागच्छतु गच्छतु ॥ २ ॥" तिस श्लोकको सुनकर आचार्यनें कहा भेजा कि, भिक्षु तुमकों मिला चाहता है, परतु धन नही लेता, तब राजाने सन्मुख बुलवाये और पिछानके कहने लगा, कि गुरुजी बहुत दिनों सें दर्शन दीया, तब आचार्य कहनें लगे धर्मकार्यके कारणेसें बहुत दिन हुये चिरसें आना हुआ,

अब चार श्लोक तुम सुनो ॥ "अपूर्वेयं धनुर्विद्या, भवता शिक्षिता कुतः ॥ मार्गणौघः समभ्येति, गुणो याति दिगंतरं ॥ १ ॥ सरस्वती स्थिता वक्के, लक्ष्मीः करसरोरुहे ॥ कीर्तिः किं कुपिता राजन् येन देशांतरं गता ॥ २ ॥ कीर्तिस्ते जातजाड्येव, चतुरंभोधिमज्जनात् । आतपाय धरानाथ, गता मार्तंडमंडलं ॥ ३ ॥ सर्वदा सर्वदोसीति, मिथ्या संस्तूयसे जनैः ॥ नारयो लेभिरे पृष्ठं न वक्षः परयोषितः ॥ ४ ॥" तब यह चारों श्लोक सुनके राजा बहुत खुश हुआ, और आचार्यकों कहने लगा, जो मेरा राज्यमें सार है, सो मांगो तो देदेउं, तब आचार्यनें कहा मुझेको कुछभी नहीं चाहना, परंतु ओंकार नगरमें चतुर्द्वार जैनमंदिर शिवमंदिरसें उंचा बनाओ, और प्रतिष्ठाभी कराओ, तब राजानें वैसेंही करा तब जिनमत प्रभावना देखकें संघ तुष्टमान हुआ, इत्यादि प्रकारसें जैनधर्मकी प्रभावना करते हुए दक्षिणदेशमें प्रतिष्ठानपुरमें जाकर अनशन करके देवलोक गये, तब तहांसें संघने एक भट्टकों सिद्धसेनकी गच्छपास खबर करनेंकों भेजा तिस भट्टनें सूरियोंकी सभामें आधाश्लोक पढा और वार वार पढताही रहा, वो आधाश्लोक यह हैः—स्फुरंति वादिखद्योताः सांप्रतं दक्षिणापथे ॥ जब वार वार यह अर्द्ध श्लोक सुना तब सिद्धसेनकी बहिन साधवीनें सिद्ध सारस्वत मंत्रसें अर्द्ध श्लोक पूरा करा । नूनमस्तंगतो वादी सिद्धसेनो दिवाकरः ॥ १ ॥ पीछे भट्टनें सर्व वृत्तांत सुनाया, तब संघकों बडा शोक हुआ ॥ इति सिद्धसेन दिवाकरका प्रसंगसें संबंध कथन करा ॥

यह श्रीआर्य सुहस्ति आचार्य तीस वर्ष गृहस्थावासमें रहे, और

चौवीसवर्ष व्रत पर्याय तथा छैयालीस वर्ष युगप्रधान पदवी सर्व मिलकर एकसौ वर्षकी आयु भोगकें श्रीमहावीरस्वामीसें दोसौ एकानवे (२९१) वर्ष पीछे स्वर्ग गये, ॥ ११ ॥

॥ १२ ॥ श्रीआर्य सुहस्तिसूरिके पाटऊपर, श्रीसुस्थित सूरि हुवा तिनोनें क्रोडोंवार सूरिमंत्रका जापकरा, इसवास्ते गच्छका कोटिक, ऐसा दूसरा नाम श्रीसघनें रक्खा, क्योकि श्री सुधर्मास्वामीसे लेकर दशपाटतक तो अणगार निग्रंथगच्छ नाम था-पीछे दूसरा कोटिक गच्छनाम हुवा ॥

॥१३॥ श्री सुस्थितसूरिके पाट ऊपर श्री इंद्रदिन्नसूरि हुआ, इस अवसरमे श्री महावीरस्वामीसें चारसौ त्रेपन (४५३) वर्ष पीछे गर्द-भिल्लरा जाके उच्छेद करणेवाला, दूसरा कालिकाचार्य हुआ, इस-की कथा कल्प सूत्रमें प्रसिद्ध है, और श्रीमहावीरस्वामीसें (४५३) वर्ष पीछे भृगुकच्छ (भडोंचमें) श्रीआर्य खपुटाचार्य विद्याचक्र-वर्त्ती हुआ, इनका प्रबंध श्रीप्रबंधचिंतामणिग्रंथ, तथा हारिभद्री आ-वश्यककी टीकासें जान लेना, और (४६०) वर्ष पीछे आर्यमंगु, वृद्धवादी, पादलिप्त तथा कल्याण मंदिरका कर्त्ता ऊपर जिसका प्रबंध लिख जावे सो सिद्धसेन दिवाकर हुआ, जिनोंने विक्रमादि-त्यकों जैनधर्मी करा सो विक्रमादित्य श्री महावीरस्वामीसे (४७०) वर्ष पीछे हुआ, सो (४७०) वर्ष ऐसें हुए है—जिम रात्रिमें श्रीमहावीरस्वामीजी निर्वाण हुए, उस दिन अवंति नगरीमे पालक नामा राजाकों राज्याभिषेक हुआ, यह पालक चंद्रप्रद्योतनका पोता था

तिसका राज्य (६०) वर्ष रहा, तिसके पीछे श्रेणिकका वेटा कोणिक और कोणिकका वेटा उदायी जव विना पुत्रके मरा, तव तिसकी गद्दी उपर नंद नामा नाइ वैठा, तिसकी गद्दीमें सर्व नंदनामा नव राजा हुए, तिनका राज्य (१५५) वर्ष तक रहा, नवमें नंदकी गद्दी ऊपर मौर्यवंशी चंद्रगुप्त राजा हुआ, तिसका बेटा विंदुसार, तिसका वेटा अशोक, तिसका वेटा कुणाल तिसका वेटा संप्रति महाराजादि हुए, इन मौर्यवंशीयोंका सर्व राज (१०८) वर्ष तक रहा, यह पूर्वोक्त सर्व राजा प्रायें जैनमतवाले थे, तिनके पीछे तीस वर्ष तक पुष्पमित्र राजाका राज्य रहा, तिस पीछे वलमित्र भानुमित्र, यह दोनों राजाका राज्य (६०) वर्ष तक रहा, तिस पीछे नभवाहन राजाका राज्य (४०) वर्ष-तक रहा, तिस पीछे तेरा वर्ष गर्दभिल्लका राज्य रहा, और चार वर्ष साखीराजावोंका राज्य रहा, पीछे विक्रमादित्यनें साखीराजावोंकों जीतके अपना राज्य जमाया, यह सर्व (४७०) वर्ष हुए ॥

॥ १४ ॥ श्री इंद्रदिन्न सूरिके पाट ऊपर श्रीदिन्नसूरि हुये ॥

॥ १५ ॥ श्रीदिन्न सूरिके पाट ऊपर, श्री सिंहगिरी सूरि हुये ॥

॥ १६ ॥ श्रीसिंहगिरिजीके पाट ऊपर श्री वज्रस्वामी हूये, जिनकों वाल्यावस्थासें जातिस्मरणज्ञान था, और आकाशगामनी विद्याभी थी, जिनोंने दूसरे वारा वर्षी कालमें संघकी रक्षा करी, तथा जिनोनें दक्षिणपंथमें वौद्धोंके राज्यमें श्रीजिनेंद्रपूजा वास्ते फूल लाके दीये, वौद्धराजाकों जैनमती करा, यह आचार्य

पिछला दशपूर्वका पाठक हुआ, जिनोसें हमारी वज्र शाखा उत्पन्न हुई, इनका प्रबंध आवश्यक वृत्तिसें जान लेना, सो वज्र-स्वामी श्रीमहावीरस्वामीसें पीछे चार सौ छनवे और विक्रमादित्यके संवत छवीसमें जन्मे, और आठ वर्ष घरमें रहे, चौमालीस वर्ष सामान्य साधुव्रतमें रहे, और छत्तीस वर्ष युगप्रधान पदवी में रहे, सर्वायु अट्ठाशी वर्षकी भोगी, तथा इन आचार्यके समयमें जावड शाह सेठनें श्री शत्रुंजय तीर्थका विक्रम संवत् (१०८) में तेरहमा वडा उद्धार करा, तिसकी श्रीवज्रस्वामीनें प्रतिष्ठा करी, यह श्रीवज्रस्वामी श्रीमहावीरस्वामीसें (५८४) वर्ष पीछे स्वर्ग गये, इन श्री वज्रस्वामीके समयमे दशमा पूर्व, और चौथा संहनन, और संस्थान, विच्छेद होगये, यहा श्री सुहस्ती सूरि सें लेके श्रीवज्रस्वामी तक अपर पट्टावलियोंमें १ श्रीगुणसुंदरसूरि, २ श्रीकालिकाचार्य, ३ श्रीस्कंधलाचार्य, ४ श्रीरेवतीमित्र,सूरि, ५ श्रीधर्मसूरि, ६ श्रीभद्रगुप्ताचार्य, ७ श्रीगुप्ताचार्य, यह सात क्रमसें युगप्रधान आचार्य हुये, तथा श्रीमहावीरस्वामीसें पांचसौ तेतीस (५३३) वर्ष पीछे श्रीआर्यरक्षितसूरिनें सर्व शास्त्रोंके अनुयोग पृथग् कर दीये ये प्रबध आवश्यक वृत्तीसें जान लेना, तथा श्रीम-हावीरस्वामीसें (५४८) मे वर्षे त्रैराशिकके जीतनेवाले श्रीगुप्तसूरि हुये, तिनका प्रबंध उत्तराध्ययनकी वृत्ति, तथा श्रीविशेषावश्यकसें जान लेना, जिसने त्रैराशिक मत निकाला तिसका नाम रोहगुप्त था, वो श्रीगुप्तसूरिका चेला था, जिसका उलूक गोत्र था जब रोह-गुप्त गुरुके आगे हारा, और मत कदाग्रह न छोडा तब अंतरंजिका

नगरीके बलश्रीराजानें अपने राज्यसें बाहिर निकाल दीया, तब तिस रोहगुप्तनें कणाद नामा शिष्य करा, उस्कों १ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य, ५ विशेष, ६ समवाय, इन षट् पदार्थोंका स्वरूप बतलाया, तब तिस कणादनें वैशेषिक सूत्र बनाये तहांसें वैशेषिक मत चला ॥

१७ श्रीवज्र स्वामीके पाट ऊपर श्रीवज्रसेन सूरि बैठे, वे दुर्भिक्षमें श्रीवज्रस्वामीके वचनसें सोपारक पत्तनमें गये, तहां जिनदत्तके घरमें ईश्वरी नामा तिसकी भार्यानें लाख रूपकके खरचनेसें एक हांडी अन्नकी रांधी, जिसमें विष (जहर) डालने लगी, क्योंकि उनोंनें विचारा था कि अन्न तो मिलता नहीं तिसवास्ते जहर खाके सर्व घरके आदमी मरजायेंगे तिस अवसरमें श्रीवज्रसेनसूरि तहां आये, वो उनकों कहनें लगे कि तुम जहर मत खाओ कलकों सुगाल हो जावेगा तैसेंही हुआ तब तिन शेठके चार पुत्रोनें दीक्षा लीनी तिनके नाम लिखते हैंः–१ नागेंद्र, २ चंद्र, ३ निर्वृति, ४ विद्याधर, तिन चारोंसें स्वस्व नामके चार कुल बने यह वज्रसेनसूरि नववर्ष तक गृहस्थावासमें रहे और (११६) वर्ष समान साधुव्रतमें रहे, तथा तीन वर्ष युग प्रधान पदवीमें रहे सर्वायु (१२८) वर्षकी भोगके श्री महावीरस्वामीसें (६२०) वर्ष पीछे स्वर्ग गये, तथा श्री वज्रस्वामी और वज्रसेन सूरिके बीचमें, आर्य रक्षित सूरि तथा श्रीदुर्बलिकापुष्पसूरि, यह दोनों युग प्रधान हुये, श्रीमहावीरस्वामीसें (५८४) वर्ष पीछे गोष्टा माहिल सा-

तमां निन्हव हुवा, तथा श्रीमहावीरस्वामीसें (६०९) वर्ष पीछे श्रीकृष्णसूरिका शिष्य शिवभूति नामें था, तिसनें दिगंबर मत प्रवृत्त करा, सो अधिकार विशेषावश्यकादिकोंसें जान लेना ॥

१८ श्रीवज्रसेन सूरिके पाट ऊपर श्रीचंद्रसूरि बैठा, तिनके नामसे गच्छका तीसरा नाम चंद्रगच्छ हुआ ॥

१९ श्रीचंद्रसूरिके पाट ऊपर श्री सामंतभद्रसूरि हुये, सो पूर्वगत श्रुतके जानकार थे ॥

२० श्रीसामंतभद्रसूरिके पाट ऊपर, श्रीदेव सूरि हुये, तथा श्रीमहावीरस्वामीसे (५९६) वर्ष पीछे कोरट नगरमे तथा सत्यपुरमे नाहडमंत्रीनें मंदिर बनवाया, प्रतिमाकी प्रतिष्ठा जज्जक सूरिने करी, प्रतिमा श्रीमहावीरस्वामीकी स्थापन करी जिसकों "जयउ वीरसच्चउरिमंडण कहते हैं ॥

२१ श्रीवृद्धदेवसूरिके पाट ऊपर श्रीप्रद्योतनसूरि हुये ॥

२२ श्री प्रद्योतन सूरिके पाट ऊपर, श्रीमानदेवसूरि हुये, इनके सूरिपद स्थापनावसरमे दोनों स्कंधोंपर सरस्वती और लक्ष्मी साक्षात् देख कें यह चारित्रसें भ्रष्ट हो जावेगा ऐसा विचार करके खिन्न चित्त गुरुकों जानके गुरुके आगे ऐसा नियम करा कि-भक्तिवाले घरकी भिक्षा और दूध, दही, घृत, मीठा, तेल, अरु सर्व पकान्नका त्याग कीया, तब तिनके तपके प्रभावसें नाडोलपुर (जो पालीके पास है) तिसमे १ पद्मा, २ जया, ३ विजया, ४ अपराजिता, ए चार नामकी चार देवी सेवा करती देखी,

कोइ मूर्ख कहने लगा कि ए आचार्य स्त्रीयोंका संग क्यों करता है तब तिन देवीयोंनें तिसकों सिक्षा दीनी, तथा तिसके समयमें तिक्षिला नगरीमें बहुत श्रावक थे तिनमें मरीका उपद्रव हुआ तिसकी शांतिकेवास्ते श्री मानदेव सूरिनें नाडोल नगरीसें शांति-स्तोत्र बनाकर भेजा ॥

२३ श्री मानदेवसूरिके पाट ऊपर श्री मानतुंगसूरि हुये, जिनोंनें भक्तामर स्तवन करकें, बाण अरु मयूर पंडितोंकी विद्या करकें चमत्कृत हुआ जो वृद्ध भोजराजा तिनकों प्रतिबोधा, और भयहर स्तवन करकें नागराजाकों वश करा, तथा भत्तिभरेत्यादि स्तवन जिनोंनें करे है ॥

२४ श्रीमानतुंगसूरिके पाट ऊपर श्री वीरसूरि बैठे सो वीरसूरिनें श्री महावीरस्वामीसें (७७०) वर्षमें तथा विक्रम संवतके तीनसौ वर्ष पीछे नागपुरमें श्रीनमिअर्हतकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करी, यदुक्तं ॥ आर्या ॥ "नागपुरे नमिभवन, प्रतिष्ठयामहितपाणिसौभाग्यः ॥ अभवद्वीराचार्य, स्त्रिभिः शतैः साधिकैः राज्ञः ॥ १ ॥"

२५ श्री वीरसूरिके पाट ऊपर श्री जयदेवसूरि बैठे, ॥

२६ श्रीजयदेवसूरिके पाट ऊपर श्री देवानंदसूरि बैठे, इस अवसरमें श्रीमहावीरस्वामीसें (८४५) वर्ष पीछे वल्लभी नगरी भंग हुइ, तथा (८८२) वर्ष पीछे चैत्येस्थिति, तथा (८८६) वर्ष पीछे ब्रह्मद्वीपिका शाखा हुई ॥

२७ श्रीदेवानंदसूरिके पाट ऊपर श्री विक्रमसूरि बैठे ॥

२८ श्रीविक्रमसूरिके पाट ऊपर श्री नरसिंहसूरि बैठे, यतः ॥ "नरसिंहसूरिरासी, दतोऽखिलग्रंथपारगोयेन ॥ यक्षोनरसिंहपुरे, मांसरतिस्त्याजिता स्वगिरा ॥ १ ॥"

२९ श्रीनरसिंहसूरिके पाट ऊपर श्रीसमुद्रसूरि हुए ॥ श्लोकः ॥ वसंततिलकावृत्तम् ॥ "खोमीणराज कुलजोऽपि समुद्रसूरि, र्गच्छं शशास किल यः प्रवणः प्रमाणी ॥ जित्वा तदा क्षपणकान् स्ववशं वितेने नागहृदेभुजगनाथनमस्यतीर्थम् ॥ १ ॥"

३० श्रीसमुद्रसूरिके पाट ऊपर श्रीमानदेवसूरि हुए ॥ श्लोकः ॥ वसततिलकावृत्तम् ॥ "विद्यासमुद्रहरिभद्रमुनींद्रमित्रं, सूरिर्बभूव पुनरेवहि मानदेवः ॥ मांद्यात्प्रयातमपियोनवसूरिमंत्र लेभेंबिकामुखगिरा तपसोज्जयंते ॥ १ ॥" श्रीमहावीरस्वामीसें एक हजार वर्ष पीछे सत्यमित्र आचार्यके साथ पूर्वोका व्यवच्छेद हुआ, यहा १ श्री नागहस्ति, २ रेवतीमित्र, ३ ब्रह्मद्वीप, ४ नागार्जुन, ५ भूतदिन्न, ६ श्री कालकसूरि, ये छै युगप्रधान यथाक्रमसें श्रीवज्रसेनसूरि और सत्यमित्रके बीचमें हुए, इन पूर्वोक्त छै युगप्रधानोंमेंसें शक्राभिवंदित श्रीकालिकाचार्य श्रीमहावीरस्वामीसें (९९३) वर्ष पीछे पंचमीसें चौथकी संवत्सरी करी, तथा श्री महावीरात् (९८०) वर्ष पीछे एक पूर्व विद्या धारक युगप्रधान श्री देवर्द्धिगणिः क्षमाश्रमण हुए जिणोंनें शासन देवके सहायसें सर्व साधुवोको इकट्ठा करके सर्व सिद्धात पुस्तकोंमे लिखाया इससें यह बडे प्रवचन प्रभावीक हुए, तथा श्री महावीरात् (१०५५) वर्ष पीछे, और विक्रमादित्यसें

(५८५) वर्ष पीछे, याकिनी साधवीका धर्मपुत्र श्रीहरिभद्रसूरि स्वर्गवास हुए, ये आवश्यकजी मूलसूत्रादिककी बडी टीकाका, तथा चवदसोचमालीस (१४४४) प्रकरणोंका कर्त्ता हुए तथा इग्यारेसोपन्नर (१११५) वर्ष पीछे श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमण युगप्रधान हुआ ॥

२१ श्रीमानदेवसूरिके पाटऊपर श्रीविबुधप्रभसूरि हुआ ॥

२२ श्रीविबुधप्रभसूरिके पाट ऊपर श्रीजयानंदसूरि हुआ ॥

२३ श्रीजयानंदसूरिके पाट ऊपर श्रीरविप्रभसूरि हुआ सो श्रीमहावीरस्वामिसें पीछे इग्यारेसेसित्तर (११७०) वर्ष औ) विक्रम संवत्सें सातसो (७००) वर्ष पीछे नाडोल नगरमें श्रीनेमिनाथस्वामिके प्रासादकी प्रतिष्ठा करी तथा श्रीवीरात् इग्यारसो नेवु (११९०) वर्ष पीछे श्रीऊमास्वातिनामक युगप्रधान हुआ ॥

२४ श्रीरविप्रभसूरिके पाट ऊपर श्रीयशोभद्रसूरि अपरनाम श्रीयशोदेवसूरि बैठे, यहां श्रीमहावीरस्वामिसें बारसोबहुत्तर (१२७२) वर्ष पीछे, और विक्रम संवत्सें आठसें दो (८०२) के सालमें अणहलपुर पट्टण वनराज नामक राजानें वसाया, वनराज जैनी राजा था, तथा श्रीवीरात् बारसेसित्तर (१२७०) और विक्रमसंवत् आठसो (८००) के सालमें भादवासुदि ३ के दिन बप्पभट्ट आचार्यका जन्म हुआ जिसनें गवालियरके आम नामा राजाकों जैनी बनाया, इनोंका विशेष चरित्र प्रबंध चिंतामणि ग्रंथसें जाणलेना ॥

३५ श्रीयशोभद्रसूरिपट्टे, श्रीविमलचन्द्रसूरि हूआ ॥

३६ श्रीविमलचंद्रसूरिपट्टे श्रीदेवचन्द्रसूरि अपरनाम लघुदेवसूरि हूवा ये उपधान वाच्य ग्रंथका कर्त्ता और तिसकाल आश्रय सिथलाचार मार्गकों त्याग करके शुद्धमार्ग धारन करनेंवाले थे, हू इससें सुविहित पक्ष प्रसिद्ध हूवा ॥

३७ श्रीलघुदेवसूरि पट्टे, श्रीनेमिचन्द्र सूरि हुवे ॥

इति श्रीखरतरगच्छे श्रीजिनकीर्त्तिरत्नसूरिशाखायां क्रमात्, श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरीश्वरस्य प्रधानशिष्येण श्रीमदानंदमुनिना संकलिते उ० जयसागरेण संस्कारितेच, श्रीमज्जिनदत्तसूरीश्वरचरिते श्री आचार्यमहागिर्यादि श्रीनेमिचन्द्रसूरिपर्यंवमानं पट्टानुगताचार्यसंक्षिप्तचरित्र वर्णनो नाम तृतीयसर्गः समाप्तः

अथ चतुर्थसर्गः।
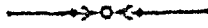
नमः श्रीवर्द्धमानाय, श्रीमते च सुधर्मणे,
सर्वाऽनुयोगवृद्धेभ्यो, वाण्यै सर्वविदस्तथा॥ १ ॥
अज्ञानतिमिरांधानां, ज्ञानांजनशलाकया,
नेत्रमुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ २ ॥
सूरिमुद्योतनं वन्दे, वर्द्धमानं जिनेश्वरं,
जिनचंद्रप्रभुं भक्त्याऽभयदेवमहं स्तुवे॥ ३ ॥

३८ श्रीनेमिचंद्रसूरिजीके पट्टपर, श्रीमान् उद्योतनसूरिजी हुवे, इणोंसें ८४ गच्छकी स्थापना हुइ, इहांपर ८४ गच्छोंका किंचित-स्वरूप लिखते है, वाचनाचार्य श्रीमान् पूर्णदेवगणि प्रमुखका वृद्धसंप्रदाय यह है कि श्रीमान् उद्योतनसूरिजी महाराजकुं शुद्ध क्रियापात्र वडे प्रतापिक विद्वान् जाणके और ८२ साधुवोंका शिष्य आयके महाराजकेपास पढने लगे, और तिस अवसरमें एक अंभोहरनामा देशमें जिनचंद्रनामें आचार्य शिथलाचारी चैत्य-वासी ८४ चैत्योंका मालिकथा, उसके व्याकरण तर्क छंद अलं-कार प्रमुखमें अत्यंत विचक्षण, शरदऋतुका चंद्रमाके प्रकाश स-मान उज्वल यशवाला, और अत्यंत निर्मल मनवाला, वर्द्धमान नामें प्रधान शिष्य था, उसके प्रवचन सारोद्धारादि आगम वाचतां जिनचैत्यकी ८४ आशातना आइ, वे आशातना यह है—

इदानीं, दसआसायणत्ति, सप्तत्रिंशत्तमं द्वारमाह ॥

अब दशआशातनाका सैंतीसमा (३७) द्वार कहते हैं ॥

तत्र मूलम् यथा–तंबोल १ पाण २ भोयण, ३ पाणह ४, त्थीभोग ५ सुयण ६ निठ्ठिवणं, ७ मुत्तु ८ चारं ९ जूयं १०, वज्जेजिणमंदिरस्संतो ॥ ३७ ॥ व्याख्या–तांबूल १ पानीपीणा २ भोजन ३ उपानत ४ (जूती) स्त्रीभोग ५ (मैथुन) स्वपन निद्रा करना ६ निष्ठीवन थूक ७ मूत्र, लघुनीत ८ पुरीषं, वडनीत ९ द्यूतमदिरादिवर्जयेत्, जूआमदिरादियलसें वर्जे १० विवेकी पुरुष जिनमंदिरके अंदर श्रीतीर्थंकर भगवानकी आशातनाका हेतु होणेसे यह १० मोटी आशातनाका सुश्रावकोंकुं विशेषकरके त्याग करना उचित है, अन्यथा अनंत भवभ्रमण करना होगा यह निस्संदेह है, इति ३७ सप्तत्रिंशत्तमद्वारः ॥

आसायणा उचुलसी, इति अष्टात्रिंशत्तमं द्वारमाह, खेलकेलिमित्यादि शार्दूलवृत्त चतुष्टयमिदं यथा विदित व्याख्यायते ॥

अब चौरासी आशातनाका अडतीसमा द्वार कहतें हैं ॥

तत्र मूलम् यथा–खेल १ केलि २ कलि ३ कला ४ कुललयं ५ तंबोल ६ मुग्गालयं, ७ गाली ८ कंगुलिया ९ सरीरधुवणं १० केसे ११ नहे १२ लोहिनं, १३, भत्तोसं १४ तय १५ पित्त १६ घत १७ दमणे १८ विस्सामणं १९ दामणं, २०, दंत २१ च्छी २२ नह २३ गड २४ नासिय २५ सिरो २६ सोत्त २७ छवीण मलं, २८ ॥ ४३८ ॥ १ ॥ मंत २९ मीलण ३० लेक्खय ३१ विभजण ३२ भंडार ३३ दुट्ठासण, ३४, छाणी ३५ कप्पड

३६ दालि ३७ पप्पड ३८ वडी ३९ विस्सारणं नासणं, ४०, अक्कंदं ४१ विकहं ४२ सरिच्छुघडणं ४३ तेरिच्छसंठावणं, ४४, अग्गीसेवण ४५ रंधणं ४६ परिक्खणं ४७ निस्सीहियाभंजणं, ४८ ॥ ४३९ ॥ २ ॥ छत्तो ४९ वाणह ५० सत्थ ५१ चामर ५२ मणोणेगत्त, ५३ मव्भंगणं, ५४ सच्चित्ताणमचाय ५५ चायमजिए ५६ दिट्ठीइनो अंजली, ५७ साडेगुत्तरसंग भंग ५८ मउडं ५९ मउलिं ६० सिरोसेहरं, ६१ हुड्डा ६२ जिड्डहग्गेडियाइरमणं ६३ जोहार ६४ भंडाकियं, ६५ ४४० ॥ ३ ॥ रेकारं ६६ धरणं ६७ रणं ६८ विवरणं वालाण ६९ पल्हट्टियं, ७०, पाउ ७१ पायपसारणं ७२ पुडपुडी ७३ पंकं ७४ रओ ७५ मेहुणं, ७६ जूया ७७ जेमण ७८ गुज्झ ७९ विज्ज ८० वणिजं ८१ सेज्जं ८२ जलं ८३ मज्जणं, ८४, एवमाईय मवज्जकज्जमुज्जुओवज्जेजिणिंदालए, ४४१ ॥

॥ ४ ॥ व्याख्या तत्र जिनभवने एतच्च कुर्वन् आशातनां करोति इति फलितार्थः आयं लाभं ज्ञानादीनां निःशेषकल्याणसंपन्नतावितानाविकलबीजानांशातयति विनाशयति इति आशातना शब्दार्थः तत्र खेलं मुखश्लेष्माणं जिनमंदिरे त्यजति, १ तथा केलिं क्रीडां २ करोति, तथा कलिं वाकलहं विधत्ते, ३ तथा कलां धनुर्वेदादिकां तत्र शिक्षते, ४ तथा कुललयं गंडूषं विधत्ते, ५ तथा तांबूलं तत्र चर्वयति, ६ तथा तांबूलसंबंधिनमुद्गालमाविलं तत्र मुंचति, ७ तथा गालीर्नकारमकारचकारजकारादिकास्तत्र ददाति, ८ तथा कंगुलिकां लघ्वीं महतीं

च नीतिं विधत्ते, ९ तथा शरीरस्य धावनं प्रक्षालनं कुरुते
१० तथा केशान् मस्तकादिभ्यस्तत्रोत्तारयति, ११ तथा नखान्
हस्तपादसंबंधिनः किरति, १२ तथा लोहियं शरीरान्निर्गतं तत्र
विसृजति, १३ तथा भक्तोपं सुखादिकां तत्र खादति, १४ तथा
तयत्वचं व्रणादिसंबंधिनीं पातयति, १५ तथा पित्त धातुविशे
पमौषधादिना तत्र पातयति, १६ तथा वातं वमनं करोति
१७ तथा दसणे दंतान् क्षिपति, १८ तत्संस्कार वा कुरुते
तथा विश्रामणामंगसंवाहनं कारयति १९ तथा दामन बंधन
मजादितिरश्चां विधत्ते, २० तथा दंताक्षिनखगडनासिका शिरःश्रो
त्रच्छवीनां संबंधिनं मलं जिनगृहे त्यजति तत्र छविः शरीरं
शेषाश्च तदवयवाः २८ ॥ ४३८ ॥ इति प्रथमवृत्तार्थः ॥ तथा मंत्र
भूतादिनिग्रहलक्षणं राजादिकार्यपर्यालोचनं वा कुरुते, २९ तथा
मीलन कापिस्वकीय विवाहादिकृत्ये निर्णयाय वृद्धपुरुषाणां तत्र
त्रोपवेशनं, ३० तथा लेख्यकं व्यवहारादि सनधि तत्र कुरुते,
३१ तथा विभजनं विभागं दायादादीना तत्र विधत्ते, ३२
तथा भाडागार निजद्रव्यादेर्निधत्ते, ३३ तथा दुष्टासन पादोप-
रिपादस्थापनादिकमनौचित्योपवेशनं कुरुते, ३४ तथा छाणी
गोमयपिंडः ३५ कर्पटं वस्त्रं, ३६ दालिर्मुद्गादिद्विदलरूपा, ३७
पर्पटवटिके ३८–३९ प्रसिद्धे, ततः एतेषां विस्तारण च उत्ता-
पनकृते निस्तारणं, तथा नाशनं नृपदायादादिभयेन चैत्यस्य
गर्भगृहादिषु जतर्धानं, ४० तथा आक्रंदं रुदन कुरुते, ४१ वि-
कथाकरणं ४२ तथा शराणा त्रशानामिक्षूणां च घटनं, ४३

सरछे, तु पाठे शराणां अस्त्राणां च धनुःशरादीनां घटनं, तथा तिरश्चामश्वगवादीनां संस्थापनं, ४४ तथा अग्निसेवनं शीतादौ सति, ४५ तथा रंधनं पचनमन्नादीनां, ४६ तथा परीक्षणं द्रम्मादीनां, ४७ तथा नैषधिकी भंजनमवश्यमेव हि चैत्यादौ प्रविशद्भिः सामाचारीचतुरैर्नैषधिकीकरणीया, ततस्तस्या अकरणं भंजनमाशातना ४८ ॥ ४३९ ॥ इति द्वितीयवृत्तार्थः ॥

तथा छत्रस्य ४९।५० तथा उपानहस्तथा शस्त्राणां खड्गादीनां ५१ तथा चामरयोश्च ५२ देवगृहात् वहिरमोचनं, मध्येवा धारणं तथा मनसोऽनेकांततानैकाग्र्यं नानाविकल्पकल्पनमित्यर्थः, ५३ तथाभ्यंजनं तैलादिना ५४ तथा सचित्तानां पुष्पतांवूलपत्रादीनामत्यागो वहिरमोचनं, ५५ तथा त्यागः परिहरणं, अजिए, इति अजीवानां हारमुद्रिकादीनां, वहिस्तनमोचने हि अहो भिक्षाचराणामयं धर्मः इत्यवर्णवादो दुष्टलोकैर्विधीयते, ५६ तथा सर्वज्ञप्रतिमानां दृष्टौ दृग्गोचरतायां नो नैवांजलिकरणमंजलिविरचनं, ५७ तथा एकशाटकेन एकोपरितनवस्त्रेण उत्तरासंगभंग उत्तरासंगस्याकरणं, ५८ तथा मुकुटं किरीटं मस्तके धरति, ५९ तथा मौलिं शिरोवेष्टन विशेषरूपां करोति, ६० तथा शिरःशेखरं कुसुमादिमयं धत्ते, ६१ तथा हुड्डांपारापतनालिकेरादिसंवंधिनीं विधत्ते, ६२ तथा जिड्डहत्ति, कंदुकगेड्डिका तत् क्षेपणी वक्रयष्टिका ताभ्यां, आदिशब्दात् गोलिका कपर्दिकाभिश्च रमणं क्रीडनं, ६३ तथा ज्योत्कारकरणं पित्रादीनां, ६४ तथा भांडानां विटानां क्रिया कक्षा वादनादिका, ६५ ॥ ४४० ॥ इति तृतीयवृत्तार्थः ॥

तथारेकारं तिरस्कारप्रकाशकं रेरे रुद्रदत्तेत्यादि वक्ति, ६६ तथा धरणकं रोधनमपकारिणामधमर्णादीना च ६७ तथा रणं संग्रामकरणं ६८ तथा विवरणं बालानां केशाना विजटीकरणं, ६९ तथा पर्यस्तिकाकरणं, ७० तथा पादुका काष्ठादिमयं चरणरक्षणोपकरणं ७१ तथा पादयोः प्रसारणं स्वैर निराकुलतायां, ७२ तथा पुटपुटिकादापनं, ७३ तथा पंकं कर्दमं करोति, निजदेहावयवप्रक्षालनादिना, ७४ तथा रजो धूलिःतां तत्र पादविलग्नां ताडयति ७५ तथा मैथुनं मैथुनस्य कर्म, ७६ तथा यूकामस्तकादिभ्यः क्षिपति वीक्षयति वा ७७ तथा जेमनं भोजनं, ७८ तथा गुह्यं लिंगं तस्या संवृत्तस्य करणं, ७९ जुज्झमिति तु पाठे युद्धं दृग्युद्धबाहुयुद्धादि, तथा विज्ञत्ति, वैद्यकं, ८० तथा वाणिज्यं क्रयविक्रयत्वलक्षणं, ८१ तथा शय्यां कृत्वा तत्र स्वपिति, ८२ तथा जलं तत् स्नानाद्यर्थ तत्र मुंचति पिवति वा, ८३ तथा मज्जनं स्नानं तत्र करोति, ८४ एवमादिकमवद्यं सदोपं कार्य उत्सुकः प्रांजलचेता उद्यतो वर्जयेत् जिनेंद्रालये जिनमदिरे ॥ एवमादिकमित्यनेनेदमाह ॥ न केवलं एतावत्य एवाशातनाः, किंत्वन्यदपि यदनुचितं हसनवल्गनादिकं जिनालये तदप्याशातनास्वरूपं ज्ञेयं ॥ नन्वेवं, तंबोलपाण इत्यादि, गाथया मेव आशातनादशकस्य प्रतिपादितत्वात्, शेपाशातनानां च एतत् दशकोपलक्षितत्वेनैव ज्ञास्यमानत्वात्, अयुक्तं इदं द्वारांतरम्, इति चेन्न, सामान्याभिधानेऽपि बाल।दिबोधनार्थं भिभिन्नं विशेपाभिधानं क्रियत एव, यथा ब्राह्मणा समागताः वशिष्ठोऽपि समागतः

इति न्यायात् सर्वमनवद्यं, ॥ नन्वेता आशातना जिनालये क्रिय माणा गृहिणां कंचनदोषमावहंति, उत एवं एवं न करणीयाः, तत्र ब्रूमः समाधानम्, न केवलं गृहिणां सर्वसावद्यकरणोद्यतानां-भवभ्रमणादिकदोषमावहंति, किंतु निरवद्याचाररतानां मुनीना मपि दोषमावहंति, इत्याह, ॥ आसायणाउ भवभमण कारणा-इइ विभाविउं, जइणो मलिणत्ति न जिण मंदिरंमि, निवसंति इइ समए ॥ ४२ ॥ ५ ॥ एता आशातनाः परिस्फुरत् विविधदुःख-परंपराप्रभवभवभ्रमणकारणमिति विभाव्य परिभाव्य यतयोऽस्ना नकारित्वेन मलमलिनदेहत्वात्, न जिनमंदिरे निवसंति, इति समयः सिद्धांतः, आह च व्यवहारभाष्यकारोपि ॥ दुब्भिगंधमल-स्सावि, तणुरप्पेसण्हाणिया ॥ दुहावायवहावाइ, तेणच्चिठंति न चेइए ॥ ४३ ॥ ६ ॥ व्याख्या एषा तनुः स्नापितापि दुरभिगंध-मलप्रस्वेदस्राविणी, तथाद्विधा वायुपथः उर्द्धाधोवायुनिर्गमश्च, यद्वा द्विधा मुखेन अपानेन च वायुवहो वापि वातवहनं च तेन कारणेन न तिष्ठंति यतयश्चैत्ये जिनमंदिरे, ॥ यद्येवं व्रतिभिश्चैत्येषु, आशातनाभीरुभिः कदाचिदपि न गंतव्यं, तत्राह सेनूणं भंते संज-याणं विरया विरयाणं जिणहरे गच्छेज्जा, गोयमा, दिनेदिने गछेज्जा, जइप्पमायं पडुच्च नगच्छेज्जा, तो छट्ठं वा दुवालसं वा पाय-च्छित्तं लभेज्जा ॥ इति महाकल्पे ॥ अथ जिनचैत्ये मुनीनामवस्थि-तिप्रमाणं विभणिषुराह ॥ तिन्नि वा कट्ठइ जाव, थुइओ तिसलोइया ॥ तावच्च अणुन्नायं, कारणेण परेणओ ॥ ४४ ॥ ७ ॥ व्याख्या तिस्रः स्तुतयः कायोत्सर्गानंतरं या दीयंते ता यावत्कर्षति भणति इत्यर्थः,

किंविशिष्टाः, तत्राह, त्रिश्लोकिकास्त्रयः श्लोकाः छंदोविशेषरूपा अधिका न यासु ताः, तथा सिद्धाणं बुद्धाणं, इत्येकः श्लोकः, जो देवाणवि, इति द्वितीयः, एक्को वि नमुक्कारो, इति तृतीयः, अग्रेतन-गाथाद्वयं, स्तुतिश्चतुर्थी गीतार्थाचरणेनैव क्रियते, गीतार्थाचरणं तु मूलगणधरभणितमिव सर्व विधेयमेव सर्वैरपि मुमुक्षुभिरिति, तावत्कालमेव तत्र जिनमंदिरेऽनुज्ञातमवस्थानं यतीनां, कारणेन पुन-र्धर्मश्रवणाद्यर्थमुपस्थितभविकजनोपकारादिना परतोऽपि चैत्यवं-दनाया अग्रतोऽपि यतीनामवस्थानमनुज्ञातं, शेषकाले तु साधूनां जिनाशातनादिभयात् नानुज्ञातमवस्थानं तीर्थंकरगणधारिभिः, ततो व्रतिभिरप्येनमाशातनाः परिह्रीयंते, गृहस्थैस्तु सुतरां परि-हरणीया। इति, इयं च तीर्थंकृतामाज्ञा, आज्ञाभंगश्च महतेऽन-र्थाय संपद्यते, यदाहुः, 'आणाइच्चिय चरणं, आणाइतवो आणाइ-संजमो, तहदाणमाणाइं, आणारहियो धम्मो पलासपुलुवनायवो' ॥ १ ॥ और भाषाके स्थानमें प्राचीन सुकविकृत ८४ आशातना स्वरूपप्रतिपादकभाषापद्यनंधस्तवनहि रखनेमें आता है ॥

अथ ८४ आशातनास्तवन ॥

विलसेरिद्धिनी देशी ॥ जय जय जिणपास जगत्र धणी, सो भाताहरी संसार सुणी, आयो हुं पिणधर आसधणी, करिवा सेवा तुम चरण तणी ॥ १ ॥ धन धन जे न पडे जंजाले, उपयोग सु पैसे जिन आले, आशातना चउरासी टाले, सासता सुपतेहि ज संभाले ॥ २ ॥ जे नाखे श्लेखम जिनहरमे, कलह करे गाली जूयरमे, धनूपादि कला सीखण ढूके, कुरलो तंत्रोल भखे थूके

॥ ३ ॥ सुरे वायवडी लघुनीत तणी, संज्ञा कुंगुलिया दीपखुणी,
नख केस समारण रुधिर क्रिया, चांदीनी नांखे चांवडिया ॥ ४ ॥
दांतणनें वमन पीये कावो, खावे धांणी फुली खावो, सुवे वेसा-
मण विसरावे, अज गज पशुनें दासण दावे ॥ ५ ॥ सिरनासा
कान दसन आखे, नख गालवपुपना मल नांखे, मिलणो लेखो
करे मंत्रणो, विहचण अपणो करि धन धरणो, ॥ ६ ॥ वेसे पग
ऊपरि पग चढियां, थापे छाणा छडे छूंदणीयां, सूकवे कप्पड
वप्पड वडियां, नासीय छिये नृप भय पडियां ॥ ७ ॥ शोके रोवें
विकथाज कहे, इहां संख्या वेंतालीस लहै, हथियार घडेनें पशु-
बांधे, तापे नाणों परखे रांधे ॥ ८ ॥ भांजी निसही जिनगृह
पैसे, धरे छत्रनें मंडपमें वेसे, पहिरे वस्त्र अनें पनही, चामर वींझै
मनठाम नहीं ॥९॥ तनु तेल सचित्त फल फूल लीये, भूषण तजि
आप कुरूप थीये, दरसणथी सिर अंजली न धरे, इग साडे उत्तरा
संग न करे ॥ १० ॥ छोगो सिरपेच मोड जोडे, दडिये रमनें
वैसे होडै, सयणां सुं जुहार करे मुजरो, करे भंड चेष्टा कहे वचन
बुरो ॥ ११ ॥ धरे धरणो झगडे उल्लंठी, सिर गुंथे बांधे पालंटि,
पसारे पग पहरे चाखडियां, पगझटक दिरावे दुरवडीयां ॥ १२ ॥
करदमलूहे मैथुनमंडे, जूआं वलि अंठतिहां छंडे, उघाडे गुह्यकरें
वायदां, काढे व्यापार तणाकायदां ॥ १३ ॥ जिनहर परनालनो
नीरधरे, अंघोले पीवाठाम भरे, दूषण जिन भवनमें एदाख्या,
देववंदन भाष्यमें जे भाख्या ॥ १४ ॥ सुज्ञानी श्रावक सगति
छतां, आसातन टाले वारसतां, परमाद वसे कोई थाये, आलोयां

पाप सहू जाये ॥ १५ ॥ तंबोलनें भोजन पान जूआ, मल मूत्र सयन स्त्रीभोग हुआ, भूषण पनही ए जघन्यदसे, वरज्या जिन मंदिरमा हि वसे ॥ १६ ॥ द्रव्यतनें भावतदोय पूजा, एहनाहिज भेद कह्या दूजा, सेवा प्रभुनी मन सुद्ध करे, वंछित सुखलीलाते हवरे ॥ १७ ॥ कलश ॥ इम भव्यप्राणी भावआणी विवेकी शुभवातना, जिनबिंबअरचे परिवरजे चोरासी आसातना, ते गोत्र-तीर्थंकर उपार्जेनमें जेहनें केवली, उवज्झाय श्री धर्मसींह वंदे जैन शासन ते चली ॥१८॥ इति श्री चौरासी आसातना स्तवनं संपूर्णम् इण आशातनाओंका अछीतरे विचार करणेसे, उस पुण्यात्माके मनमे, यह भावना उत्पन्न हूइ, के जो यह आशातनाकों किसी प्रकारसें टाली जावे, तब हि संसारवनसें निस्तारा होवे, अन्यथा अगाध इस ससारसमुद्रके बीचमे पडे हुवे मेरेकुं अनंतिवार जन्म जरा मरण दरिद्र दौरभाग्य रोग शोकादि संतापका भाजनहि होना होगा, और अपणे दोपसें इस अपणे आत्माकुं अनन्त भव भ्रमण और दुर्गतिका भागी अपणे आपहि करणा होगा, ओर यह कहा है कि आसायण मिछत्तं, आसायणवज्जणाय सम्मत्त, आसायण निमित्तं, कुवइ दीहंच संसार १ आसातनासे मिथ्यात्व होता है आशातना वर्जनेसे सम्यक्त होता है आशातनासे भव भमण होता है जो मेरा शुभ अध्यवसाय है इसलिये वर्द्धमाननामा मुनिने अपणे गुरुकु निवेदन किया बाद उस चैत्यवासी जिनचंद्र नामक गुरुनें अपणे मनमे विचारा कि अहो इसका यह आशय है सो अछा नहिं है इसवास्ते इसकु आचार्यपदमे वैठायके मंदिर

आराम वगेरे प्रतिबंध करके वशमे करुं तो मेरे कल्याण है एसा विचारके उस गुरुने वैसाहि किया तथापि उस पुण्यात्माका चैत्य-वासस्थितिमे मन नहिं लगा, यह संगत है और कहा है कि-दुर्गंध और कादेवाला मरेहुवे कालेवरों करके सहित सेंकडो वगलों की पंक्तिसहित और वगलोंका कुटुंब करके सहित उत्तम जातिवाले पक्षियोंके आगमनसें रहित एसे कुत्सित सरोवरमें क्या हंस पगमात्र रख सक्ता हैं अर्थात् नहिं रख सक्ता है, इसलिये उस पुण्यवान् जीवकूं चैत्यवाससें विमुख जाणकर वर्द्धमान मुनिकूं सर्व अपणा अधिकार देकर इसतरे बोला कि हे वत्स यह सर्व देव-मंदिर मठ आरामवाडी वगेरे तेरे आधीन है तुं अपनी इच्छा करके विलस तेरे सर्वोत्कृष्ट माननीय है सो हमकूं छोडणा नहीं इत्या-दिक अनेक कोमल वचन कहेने पूर्वक नीवारण करणेसे किया है वांछितार्थका दृढनिश्चय मनमें जिसने एसा वह वर्द्धमान मुनिः कमल जलकादेसें अलग रहेता है इस न्यायकरके जैसें तैसें कोई-पण सुविहित गुरुकूं अंगीकार करके मेरेकुं अपणा हित करणा है एसा दृढसंकल्प करके अपणा आचार्यकी आज्ञा लेकर कितनेक यतियोंसें परवरा हुवा दिल्ली वादलीप्रमुख स्थानोंमे आया तिस समे श्री उद्योतनसूरिजी नामके सुविहित आचार्य महाराज याने उनके पुण्यसें प्रेरित होकर आवे उसमाफक प्रथमहि विहारक्रमसें आये हुवे थे, तिसके अनंतर शुद्ध मार्गके तत्त्वका आकर श्री उद्योतन सूरिजी महाराजके चरणकमलोंमे श्रीवर्द्धमान सूरिजीने श्रेष्ठ नि-र्णयपूर्वक स्वपरहित वढानेवाली उपसंपत् विधिपूर्वक अंगीकार

करी तब श्रीगुरुमहाराज योग उपधान वहायके सर्वसिद्धांत पढाए, अनुक्रमसें योग्य जाणके आचार्यपद दीया तिसके अनंतर श्रीवर्धमानसूरिजीको यह विचारणा उत्पन्न हुई जो यह सूरिमंत्र हैं इसका अधिष्ठायक कोन है यह जाननेवास्ते तीन उपवास कीये उतने तीसरे उपवासमे धरणेंद्र आया उस धरणेंद्रने कहाकि इस सूरिमन्त्रका अधिष्ठायक मे हूं सर्व सूरिमन्त्रके पदोंका अलगअलग फल कहा तिसके बाद विशेप प्रभावसहित वह सूरिमंत्र फुरणे लगा अर्थात् अपना प्रभाव विशेपकर देखानेवाला हूवा शुद्ध होनेसे ॥ तिस सूरिमंत्रके स्मरणसें विशेप तेजप्रताप परिवारसहित श्रीवर्द्धमानसूरिजी हूवे बाद गच्छलाभादि जाणके उत्तरखंडके विषे विहार करनेको आज्ञा दीवी, तब श्रीवर्द्धमानसूरि श्रीउद्योतनसूरिजीकी आज्ञा पायके उत्तराखंडमे विहार करने लगे, और श्रीउद्योतनसूरिजीमहाराज ८३ तयांसी साधुवोंका शिष्यादिकके साथ विहार करता थका मालवदेशका संघके साथ श्रीसिद्धगिरितीर्थकी यात्रा करनेको आये ॥ सिद्धाचल ऊपर श्रीऋषभादि सर्व चैत्यगत बिंबोंको वंदन करके पिछाडी पाजसें उतरके सिद्धवड नीचे रात्रिको रहे, तब उहां आधी रात्रिके समय गाडेका आकार ऐसा रोहिणी नक्षत्रमे बृहस्पतिका प्रवेश देखके गुरुमहाराज कहनें लगे, कि यह समय ऐसा उत्तम हैं जिसके मस्तकपर हाथ रक्खें सो घटा प्रतापीकहोवें, तब ८३ तयासी शिष्य बोले कि हमारे मस्तकपर वास चूर्ण करो, हम सब आपसे पढे हैं, इसमे आपकेही शिष्य हैं तब आचार्यजीनें कहा कि वासचूर्ण लावो, तब शिष्य उतावलमें

सूके छाणेका चूर्ण करके गुरुमहाराजको दिया, तब गुरुमहाराजने तिस चूर्णको मंत्र तयांशी ८३ शिष्योंके मस्तकपर करके आचार्य-पद दिया, और अपना अल्प आऊखा जाणके उसी सिद्धवड नीचे अणसण करके देवलोक गये, और तयांसी ८३शिष्य आचार्यपदको पायके जूदे जूदे देशोंमें साधुवोंके साथ विचरनें लगे, इसीतरे १ निजशिष्य, और तयांसी ओर साधुवोंका शिष्य आचार्यपदको प्राप्त हूवा इससें इहांसें चौरासीगच्छ प्रसिद्ध हूवा उणोंका नाम मात्र इहांपर लिखतें है यह ८४ चौरासी आचार्य बडे प्रतापीक हूवे ॥ ३८ ॥

अथ ८४ गच्छ नामानिलि० १ प्रथमबृहत्खरतर गच्छ २ ओस-वाल गच्छ श्रीरत्नप्रभसूरि ३ जीरावल गच्छ ४ वडगच्छ ५ गंगे-सरा गच्छ ६ झंझेरंडि गच्छ ७ आनपूरा गच्छ ८ भरुवच्चा गच्छ ९ उढविया गच्छ १० गुदाउवा गच्छ ११ डेकाउवा गच्छ १२ भीममाली गच्छ १३ मुहडासिया गच्छ १४ दासरूवा गच्छ १५ पाल गच्छ १६ घोपवाला गच्छ १७ मगओडा गच्छ १८ ब्रह्माणिया गच्छ १९ जालोरा गच्छ २० वोकडिया गच्छ २१ मूझाहडा गच्छ २२ चीतोडा गच्छ २३ साचोरा गच्छ २४ कुवडिया गच्छ २५ सिद्धांतिया गच्छ २६ मसेणिया गच्छ २७ नागेंद्र गच्छ २८ मलधारी गच्छ २९ भावराजिया गच्छ ३० पल्लिवाल गच्छ ३१ कोरंडवाल गच्छ ३२ मागदिक गच्छ ३३ धर्मघोष गच्छ ३४ नागोरी गच्छ ३५ उच्छितवाल गच्छ ३६ नाणावाल गच्छ ३७ संडेरवाल गच्छ ३८ मंडारा गच्छ ३९

सुराणा गच्छ ४० खंभातिया गच्छ ४१ वडोदिया गच्छ ४२ सोपारिया गच्छ ४३ मांडलिया गच्छ ४४ कोछीपूरा गच्छ ४५ जांगलीया गच्छ ४६ छापरवाल गच्छ ४७ बोरसडा गच्छ ४८ दोवंदणीक गच्छ ४९ चित्रवाल गच्छ ५० वाड्ड गच्छ ५१ वेगडा गच्छ ५२ विजुहरा गच्छ ५३ कुतवपुरा गच्छ ५४ कावेलीया गच्छ ५५ रुद्देलीया गच्छ ५६ महकरा गच्छ ५७ कन्हरसीया गच्छ ५८ पुनतल गच्छ ५९ रेवइया गच्छ ६० धुंधुवा गच्छ ६१ थंभणा गच्छ ६२ पंचवन्हही गच्छ ६३ पालणपुर गच्छ ६४ गंधार गच्छ ६५ गुवेलीया गच्छ ६६ श्रीराजगच्छ ६७ नगरकोरीया गच्छ ६८ सिंहमारीया गच्छ ६९ भटनेरा गच्छ ७० जीनहरा गच्छ ७१ भीमसेनीया गच्छ ७२ जगाईन गच्छ ७३ तागडीया गच्छ ७४ कंवोना गच्छ ७५ संसेवित गच्छ ७६ वाघेरा गच्छ ७७ वहेडा गच्छ ७८ सीधपुरा गच्छ ७९ वोघरा गच्छ ८० नेमीया गच्छ ८१ सजनीया गच्छ ८२ वरडेवाल गच्छ ८३ मुरडवाडा गच्छ ८४ नामोला गच्छ

॥ ३९ ॥ श्रीउद्योतनसूरिजीके पट्ट पर, श्रीवर्द्धमानसूरिः हुवे, यह आचार्यपदको प्राप्त होके, ६ महिनातक आंबिलकी तपस्या करी तव श्रीनागराज धरणेंद्र हाजरहूवा वंदन नमस्कार करके कहेनें लगा, कि मेरेलायक कार्य होयसो कहो, तव महाराजनें श्रीसीमंधरस्वामिकेपास भेजके सूरिमंत्र शुद्धकरवाया, ॥ उक्तंचैतदर्थसंवादी श्री आबुप्रबंधे । इसी अर्थ कुं कहनेवाला श्रीआबुप्रबंध है, सो इसतरेहैं अब किसी एक दिनके अवसरमें श्रीवर्द्धमानसूरिजी आचार्य, वनवासीगच्छके श्रीउद्योतनसूरिजी महाराजके पद

प्रभाकर गामानुगाम अप्रतिबंध विहार करके विचरते हूवे श्रीआबुगिरि शिखर की तलहटीमे, कासद्रहनामकगाममें आये, तिसके अनंतर श्रीविमलदंडनायकपोरवाडवंशकामंडन देशभागकुं अवगाहन करता हूवा याने साधता हूवा वो भि वहांपर आया, आबुगिरि शिखर पर चढा, सर्व दिशाओंमे पर्वतकुं मनोहर शोभासहित देखके बहुत खुशी हूवा, मननें विचारणे लगा कि, इहांपर देरासर कराबुं, उतने अचलेश्वर गुफावासी योगी जंगम तापस संन्यासी ब्राह्मण प्रमुख मिलके विमलसाहदंडनायक के पासमे आय के इसतरें कहनें लगे, हे विमलमंत्रिन् तुमारा इहांपर तीर्थ नहिं है यह हमारा कुलपरंपराकरके तीर्थ वर्त्तेहैं, इसवास्ते इहांपर तुमकुं हम जिनप्रासाद करणें देवें नहिं तब विमलसाह मंत्री पूर्वोक्त वचन सुणके उदासीन हूवा, आबुगिरिशिखरकी तलहटीमें कासद्रहगाममें आया, जिसगाममें सर्वसंपदादायकश्रीवर्द्धमान सूरिजी समवसरे है,

उसी गाममें श्रीगुरुमहाराजकुं विधिपूर्वक वंदना नमस्कार करके इसतरेसे विनयसहित वीनती करी, हेभगवन् इस पर्वतपर हमारा तीर्थ जिन प्रतिमारूप वर्त्तें है अथवा नहिं, तब श्रीगुरुमहाराजनें कहा हे वत्स देवता आराधन करणेसें सर्व जाननेमें आवे, अन्यथा छद्मस्थकेसें जाणें, तब विमलसाह मंत्रीनें प्रार्थना करी, किंबहुना सुज्ञेषु, तब श्रीवर्द्धमान सूरिजीनें छमासी तप करा तब श्रीधरणेंद्र नागराज आया, श्रीगुरुमहाराजनें कहा हे धरणेंद्र सूरिमंत्रकी अधिष्ठायक ६४ देवियां हैं, उणोंके अंदरसें एक

देवताभी नहिं आई, और उणदेवताओंने कुछभि नहिं कहा उसका क्या कारण है तब धरणेंद्र नागराजनें कहा हे भगवन् तुमारे सूरिमंत्रका एक अक्षर कम है याने गिरता है तिस अशुद्धताके कारणसें देवता नहिं आवे में आपके तपके बलसे आयाहूं, तब श्रीगुरुमहाराजनें कहा हे महाभाग पहिले सूरिमंत्र शुद्धकर पीछे दूसरा कार्य करुंगा एसा सुनकर धरणेंद्रनें कहा हे भगवन् सूरिमंत्रके अक्षरकी अशुद्धिकी शुद्धि करणेकुं तीर्थंकरविना किसीकीभि शक्ति नहि है, तब सूरिजीनें सूरिमंत्रका गोला यानें डब्बा दिया तब धरणेंद्रनें महाविदेहक्षेत्रमे श्रीसीमंधरस्वामिकुं वह गोला दिया श्रीसीमंधरस्वामिनें तिस सूरिमंत्रकुं शुद्धकरके धरणेंद्रकुं दिया तब वह सूरिमंत्रका गोला श्रीवर्द्धमानसूरिजीकुं पीछा धरणेंद्रनें दिया, तब तीनवार तिस सूरिमंत्रका स्मरण करणे करके सर्व अधिष्ठायक देव प्रत्यक्ष हूवे तब श्रीगुरुमहाराजनें पूछा कि हमकुं विमलदंडनायक पूछे है, आबुगिरि शिखरपर जिनप्रतिमारूप तीर्थ है अथवा नहि तब अधिष्ठायक देवोंने कहा आबुदेवीके पास डाबे तरफश्रीअर्बुदआदिनाथ स्वामीकी प्रतिमा है और जहा अखंड अक्षतका स्वस्तिक उसपर चारलडी पुष्पोंकी माला देखणेमे आवे वहांपर खोदणा एसा देवताका वचन सुणके श्रीगुरुमहाराजनें विमलश्रावकके आगे सर्व हाल कहा तिस विमलसाहनें उसी प्रमाणे कीया प्रतिमा निकली तब विमलश्रावकने सर्व पाषंडियोंकुं बुलाके देखी जिनप्रतिमा कालामुख हूवा तब विमलसाहनें देरासर करणा शरु किया, पाषंडियोंने विमल-

साहकुं कहा कि यह जमीन हमारी है इसलिये हमारी भूमिकी किमत हमकुं देवो तब विमलसाहनें भूमिपर मोहोरां बिछायके जमीन लिवी प्रासाद कराया यानें देरासर कराया श्रीवर्द्धमान सूरिजी तिस प्रतिमा देरासरकी प्रतिष्ठा करी बादसांतिस्नात्र पूजा वगेरे सर्व धर्मकार्य किया उसके बाद अनागतमें धीरे धीरे सर्व मिथ्यात्वी लोक उस विमलसाह मंत्रीके आधीन हूवे तब विमल-साहने ५२ देहरीसहित सोनेका कलस धजासहित तिस देरा-सरकुं सोभित कीया तिस देरासरमें अढारे कोड तेमन लाख प्रमाणे धन लगा वह देरासर अखंडपणे अबीभि विद्यमान है सो सर्व लोक देखतें है और दर्शन तथा पूजन करते हैं यह श्रीवर्द्धमान सूरिजीका उपगार है ॥

और यह श्रीवर्द्धमानसूरिजी श्रीमदुद्योतनसूरिजीके प्रथम सु-शिष्यथे और श्रीजिनेश्वरसूरिजी श्रीबुद्धिसागरसूरिजीके यह गुरु-महाराज होतेथे और विमलसाहमंत्रीका विशेप अधिकारचरित्र तथा राससें जाणना यह प्रसंगसें संबंध कहा पीछे उहांसें विहार करके सरसापत्तनपधारे, तिस अवसरमें सोमनामा एक ब्राह्मणके शिवदाश बुद्धिदाश, नाम दोय पुत्रथे, और सरस्वतीनाम एक पुत्री थी, यह तीनों सोमेश्वर महादेवका बहुत ध्यान किया इससें सोमेश्वर महादेवका अधिष्ठाता आयके हाजर हुवा, कहा वर मांगो तब तीनों बोले हमकुं वैकुंठ देवो, तब देव कहनें लगा कि अभी मुझकों वैकुंठ नहिं मिला है तो तुमकों कहांसें देवुं, परंतु जो तु-मकों वैकुंठकी इच्छा होय तो इहांपर श्रीवर्द्धमानसूरिजीमहाराज

आये हैं उणोंके पास जावो, तुमकों वैकुंठ जाणेका मार्ग बतावेगा, एसा कहकर देवता अदृश्य होगया, तब तीनोंजणो स्नानकरके उपासरे आके श्रीगुरुमहाराजसें वैकुंठका मार्ग पूछा, तब उस वखत एक भाईके मस्तकपर चोटिमे छोटि मछली स्नान करते रहगइथी सो देखायके विनय दयामूल जिनधर्मका उपदेश दिया, तब तिनोंजणें प्रतिबोध पायके दीक्षा लीवी तब श्रीगुरुमहाराज योगादिक वहायके सर्व सिद्धांत पढायके शिवदाशका श्रीजिनेश्वर-सूरि बुद्धिदाशका बुद्धिसागर ऐसा नाम करा,

एकदा श्रीजिनेश्वरसूरिजीनें कहा कि हे स्वामिन् जो आपकी आज्ञा होय तो गुजरातदेशमे जावे, उहा जाणेसें बहुत लाभ होगा तब श्रीवर्द्धमानसूरिजी बोले कि गुजरातमे अभी हीनाचारी चैत्य-वासीयोंका बहोत प्रचार बध गया है इससें वे लोक अनेक प्रका-रसें उपद्रव करेंगें, तब श्रीजिनेश्वरसूरिजी बोले कि जूंवांके भयसें क्या वस्त्र डाल देना उचितहै इससें आप प्रसन्न चित्तसें आज्ञा देवो, तब गुरुमहाराज श्रीबुद्धिसागरजीकों आचार्यपद देके गुर्जे-रदेशमे विहार करनेकी आज्ञा दिनी तब श्रीजिनेश्वरसूरिजी श्री-बुद्धिसागरसूरिजी दोनो गुजरातदेशमें विचरणें लगे और कल्याणवती साधवीकों महत्तरापद देकर साधवीयोंके साथ विहारकरनें की आज्ञादी ॥ अब कोइ एक दिनके अवसरमें श्रीमान् पंडितजिनेश्वरसूरिजी स्वपरसिद्धातपारगामी होके गुर्जे-रदेश और अणहिलपाटणसहेर मे विशेष लाभादिकजाणके विनयपूर्वक श्रीगुरुमहाराजसे इस प्रकारसे बोले कि हे भगवन्

जो कोइ वि दूसरे देशमें जायके सत्यमार्गका प्रकाश नहिं करें तो जाणें हुवे जैनधर्मका क्या विशेष फल है? और सुणतें हैं कि वहुतवडागुजरातदेश है परंतु वह देश चैत्यवासी आचार्यों करके भराहूवाहै इसवास्ते जों वहां पर जाणाहोवेतो वहुतकल्याणकारी है तिसके वाद श्रीवर्द्धमानसूरिजीनें कहा कि यह तुमारा कहणा वहुत अच्छा है परंतु अच्छा शकुन निमित्त वगेरे देखके कार्य करणा अच्छा है वादशुभशकुन निमित्तादिक देखा और अच्छाशकुन निमित्त वगेरे हूवा उसके वाद भामहसार्थवाहके वृहत सथवाडे साथ श्रीवर्द्धमानसूरिजी महराज श्रीजिनेश्वरसूरिजी श्रीबुद्धिसागरसूरिजी आदि १८ साधुवोंके सहित गुजरातदेश अणहिलपुर प्रति चले अनुक्रमकरके एकपल्ली में आये वहां स्थंडिलगये हुवे पंडित श्रीजिनेश्वरसूरिजीसहित श्रीवर्द्धमानसूरिजी कुं सोमध्वजनामका जटाधारी मिला उसके साथ ज्ञानगोष्टि हुइ उसके वाद सर्वोत्कृष्टगुण देखके श्रीआचार्य महाराजनें प्रश्नोत्तर कहे यथा—

का दौर्गत्यविनाशिनी हरिविरिंच्युग्रप्रवाची च को,
वर्णः को व्यपनीयते च पथिकैरत्यादरेण श्रमः,
चंद्रः पृच्छति मंदिरेषु मरुतां शोभाविधायी च को,
दाक्षिण्येन नयेन विश्वविदितः को भूरि विभ्राजते ॥१॥

व्याख्या—दरिद्राताका नाश करनेवाली कौण है, विष्णु और ब्रह्माका उत्कृष्ट प्रकारसें कहेणेवाला कोण अक्षर है, मुसाफर घणे आदर पूर्वक कोणसा परिश्रम दूर करतें हैं, सोमध्वज नामक ब्रह्मचारी पूछे है कि देवताओंके मंदिरां पर शोभा करनेंवाली कौण है,

दाक्षिण्यता और नीति करके जगतमें प्रसिद्ध एसा कोण पुरुष बहुत शोभता है, ॥ १ ॥ इहां पर यह उत्तर है, १ सा-लक्ष्मी २ ओम् ३ अध्वज ४ ध्वज ५ सोमध्वज-चंद्रप्रभु १ महादेव २ जटाधर ३ यह ३ नाम निकलते है सा १ ओम् २ अध्वज ३ ध्वज ४ सोमध्वज ५ इन ५ उत्तरके अंदरसें ७ नाम निकलतें हैं सो क्रमसें जाणलेना ॥ इस प्रकारसें अपणे नामका प्रश्नोत्तर सुणके यह सोमध्वज ब्रह्मचारी बहुत खुशी हुवा और इसका श्वेताम्बर दर्शन उपर बहुमान हूवा और प्रासुक अन्नदान वि दीया और वो ब्राह्मण लोकोंके सन्मुख आचार्यश्रीकी गुणकी स्तुति वगेरे कहणे पूर्वक भक्तिसतकार करणे लगा उसके वाद उसी ग्रामह साह सार्थ वाहके सथवाडेके साथ चले और क्रमसे अणहिलपत्तनमे पोहोचे और चारतरफकोटवाली माडवीमे उतरे परतु तिस माडवीमें मकान है नहिं केवल मांडवीके अंदर चोतरेपर उतरे इस नगरमे सुविहित साधुका भक्त कोईभी श्रावक नहिं है जिसकेपास मकान वगेरेकी याचना करे जितने वहा रहे हूवे मुनियोंके सूर्यका ताप नजीकमे आया तब पंडित जिनेश्वरसूरिजीनें इसतरे कहा हे भगवन् ऐसे वेठनेमे कोइ वि काम होगा नहि इसवास्ते कुछ उद्यम किया जावे तो अच्छा है तब श्रीवर्द्धमानसूरिजी गुरुमहाराज बोले हे सुशिष्य तुम कहो क्या करें पंडित श्रीजिनेश्वरसूरिजीने कहा कि जो आपश्री आज्ञाकरोतो यह सामने उचा घर हे इसमे जाउं तब श्रीवर्द्धमानसूरिजीने कहा जावो बाद सद्गुरुके चरणकमलोंमे वंदना नमस्कार करके उस उंचे धवले घरमें गये वो मकान श्रीदु-

लभराजासंबंधि प्रोहितका था तिसके अंदर पधारे तिस अवस-रमें पुरोहित अपणे घरके अंदर बेठा था और अपणे सरीरमें तैलका मर्दन करताथा उतने पण्डित श्रीजिनेश्वरसूरिजीनें उस पुरोहितके आगे वेठके आशीर्वाद कहा यथा—

सर्गस्थितिक्षयकृतो, विशेषवृषसंस्थिताः ।
श्रिये वः संतु विप्रेंद्र ब्रह्मश्रीधरसंकराः ॥ १ ॥

व्याख्या—रचना करणा स्थिर रखना विनाशकरना येहि हंसशेष-नागवृषभपर रहे हूवे ब्रह्मा विष्णु महादेव हे श्रेष्ठविप्र तुमारे कल्याण ओर लक्ष्मीके लिये होवो ॥ १ ॥ यह आशीर्वाद सुणके मनमें बहुत खुशी होके वह राजाका पुरोहित विचारणे लगा कि यह कोइ चतुर साधु है, इस अवसरमें मंदिरके अंदर ऐकांतमें रहि हुइ वैदिकशालामें ॐऋषभं पवित्रं पुरुहूत मध्वरं यज्ञं महेशं इत्यादि वेदपदका परावर्तन दूसरि तरेसें करते हूवे छोकरोंके मुखसें सु-णके पण्डित श्रीजिनेश्वरसूरिजीने कहा इसतरे वेदपदोंका उच्चा-रण नहिं करणा पुरोहितनें कहा तो किसतरे उच्चारण करणा चाहिये मुनिनें कहा इस प्रकारसें उच्चारण करणा उचित है ॐऋषभं पवित्रं पुरुहूत मध्वरं यज्ञं महेशं इत्यादिसंपूर्ण कहा तब यह सुणके आश्चर्य-सहित मनवाला वो राजाका पुरोहित कोमलवाणीसें पूछनें लगा कि कोइभि मनुष्य भणेसिवाय वेदपाठकों शुद्ध अथवा अशुद्ध जाण सके नहिं तो वेद भणनेंके अनधिकारी एसे आप शूद्र जाति-वालोंको इस वेदपाठका घोखणा अशुद्ध है एसा कैसे जाणा तब पण्डित श्रीजिनेश्वरसूरिजी बोले के हे महाभाग्यशेखर

हे श्रेष्ठपुरोहित जिसीतरे तुम कहेतेहो उसीतरे शूद्र जातिकों वेदपाठका अधिकार नहिं है परंतु हम शूद्र नहिं है किंतु ४ वेदोंके अध्ययन करणेवाले ब्राह्मण हैं और ब्राह्मणका लक्षण यह है ॥

तपसा तापसो ज्ञेयः, ब्रह्मचर्येण ब्राह्मणः ।
पापं परिहरंश्चैव, परिव्राजोऽभिधीयते ॥ १ ॥

व्याख्या—तप करके तापस होवे, ब्रह्मचर्य करके ब्राह्मण होवे, पापोंका परिहार करता हूवा परिव्राजक कहा जावे ॥ १ ॥ इसतरे पूर्वऋषियोंका कहा हूवा ब्रह्मचर्य पालनेके लक्षणसें और अर्थसें हम ब्राह्मणही हैं तब आनंदसहित पुरोहित बोला कि हे यतियो आपलोक कौंणसे देशसें इहांपर आयें हैं तब पंडित श्रीजिनेश्वरसूरिजीने कहा हे पुरोहित ? नगरीयोंमे तिलकसमान दिल्लीनामकी नगरीसें हम आये हें तब पुरोहितनें कहा चक्रादि लक्षणसहित आप श्रीके जेसे मुनिराजरूपी हंसोंके चरण न्यास करके इस नगरमे कौनसा वो धन्यवादयुक्त पृथ्वीतल है जो कि आपश्रीनें अलकृत किया है अर्थात् आपश्री इहा कौनसे स्थानमें उतरे हैं पंडित श्रीजिनेश्वरसूरिजीनें कहा विशाल आतपवाली शालामे हम उतरें हैं पुरोहित बोला कि ऐसी शालामें कैसे उतरे हो पंडित श्रीजिनेश्वरसूरिजीनें कहा पुरोहित मित्र ? दूसरे सर्वस्थान विरोधियों करके रोकणेसें, पुरोहित बोला शांत प्रकृतिवाले और किसीकाभि अपराध नहि करणेवाले ऐसे आपश्रीकेंभि कोइ शत्रु हैं, पंडित श्रीजिनेश्वरसूरिजीने कहा हे विमर्श ?

मुनेरपि वनस्थस्य, स्वानि कर्माणि कुर्वतः ।
उत्पद्यन्ते त्रयः पक्षाः, मित्रोदासीनशत्रवः ॥ १ ॥

व्याख्या—वनमें रहे हूवे और अपणे धर्मकार्य करनेवाले ऐसे मुनियोंकेभी मित्र उदासीन शत्रु यह तीन पक्ष उत्पन्न होतें है ॥ १ ॥ पुरोहित कहने लगा यह बणी खेदकी वात है जो कि चंदन सदृश सीतल ऐसे आप जैसोंकाभि पापीलोकों अहित करतें है इस प्रमाणे पुरोहित थोडी वखत सोचके और कहनें लगा कि, वह कौनसें दुर्विनीत हैं, उनुकुं मैं जाणना चाहताहुं पंडित श्रीजिनेश्वरसूरिजीनें कहा हे महात्माजी उणोंके कल्याण होवो, उणोंकी वार्ता करणे कर हमारे क्या प्रयोजन है इसतरे सुणके पुरोहित अपणे मनमें विचारणे लगा कि ॥

त एते सुकृतात्मानः, परदोषपराङ्मुखाः,
परोपतापनिर्मुक्ताः, कीर्त्यंते यत्र साधवः ॥ १ ॥

व्याख्या—जो परदोषसें विमुख है और परको संताप देणेसें विरक्त है वेंहि पुण्यात्मा और साधु होतें है ॥ १ ॥ तो यह महात्मा किसवासते अपणे प्रतिपक्षियोंका नाम कहैं और मेरेभि दुरात्माओंका नाम सुनना अकल्याणकारी है इसलिये नाम नहीं लेना अच्छा है दूसरा पूछु इसतरे विचारके प्रगटपणे पुरोहितने पूछा कि आपश्री इतनेहि हो या दूसरे भी कोई मुनियों हैं पंडित श्रीजिनेश्वरगणि, बोले कि जिनके हम शिष्य हैं वे अपणी बुद्धिसें बृहस्पतिकुं जीतनेवाले सब जीवके रक्षक और हमारे गुरु तथा सर्व परिग्रह स्त्री धन धान्य स्वजन स्नेह संबंध

त्याग करणेवाले और श्रेष्ठ है नाम जिणोंका ऐसें श्रीवर्द्धमान सूरीश्वरजी हैं सो हमारे गुरु महाराज है वहभि पधारे हैं, पुरोहित–बोला आपश्री सर्व, मिलके कितने हो ऐसा विसयपूर्वक पूछणेसें पंडित जिनेश्वरगणिः बोले कि १८ पाप स्थानकसें रहित हम १८ साधु है पुरोहित अपणे मनमें विचारे है अहो

त्यक्तदाराः सदाचारा मुक्तभोगा जितेन्द्रियाः ।
गुरवो यतयो नित्यं, सर्वजीवाऽभयप्रदाः ॥ १ ॥

व्याख्या–स्त्रीका त्याग करनेवाले श्रेष्ठ आचारवाले भोगरहित इंद्रियोंकुं जीतणेवाले और नित्य सर्वजीवोकु अभयदेनेवाले जो यति है सो गुरु हैं इसतरे दसाध्यायमे कहा है वेसाहि यह आत्मा सद्गुरु हैं इणोंकुं अपणे घरमेहि लाके, पापरहित इणोंके चरणकी पवित्र धूलिसे मेरे घरका आगण पवित्र करुं ओर प्रगट पुण्यराशिरूप इणोंका निरंतर दर्शन करनेसे मेरा जन्म सफल होगा इसतरे विचारके और बोला कि हे महासात्त्विकमुनिवर्यो च्यार शालावाले विस्तीर्ण मेरे घरमे एक दरवाजेसें प्रवेश कर एक शालामे पडदा कर आप सर्वमुनिसुखपूर्वकरहो ओर भिक्षाके अवसरमें मेरा आदमी आपश्रीके साथमे होणेसें ब्राह्मणोंके घरोंमे सुखसें भिक्षा मिलेगी और आपको भिक्षामेभि कुछ हरकत होगी नहीं इसके बाद पंडित जिनेश्वरगणिजीने कहा कि तुमारे जैसे उचित अवसर जाणणेमे मनोहर चित्तवाले दूसरे कोण हैं इसतरे कहते हुवे बोले कि

प्रेक्षन्ते स्म न च स्वेदं, न पात्र न दशान्तरं ।
सदा लोकहितासक्ता, रत्नदीपा इवोत्तमाः ॥ १ ॥

व्याख्या–जैसें रत्नका दीपक तेल वत्ती पात्र कि अपेक्षा विनाहि प्रकाश करता है तैसें हि उत्तम मनुष्य निरंतर लोकोंके हितमे तत्पर होते है इसतरे कहते हूवे श्रीजिनेश्वरगणिजी अपणे गुरु पास गये और सर्ववृत्तान्तकहा, वृन्तान्तसुणके श्रीगुरुमहाराजनेंभि शुभायति विचारके कहा कि इसीतरे करणा उचित अवसर है ऐसा कहेके वहां पर रहे. अपणी धार्मिक क्रियाकरणेमें तत्पर ऐसे मुनियोंकी वार्ता नगरमें फेलीके शुद्धवसतीमें रहेणेवाले मुनियों इहांपर आयेहैं, पुनः साध्वाभास साधु नहिं पण साधुके नामसें ओलखाणेवाले ऐसे चैत्यवासी मुनियोंने सुणाके शुद्धवसती वासी इहांपर मुनि आये हैं ऐसा सुणनेके अनंतर हि एकट्ठे होकर सर्व उण चैत्यवासी मुनियोंने विचार करणा सरु किया कि अहो जो शुद्धवसतीवासी मुनि इहांपर आये हैं सो अच्छा नहिं है कारणके यह मुनि तो सुविहित हैं और निरंतर आगममें कहेमुजब क्रिया करणेवाले हैं और चैत्यवासका निषेधकरणेवाले हैं और अपणे लोक स्वच्छंदाचारि हैं सिद्धांतसे विरुद्ध चारगतिरूपसंसारमे गिरानेवाले देवद्रव्यके लेनेवाले हैं निरंतरएकठिकाणे रहेनेवालेहैं कामकुं उन्मत्त करणेवाले तांबूलकूं निरंतरखानेवालेहैं चित्रसहितविचित्र प्रकारका हिंडोला खाट पलंग गादी तकिया गालमसूरिया इत्यादि शृंगारकी चेष्टाओं प्रगटकरणेकरके नटविटकीतरे महा विलासकरणेवालेहैं इत्यादि कहणेपूर्वक यह मुनि अपणे आत्माकूं बगवृत्तिकरके लोकोंमें सर्वोत्कृष्टधर्मिपणे देखावेंगे और अपणेकूं

सर्वठिकाणे 'अनाचारी हैं, ऐसा कहके ओलखावेंगे इसलिये जवतक यह व्याधि कोमल है तवतकहि इसका विनाशकरणा चाहिये इमतरे चैत्यवासियोंने अपणे अनाचारकी शंकासे वहुत विचार करके एक उपाय सोधाके अपणे इहां राज अधिकारियोंके पुत्रोंकूं भणाते हैं इसकारणसें अधिकारीलोक आपणे कहे प्रमाणे करेगे उसकेवाद राजअधिकारियोंका मनरजन करके उण राजअधिकारीयोंके मुखसें विदेशी मुनियोंपर असत् दोषारोपण करके इणमुनियोंका विनाशकरें ऐसा विचारके उस पूर्वोक्त कारणसें चैत्यवासियोनें अपणे विद्यार्थी राजाधिकारियोंके पुत्रोंकुं वुलाये और उणोंको खजूर दाख वरफ वगेरे पदार्थ देके लोभित किये और उण विद्यार्थियोंकुं चैत्यवासियोंने कहा कि तुम लोकोंमें ऐसे कहोकी परदेशसें कोई श्वेताम्बर साधुके वेषमें श्रीदुर्लभ राजाके राज्यका छिद्र देखणेवाले चरपुरुष इहांपर आये हैं वाद विद्यार्थी वालकोंने वेसाहि किया उसके अनंतर वह वार्ता जलके अदर तैलके विंदुकीतरह सर्वनगरमे फेली और राजसभामे भि आई, अनंतर श्रीदुर्लभराजानेभि कहाकि अहो जो इमतरेके क्षुद्र और कपटी श्वेताम्बर मुनिके वेषमे आये है तो उनुकों रहेणेवास्ते मकानकिसने दीयाहै वहां राजसभामें रहे हुवे किसी पुरुषनें कहा के हेदेव ! आपके हि पुरोहितनें उणोंकों अपणे घरमे रख है उसके वाद दुर्लभ राजाने कहा कि पुरोहित कुं वुलावो तव पुरोहित कुं वुलाया और पुरोहित कुं, कहाकि पुरोहित श्वेताम्बर मुनियोंके रूपकों धारणेवाले जो पर

चर पुरुष इहांपर आये हैं उणोंकों रहेणे वास्ते मकान क्या तुमने दीया है ऐसा राजाका वचन सुनके पुरोहितनें कहा कि किसनें यह दूषण उत्पन्न किया है जो वे मुनि लोक परदेशी चर पुरुष हैं तो किं बहुना बहुतकहणेसें क्या प्रयोजन है, जो वे श्वेताम्बर मुनियोंपर यहदूषणसत्य है तो उणोंके तरफसें मैं जमानत में एकलाख द्रव्यकी किंमतवाली पटी याने वस्त्र देताहुं ऐसा राजसभामे सर्वलोकोंके सामने कहके अपणे पासका १ लाख किमत वाला वस्त्र राजसभामे सर्व लोकोंके सन्मुख डाला परंतु किसिकी हिंमत न हुइके उस वस्त्र कुं लेवे और जो मैरे घरमें रहे हुवे मुनियोंमें दूषणका गंधभि होवे तो दोषारोपणकरणेवाले या कहेणेवाले इस पटीकुं उठावो ऐसा कहकर पुरोहित चुपका हूवा उसके बाद वहां राजसभामें बहुतचैत्यवासियोंके भक्त मंत्री श्रेष्ठि प्रमुख प्रधान पुरुष बैठेथे परंतु किसीने भि उस पटीकुं उठाही नहिं उसकेबाद राजाके आगे पुरोहितने कहाके हेदेव

न विनापरवादेन, रमते दुर्ज्जनो जनः,
श्वेच सर्वरसान् भुक्त्वा विनाऽमेध्यं न तृप्यति ॥ १ ॥
महतां यदेव मूर्धनि तदेव नीचाश्रयाय मन्यन्ते ॥
लिंगं प्रणमंति वुधाः, काकः पुनरासनी कुरुते ॥ २ ॥

व्याख्या—जेसे कुत्ता सर्व रसका भोजनकरकेभि विष्ठा विना धाये नहिं इसीतरह दुर्जन मनुष्यभी निंदा किये विना संतोष पावे नहिं ॥ १ ॥ मोटा पुरुषोंके जो वस्तु मस्तक उपर धारण लायक होती है उसकुं नीच पुरुष अपणा नीच आश्रय माने है जैसे

पंडित पुरुष लिंगकुं नमस्कार करते हैं और काग उसकुं आसन बनाकर ऊपर बेठता है ॥ २ ॥ इस वास्ते हे राजन् मेरे घरमें जो कोई मुनि रहे है वे मूर्तिमान् धर्मके पिंड सरीखे हैं और क्षमा दम सरलता कोमलता तप शील सत्य शौच निष्परिग्रहपणा वगेरे गुणोंरूपी रत्नका करडीया सरीखे कोई जीवकुंभी संताप देवे नहिं तो फिर इसलोक परलोकमे विरुद्ध अकार्य वे मुनि किसतरह करेंगे, वास्ते उणोंमे दूषण लेशमात्रभी नहिं है, परतु यह दुश्चेष्टित कोई पापी पुरुषोंका किया हुवा है, बाद राजाके चित्तमें यह कथन रुचा और कहाके हे पुरोहित तुम जिसतरह कहे है उसि तरह सर्व संभवे है बाद राजा और पुरोहितका विचार सुणके सर्व सूराचार्य वगेरेंने विचार किया जो इण परदेशी मुनियोकुं वादमें जीतके निकाल देवें तब ठीक होवेगा ऐसा विचारके अनतर सूराचार्य वगेरेंने पुरोहितकुं बुलायके कहा हे पुरोहित तुमारे घरमें रहेनेवाले मुनियोंके साथ हम वादविषयि विचार करना चाहते हैं तब पुरोहितने कहा श्वेताम्बरवसतिवासी मुनियोकुं पूछके तुमकुं मे कहुंगा बाद पुरोहित अपणे घरजाके श्रीवर्द्धमानसूरिजी पंडित श्रीजिनेश्वरगणि भगवानको कहाकि आप श्रीके प्रतिपक्षी श्रीपूज्योंके साथ विचार वाद विषयी करणा चाहतें हैं, तब पुरोहितकुं प्रत्युत्तर में कहा कि हे, पुरोहित, क्या, अयुक्त है जो प्रतिपक्षियोंकी इच्छा है तो हम भी इसीहि प्रयोजन वास्ते यहां पर आयें हैं परतु हे पुरोहित सूराचार्य प्रमुखकुं कहेणा—जो आपलोक सुविहित मुनियोंके साथ वाद करना चाहते हो तो श्रीदुर्लभ

राजाके सन्मुख जिस स्थानमें आपलोक कहेंगे वहां पर वाद विषयी विचार करणेकुं तयार हैं सुविहित मुनियो शोभन धर्ममार्ग प्रगट करणेवास्तेहि विशेष कष्टयुक्त ग्राम नगरादिकोंमें विहार करते हैं सर्वत्र देश परदेशमें विचरतें हैं और श्रेष्ठ धर्ममार्ग प्रगट कर-णेका मुख्य कार्य है इसलिये परिश्रम करते हैं सो राजाके सामने आपलोकोंके साथ वे सुविहितमुनियों वादविषयीविचार करणेमें अत्यंत उत्कंठा सहित हैं इसवास्ते आपलोकोंकुं विलंब करणा नहीं शूराचार्यप्रमुखोंके सन्मुख पूर्वोक्त प्रमाणे पुरोहितके कहेणेके अनंत-र हि अपणे पंडितपणेका गर्वकरके उण सर्व शूराचार्य प्रमुख चैत्यवासी मुनियोंने आपणे मनमे विचारा कि सर्व राजाधिकारी लोक जबतक हमारे वसमें हैं तबतक उण परदेशी मुनियोंसें हमकुं क्या भय है अर्थात् किसितरेका भय नहि है

एसा विचारके चैत्यवासी आचार्योंने पीछा प्रत्युत्तरमें पुरो-हितकुं कहाकि हे पुरोहित राजाके सन्मुख सुविहित मुनियोंके साथ वाद विषयि हमारा विचार होवो अर्थात् सद्धर्म विषयिवाद हमलोक करेंगें उसके अनंतर पुरोहितने चैत्यवासी शूराचार्य प्रमु-खके वचन अंगीकार किये और शूराचार्य प्रमुख प्रतिपक्षियोंने कहाकि अमुक दिनमें पंचासरा संज्ञक वडे देहरासरमें सद्धर्म विषयी वाद विचार होगा एसा निश्चयकरके सर्वलोकोंके आगे कहा और पुरोहितनेभि एकांतमे राजाकुं कहा हे राजन् इहांके रहेनेवाले मुनियो परदेशसें आये हुवे सुविहित मुनियोंके साथ सद्धर्मविषयि वादविचार करणा चाहतें हैं वह सद्धर्मविषयि

वाद विचार न्यायवादी राजाके सन्मुख किया हूवा शोभे है इस कारणसें युक्त अयुक्त विचारमे चतुर ऐसे आपको प्रसन्न होकर उस सद्धर्म विषयि वाद विचार अवसरमे सभापति पणे होणा होगा यह पुरोहितका वचन सुणके श्रीदुर्लभ राजानें कहा कि इसमे क्या अयुक्त है अर्थात् यह कहणा तो अच्छा है, यह तो हमारा कर्त्तव्यही है इसलिये कुछभी अनिष्ट नही है और सद्धर्मविषयी-वादविचार अवश्य होणा हि चाहिये सद्धर्मविषयि वादविचारमे सभापति होणा और सद्धर्मका निर्णय कराके उसका अच्छीतरह संरक्षण करणा और कराणा यह हमारा मुख्य कर्त्तव्य और धर्म है वास्ते इस सद्धर्मविषयिवादविचारमे समदृष्टिपूर्वक सभापति-पणे हाजर होवुगा इसतरे श्रीदुर्लभराजाने पुरोहितका वचन अंगीकारकरा तब उस पंचासर संज्ञक वडे देहरासरमे-सिंहा-सन गादी गोलआसणवगेरेकि बिछायत भई वाद चैत्यवासी सूराचार्य वगेरे नानादेशोद्भव उज्वल श्लक्ष्ण चाकचिक्य वस्त्र पहरे हूवे रजोहरणसहित केसोमे तैल लगाया है ऐसे लंबमान मुहपत्ति सहित तैलसे ओपित डंडयुक्त ताम्बूल खाते हुवे लाल मुख जिणका पालखियोंमे बेठे ऐसे भंडारी मंत्री सेठ प्रमुख धनवान श्रावक भक्तिसे साथमें है जिणोंके सधवश्राविका अपणाआपणा आचार्योंका गुणगातिभई भक्तिसहितधवलमंगल गीत ध्वनिसे रंजित किया है सबलोकोंकों जिणोने, भट्ट विरुद बोलते है लोक नमस्कार करते हैं मार्गमे जिणोंको, पंडितप-णेका अभिमानसहित हाथमें वादपुस्तिका धारणकियाहै ऐसे बडे आडंबर सहित

श्रीसूराचार्य प्रमुख (८४) चोरासी आचार्यों सूर्योदयमेंहि आयके अपणे अपणे आसनों पर बैठे, और राजाके प्रधानपुरुषोंने श्रीदुर्लभमहाराजाकोंभि बुलाये तब श्रीदुर्लभराजाभि बहुत पुत्र और सेवकादिकके परिवार सहित आयके वहां सभामें बैठे उसके बाद पुरोहितकुं राजाने कहा हे पुरोहित! मान्यवर देशान्तरसें आयें सुविहित आचार्यकों जलदि बोलावो अनंतर पुरोहित शीघ्र जाकर श्रीवर्द्धमानसूरिजीकों वीनति करी हे भगवन्! पंचासरसंज्ञक चैत्यमें सर्वचैत्यवासी आचार्य परिवारसहित आयके बैठे हैं श्रीदुर्लभमहाराजाभि आयेहैं और श्रीदुर्लभराजाने सर्व आचार्योंकुं नमस्कार करके और ताम्बूल देके सत्कार किया है और अब आपके आगमनकी राह देखतें हैं

यह वृत्तांत पुरोहितके मुखसें सुणके पूज्यपाद श्रीवर्द्धमान सूरिजी श्रीसुधर्मस्वामि श्रीजंबुस्वामिप्रमुखचवदपूर्वधारियोंकुं युग प्रधानोकुं दूसरे सर्वसुविहित आचार्योंकुं हृदय कमलके बीचमे विचारके अर्थात् सरण करके, पंडितजिनेश्वरगणि प्रमुख कितनेक गीतार्थ श्रेष्ठ साधुवोंकों साथ लेके चले पंचासरसंज्ञक चैत्यके सन्मुख, कन्या गाय शंख भेरी दही फल पुष्पमाला वगेरे सन्मुख आते हुवे मंगलरूप अनुकूल श्रेष्ठ सकुन देखनेसें संभावित हे सिद्ध प्रयोजनजिनके ऐसे श्रीवर्धमानसूरिजी वगेरह वहां सभामें पोहोचे और पंडित श्रीजिनेश्वरगणिजीका बिछाया कंबल पर और श्रीदुर्लभ राजानें देखाया जो योग्य स्थान वहां बैठे. बाद पंडित श्रीजिनेश्वरगणिजीभि श्रीगुरुमहाराजकी आज्ञासें

श्रीगुरुमहाराजकुं नमस्कार करके श्रीगुरुमहाराजकेचरणकमलोंके पासही बैठे गुर्वाज्ञा पालनेके लिये, इसअवसरमे राजा ताम्बूल देनेके वास्ते प्रवर्तमान हुवा तब सर्व सभासमक्ष श्रीवर्धमान सूरिजी बोले हे महाराज! जैन सिद्धांतमें मुनियोंको ताम्बूल भक्षण स्नान करणा पुष्पमाला पहेरना सुगंध पदार्थलगाना नख केश दांतका संस्कार करना मना किया है. बाद—संजमे सुट्ठि अप्पाणं० लहुभूय विहारिणं० ॥ १० ॥ दशवैकालिक सूत्रके तीसरे अध्ययनसें ५२ अनाचीर्ण सुनाये तब राजा बोला ताम्बूल खानेमे क्या दोष है आचार्यने कहा कामराग बढानेवाला ताम्बूल है यह जगत् प्रसिद्ध है कहाभी है श्लोक—ताम्बूलं कटु तिक्तमुष्णमधुरं क्षारं कषायान्वितं। वातघ्नं कफनाशनं कृमिहरं दौर्गंध्यनिर्नाशनम्। वक्रस्याऽभरणं विशुद्धिकरणं कामाग्निसंदीपनं। ताम्बूलस्य सखे! त्रयोदश गुणाः स्वर्गेऽपि ते दुर्लभाः ॥ १ ॥

अर्थ ॥ हे मित्र! ताबूलके १३ गुण है कडवा १ तीखा २ मधुर ३ उष्ण ४ क्षार ५ और कषाय रससहित ६ वायु ७ कफका नाशक ८ कृमिमिटानेवाला ९ दुर्गंधनाशक १० मुखका आभरण ११ शुद्धिकारक १२ कामाग्निका दीपक १३ इसलिये ब्रह्मचारियोंकुं तांबूल खाणा रागवृद्धिका हेतु होणेसे सम्यक् नही है स्मृतिमेभि कहा है ॥ ब्रह्मचारियतीनां च, विधवाना च योषिताम्। ताम्बूलभक्षणं विप्र! गोमांसान्न विशिष्यते ॥ १ ॥ स्नानमुद्वर्त्तनाभ्यंगं, नखकेशादिसंस्क्रियाम्। धूपं माल्यं च गंधं च, त्यजंति ब्रह्मचारिणः ॥ २ ॥ अर्थ हे ब्राह्मण! ब्रह्मचारी १ यति २ विध-

चास्त्री ३ इणोंकुं तांबूल खाणा गौमांसवत् है ॥ १ ॥ स्नान १ पीठी २ तैलकामर्द्दन ३ नखकेशादिकका संस्कार ४ धूप ५ माला ६ सुगंध ७ इत्यादि ब्रह्मचारि छोडते हैं ॥ २ ऐसा वचन आचार्यका सुनके विचक्षण लोकोंके हृदयमें हर्षउत्पन्न हुवा और श्रीवर्द्ध-मानसूरिजीपर बहुमान भया बाद श्रीवर्द्धमानसूरि बोले आचार्योंके साथ विचार होंणेमे हमारा शिष्य सूरिजिनेश्वर जो उत्तर प्रत्युत्तर देवेगा वो हमारे प्रमाण है तब सब सभासदोंने कहा ऐसा होवो तदनंतर चौराशी आचार्योंमें प्रधान चैत्यवासी सूराचार्य बोले अहो राजा मंत्रि प्रमुख सर्वलोको जो हम कहते हैं सो सुनो तब मंत्रिवगेरे चैत्यावासियोंके पक्षपाति कहने लगे आप कहिये हमलोक साव-धान होके सुनते हैं बाद दुर्लभ राजा उस वक्तमें सब चैत्यवासी आचार्य साध्वाभास चकचकायमान समारा हुवा मस्तकमें केश जिणुके ताम्बूल रससे रंगा भया होठ ऐसे उद्भट वेषवाले सुगंध पुष्पोंकी माला जिणोने पहरी ऐसे धूपित शुभ्र रेशमी वस्त्रपहरे हैं, ऐसोंको देखके विचार किया अहो विलास सहित चेष्टावाले यह लोक विटप्राय अपणे कल्पसे च्युत हैं और देखो ये विदेशि महानुभाव उत्तम स्वभाववाले नीचे आसनपर बैठे भये लोच कियाहुवा मस्तकमें जिणुने मलीन वस्त्र पहरे हैं, जिणोंके दर्शन-मात्रसैहि मालूम होता है शांततायुक्त तपनिष्ठमूर्त्ति निश्चय जो कोई गुणयुक्त शरीरी तीन जगतमें पूजनीय महाशीलव्रतपात्र कहे जाते हैं, वै येही महाव्रती हैं ऐसा राजा विचारते है उतने सूराचार्यने पूर्वपक्षकहा जैसे 'अहो वसतिनिवासी श्रमणो !

सावधान होके सुनों इसवक्तके मुनियोंकुं जिनभवनमे रहना ही योग्य है जिनगृहमे रहणेसे निरपवाद ब्रह्मव्रतका संभव है यतियोंके ब्रह्मचर्य ही प्रधान है और व्रतोके सदृश अपवाद इसमें नही है, सिद्धांतमे ब्रह्मव्रतको सर्वव्रतोंमे निरपवाद कहा है 'न वि किंचि अणुन्नायं, पडिसिद्धं चा वि जिणवरिंदेहिं'

अर्थ ॥ तीर्थंकरदेवने कुछ आज्ञा नही दीया है वैसा मनाभि नही किया है मैथुनकु छोडके

उपाश्रयमें रहणेसे स्त्रीयोंका, मनोहरशब्दसुणनेवगेरेसे ब्रह्म व्रत सर्वथा नही पालशके मानसिक विकारादि संभवसे स्त्रीजनका मधुरशब्दसुणना रूपदेखना कोकिलादिकका मधुरबोलना इत्यादि कारणोंसे भुक्तभोगि यतियोंकु पूर्वानुभूत संभोग स्मरणमे आवे अभुक्त भोगियोंकु कुतूहल प्रगट होवे और साधुवोका किया भया निरतर कानोंको अमृत सरीखा स्वाध्याय ध्वनि सुणके कितनेक साधुवोंका शरीरका लावन्यदेखके प्रोषितपतिवाली वनितावोंकी रमणेका इच्छा वगेरे प्रगट होवे इसतरह परस्पर निरतररूपका देखना गीत श्रवणादिकसें दुर्जयमन्मथके जोरसे चारित्रनाशादि अनेक दोषोंकि पुष्टि होती है कहा है ॥ गाथा ॥

थीवज्जिअं वियाणह, इत्थीणं जत्थठाण रूवाणि ।
सद्दाय न सुचंती तापियतेसिं न पिच्छंति ॥ १ ॥
बंभवयस्सअगुत्ती, लज्जानासोय पीइवुड्ढीअ ।
साहु तवोधणनासो, निवारणा तित्थपरिहाणी ॥ २ ॥

अर्थ ॥ साधुवोंकों स्त्रीयोंका बेठणा रूपदेखणा शब्दका

सुणना यह नही करणा स्त्रीयोंभी साधुवोंकों हरवक्त नही देखे स्त्री रहित स्थानमे रहणा जाणो ॥ १ ॥ स्त्रीसाथरहणेसे ब्रह्मव्रतकी अगुप्ति लज्जाका नाश प्रीतिकी वृद्धि साधुके तपरूप धनका नाश धर्मसे दूर होणा तीर्थकी हानि इत्यादि दोष होते है ॥ २ ॥ इसलिये वसति वास यतिकुं युक्त नही है

लोकमेभी कहते हैं

"शृणु हृदयरहस्यं यत्प्रशस्यं मुनीनां,
न खलु योषितसन्निधिः संविधेयः ॥
हरति हि हरिणाक्षीक्षिप्तमक्षिक्षुरप्र
प्रहतशमतनुत्रं चित्तमप्युन्नतानाम्" ॥ १ ॥

मुनियोंके हृदयका रहस्य प्रशंसनीय सुनो स्त्रीकी सोबत नही करणी स्त्रीयोंका डालाहुवा नेत्ररूपशस्त्रोंसे शमतनुत्राणरूप चित्त वृद्धमुनियोंका हरति हे १ जिन मंदिरमे रहणेसै सदा स्त्रीयोंका संभव नहि होता हैं कदाचित् चैत्यवंदनके लिये क्षणमात्र आणे जाणे वालीयोंके साथ वैसाप्रसंग नही प्राप्त होता है इसलिये प्राणातिपातादिकके जैसा अनेक दोष दुष्ट होनेसे परघरमे रहना ठीकनही होनेसे मंदिरमे रहनाहि इसवक्तके मुनिजनोकुं संगत है, वहहि कहते है, इस वक्तके मुनियोंकुं जिनमंदिरमें निवासविना-उद्यानमे रहना या परघरमें निवास करना यह दो विकल्पमें द्वितीय विकल्प तो दासी पुत्रवत् नहीवनता है कारण परघरमें स्त्री संसर्ग हरवक्त रहता है प्रथम उद्यानपक्ष तो सपक्ष सदृश हमारे पक्षकुं नहीहठाता है स्त्रीपरिचयादि और आधाकर्मादि दोष

समुहसे भक्षितहोणेसे दिखाते है उद्यानमे रहते भये यतीयो नवीन आंवेकीमंजरीकेखादसे पचमस्वरउच्चारण करते कोइल का शब्दसुणनेसै और मालती वगेरे पुष्पोंका सुगंध लेणेसै समाधियुक्तचित्तवालोकाभि चित्तविक्षेपहोता है कोइलका ओलना सुगंधग्रहणादि मदनोदीपनविभावसे भारतादिशास्त्रोमें कहा है, और क्रीडा करणेकुं आये कामीजनोंके आणेसे स्त्रीपरिचयादिकमें क्या कहणा है अथवा निरतरनवीन नवीन शास्त्राभ्यास करणेवाले मुनियोकों स्त्रीपरिचयादि दोप न होवे तथापि लोकोंके संचार विना उद्यानमे रहते मुनियोंका चोर वगेरेसै वस्त्रादिलेणेका संभव है शरीरओरसंयमविराधनाका प्रसंगहोवै, 'वादि कहते है युगधराचार्य ओरवज्रस्वामी वगेरह उद्यानमे समवसरे है ऐसा आगमप्रमाण है, इसपर पूर्वपक्षी कहता है यहकथनसत्यहै परंतु अनापात असंलोकगुप्त एक द्वार उद्यान विपय है ऐसा इसवक्त प्रायं राजा चोर वगेरेसे वाधित होणेसे मिलना दुर्लभ है सो केसे इस समयके मुनिजनोको कल्पे इसलिये इस अवसरमे जिनमदिरमें हि साधुवोंकुं निवास ठीक मालुमहोता है कारण जिनमंदिरमे आधाकर्मादिदोपनहीहोता है प्रयोग देते है इदानींतन मुनियोंके रहने योग्य जिनमदिर है, आधाकर्मादिदोपरहितहोणेसे, निर्दोप आहारवत्, इहां असिद्ध हेतु नही है जिनप्रतिमाके लिये बनाया मदिरमें आधाकर्मादि दोपका अवकास नही है यतिकेवास्ते मकान बणावेतो आधाकर्मी होवेहे और सुनो मुनि जिनमदिरमे नही रहे तव इसवक्त जिनमदिरोकी हानी होवे कारण पहले

कालानुभावसे श्रीमंतलोकसावधानहोके देवतत्वगुरुतत्वकुं मानणे-वाले श्रावक उत्कृष्टआदरसे चैत्योंकी संभालकरतेथे सांप्रततो दुषम-कालका दोपसे निरंतर कुटुंबकी प्रबलचिंतासंतापसे पीडितचित्त होनेसै इदरउदर चलते हुवे प्रायै निस्वश्रावकोंकों अपणेघरभी-वक्त पर आना मुस्किल होता हे जिनमंदिरआना तो कहांसै होवे उसका संभालना यहतो कैसेबने और श्रीमंत तो विषय सुखमे लीनभयें राजसेवादिकृत्यमें तत्पररहते जिनमंदिरकादर्शनभि नही करशक्तेहै संभालकरना कैसे बनशके, जिनमंदिरकी संभाल न होनेसे जिन चैत्यका नाशहोवे तीर्थविछेदका संभवहोवे और यति मंदिरमें रहते होवेंतो बहुतकालतक जिनघरबना रहै तीर्थ-व्यवच्छेद न होवे तीर्थरखणेकेवास्ते किंचित् अपवादभी सेवना आगममें कहा है

जो जेणगुणेण हिओ, जेणविणा वा न सिझए जंतु

जो जिस गुणसे अधिक होवे जिसविना जो सिद्धकार्य न होवे तब अपवाद सेवे इत्यादि सूक्ष्म दृष्टिसे विचारणेसै विद्वानोंके चित्तमे इस कालमें मुनियोकुं मंदिरमें रहनाठीकमालुम होताहै यह सूराचार्यने कहा. पूर्वपक्ष समस्त हृदयमें धारके उत्कटवादीपंडितरूपहाथीयोंमैं मृगेंद्रसदृश श्रीजिनेश्वरसूरि बोले अहो सभासदो ! निरंतर सर्वत्र निर्मलहृदयसे युक्तायुक्तविचार विषय बुद्धि पूर्वक कार्यकरणेवालेलोको ! मात्सर्यछोडके मध्य-स्थता धारके सावधान होके सुनो. पूर्वपक्षिने जिनभवनमे रहना इसवक्तके मुनियोंकुं उचित है निरपवादब्रह्मचर्यव्रतका संभव

होणेसे इत्यादिक कहके बंभवयस्स अगुत्ती इहां तक यति-योंकुं परघरमे रहणेसे दोपकहा सो अब विकल्पपूर्वक विचारते हैं ॥ सुनो ॥ जो यहपरगृहवसतिदूपणकहा तुमने वो क्या सर्वदा है या इसवक्तहीहै प्रथमपक्ष सर्वदा तब उद्यानादिकमे रहते यतिजनोकुं चौरादिउपद्रवका कैसे प्रतिकारहोय इसपर ऐसा न कहना उससमयमें काल सुखकारीथा सो चौरादिउपसर्ग नही-होताथा इस्सैं उद्यानमेनिवाससुनतेहैं, परघरमे रहना नहीहै इति । उत्तरकहते है उसवक्तभि तस्करादि उपद्रव अनेकधा सुणनेसै और उसकालमेंभि मुनियोंकुं परगृहका आश्रय आगममे कहाहै सो कहते हैं ॥

नयराइएसु विप्पइ, वसही पुव्वामुह ठवियवसहं

इत्यादि २ वृपभ कल्पनासे स्थापित नगरादिकमें यतियोंको वसतिकी गवेपणा करणा नगर वगेरे विना ऐसी वसति नही संभवे और उद्यानमे रहनाही उसवक्त मान्यथा तब ठिकाने ठिकाने नगर गाममे रहणेका पाठ नहि बने इसलिये प्रथमवि उपाश्रय परघरमे रहना यतियोंकाथा सो पहला पक्ष नहि बना, अब दूसरा पक्ष अंगीकारकरोगे तो हम पूछते है किस कारणसे साधुवोकुं परघरमे रहना नहि कल्पे जो स्त्री संसक्तादिकसे न कल्पे ऐसा कहोगे तो यह तो पहलेभि बनाथा उसवक्तभि स्त्रीरहित वसति-मिलनेसे या नहिं मिलनेसे कथित यतना सिवाय और समाधि-नहीं है वैसा इसवक्तभि आश्रय करलेणा न्याय सदृशहै कहा है यतना करणेवाले स्त्र्यादिसंसक्तस्थानमें इसवक्तभि ब्रह्मचर्य अगुप्ति

वगेरे दोष नहि लगते है, उसकारणसे पूर्वपक्षिने कहा इदानीं जिनगृहवास ही साधुवोंके संगत मालुम होता है इत्यादि, यत्यर्थ-क्रियमाणउपाश्रयमें आधाकर्मादि दोष होता है इहां तक सोवि अधिकतर दोष कवलित होणेसे चोरादि त्रास पिशाचादिभय-कल्पनाकरे सो कहते है, परघरमें (उपाश्रय) कदाचित् अधाकर्म अंगनासंसर्ग वगेरे दोष देखनेसे उपाश्रयका त्यागकरके जिनमंदि-रमेरहते सीलवान साधुवोंके जिनमंदिरमे शृंगारवती स्त्रीयोंके आनेसे गीतध्वनी करणेसे वैस्यादिकका नाटकहोनेसे वनिताकारूपादि-देखनेसे मन्मथका उद्दीपन होता है इसलिये यह उपस्थित भया ॥

यत्रोभयोः समो दोषः, परिहारश्च तादृशः ।
नैकपर्यनुयोज्यः स्यात्, तादृशार्थविचारणे ॥ १ ॥

जहां दोनुमें सदृश दोपहोता है, समाधानभि वैसाहि होता है वैसा अर्थ विचारणमें एक उत्तर न होता है ॥ १ ॥ हमारें पक्षमें स्त्रीसंसक्तपरघरमें कभि रहते उक्त दोष यतना करणेसे नहि होता और तुमारे पक्षमें तो जिनमंदिरमें रहणा सर्वथा वर्जित होनेसे कहां भि यतना नहि कहणेसे उक्तदोषकी पुष्टी कोण मनाकर सके, ऐसा नहि कहना गृहस्थोंका घर सांकडाहोवे यतना करणेसेवि कथितदोषसे मुक्त होना मुस्किल है, प्रमाण युक्त घरमें यतिका आश्रयकहा है उहां उक्त दोष नहि होता हैं गृहस्थ संपूर्णघरसमर्पणकरे तथापि यति मितअवग्रहमेंहि रहैं ऐसा सूत्रमे कहा है,

प्रमाण युक्त परघरके लाभमे तो संकीर्णमे भि यतनासैं रहते दोष नहि है, कहा है

निच्छयओपमाणजुत्ता खुड्डुलिआए वसंति जयणाए,

इत्यादि प्रमाणयुक्त छोटे उपाश्रयमेंमी जयणासे मुनि निश्चयसें रहै और भी सुनो, जिनमंदिरमें रहनेका समर्थन आत्माको बहुतअनर्थकारिहोनेसे योग नही सिद्धांतमे चैत्यमें रहना अत्यंतआशातनाका कारणहोनेसे मुनियोंकुं मनाकियाहै आशातना थोडीमी भवभ्रमणवृद्धिकाकारणहोणेसे अपथ्यसेवनवत् होतीहै ऐसा आगम है दुभिगंघमल० १ जइविन अहाकम्मं० २ आसायणमिच्छत्तं० ३, इत्यादि साधुका शरीर मेलसहितहोवे इसलिये मंदिरमेंरहणेसे आशातनाहोवे यद्यपि चैत्य आधाकर्मी न होवे तथापि रहणेका निषेधहै, कारण आशातना करणेसे मिथ्यात्व होता है, इसवास्ते कथंचित् आधाकर्मी उपाश्रयमे निवासभि सिद्धातमे कहा है, जिनघरनिवासतो अत्यंत निषेध होनेसे नहि करणा उचितहै, इसकारणसे उपाश्रयमें रहणा प्राप्तहुवा वैसा प्रयोग है—यतियोंकुं परघरमें निवास करणा निःसंगता प्रगट होणेसे संयमशुद्धिहेतुत्वात् शुद्धआहारग्रहणवत् ऐसा, यद्यपि पूर्वपक्षिने चैत्यमें रहे सिवाय रक्षा होवे नहि तथा तीर्थविच्छेद होवे इत्यादि कहके चैत्यमें रहना स्थापा वोभि विचार नहिं सहसक्ता है, केवल लोकोंकुं ठगना प्राय है, यतः तीर्थ अव्यवच्छेद किसकुं कहते है क्या यतियोकुं मंदिरमे रहणेसे भगवानका मंदिर प्रतिमा बनेरहै १ अथवा शिष्यप्रशिष्यादिपरपराका विच्छेद न होना सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकीप्रवृत्तिरहना कहते है २ प्रथम पक्ष नहि बनता है चैत्यवासविनाभि तीर्थकरोंके विंबादिककी अनुवृत्ति देखणेसे जैसे पूर्वदेशमे जिनप्रतिमाकुं कुलदेव-

ताकी बुद्धिसे पूजते है अन्यतीर्थीयोंके ग्रहणकरणेसै जिनप्रतिमा-
बनी है तीर्थ विच्छेद नही होता है तब व्यर्थ चैत्यवासमें रहणेसैं
क्या प्रयोजन है इसवास्ते तीर्थअव्यवच्छेदकार्यसे मोक्षादि फल-
सिद्धी नहीहै क्यों कि मिथ्यादृष्टिपरिग्रहीत जिनबिंबोंकुं मोक्षमा-
र्गका अंग नहीं कहा है

मिच्छदिट्ठि परिग्गहिआ ओ पडिमा ओ भावगामो न हुंति

मिथ्यादृष्टिपरिगृहीत जिनप्रतिमा भावशुद्धिका कारण न होवें
इति ॥ अब दूसरा विकल्प कहते है वोहि तीर्थअव्यवच्छेद अं-
गीकारकरो मोक्षमार्गहोनेसे चैत्यवास अंगीकारसै क्या प्रयोजन
है सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी अनुवृत्तिविना जिनघर बिंबके
सद्भावसेभि तीर्थोच्छेदहोता है, इसी कारणसे तीर्थकरोंके कित-
नेक आंतरोंमे रत्नत्रयी न रहणेसे कहांभी जिनप्रतिमाके संभ-
वमेंभी तीर्थविच्छेदकहा है, स्वयं कल्पिततीर्थअव्यवच्छित्ति आ-
गममें विसंवादि होनेसे व्यर्थही है, और सुनो जिनगृहादि अनु-
वृत्ति तीर्थअव्यवच्छित्ति होवे तोभि यतियोंका चैत्यमें रहना
और जिनगृहादि अनुवृत्ति इनदोनुंका श्यामत्वमैत्रतनयत्वसदृश प्र-
योज्यप्रयोजकभाव नहि बनताहै सो देखातेहै श्यामदेवदत्तहैं
मैत्रतनय होनेसै इहां श्यामत्वमें मैत्रतनयत्व प्रयोजक नहीं है,
किंतु साकादिआहारपरिणतिलक्षणउपाधि श्यामत्वमें है परंतु
यतियोंका चैत्यमें रहणाप्रयुक्तअनुवृत्ति नहि है कारण जिन
घरमें रहतेभि साताशील होनेसे जीर्णचैत्यकी जीर्णोद्धारकी
चिंता न करणेसै चैत्यअनुवृत्ति नहि रहै, किंतु चैत्यचिंताप्रयुक्त

चैत्यअनुवृत्ति श्रावकमि करते है, तो चैत्यकी अनुवृत्ति कैसै नहोवै, निखओरश्रीमंतश्रावक इसवक्त मंदिरकी देखरेख करते है यद्यपि दुःषमकालके माहात्म्यसै कितनेक प्रमादि होवे तोभी और सुद्धश्रद्धालुश्रावकचैत्यकी संभाल करे है, देखते है इस वक्त कितनेक पुन्यवान् श्रावक अपणा कुटंबका भार समर्थ पुत्रपर रखके जिनमंदिरकी संभालहि निरतरकरते है इसकारणसै श्रावक कृत संभालसै चैत्य अनुवृत्ति सिद्ध है, इस वक्तके तुमारे जैसे आचार्य चैत्यके उपदेशसै अनेक आरंभ करते हुवे व्यर्थहि क्यु तकलीफ करते हैं, ओर तीर्थ अव्यवच्छेदका कारण अपवाद सेवनकर चैत्यवासका स्थापनकीया सोमि सिद्धांतका नहि जाणना तुमारा प्रगट करे है, इसका और अर्थ होनेसै, जो कोइयति ज्ञानादिगुणसै अधिकहोवे जिसविना संघादिक केवडे कार्य नहि सिद्धहोतेहोवे तव वो गुणाधिक मुनि खगुणमे वीर्य फोरै यह अर्थ कहनेवाला जो जेण० इस गाथाका उत्तरार्ध है ॥

सो तेणतम्मिकज्जे सव्वत्थामं न हावेइ

इति अर्थ वो ज्ञानादि गुणाधिक संघादि कार्यमे सर्वशक्ति बल न घटावे इस्सै तुमारि इष्टसिद्धि न होवै इसप्रकारसै सर्व वादिने कही युक्ति निराकरणसै यतियोंका जिनभवनमे निवासका निषेध सिद्ध होनेसै अपने पक्षमे समाधान कहते है. जिनगृहनिवास मुनियोंकु अयोग्य है देवद्रव्यउपभोगादिवाला होनेसें जिनप्रतिमाके आगे चढाया हुवा नैवेद्यवत् । यह देवद्रव्यउपभोगादिमत्वहेतु

असिद्धनही है, जिनगृहमें रहते देवद्रव्यका उपभोग होता है सोने वैठने भोजनवगेरे करणेसै अनेक भवमें भयंकरफलअवश्य होता है ॥ १ ॥ विरुद्ध हेतुभी नहि है मुनियोग्यता कर व्याप्यत्वमें विरुद्ध हेतु होता है ऐसा इहां नही है ॥

देवस्सपरीभोगो, अणंत जम्मेसु दारुणविवागो।
जं देवभोगभूमी, वुड्ढी न हु वट्टइ चरित्ते ॥ १ ॥

देवद्रव्यका परिभोग अनंतभवमे दारुण विपाकवाला होता है, जो देवभोगभूमी (जिनमंदिरकी भूमी) में रहै उसके चारित्रकी वृद्धि नहि होवै अर्थात् चारित्री न होवै ऐसा सिद्धांतमें कहा है देव भूमीमें रहते यतिके चारित्रके अभावसै भयंकर फल कहा है ॥ २ ॥ सत्प्रतिपक्षभी नही है आगमोक्तत्वात् यह वादीके प्रतिवल अनुमानको पहलेहि खंडन किया है ॥ ३ ॥ वाधित विषयभी हेतु नहि है प्रत्यक्षादिकसै अपहृत विषय न होनेसै "प्रत्यक्षसै हि इसवक्त जिनगृहमे रहना देखणेमें चैत्यवासके धर्मी मुनिअयोग्यता साध्यधर्महेतुविषयको वाधित होनेकर विषयापहारसै कैसै हेतुवाधितविषय नहि है? ऐसा नहि कहना" इसवक्तमे मुन्याभासोका जिनगृहमे रहना देखणेसैभि चैत्यवासको मुनि अयोग्यता वाधितपणा नहि है इसकारणसै हेतुकुं विषयापहारके अभावसै वाधित विषयता नही है ॥ ४ ॥ इसलियै चैत्य मुनियोंके उपभोग योग्य है आधाकर्मादि दोषरहित होनेसै ऐसा तुमारा हेतु उक्तन्यायसै मुनियोंको चैत्योपभोगभोग्यता देवद्रव्य उपभोगादि दोषों करके आगममे वाधित होनेसै कालात्ययापदिष्ट

हेतु नहि है ॥ ५ ॥ पांच हेत्वाभास रहित होनेसैं देवद्रव्य उपभोगादिमत्वहेतु शुद्ध है इसलियैं भगवानूका गुण गाना स्त्रीयोंका मंदिरमे नाचना, शख पटह भेरी मृदंगादि वादित्र वादन, मालती वगेरह पूर्ष्पोंका सुगंध जिन भवनमाला पूजा मंडप रचनादि भक्तिसैं चैत्यनिवासमें देवद्रव्यका उपभोग होता है, लोकमेभी कहते है ॥

यदीच्छेन्नरकं गंतुं, सपुत्रपशुबांधवः ।
देवेष्वधिकृतिं कुर्याद्गोपु च ब्राह्मणेषु च ॥ १ ॥
नरकाय मतिस्ते चेत्पौरोहित्यं समाचर ।
वर्षं यावत्किमन्येन, माठपत्यं दिनत्रयम् ॥ २ ॥

अर्थ जो पुत्रपशुबांधवसहित नरक जाणेकी इच्छा करे सो देवगृहमे निवासकरे, गोशालामे और ब्राह्मणोके घरोंमे ॥ १ ॥ नरक जाणेकी बुद्धि होवे तो पुरोहितपणा एकवरसतककरो, जादा कहणेमै क्या तीन दिन मठपतिपणा करो ॥ २ ॥ इत्यादि लौकिक लोकोत्तरनिंदनीय होनेसैं मठपतिपणेमैं दीर्घसंसारकार्य आशातनासैं कपमानसाधु जिनधर्ममे पूर्णबुद्धिश्रद्धावालेमि जिन-गृहमे नहि रहतेहै लिखाहै (सामीवासावासे उवागए) इत्यादि आवश्यक चूर्ण्यादि शास्त्रोंमे बहुत पाठ देखणेसैं साक्षा-त्तीर्थंकर गणधरोंसे सेवित (संविग्गं सण्णिभद्दं) इत्यादि तीर्थंकरादिकोंने अनेक प्रकारसैं कहा तथा—

धन्या अमी महात्मानो, निःसंगा मुनिपुंगवाः ।
अपि क्वापि स्वकं नास्ति, येषां तृणकुटीरके ॥ १ ॥

अर्थ यह महात्मा धन्यहै संगरहितश्रेष्ट मुनि है जिणुंके तृणकी कुटीया वगेरे परभी स्वत्व नही है ॥ १ ॥ इत्यादि वचन समूहसै लोक प्रशस्य धन कनक पुत्र स्त्री स्वजन परिजन त्यागरूप, अपरिग्रहताका मुख्यास्पदभूत, सिझातर उपाश्रयका देनेवाला कहीयै उपाश्रयका मालिक जो होवै वो सिझातर होता है, इत्यादि बहुत तरेका सिद्धांत अक्षर देखनेसै भया है तात्विक बोध ऐसै पंडितजनबहुमत उपाश्रयमेंहि सत्यअनगारनाम धारणेवाले साधु अवस्थान कहते है, अपवादस्थानसैभी जिनगृहमे रहणा नहि कहते है इतने कहणेसै जिनमंदिरमे नहि रहणा सिद्ध हुवा, तब सूराचार्यकुं निरुत्तरकरके ऊर्ध्वभुजा करके श्रीजिनेश्वरसूरि बोले सो कहते है श्लोक ॥

एवं सिद्धांतवाक्यैर्बहुविधघटनाहेतुदृष्टांतयुक्तै-
रुक्तैरस्माभिरेतैरवितथसुयथोद्भासनोष्णांशुकल्पैः ।
कुग्राहग्रस्तचेताः परगृहवसतिं द्वेष्टि योऽसौ निकृष्टो,
दुर्भाषी बद्धवैरः कथमपि न सतां स्यान्मतो नष्टकर्णः॥१॥

भावार्थ, सिद्धांत अक्षरोंसै बहुत प्रकारका वचन हेतु दृष्टांत सहित हमने सत्य शोभन यथोद्भासन सूर्यकल्प वचन कहै सो कुत्सित आग्रहमे ग्रस्तचित्त यह वादी परघरवसतिका निषेध करता है और दुर्भाषी बद्धवैर द्वेष करे सो सज्जनोंके कैसै मान्य होवै ॥ १ ॥ इति ऐसा सभाके लोकोंको आनंदित करके राजादिकको प्रतीतिके लिये औरभी जिनेश्वरसूरि बोले हे महाराज! आपके लोकमें क्या 'पूर्वपुरुषप्रदर्शित नीति प्रवर्त्ते है, अथवा

आधुनिक पुरुष प्रवर्त्तित नीति प्रवर्त्ते है, राजा बोले हमारे सब दें-शमेभि हमारा पूर्वज वनराजचावडाकी नीति प्रवर्त्ते है और नहि, तब जिनेश्वरसूरि बोले हेमहाराज! हमारे सिद्धांतमें श्रीतीर्थंकर और गणधर और चवदे पूर्वधारि वगेरेने जो मार्ग देखाया वो प्रमाण करते है और नहि, राजा बोले इसी तरहहि पूर्वपुरुष व्यवस्थापितहि मार्ग सर्वत्र प्रमाण होता है, जिनेश्वरसूरिने कहा हेमहाराज! हम दूर देशसै आयेहै सिद्धांतपुस्तक साथमे नहि लायेहै इसलिये इणोंके मठोंसे पुस्तक मंगवावै सो आपको प्रतीतिके लिये सन्मार्गनिश्चयके अक्षर देखावै, तब राजा बोले बहुत युक्त कहते है अहो श्वेतांबराचार्यो! जैन पुस्तक मेरे पुरुषकुं साथमे लेजाके लावो, तब पुस्तकलाये जो पहले हाथमे आया सो खोला, वो श्रीदेवगुरुके प्रसादसै चउदे पूर्व धारिका रचाभया दशवैकालिक निकला उहा पहले यह श्लोक निकला यथा

अन्नट्ठंपगडंलयणं, भएज्ज
सयणासणं, उच्चारभूमिसंपन्नं, इथिपसु विवज्जियं ॥ १॥

इत्यादि राजा बोले वांचो. जिनेश्वरसूरि बोले चैत्यवासी वांचै तब राजाने चैत्यवासीयोंसे कहा आपवांचौ. चैत्यवासीयोंने यह पाठ वाचते छोड दीया जिनेश्वरसूरि, बोले हे महाराज! अन्यत्र रात्रिमे चौरि होवे है राजसभामे दिनकों चोरि होति है, राजा बोले आप वांचो जिनेश्वरसूरि बोले पुरोहित वाचै तब राजाकी आज्ञासे पुरोहितने (अन्नट्ठंपगडंलयणं) इत्यादि पाठ वाचा अर्थ॥ गृहस्थने अपणेवास्ते अर्थात् साधुसै अन्यार्थ किया घर सय्या

संथारा आसण उच्चार प्रश्रवण भूमी सहित स्त्री पशु वर्जित ऐसै उपाश्रयमें साधु रहै जिनमंदिरमें नहि रहै यह वचन श्रीदुर्लभ राजाके मनमे बहुत रोचक हुवै, राजा बोले अहो ये जो कहते है सो सर्व सत्य है तब सब अधिकारियोंने जाना अपणे गुरु सर्वथा निरुत्तर होगये है, बाद दिवान वगेरे बोले महाराज! चैत्यवासी हमारे गुरु है आप मानते है न्यायवादी राजा यावत् न बोले उतने जिनेश्वरसूरि बोले हे महाराज? कोइ मंत्रिका गुरु हैं कोइ भंडारिका गुरु है कोइ माडंविकका गुरु है सबके स्वामी आप है हमारा इहां कोण भक्त है, राजा बोले में आपका भक्तहुं, मैंने आपकुं गुरु कियै, बाद और राजा बोले सर्व गुरुवोंकै सात सात गद्दी और हमारे गुरु नीचै वैठे यह कैसा, जिनेश्वरसूरि बोले हे महाराज! हमकुं गद्दीपर बैठना नहि कल्पै राजा बोले क्युंन कल्पै आचार्य बोले महाराज! गद्दीपर बैठणेसै असंयम होवै हैं भवति नियतमत्रासंयम इत्यादि श्लोकार्थका व्याख्यान किया, राजा बोले आप कहां रहते है? आचार्य बोले, महाराज विरोधियोंने स्थान रोका है सो कहांसै स्थान मिले, राजा बोले हे अमात्य बजारमे बहुत वडा अपुत्रियेका घर हे वो इणुंकुं रहणेकों देवो, बाद राजा बोले भोजन कैसै होता है तब पुरोहित बोला हे देव इण महापुरुषोंके लिये क्या कहैं

लभ्यते लभ्यते साधुः, साधुश्चैव न लभ्यते।
अलब्धे तपसो वृद्धि, र्लब्धे देहस्य धारणा॥ १॥

अर्थ आहार मिलेतो ठीक नहि मिलेतोभी अच्छा कारण नहि

मिलेतो तपकी वृद्धि होवै मिलेतो देहका रक्षण होवै ॥ १ ॥ इसलियै कभी आधा भोजन मिले कदाचित् उपवासभी होता है तब राजा आनंद और विषाद सहित बोले आप कितने साधु हैं पुरोहित बोला हे देव ! सर्व अष्टादश (१८) साधु हैं राजा बोले एक हाथीका भोजन पिंडसै तृप्त होवेंगे जिनेश्वरसूरि बोले हे महाराज ! पिंड मुनियोंकों नहि कल्पे, यह प्रथमहि कहा है सिद्वांत पठनपूर्वक आपके आगे, तब राजा 'अहो अत्यंत निस्पृही है ऐसा जाणके, प्रीतियुक्त बोले मेरा पुरुष आगे चलेगा सुलभ भिक्षा होगी जादा कहनेसै क्या, इसप्रकारसै वाद करके चैत्य-वासियोंको जीतके राजा मंत्रवी सेठ सार्थवाह वगेरे नगरके प्रधान पुरुष सहित भट्टजनवसतिमार्गप्रसाधन यशके काव्य कहते हुवै पाया खरतरविरुद जिणुनें ऐसै श्रीवर्द्धमानसूरिसहित जिनेश्वरसूरि वसतिमे प्रवेश कीया ऐसे गुर्जरदेशमे प्रथम चैत्य-वासीयोंका पक्ष निराकरण करके भगवत् प्रोक्त वसतिमार्ग प्रवर्त्तन प्रथम जिनेश्वरसूरिने कीया ॥ खरतर विरुदका अर्थ लिखते है

॥ अथ खरतरशब्दस्य व्युत्पत्तिर्लिख्यते ॥

॥ १ अतिशयेन खरा अनर्मछद्मधर्मव्यवहारपटवो ये ते खरतराः

॥ २ 'अतिशयेन खरा सत्यप्रतिज्ञा ये ते खरतराः'

॥ ३ खः सूर्यः तद्वत् राजन्ते निःप्रतिमप्रतिमा प्राग्भार-प्रभाभिः प्रतिवादिविद्वज्जनसंसदि ये ते खराः, अत एव तरन्ति भवाब्धिमिति तराः, खराश्च ते तराश्च खरतराः,

॥ ४ खानि इंद्रियाणि, रः कामः तौ त्रस्यंति वशं नयन्ति यें ते खरताः साधुजनास्तेषां मध्ये राजन्ते शोभन्ते ये ते खरतराः,

॥ ५ खः सुखं, भावसमाधिलक्षणं कचिद्ड, इति डप्रत्ययः तस्य रो रक्षणं तत्तरन्ति कुर्वन्ति ये धातूनामनेकार्थत्वादिति खरतराः

॥ ६ खादीनां ये जनास्तेषां रो भयं तत् विध्वंसयति, यः सः खरतः, तादृग् विधौ रोध्वनि सिद्ध शुद्ध प्रसिद्ध विशुद्ध सिद्धान्तवचननिर्वचनलक्षणो येषां ते खरतराः

॥ ७ यद्वा खं संविद् तत्र रतास्तत् पराः खरताः मुनिजनास्तान् राति (अर्थात्) सम्यग् ज्ञानादि ददति ये ते खरतराः

॥ ८ खः खड्गः तद्वत् खरास्तीक्ष्णाः कुमतिमतिविदारणे ये ते खराः तानं तस्कराणां जिनमतप्रद्वेपिदसकुवादिजनलक्षणानां, रा इव वज्रा इव ये ते तराः, खराश्च ते तराश्च खरतराः

॥ ९ खं स्वर्गं राति (अर्थात्) भक्तजनानां ददति ये ते खराः

॥ अतिशयेन खरा ये ते खरतराः इत्यादि

हारथासो कमलाभया, जीत्या खरतर जाणिया ।
तिनकाले श्रीसंघमे, गच्छदोय वखाणिया ॥ १ ॥

इसीतरे सुविहित पक्षधारक श्रीजिनेश्वरसूरिजी वीरनिर्वाणात् १५५०, विक्रमसंवत् १०८० में खरतर विरुद्धकों प्राप्त भए, तबसें, कोटिकगच्छ, चंद्रकुल, वयरीशाखा, खरतर विरुद, इस नामसें, स्थविरसाधु, नवा साधुवोंकों कहनें लगे, इहांसें मूलकोटिक गच्छका नाम, खरतर गच्छ प्रसिद्ध हूआ दूसरे दिन विरोधियोंने विचार कीया कि प्रथम उपाय तो व्यर्थ हुवा, अब

और दूसरा कोइ उपाय इणोंको निकालनेका करणा चाहिये, एसा कहके, मनने शोचा कि यह राजा अपनी मुख्य राणीको बहुतहि मानताहे, इसलिये जो वह राणी कहेगी वैसाहि राजा करेगा, तिस राणीके द्वाराहि इणोंको निकालना चाहिये, यह अपणा आशय उन चैत्यवासी मुनियोंने राजाधिकारि अपणे भक्त श्रावकोंकुं कहा, वादमें वे राजाधिकारी श्रावक आम्रफल केलफल दाख वगेरे फलोंका भाजन प्रधान वस्त्र दागिना वगेरे बहुत पदार्थोंका भेटणा लेके राणीके पास गये और मुख्य राणीके आगे जिनप्रतिमाकी तरे सन्मुख वलीकी रचना करी और मुख्य राणी प्रसन्न होके जितने उणोंका प्रयोजन करणेमे तत्पर भइ, उसीअवसरमे राजाकु राणीके पासमे कोइ कामकी जरूरत पडी, वादमे दिल्लीसंबंधी आदेशकारी पुरुपको राजाने तिस मुख्य राणीकेपास भेजा और कहाकि यह अमुक कार्य राणीसें कहो, तब आदेशकारी पुरुप वोलाकी हे देव अभि जायके कहेता हूं ऐसा कहके शीघ्र गया, राजासंवधी प्रयोजन राणीकु कहा बहुत अधिकारियोंको और अनेक प्रकारका चढावा देखके तिस राज-पुरुपने विचाराकि जो दूसरे देशसें आये हूवे आचार्य उणोंको निकालनेका उपाय यह होवे है, परतु मेरेकुं भि स्वदेशसें आये हूवे आचार्यके पक्षकी पुष्टि राजाके सन्मुख कहेना, ऐसा विचारके राजाके पासमे गया, राजासंवधी प्रयोजन कहा, परतु हे देव वहां राणीकेपास वडा कौतुक मेने देखा, राजाने कहा कैसा ? भद्रिकपुरुप वोला हे देव ! राणी आज तीर्थंकरकी प्रतिमा सदृश

पूजनीक हुइ है, जैसा तीर्थंकरके आगे बलिकी रचना करते हैं उस माफक राणीके आगे भी कितनेक पुरुषोंने बलिकी रचना करी है, राजाने विचारा कि जो मेने न्यायवादी सुविहित मुनियोंकुं गुरुपणे अंगीकार करें हैं, उणोका पीच्छा अभीतक पापी नहिं छोडतें है, वादमे राजाने कहा उसीहि पुरुपको जेसें शीघ्र राणीके-पासमे जाके कहो, की राजा इसतरे कहेलातें है, जो तेरे आगे किसीने भेट दीया है उसमेंसें एक सोपारी भी जो लिया तो तेरेको मेरे यहां रहेणेकुं जगा नहिं है, वादमें उस राजपुरुष पूर्वोक्तप्रमाणे कहेणेसें भय प्राप्त होके राणीने कहा अहो लोको जो वस्तु जो लाया है वह वस्तु उसकों अपणे घर लेजाना एक सोपारी मात्रसेंभी मेरे प्रयोजन नहिं हैं इसतरे यह उपायभी निस्फल हुवा, वादमें उन चैत्यवासी मुनियोंने ४ उपाय विचारा किं जो राजा देशांतरसें आये हूवे मुनियोंको बहुत मानेगा तो सर्वमंदिरोंको छोडके देशांतरमें चले जावेंगें, ऐसा प्रघोष नगरमें करा, और नगरके बाहिर जावै ते यह वात किसी मनुष्यने राजाकुं कही राजाने कहा कि बहूतहि अच्छा है जहां रुचे वहां जावो, राजाने मंदिरोंमे ब्राह्मणकों वेतनसें पूजारी रखे, तुमारेकुं इन मंदिरोंमे पूजा करणी ऐसा कहेके, वादमे कोइ चैत्यवासी मुनि किसी मिस करके अपणे मंदिरमे आये, कोइ किसी मिस करके पीछे आये, किं बहुना, सर्वचैत्यवासी मिस कर २ पीछे चले आये सर्व अपणे २ मंदिरोंमे रहे श्रीमान् वर्द्धमानसूरिजी भी सपरिवार राजाके मान्यनीक पूजनीक होणेसें अस्खलितविहारपूर्वक सर्वत्र

गुजरातादि देशोंमे विहार करते हूवे, कोइ कुछभी कहेणेकुं समर्थ न होवे, बाद शुभ लग्नमे श्रीवर्द्धमानसूरिजी महाराजने पंडित श्रीजिनेश्वर गणिजीकुं सूरिमंत्र देकर अपणे पदमे स्थापित कीये, दूसरे भाईकोभी आचार्य पदमे स्थापित करा, और उणोंकी बेनकों महत्तरा पद दीया और इणोंका मूल नाम जिनदास, बुद्धिदास, सरस्वती, था बादमे ३ जीव पुन्यवान् विनीत होणेसे स्वल्प कालमे गीतार्थ भये, बाद पंडित, गणि आदि क्रमसें पदवी प्राप्त करी, और श्रीगुरु महाराजकुं चारित्रपक्षमे ज्ञान पक्षमे शासनोन्नति वगेरे धर्मकार्योंमे परिपूर्ण साहायक भये और गुजरातमे अणहिलपुर पाटणके प्रथम शास्त्रार्थमे परिपूर्ण सहायक भये, बाद योग्य पात्र स्वसमय परसमयके परिपूर्ण वेत्ता शासनोन्नति करणेवाले, युगप्रधान पद धारक होगा ऐसा विचारके श्रीगुरुमहाराजने कोइ एक समय शुभ लग्नमे पूर्वोक्त ३ जनकों क्रमसें पदस्थ करके अपने गच्छमे अधिकारिकीये बाद श्रीजिनेश्वरसूरि, बुद्धिसागरसूरि, कल्याणवती महत्तरा, इसनामसें सर्वत्र प्रसिद्ध भये, बाद गुजरातादि देशोंमें अलग विहार करणे कीआज्ञा दीवी ३ जनकों, तब तीनुं जन श्रीगुरुमहाराजकी श्रेष्ठ आज्ञा पाकर अपणे २ समुदाय सहित गुजरात देशमे विचरणे लगें, पीछे श्रीवर्द्धमानसूरिजीने १३ अथवा ३० बादशाहोंसें मान पाया हुआ चंद्रावती नगरी स्थापक, पोरवाड गोत्रीय, श्रीविमलमंत्रीकों प्रतिबोध देके जैनधर्मी अपना श्रावक किया, और विच्छिन्न हुवे आबु तीर्थकों प्रगट करनेका उपदेश किया, तब

विमलमंत्री गुरुका वचन अंगीकार करके गुरुकों साथ लेके आवुजी आया, तब उहांके रहीस ब्राह्मण और जोगी लोक या बात सुनके विमल मंत्रीको कहनें लगे कि यह हमारा तीर्थ हैं, अभी हमारा मंदिर है तुमारा मंदिर नहिं है, इससें जैनमंदिर नहिं होने देवेंगें, तब गुरुमहाराज एक पुष्पमाला मंत्रके विमल-मंत्रीके हाथमें दीनी, और कहाकि ब्राह्मणोंसे कहोकि ये सदैवसें जैनका तीर्थ है, जो न मानो तो तुमारी कोइ कन्याके हाथमें यह फूलमाला देवो, और डूंगर ऊपर फिरो जिस ठिकाणे तुमारी कन्याके हाथसें यह फूलमाला गिरपडे वहां हमारा तीर्थ, और देव है, इसीतरे करा ॥ जहां फूलमाला पडी उहां पूजाका उपगरण सहित तीन प्रतिमा प्रगट भइ ॥

१ श्री आदिनाथस्वामि २ अंविकादेवी ३ चवालीनाथ क्षेत्र-पाल ॥ ऐसी तीन प्रतिमाकों प्रगट हुइ देखके ब्राह्मणलोक बडे आश्चर्यकों प्राप्त भए, तथापि ब्राह्मण जातिपणासें कहनें लगे तुमारा देव है तो देवकी पूजा करों, परन्तु मंदिर होनेसें तो हम मरमिटेंगें, तव वडा दयाल उत्तम पुरुष विमलमंत्रीनें विचार किया कि ये कोण गिणतीमें है, अभी मंदिर वना सक्ताहूं, परन्तु ये भिक्षुक है, इनकों क्या जोर देखाडं, इससें इनोंकों वहोतसा द्रव्य देके, राजी करके जैनमंदिर तैयार कराडं, ऐसा विचारके ब्राह्मणोंकों बहुतसा धन देके राजी किये, पीछे वहुमोला मकराणेंका पत्थर मंगवायके, वडा एक वावन जिनालय मंदिर बनाया, और सारे मंदिरमें ऐसी झीणी कोरणी कराई, जिस-

मंदिरका सर्व पत्थर कोरणी मजूरीका, अठारे १८ क्रोड ५३ लाख आसरे द्रव्य खरच हुआ, विमलमंत्रीके करानेसें विमलवसहि नाम प्रसिद्ध हुवा, पीछे सर्व तैयार होनेसें संवत् एक हजार अठ्यासी, १०८८, में श्रीउद्योतनसूरिजीके सुशिष्य और श्रीजिनेश्वरसूरिजी श्रीबुद्धिसागरसूरिजीके श्रीगुरुमहाराज श्रीवर्द्धमानसूरीजीने प्रतिष्ठाकरी, बादघणे भव्यजीवोंकों प्रतिबोधके धर्ममे स्थिर करके धर्मकार्योंमेविशेष सहाय करके घणी शासनोन्नति करके अंतसमय सिद्धांतीय विधिपूर्वक समाधिसहित अणशण करके उसी वरषमें देवलोक गए यह मूलग्रंथ अभिप्राय है ॥ ३९ ॥

॥ ४० ॥ श्रीवर्द्धमानसूरिजीके पट्टपर श्रीजिनेश्वरसूरि हुए, यह प्रथम वाणारसी नगरीके रहीसथे, सोमदेव ब्राह्मण पिताथा दुर्लभराजपुरोहित शिवशर्मा ब्राह्मण मामा होवे है और सरसा नगरमे सोमेश्वर महादेवके वचनसें श्रीवर्द्धमानसूरिजीके पासदीक्षा ग्रहण करी, बादमे जैनसिद्धांत स्वगुरुमुखसें पढकर गीतार्थ भये, पीछे पंडित, गणि, वाचनाचार्य आदि पदवीयों क्रमसें प्राप्त करी, शुभशकुन निमित्तसें लाभ जाणके श्रीगुरुमहाराजके साथ अणहिलपुरपाटण पधारे वहां चैत्यवासी संप्रदायके आचार्योंके साथ प्रथम शास्त्रार्थ हुवा, पीछे स्वपट्टपर सूरिमंत्र विधिपूर्वक देके मुख्याचार्यपणेका गच्छाधिकार वगेरे सर्व दिये, पीछे श्रीदुर्लभराजदत्त खरतर विरुदकों धारण करते हुवे, और राजगुरु होनेसें सर्वत्र गुजरातप्रांतमें अस्खलित विहार करे, और अप्रतिबद्धपणे विहार करते हुवे जिनचंद्र १ अभयदेव २ धनेश्वर ३ हरिभद्र ४

प्रसन्नचंद्र ५ धर्मदेव ६ सहदेव ७ सुमति ८ वगेरह बहुत शिष्य हुवे बादमे श्रीवर्द्धमानसूरिजी स्वर्गवासी हूवे, पीछे श्रीजिनचंद्र, जिनाभयदेव, इन दोनोंकों विशेष गुणवान् और योग्य पात्र जाणके सूरिपदमें स्थापित कीये, क्रम करके युग प्रधान हूवे, औरभी दो आचार्य बनाये, श्रीधनेश्वरसूरिः (अपर नाम श्रीजिनभद्रसूरिः) है, १ श्रीहरिभद्रसूरिः २ तथा उ० श्रीधर्मदेवगणिः, १ उ० सुमतिगणिः, २ उ० श्रीविमलगणिः, ३ यह ३ उपाध्याय कीये, और श्रीधर्मदेव उपाध्याय, श्रीसहदेवगणिः, यह दोय सगे भाइ होवें है, श्रीधर्मदेव उपाध्याय जीनें ३ निज शिष्य बनाये, हरिसिंह, सर्वदेवगणिः, यह २ भाइ होवें है, ३ पंडित श्रीसोमचंद्रमुनिः, और श्रीसहदेवगणिजीनें अशोकचंद्र नामें निजशिष्य किया, वह अशोकचंद्र अत्यंत वल्लभ था, उसको श्रीजिनचंद्रसूरिजीनें विशेष भणायके, आचार्यपदमें स्थापित किया, और श्रीअशोकचंद्रसूरिजीनें अपनें पट्टपर श्रीहरिसिंहसूरिजीकों स्थापित किये, औरभी दोय आचार्य बनाये, श्रीजिनप्रसन्नचंद्रसूरिजी, श्रीजिनदेवभद्रसूरिजी, और श्रीजिनदेवभद्रसूरिजी तो श्रीसुमति उपाध्यायजीके सुशिष्य थे, और श्रीजिनप्रसन्नचंद्रसूरिजी वगेरे च्यारकुं श्रीजिनाभयदेवसूरिजीनें तर्कादिशास्त्र भणाये, इसिहीसें श्रीजिनवल्लभसूरिजीनें श्रीचित्रकूटीयप्रशस्तिमे कहा है, ॥ सत्तर्कन्यायचर्चार्चितचतुरगिरः श्रीप्रसन्नेंदुसूरिः, सूरिश्रीवर्द्धमानो यतिपतिहरिभद्रो मुनीड् देवभद्रः, इत्याद्याः सर्वविद्यार्णवकलशभुवः संचरिष्णुरुत्कीर्तिस्तंभायन्तेऽधुनापि श्रुतचरणरमाराजिनो यस्य शिष्याः ॥ १ ॥

अर्थ श्रेष्ठतर्कशक्तियुक्त तर्कशास्त्र और न्यायशास्त्रोंकी चर्चा-
करके पूजितहै चातुर्ययुक्तवाणी जिणोंकी, संपूर्णविद्यारूपी समुद्रमें
कलशकेसदृश, और जंगमश्रेष्ठमहत्कीर्तिस्तंभ, वर्त्तमान समयमें
दिखाइ देरहेहै, ऐसे श्रीजिनप्रसन्नचंद्रसूरिजी, श्रीजिनवर्द्धमानसूरिजी,
श्रीजिनहरिभद्रसूरिजी, श्रीजिनदेवभद्रसूरिजी, वगेरे श्रुतचारित्रा-
त्मक लक्ष्मीसें सुशोभित वर्त्तमान समयमेंभी जिसनवांगीवृत्तिकर्त्ता-
श्रीजिनअभयदेवसूरिजीके सुशिष्य मौजूदहै ॥ १ ॥ बादमें
श्रीजिनेश्वरसूरिजी आशापल्लीमें पधारे, वहां व्याख्यानमें विचक्षण-
लोक वेठतें है, वास्ते विचक्षण लोकोंका मनरूपकुमुदकुंविकसित-
करनेंवाली जो पूर्णमासी चंद्रिका, (याने चंद्रमाकी चांदणी,)
उसकी साक्षात् वेनहोवे वैसी, संवेगयुक्त वैराग्यकों वढाणेवाली,
ऐसी लीलावतीनामककथा, विक्रमसंवत् (१०९२) के साल रची,
तथा श्रीजिनेश्वरसूरिजी डिंडियाणक ग्राम पधारे वहा पूज्यपाद
श्रीजिनेश्वरसूरिजीनें व्याख्यानमे वाचणेवास्ते चैत्यवासी आचार्योंके
पाससें पुस्तक मागा, कलुपितहृदयवाले उनचैत्यवासीआचार्योंने
नहि दिया वादमे पिछाडीके पहोर दोयमे बनावे, और प्रभातके
व्याख्यानमें वाचे, इसकारणसें, उसीगामके चउमासेमे, कथानक
कोश, किया, तथा मरूदेवा नामकी महत्तरा थी, उसनें अनशन
ग्रहण किया, ४० दिनतक अनशनमे रही, उसकु श्रीजिनेश्वरसूरि-
जीनें समाधि उत्पन्न करी, और उस महत्तराकु कहा कि जहां तुं
उत्पन्न होवे, वह स्थान हमकु कहना, उस महत्तरानेभी कहा हे
भगवन ! इसीतरे करुंगी, यह वचनअगीकारकिया, बाद पंच-

परमेष्ठीका स्मरण करति हुइ वा मरुदेवा महत्तरा देवलोकगई, और महर्द्धिक देव हुवा, इहांसें कोइएकश्रावक युगप्रधानकानिश्चे-करणेकों श्रीगिरनारपर्वतऊपरजायके विचारकिया कि यह सिद्धि-क्षेत्र अधिष्ठायकसहितहैं, इससें अंबिकादिदेवताविशेष, जोमेरेकुं युगप्रधान कहेगा याने बतावेगा तो में भोजन करुंगा, अन्यथा में भोजन नहिं करुंगा, ऐसा साहसको अवलंबन करके रहा, उपवास करणा सरुकिया, इसअवसरमें महाविदेहक्षेत्रमें श्रीतीर्थंकरकुं नमस्कारकरणेवास्ते गये हूवे, ब्रह्मशांतियक्षकों, उस मरुदेवा नामक महत्तराका जीवदेवनें संदेशादिया, जैसें तेरेकुं, श्रीजिनेश्वरसूरिजीके सन्मुख यह कहेणा, तथाहि

मरुदेवीनाम अज्जा, गणणी जा आसि तुम्ह गच्छंमि ।
सग्गंमी गया पढमे, जाओ देवो महिड्ढीओ ॥ १ ॥
टक्कलयंमि विमाणे, दुसागराऊसुरो समुप्पन्नो,
समणेसस्स जिणेसरसूरिस्स इमं कहिज्जासि ॥ २ ॥
टक्कउरे जिणवंदणनिमित्तमेवागएण संदिट्ठं ।
चरणंमि उज्जमो भे, कायव्वो किंच सेसेहिं ॥ ३ ॥

अर्थ महत्तरापदकुं धारणेवाली मरुदेवीनामकीसाध्वी तुमारे गच्छमें थी, वा मरुदेवी प्रथमदेवलोकगईहै, उन मरुदेवीका जीव महर्द्धिक देव हूवाहे ॥ १ ॥ टक्कल नामक विमानमें, दोय सागरके आयुवाला देव उत्पन्न हूवाहै, संपूर्णसाधुवोंका मालिक श्रीजिने-श्वरसूरिजीकों यह कहेणा ॥ २ ॥ टकोरनामक नगरमें श्रीतीर्थ-

करकों वंदननिमित्तआये हूवे देवनें ब्रह्मशांति यक्षके साथ संदेशा कहा है, हे भगवन्! हे परमकल्याण योगिन्! हे पूज्य! आपसाहिब चारित्रमे विशेषउद्यमकरणा, यहहि द्वादशांगीका सारहै, और सर्वअसारआलपंपालहै, ॥ ३ ॥ उस ब्रह्मशांति यक्षनें अपणे आप जाके यह संदेशा श्रीजिनेश्वरसूरिजीके पास नहिं कहा, तो क्या किया, युगप्रधानका निश्चे निमित्त प्रारभ किया उपवासजिसश्रावकनें उसकों उठाया, बाद उस श्रावकके वस्त्रके छेडेमे, अक्षर लिखे जेसे, मसटमट, और कहा कि अणहिलपुर पाटणमे जा, जिस आचार्यके हाथसें धोणेसे यह अक्षर जावेगा, वहिआचार्य इसभरतमे भारतवर्षमें युगप्रधानहै, बादमे उसश्रावकनें पारणाकरके श्रीनेमिनाथस्वामिकुं वंदना करके अणहिलपुरपाटणआके सर्वउपाश्रयोंमे जाके वस्त्रके छेडेपर लिखे हूवे अक्षर देखाये, परतु किसीनें नहि जाणे, अर्थात् नहिं मालम हूवे, और श्रीजिनेश्वरसूरिजीके उपाश्रयमे जाके देखाये तब अक्षरोंकु वाचके, उत्पन्न हूइ जो प्रतिभा यानें तत्काल विषय, सबध अर्थग्रहण करणेवाली बुद्धि उससें यह पूर्वोक्त ३ गाथा विचारके श्रीजिनेश्वरसूरिजीनें वे अक्षर धोये, धोणेसें चलेगये, यानें मिटगये, बादमे उस श्रावकनें मनमें विचारा कि यह आचार्य निश्चय युगप्रधान है, इस हेतुसें विशेषश्रद्धान और भक्तियुक्त होकर गुरुपणे अगीकार किये, और धारानगरीमे भोजराजाका पुरोहित सर्वधर नाम था, वहापर कोइ एकसमें श्रीवर्द्धमानसूरिजी पधारे, तब राजपुरोहितका विशेष परिचयहूवा, तब सर्वधरने आचार्यमहाराजकुं कहाकि मेरेघरमें वडा

निधानहै, परंतु मालूमनहिं कहांपरहै, और आपकृपाकर बतावें तो, आधादेवुं, तब आचार्य महाराजनें कहा घरका सार आधा देना, पुरोहितबोला ठीकहै, बाद धर्मका लाभजाणके, निधान स्थान देखाया, तब निधानप्रगटहूवा, जब आधा धन देने लगा, तब नहिं लिया, और आचार्यमहाराजने कहाके यह धन तो हमारे बहुत था, परंतु छोडके साधु हूवेहैं, तब पुरोहितनें कहा कि आपश्रीनें आधा केसे मांगा, तब आचार्यमहाराज बोले, कि घरका सार आधा मांगाहै, तबफेरपुरोहितनेंकहा कि घरका सारतो धनहै, तब आचार्यमहाराजने कहा घरकासार धननहिं है, किंतु घरकासारपुत्रहै, ऐसासुणके सर्वधरनें मौनधारा, तब आचार्यमहाराज अन्यत्र विहार करगये, पीछेसें सर्वधरके मनमें जैनाचार्यका उपगाररूप करजा, वोही एकशल्य मनमें रहगया, बाद अंतसमे पिताके मनमें असमाधिदेखके धनपाल और शोभन इन दोनुंने पिताकुं असमाधिका कारण पूछा तब पिता सर्वधर बोला कि अहो पुत्रों मेरे ऊपर एक जैनाचार्यका उपकारका ऋण है वहि एक असमाधिका कारण है दूसरा कोइ कारणनहिं है यह मेरे मनमे असमाधिहै सो तुम दोनुंमेंसें एक जैनाचार्यके पास जैनीदीक्षा लेवो तब मेरा ऋणउतरे और मेरे मनमें समाधिहोवे, और किसी हालतसें मेरेकुं समाधि नहिं होवे, ऐसा पिताका वचन सुणके धनपाल तो मौनधारके रहा और शोभन पिताका विशेषभक्त और विशेषविनीतहोणेसें, इसतरे नम्रहोके पिताकुं बोला हेपिताश्री निश्चे आपका वचन में पालुंगा, ऐसा शोभनका वचनसुणके, सर्वधरपुरोहितविशेष

समाधिसहितपरलोकगया, वादमें शोभन जंगमयुगप्रधान कल्पवृक्ष चिंतामणिसे अधिकमनोवांछितपूरणेवाले श्रीवर्धमानसूरिजीके सुशिष्य श्रीमान्जिनेश्वरसूरिजीके पास शुभमुहूर्त्तमे दीक्षाग्रहणकरी, जैनसिद्धान्तसुगुरुमुखसे भणके गीतार्थ शोभनमुनिहुवे, वाद उज्जेणी नगरीके श्रीसंघके पत्रसें, श्रीशोभनमुनिकुं वाचनाचार्यपददेके दोनोंमुनियोंके साथ शीघ्र राजपुरोहितधनपालकों प्रतिबोधनवास्ते भेजे, श्रीशोभनाचार्य गुरुजीकी आज्ञासें उज्जेणीनगरीमे जाके क्रमसें धनपालकुं प्रतिबोधके धर्ममें स्थिरकरके पीछे श्रीगुरुजीके चरणमें पधारे और धनपालका विशेषअधिकार आत्मप्रबोधग्रंथसे जाणना, इसतरे अनेकप्रकारसें चउवीसमाश्रीमहावीरस्वामितीर्थंकरदर्शितधर्मकी बहुतप्रभावना करके वृद्धिकों प्राप्त किया, अतसमे सिद्धान्तविधिपूर्वक अणशणकरके समाधिसहित स्वर्गनिवासीहूवे और प्रभावकचरित्र तथा पट्टावलि वगेरेमे इणोंका चरित्र लिखा है उसमे कुछ कुछ भेद मालूम होताहै सो धारणा। भिन्न भिन्न होणेसें, भिन्न भिन्न मतान्तर है और जैनइतिहास, १ हरिभद्राष्टकभाषान्तर, २ मराठीरासमाला, ३ खरतरपट्टावलि संस्कृत ४ तथा भाषा ५ इत्यादि बहुतहि ठिकाणे खरतर विरुद १०८० का लेख है और पंचलिंगी, १ पदस्थानक, २ कथाकोश, ३ लीलावती कथा ४ प्रमाणलक्ष्मा ५ वगेरे तथा श्रीबुद्धिसागर सूरिकृत व्याकरण वगेरे अनेक ग्रंथ खुदके रचे हूवे और शिष्य प्रशिष्योंके रचे हूवे वर्त्तमान समयमें उपलब्धहोतेहैं ॥ ४० ॥ ४१ ॥ श्रीजिनेश्वरसूरिजीके पटपर श्रीजिनचंद्रसूरिजी हूवे इनोंके १८

नाममाला (कोश) सूत्र अर्थसें कंठथी, सर्व शास्त्रोंके जाणनेवाले, और भव्यप्राणियोंके मोक्षप्रासादकी प्राप्तिमें बीजभूत १८ हजार प्रमाणे संवेगरंगशालानामक प्रकरणरचा और जावालिपुरमें पधारणेपर श्रावकोंके सन्मुख व्याख्यानमें, चियवंदणमावस्सय.

इस गाथाका व्याख्यान करतां जो सिद्धान्तानुसारसूत्रादि पाठअर्थसहितप्रश्नोत्तर अर्थ कहे सो सर्व एक सुशिष्यनें लिखे, सो (३०००) प्रमाणे दिनचर्या नामकग्रंथहूवा, वहदिनचर्या ग्रंथ श्रावकोंके बहुतहि उपगारिहूवा, और आचार्यपदकों प्राप्त होके विहार करते प्रथम दिल्लीसहरमें गए, उहां एकपुरुषकों भाग्यशाली देखके ऐसाकहा, कि दिल्लीका बादसाहहोगा, जब वो पुरुष बोला कि में जो बादसाहहोउंगा तो आपमुझे दरशण अवश्य देना, फेर दिल्लीके आसपासमें महाराज विहार करनें लगे, जब वो पुरुषमोजदीननामेंबादसाहहुवा, तब गुरुमहाराज फेर दिल्लीनगरमें गए, तब दिल्लीके संघनें बादसाहकों अरजकरी हमारे पूज्य श्रीजिनचंद्रसूरिजी महाराजआयें हैं, सो उनोंका प्रवेश उच्छव करनेंकी इच्छाहै, तब मोजदीन बादशाहभी पूर्वोक्त वरदेनेंवाले अपना गुरूकों आया जानके संपूर्णवाजित्रसहित संघके साथमें, आप सामनेंगया, प्रवेश, उच्छवसहित शहरमें लायके धनपालनामा श्रीमालके बडे मकानमें उत्तारा करवाया, उहां रहते धनपालश्रीमालप्रमुख बहुतसें श्रीमालांकों प्रतिबोधके जैनी श्रावककिये, तबसें श्रीमालजैनी श्रावक हुवे, और कितनेक राज्याधिकारियोंकों प्रतिबोधके जैनी श्रावक किये, उनोंको बादशाहनें बहुतमानदिया इससें उनका,

महतियाण, गोत्र हुवा, ये महतियाण गोत्रवाले, या तो भगवान्‌कों नमस्कार करे, या अपनाधर्माचार्य श्रीजिनचंद्रसूरिजी गुरुकों नमस्कार करे, और किसीकों नमस्कार न करे, और महाराजके उपदेशसें बादशाहभी बहुतसरलपरिणामीहुवा, बहुत देशमे पर्यूषणादिपर्वदिनोमे, बहुतजीवहिंसा छोडाई, इसमाफक धर्मका उद्योतक, बडे प्रतापीक, संवेगरगशाला प्रकरण, दिनचर्या आदि अनेक प्रकरण कर्त्ता श्रीजिनचंद्रसूरिजी भए, वेभी श्रीमहावीर स्वामिदर्शित धर्मको यथार्थपणे प्रकाशन करके और अंतममें सिद्धान्तीय विधिपूर्वक अणशण करके समाधिसहित स्वर्ग निवासी हुवे, यह श्रीजिनचंद्रसूरिजीका यहापर चरित्र संक्षिप्तमात्र कहा है

॥ ४२ ॥ श्रीजिनचंद्रसूरिके पट्टपर छोटे गुरु भाइ, श्रीअभयदेवसूरिजी विराजमान हूवे, इनोंका संबध संक्षिप्तमात्र लिखताहूं, धारापुरीनगरीमे 'धन्नानाम सेठ जिसके धनदेवीनामे स्त्री उनूके अभयकुमार नाम पुत्र हुवा' क्रमसें (सर्व कला शीखके) युवान अवस्थाकों प्राप्त भया, तब एकदा प्रस्तावे श्रीजिनेश्वरसूरिजी विचरतेभए, धारापुरीनगरीमें पधारे, जब नगरके सर्वलोक महाराजकों वंदना करने गए तब अभयकुमारभी अपनें पिताके साथ दर्शनको गया, श्रीजिनेश्वरसूरिजी महाराजके मुखसे धर्म उपदेश सुणके वैराग्यकों प्राप्तभया, संसारकों असार जाणके दीक्षा ग्रहणकरी, क्रमसें बुद्धीके बलसें, सकल शास्त्र पढके आचार्यपदकों प्राप्तभये, एकदा व्याख्यानमे शृंगारादिनवरसोंका बहुतपोषणकरा, तब सबसभा बहुतआनंदकों प्राप्तभइ, परन्तु

श्रीजिनेश्वरसूरिजी महाराजनें स्त्रीयोंका वीर्य स्खलित हुवा देखके (विचार किया कि पहिलेभी अंवररंतर इत्यादि २ गाथाओंका अर्थ शृंगाररसवर्णनपूर्वक मुनियोंको रात्रिमें कहा तब मार्गमें जाति हुइ राजकन्यानें सुणके बुद्धिशाली पुन्यवान् कोइ पुरुष है इसके साथ पाणिग्रहण करणेसें संसारिकविपयसुखबहुतश्रेष्ठ होंगा, ऐसा मानकर–शृंगाररससें परवस हुइ थकी–आधि रात्रिसमय उपाश्रयके द्वार पास आयके किवाड खडकायें और अवाजदी, तब गुरु महाराजनें कहा ये कुगतिद्वार प्राप्त हुवा है, उतने फेर अवाज आइ में राजकन्या हूं दरवाजा जलदि उघाडो ऐसा कहने पर आप उठकर दरवाजे पास जाकर कपाट खोले और कहा कि क्या प्रयोजन है! तब उस राजकन्यानें शृंगार वर्णनसें लेकर अपना अभिप्राय हुवाथा सो कहा और कहाके मेरा पाणिग्रहण करो तब आचार्यश्रीनें कहा हेभद्रे! हम साधु हैं हमको पाणिग्रहण करणा नहिं कल्पे ऐसा कहके वीभत्सरसका वर्णन किया तब वा राजकन्या छी छी करती हुइ विरक्तहोकर अपने ठिकाने गइ, वाद्व्याख्यानमे शृंगाररसका वर्णनकरनेसें ऐसाअनर्थहुवा श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजकों एकांतमें ऐसा ओलंभा दिया, कि आत्मार्थीकों शृंगारादिक रसोंका वहुत पोषण करना न चाहिये, ऐसा गुरुका वचन सुनके आत्मशुद्धिके अर्थ प्रायश्चित्तमांगा, तब गुरु महाराजनें कहा 'छमासतक आंविलकी तपस्या करे और छाछकी आछ पीवे' तब शुद्धी होवे, तब श्रीअभयदेवसूरिजी गुरुका वचन तहत्ति करके इसी मुजब

तपस्या करनें लगे, ऐसी कठिन तपस्या करनेसें अंतप्रांत आहार खानेंसें, कोई पूर्वकृत कर्मके योगसे सरीरमे 'गलित कोढ, रोग उत्पन्न होगया तथापि धर्मसे चलितचित्त न हुआ शरीरकी शुश्रूषा मात्रभी न करी, जब क्रमसे बहुतरोगवढनें लगा, तब श्रीअभयदेवसूरिजीकी अणशण करनेंकी इच्छा उत्पन्न भइ, अन्येत्वेवमाहुः-श्रीजिनचंद्रसूरिजीके बादमे श्रीमान् अभयदेव-सूरिजी नवागवृत्तिकर्त्ता युगप्रधान भये, उन्होंकी नवांगवृत्ति करणेमें सामर्थ्य और नीरोगता (यानें-रोगरहित) किसतरे भइ, वो सरूप लेशमात्र कहे हैं, गुजरात देशमे भगवान् श्रीमान् अभयदेवाचार्य प्रधानचारित्रसमाचारिकी चतुराईमे मुख्य ऐसे परिवारमहित ग्रामनगरआकर वगेरे स्थानोंमे विहार करणेकर महीमंडलकुं पवित्र करते हुवे, संघके आग्रहसें धवलक नगर पधारे, बाद विहार क्रमसे शंभाणक ग्राम पधारे, वहां पर कुछ शरीरमें रोगोत्पत्ति कारण हूवा, जैसे जैसे औषध वगेरे करे तैसे तैसे यह दुष्ट रोग विशेष वधे, जराभि उपशम न होवे (यानें मिटेनहि) अलग अलग ग्रामोंमे रहनेवाले श्रीपूज्यपादभक्त श्रावक जब जब चउदशमे पाक्षिक प्रतिक्रमण होवे है, तब चार योजन प्रमाणे क्षेत्रसें वहां पर आयके पूज्योंके साथ प्रतिक्रमण करे, भगवान श्रीमद्अभयदेवसूरिजीभि अपने शरीरकु अत्यंत रोगग्रस्त जाणके (इस नखतमें अपना कार्य परलोकसंबंधि साधना श्रेष्ठ है ऐसा विचार करके मिच्छामिदुक्कडं देने वास्ते विशेष कर तुम सबकों चउदशके रोज इहांपर आना) इसतरे ज्ञानका उपयोग

देने पूर्वक उनसवश्रावकोंको बुलवाये 'याने समाचार भेजकर खामणानिमित्त आमंत्रण करवाया' श्रीसंघ समक्ष सर्व जीव राशिके सह खामणाकर अणशण आराधना करनेका विचार किया.

वादं तेरसकी आधिरात्रिके समय शासनदेवताआई, और उस शासनदेवताने कहा, कि हे पूज्य! आप सोए हो

---

१ अव इहांसे आगे श्रीकोटिकगछपट्टावलीमें इसतरे लिखे है, की 'उहां तेरसके दिन आधिरात्रिकेसमें शासनदेवीने प्रकट होके' कहा कि 'हे स्वामिन् ये नव सूतकी कोकडीकों सुलझावो! तव गुरु महाराज बोले' कि हार्थोकी आंगुली गलनेंसें सुलझावणेंकी सामर्थ्य रही नहीं,' तव शासनदेवी कहनें लगी अभीतक आप वहुत कालतक श्रीवीर-भगवानका शासन दीपावोगे, ओर नवांगसूत्रोंकी टीका करोगे, इससें हे स्वामिन् आप रोग जानेंका उपाय सुनो! स्थंभनपुरके नजीक 'सेढिका नदीके किनारे खंखर पलासवृक्षके नीचे श्रीपार्श्वनाथस्वामीकी अतिशययुक्त प्रतिमा है' उहां निरंतर एक गाय आती है ओर प्रतिमांके मस्तकपर सदा दूधकी धारा देके, चली जाती है; उसी ठिकाणें सर्वसंघके साथ आप जायके श्रीपार्श्वनाथ प्रभुकी स्तवना करना तव उहां श्रीपार्श्वनाथस्वामीकी प्रतिमा प्रगट होगी, जिसके स्नात्रजलके प्रभावसें आपका रोगरहित दिव्य शरीर होवेगा, ऐसा स्वप्नमें कहके देवी अदृश्य होगइ. जव प्रभात समय भया, तव उहांसें विहारकरके स्थंभनपुर गये, वहांके सर्वसंघको साथमें लेके पूर्वोक्त स्थानकों गये, उहां जाके नमस्कारकरके जयतिहुअण इत्यादि वत्तीस काव्योंका नवीन स्तोत्र करके स्तवना करनें लगे. जव "फणिफणफार फुरंतरयणकर रंजियनहयल, फलिणी कंदलदलतमाल निलुप्पलसामल कमठासुरउवसग्गवग्ग संसग्ग अगंजिय, जय पच्चक्ख जिणेसपास थंभणयपुरट्ठिअ ॥ १७ ॥, यह सत्तरमा काव्य वोलते, श्रीपार्श्वनाथस्वामीकी प्रतिमा जमीनसेंसे प्रगट भई, फिर सम्पूर्ण स्तवना जव पूर्ण भई, तव सर्व संघ मिलके आनंदके साथ स्नात्र पूजा करके, भगवानका स्नात्र जल महाराजके शरीरपर सींचा कि, तत्काल रोगरहित कंचनवर्ण शरीर होगया, तव तो सर्व संघ, तथा नगरके लोक देखके वडे आश्चर्यकों प्राप्त भये, और जहां प्रतिमा प्रगट भई, तहां वहोत मनोहर उंचा शिखरवद्ध मंदिर वनवाया, मंदिर तैयार होनेंसें

श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजनें उसी प्रतिमाकों स्थापन करी, तहा स्थंभनकनामें महातीर्थ प्रसिद्ध हुवा, बहोत यात्री लोक आनें लगे, और 'जय तिहुअण स्तोत्र गुरुमहाराजने किया' जिसके अंतके दो काव्योंमे धरणेन्द्र पद्मावतीकों आकर्षणरूप बीजमन्त्र गोपित रखाथा, इससें उसको हरकोइ कार्यमें अपवित्रपणें स्त्री पुरुष बालकादिकगुणे तब धरणेन्द्रकों आयके हाजर होना पडे, इससें धरणेन्द्र हाथ जोडके गुरुमहाराजसें कहने लगा कि ये दो गाथा आप भंडार करो, जो शुद्धभावसे तीस काव्य सदा पडिक्कमणेंके आदीमें गुणेंगे, तो ठिकाणे बेठाही उनका उपद्रव दूर करुंगा, बाद धरणेन्द्र पद्मावतीके वचनसे अंतके दो काव्य भंडार किये, सबकों बोलनेका मना किया, और स्वप्नमें शासनदेवतानें नवकोकडा सूतका, मुलझाणें बाबत कहाथा, इसवास्ते भगवानने (अभय देवसूरिजीने) नवागसूत्रोंकी टीका करी, वीरनिर्वाणसें १५८१, विक्रमसंवत् ११११, श्रीस्तंभणपार्श्वनाथ प्रगट किया, और वीरनिर्वाणसें १५९०, विक्रम संवत् ११२०, मे श्रीनवागसूत्रोंकी टीका करी, ऐसे महा अतिशयी चारित्र पात्र चूडामणी निकेवल सर्व जीवोंके उपगारार्थ गाव नगरोंमे विहार करते थके बहुत कालतक धर्मका उद्योत करते रहे, एकदा श्रीअभयदेवसूरिजीके प्रतिबोधे हूवे, दोय श्रावक अणशणकरके देवलोक गये, तब देवलोकमें जातेही ज्ञानके उपयोगसें जाना, कि हमारा धर्माचार्य श्रीअभयदेवसूरिजी है, उनोंके प्रसादसे यह देवलोकका सुख मिला है, अत्यंत रागी भया थका महाविदेहमें श्रीसीमंधरस्वामीके पास जाके हाथ जोडके ऐसा प्रश्न किया, कि हमारा धर्माचार्य श्रीअभयदेवसूरिजी, इहामें कोन गतिमें जावेगें, ओर कितने भवमे मोक्ष जावेगें! तब भगवान सीमंधरस्वामीने कहा कि तुमारा गुरु अभयदेवसूरि इहासें अणशणकरके चोथे देवलोक जावेगा, उहासें महाविदेहक्षेत्रमे उत्पन्न होके मोक्ष जावेगा, (इस्सें इस भवसें तीसरे भवमें मोक्ष जावेगा,) ऐसा भगवानका वचन सुणके आनंदित हुवा थका श्रीअभयदेवसूरिजीके व्याख्यानावसरमें नव सभाके सामने दोनों देव आके बोले, **'भणियतित्थयरेहिं' महाविदेहे भवंमितइयंमि, तुह्माण चेव गुरुणो, मुक्खं सिग्घं गमिस्संति १,** 'इत्यादि' और इस माफक शासन प्रभावक श्रीअभयदेवसूरिजी नवागवृत्तिकर्त्ता गुर्जरदेशमे कपडवाणिज्य नाम ग्रामके विषे अनमे अणशणकरके वि० सं० ११६७ में कालकरके चौथे देवलोक गये ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ श्रीअभयदेवसूरिजीके पाट ऊपर श्रीजिनवल्लभसूरिजी भए, यह प्रथम कूर्चपुरगच्छीय चैत्यवासी श्रीजिनेश्वर-

सूरिजीके शिष्य थे, जब उनोंके पास दशवैकालिकजीसूत्र पढनें लगे तब वैराग्यकों प्राप्त होके गुरुकों कहा, कि साधुका आचार तो ऐसा है, ओर सिथलाचारकों क्युं धारण किया है, तब गुरुनें कहा अभी हमारा ऐसाही कर्मोदय है, तब श्रीजिनवल्लभगणि गुरुकों पूछके शुद्ध क्रिया निधान, परमसंवेगी, श्रीजिनअभयदेवसूरिजीका शिष्य होगया, शुद्धचारित्र पालता थका अनुक्रमें सकलशास्त्रकों पढके गीतार्थ हुआ, एकदा विहार करते चीतोडनगरमें आए, उहां चंडिकादेवीकों प्रतिबोधके जीवहिंसा छोडाई, चंडिका देवी पिणशुद्ध क्रियापात्र साधु जाणके बडी भक्तिवती भई, फेर उहांके संघनें साधारणद्रव्यसें ७२ बहोत्तर जिनालय मंडित श्रीमहावीरस्वामीका मंदिर बनाया जिसकी प्रतिष्ठा करी, और पिंडविशुद्धिप्रकरण १, षडशीतिप्रकरण २, सूक्ष्मार्थसार्धशतकप्रकरण ३, संघपट्टकप्रकरण ४, आदि अनेकग्रंथ बनाये, तथा दशहजार १००००, प्रमाण बागडी लोकोकों प्रतिबोधके जैनी श्रावक किये, फेर उसी चित्रकूटनगरमें विक्रमसंवत् ११६७।

श्रीअभयदेवसूरिजीके वचनसें श्रीदेवभद्राचार्यजीनें श्रीजिनवल्लभगणिजीको आचार्यपदमें स्थापन किये छ महिनातक आचार्यपदपालके, अंतमें अणशण करके और समाधिसे कालकरके देवलोकगए, इससमयमधुकरखरतरशाखा निकली यह प्रथम गछभेदभया, ॥ ४३ ॥ श्रीजिनवल्लभसूरिजीके पाट ऊपर श्रीजिनदत्तसूरिजी हुवे, सो वड़ा दादाजीके नामसें सर्वत्र सर्वलोकमें प्रसिद्ध भए, इसतरह कोटिकगछ पट्टावलीमें लिखा है १, और श्रीजिनदत्ताचार्यकृत गुरुपारतंत्र्य पंचमस्मरणमें २ और लघुगणधरसार्धशतकवृत्तिमें ३, और गणधरसार्धशतकवृहत्वृत्तिमें ४, उपाध्याय श्रीक्षमाकल्याणजीकृत खरतरपट्टावलीमें ५ और गणधरसार्धशतकमूलपाठमें ६, और उपदेशतरंगिणीमें ७ और उपदेशसीत्तरिमें ८, और कल्पांतरवाच्यामें ९ खरतरगछमे हुवे और वडे प्रभावीक हुवे लिखे हैं, इत्यादि अनेक ठिकाणे नवांगवृत्तिकर्त्ता खतरगछमें हुवे ऐसा लिखा है।

और गुजराति जैन इतिहासमें भी १० इसीतरह है और प्राकृत अभिधानराजेन्द्रकोसमें भी ११ श्रीनवांगवृत्तिकर्त्ता श्रीअभयदेवसूरिजीके वारेमें इसतरे लिखा है, तद्यथा—

॥ अभिधानराजेंद्र प्राकृतकोशमें अभयदेव शब्दके अधिकारमें पृष्ठ ७०६ में नवांगवृत्तिकारक पहिला आचार्य है

और अभयदेव शब्दका अर्थ-स्वरूप इसतरे लिखाहै अभयदेव-अभयदेव-पु०-नवांगवृत्तिकारके, स्वनामख्याते आचार्ये, स्थानांगसूत्रवृत्तौ, (१) तच्चरित्र त्वेवमाख्यान्ति धारानगरीमें महीधर (धना) शेठकी स्त्री धनदेवी नामहै उसकी कूखसें अभयकुमार नामका पुत्ररत्न हुवा, वह अभयकुमार धारानगरी समोसरे हूवे श्रीवर्द्धमानसूरि शिष्य श्रीजिनेश्वरसूरिजीके पास दीक्षाली, कुमार अवस्थामेंहि व्रतलिया और अतिशायिवुद्धिसें १६व पंकी उमरमें श्रीवर्द्धमानसूरिजीकी आज्ञासे विक्रमसंवत् १०८८ के सालमें आचार्यपदको प्राप्तहुवे, उस वखतमें दु काळादि होणेसें पटणे लिखणेके अभावमें सिद्धान्तोंकी वृत्तिया विछेदप्राय हुइथी, तब कोई एकरात्रिके समेमें शुभध्यानमें रहे हुवे अभयदेवसूरिजीकू शासनदेवता आकर बोली के हे भगवन् पूर्वाचार्योंने इग्यारे अंगोपर टीका करीथी, वा तो दोय अंगोपर रहीहै बाकी टीका विछेदहूई है, इसलिये अबी फेर उण टीकाओंकी रचना करके सबपर दयाभाव लाके अनुग्रहकरणा' आचार्य महाराजने कहा, हे शासनाधिष्ठायिके हे मात में अल्पवुद्धि, बालाह, और यह ऐसा दुष्कर कार्यकरणेकु में किसतरे समर्थ होवु, जिससें वहा पर टीका करणेमें जो कुछमी उत्सूत्र होवे तो महाअनर्थ संसारमें गिरना रूप होवे-बादमें देवतानें कहा हे भगवन् आपको शक्तिमान् जाणकेहि मेंने कहाहै, जहापर आपको संशय होवे, वहा पर उसी समय मेरा स्मरणकरणा, में महाविदेहमें जाके वहा श्री सीमंधरस्वामिकु पूछके आपकों कहूंगी इसतरे करणे पर कुछ भी उत्सूत्र नहिं होगा, इसप्रकारसें शासनदेवीके उत्साह वढानेपर वह कार्य करणा शुरू किया, वह पूर्वोक्त कार्यकी समाप्ति न होणेपर-पहिलेहि आंबिलकी तपस्या करके और रात्रिमें जागरणकरणेकर धातुप्रकोपसें रुधिरविकाररूपरोग उत्पन्न हूवा, याने रक्तपित्तरोगहूवा, तब उनोंके विरोधिलोकोंने, अर्थात् चैत्यवासी लोकोंनें, हर्षपूर्वक अपवाद करा के जो यह अभयदेव उत्सूत्र व्याख्यान करताहै, इसलिये शासनदेवी क्रोधातुर होकर इसके शरीरमें कोढरोग उत्पनकियाहै, उस अपवादको सुणके दुखी हूवे आचार्यकु रात्रिमे धरणेन्द्रन आयके उस रुधिरविकाररोगकु मिटादिया, और कहा के स्तंभनकगामके पासमें सेटीनदीहै, उसके किनारे जमीनमें श्रीपार्श्वनाथस्वामिकीप्रतिमा है, जिसके प्रभावसें नागार्जुनजोगीनें रससिद्धि प्राप्त करीथी, उस प्रतिमाको प्रगटकरके वहा महातीर्थ आप प्रवर्त्तावो, बादमें आपकी अपकीर्ति नष्ट होगा, बादमे वहा जाकर श्रीअभयदेवसू-

रिजीनें, जयतिहुअण इत्यादि ३२ गाथाका स्तोत्र वणाकर संघसमक्ष उस प्रतिमाको प्रगट करी, तव आचार्यका महायश सर्व ठिकानें हूवा, पीछे धरणेन्द्रके कहनेसें उस स्तोत्रकी २ गाथा निकालके शेष ३० गाथाहि प्रसिद्ध किया, वैसाहि अबी है, वा प्रतिमा खम्भातसहरमें अविभी पूजिजे है, वा प्रतिमा श्रीनेमिनाथके शासनमें, २२२२ सालमें भराइ है, एसा उस प्रतिमाके आसनपर टांका हूवाहै, पीछे नव अंगोंपर टीका रची और पंचाशक वगेरेकी टीका वनायके वादमें कपडवंजसहरमें वि० सं० ११३५ के सालमें स्वर्ग गये, जैन इतिहासः, इत्येकोऽभयदेवसूरिः, अनेन चात्मकृतप्रवन्धेष्वेवं स्वपरिचयोऽदर्शि—

श्रीमदभयदेवसूरिनाम्ना मया महावीरजिनराजसन्तानवर्त्तिना महाराजवंशजन्मनेव संविग्नमुनिवर्गश्रीमज्जिनचन्द्राचार्यान्तेवासियशोदेवगणिनामधेयसाधोरुत्तरसाधकस्येव विद्याक्रियाप्रधानस्य साहाय्येन समर्थितम्, तदेवं सिद्धमहानिधानस्येव समापिताधिकृतानुयोगस्य मम मंगलार्थ पूज्यपूजा नमो भगवते वर्त्तमानतीर्थनाथाय श्रीमन्महावीराय, नमः प्रतिपन्थिसार्थप्रमथनाय श्रीपार्श्वनाथाय, नमः प्रवचनप्रबोधिकायै श्रीप्रवचनदेवतायै, नमः प्रस्तुतानुयोगशोधिकायै श्रीद्रोणाचार्यप्रमुखपण्डितपर्षदे, नमश्चतुर्वर्णाय श्रीश्रमणसंघभट्टारकायेति, एवंच निजवंशवत्सलराजसन्तानिकस्येव ममासमानमिममायासमतिसफलतां नयन्तो राजवंश्या इव वर्द्धमानजिनसन्तानवर्तिनः स्वीकुर्वन्तु, यथोचितमितोऽर्थजातमनुतिष्ठन्तु सुष्टूचितपुरुपार्थसिद्धिमुपयुञ्जतांच योग्येभ्योन्येभ्य इति, किञ्च—सत्सम्प्रदायहीनत्वात्सदूहस्य वियोगतः, ॥ सर्वस्वपरशास्त्राणामदृष्टेरस्मृतेश्च मे ॥ १ ॥ वाचनानामनेकत्वात्, पुस्तकानामशुद्धितः, ॥ सूत्राणामतिगांभीर्यान्मतिभेदाच्च कुत्रचित् ॥ २ ॥ क्षुण्णानि संभवन्तीह, केवलं सुविवेकिभिः ॥ सिद्धान्तानुगतो योऽर्थः, सोऽस्माद्ग्राह्यो न चेतरः ॥ ३ ॥ शोध्यंचैतज्जिने भक्तैर्मामवद्भिर्दयापरैः, ॥ संसारकारणाद् घोरादपसिद्धान्तदेशनात् ॥ ४ ॥ कार्या नचाक्षमाऽस्मासु, यतोऽस्माभिरनाग्रहैः ॥ एतद्गमनिकामात्रमुपकारीति चर्चितम् ॥ ५ ॥ तथा संभाव्य सिद्धान्ताद्, बोध्यं मध्यस्थया धिया ॥ द्रोणाचार्यादिभिः प्राज्ञैरनेकैरादतं यतः ॥ ६ ॥ जैनग्रन्थविशालदुर्गमवनादुच्चित्य गाढश्रमं, सद्व्याख्यानफलान्यमूनि मयका स्थानांगसद्भाजने, संस्थाप्योपहितानि दुर्गतनरप्रायेण लब्ध्यर्थिना, श्रीमत्संघविभोरतः परमसावेद प्रमाणं कृती ॥ ७ ॥ श्रीविक्रमादित्यनरेन्द्रकालाच्छतेन विंशत्यधिकेन युक्ते ॥ समासहस्रेऽतिगते (वि० सं० ११२०) निबद्धा-

स्थानागटीकाऽप्यधियोऽपि गम्या ॥ ८ ॥ स्था० १० ठा०, एव समवायागभगवत्यगेपि सविस्तरत स्ववशपरम्परादर्शितेति । तस्याचार्यजिनेश्वरस्य मदवद्वादिप्रतिस्पद्धिन , तद्वन्धोरपि बुद्धिसागर इति ख्यातस्य सूरेर्भुवि, छन्दोनन्वनिबद्धबन्धुरवचःशब्दादिसल्लक्ष्मण , श्रीसविग्नविहारिण श्रुतनिधेश्चारित्रचूडामणे ॥ ८ ॥ शिष्येणाभयदेवाख्यसूरिणा विवृति कृता ॥ ज्ञाताधर्मकथागस्य, श्रुतभक्त्या समासत ॥ ९ ॥ युग्मम् ॥ निवृतिककुलनभस्तलचन्द्रद्रोणाख्यसूरिमुख्येन ॥ पण्डितगणेन गुणवत्प्रियेण सशोधिताचेयम् ॥१०॥ एकादशसु शतेष्वथ, विंशत्यधिकेषु विक्रमसमानाम् ॥ (वि० स० ११२० अणहिल पाटकनगरे, विजयदशम्या च सिद्धेयम् ॥ ११ ॥ ज्ञा० द्वि० श्रु०, यस्मिन्नतीते श्रुतसयमश्रियावप्राप्नुवत्याथ पर तथाविधम् ॥ स्वस्याश्रय सवसतोऽनिदुस्थिते' श्रीवर्द्धमान स यतीश्वरोऽभवत् ॥ १ ॥ शिष्योऽभवत्तस्य जिनेश्वराख्य सूरि कृतानिन्द्यविचित्रशास्त्र ॥ सदा निरालम्बविहारवर्ती, चन्द्रोपमश्चन्द्रकुलाम्बरस्य ॥ २ ॥ अन्योपि विशो भुविसारसागर , पाण्डित्यचारित्रगुणैरनूपमे , शब्दादिलक्ष्मप्रतिपादकानघग्रन्थप्रणेता प्रवर क्षमावताम् ॥ ३ ॥ तयोरिमा शिष्यवरस्य वाक्याद्, वृत्तिं व्यधात् श्रीजिनचन्द्रसूरे ॥ शिष्यस्तयोरेव विमुग्धबुद्धिर्ग्रन्थार्थबोधेऽभयदेवसूरि- ॥ ४ ॥ बोधो न शास्त्रार्थगतोऽस्ति तादृशो, न तादृशी वाक् पटुताऽस्ति मे तथा ॥ न चास्ति टीकेह न वृद्धनिर्मिता, हेतु पर मेऽत्र कृतौ विभोर्वच ॥ ५ ॥ यदिह किमपि दृब्धम् बुद्धिमान्द्याद् विरुद्ध, मयि निहितकृपाभ्सद्धीधना शोधयन्तु ॥ विपुलमतिमतोऽपि प्रायश सावृते स्यान्नहि न मति विमोह किं पुनर्मादृशस्य ॥ ६ ॥ चतुरधिकविंशतियुते, वर्षसहस्रे शते (वि० स० ११२४) च सिद्धेयम् ॥ धवलक्कपुरे प्रगल्भे, धनपत्योर्बकुलचन्द्रिकयो , ॥ ७ ॥ अणहिल्पाटकनगरे, सघवरवर्तमानबुधमुख्य ॥श्रीद्रोणाचार्यार्यैर्विद्वद्भि शोधिताचेति ॥८॥ प्रश्रा० १९ विव०,, अभिस्सद तयवत्थो, जिणनाहो पणमयाइ वरिसाण ॥ तयपु वरगिंद निम्मिअ, सत्तिणो विउल गुणागारो ॥४८॥ सिरिअभयदेव सूरि, दूरीकयदुरिअरोगसघाओ ॥ पयरत्ति काही, अणिमाहप्पदिप्पत ॥ ८६ ॥ ती० ६ कल्प, इति अभिधानराजेन्द्रकोशे, इस उपरोक्त लेखका सारभावाथसक्षेपसे लिखतहू— कि निग्रंथ, कौटिक, चन्द्र, बनवासी, इन नामोंसे श्रीसुधर्मास्वामिकी पट्टपरम्परा और गच्छपरम्परा अविच्छिन्नपणे ३७ पट्टाक्रममें चलतिरही और चन्द्रकुल, वयरी शाखा यहभी क्रमसे चलते रहे बादमें ३८ पट्टमें सुविहित परंपरावाले, सुविहितपक्ष, वा सुविहित गच्छके धारक

और ८४ गछके नायक श्रीउद्योतनसूरिजी हूवे, उनोके पट्टमें श्रीसूरिमंत्रकों धरणेंद्रकों तीर्थंकरपास भेजकर शुद्धकरवाणेवाले, और महाघोर तपके प्रभावसें श्रीविमलसाह मंत्रीकों प्रतिबोधके श्रावक धर्मधराणेवाले, आवुजी तीर्थकों प्रगटकराणेवाले, श्रीउद्योतनसूरिजीके ज्येष्ठांतेवासी श्रीवर्धमानसूरिजी हूवे, उनोके पट्टमें युगप्रधानपदकों धारणकरणेवाले, १०८० में दुर्लभराजाके सन्मुख अणहिलपुरपाटणमे चेत्यवासीयोंकों जीतकर अतिनिर्मलखरतरविरुदकों धारणकरणेवाले और दशमे अछेरेके प्रभावकों दूर हटानेवाले, और अनेक निर्दोष शास्त्रोंकों रचनेवाले, श्रीजिनेश्वरसूरिजी और श्रीवुद्धिसागरसूरिजी हूवे, इनोके पट्टमें संवेगरंगशालादिग्रंथोंके कर्त्ता पद्मावतीसें वरकों प्राप्तहुवा और मौजदीन नामक बादसाहकों वरदेनेवाले, और उसको प्रतिबोध देनेवाले, श्रीजिनचन्द्रसूरिजी हूवे, इनोके पट्टमें छोटे गुरु भाइ जयतिहुअणस्तोत्र बनायके श्रीस्तंभनकतीर्थकों प्रगटकर अपने शरीरमे उत्पन्नहुवे कोढरोगकों दूर हटानेवाले, और शासनदेवीके अनुरोधसें निर्दोष नवांगवृत्तिकों वनानेवाले, औरभी अनेक टीका प्रकरण वगेरे रचनेवाले, एकावतारी श्रीमान् अभयदेवसूरिजी हूवे.

इस अनुक्रमसें स्थानांग, समवायांग, भगवती, ज्ञाताधर्मकथा, पंचाशकप्रकरणवगेरेकी वृत्तियोंके अंतप्रशस्तियोमे वृत्तिकारनें अपनी गुरुशिष्यकी परम्परा दिखाइ है ऐसा वृत्तिकार खुद लिखतें है और चान्द्रकुल, वा चांद्रगछ एकहि है भिन्न भिन्न नहिं है इस कथनसें, वृत्तिकारनें यथाऽऽम्नाय पूर्वापर प्रसंगानुसार, शेष रहै कोटिकगछ, वयरीशाखा, खरतर विरुदभी दिखाइ दिया है, एसा समजना चाहिये, और श्रीसुधर्मास्वामिसें लेकर श्रीउद्योतनसूरिजीतकतो चान्द्रकुलीय खरतरवडगच्छादिकोंकी पट्टावली प्रायें कर एकसरिखीहि मिले है और आगे फरक है, वास्तेहि श्रीउद्योतनसूरिजी श्रीवर्धमानसूरिजीसें लेकर श्रीअभयदेवसूरिजीनें अपनेतक गुरुशिष्यकी परम्परा और चांद्रकुल मात्र लिखाहै, शेष रहै कोटिकगछ, वयरीशाखा, खरतरविरुद पूर्वापर प्रसंगानुसार स्पष्टतर होनेमें नहिं लिखाहै, और गुरुशिष्यपरम्परा लिखनेकी अति आवश्यकता समजकर यथावस्थित अपनी परम्परा लिखीहै, इतने लिखनेपरहि शेपरहि वातोंका वोध होता हूवा देखके जादा विस्तार नहिं किया, वडे पुरुष गंभीरस्वभाववाले होते हैं, जहांपर जितना प्रयोजन देखे उतनाहि लेखादि कार्य करतेहैं, ज्यादे नहिं,

और वादमें वृत्तिकार अपनेकों शोधनेमें, वा लिखनेमें, सहाय देनेवाले, विद्वान आचार्य मुनियोंका उपकार समजकर, उनोंका नामादिक स्पष्टतर लिखाहै और बेगड खरतरशाखामें, श्रीजिनसिंहसूरिशिष्य श्रीजिनप्रभसूरिकृत श्रीतीर्थंकल्पप्रकरणमें ६ छट्टा तीर्थकल्पाधिकारमें लिखते है कि श्रीधरणेंद्रकरके सेवितहूवे थके सेटीनदीके तटपर पाचसे वर्षतक श्रीस्तंभनपार्श्वनाथस्वामीरहे देदीप्यमान सर्वोत्कृष्टप्रभाववाले, ऐसे श्रीस्तंभनपार्श्वनाथस्वामीकु प्रगटकर अपने शरीरसे जो दुष्टकोढरोगके समूहकों दूर हटानेवाले श्रीअभयदेवसूरिजी भये, उनोंनें जयतिहुअण स्तोत्र रचकर इसस्तंभनकतीर्थकों प्रगटकिया, इहातक अभिधानराजेंद्रकोशअन्तर्गतलेखका भावार्थ है

, और तपागच्छीय श्रीसोमसुंदरसुरिशिष्य श्रीसोमधर्मकृत उपदेशसित्तरि १ और गुजरातिजैनइतिहास २ और गणधरसार्धशतक ३ तथावृत्ति, ४ प्राकृतवीरचरित्र ५ श्रीजिनदत्तसूरिकृत गुरुपारतन्त्र्य नामक पचमस्मरण ६ श्रीसमयसुंदरोपाध्यायशिष्यकृत तीर्थंकरपच्याख्या ७ श्रीस्तंभनपार्श्वनाथजी उत्पत्तिका बडास्तवन ८ समाचारिशतक ९ और हीरालालहंसराजकृत श्रीहरिभद्राष्टकटीकाभाषान्तर १० इत्यादि अनेकशास्त्रोंमे नवांगवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजीका खरतरविरुदगच्छ वगेरे प्रगटपणे लिखाहै और नवांगवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजीके पट्टमें युगप्रधानपदधारक श्रीजिनवल्लभसूरिजी हूवे, और इनोंके पट्टमें अवादस्तयुगप्रधानपदधारक और एक लाख तीस हजार घरकुटुंबकु प्रतिबोधनेवाले, और च्यारनिकायके अनेक देवदेवीयोंकरके सेवित होनेवाले, एकावतारी, बडादादाजी, इसनामसें प्रसिद्ध श्रीजिनदत्तसूरिजी हूवे, ऐसा गणधरसार्धशतकवृत्ति, गुरुपारतन्त्र्यपचमस्मरण, खोटिकगच्छपट्टावली, समाचारिशतकादि अनेक ठिकाणे प्रगट लिखाहै और धर्मसागरनें खरतरगच्छ परद्वेष धारके उपरोक्त दोनों महापुरुषोंपर द्वेष करके इसतरे कहाकि, नवांगवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजी खरतरगच्छमे नहि हूवे, श्रीजिनवल्लभसूरिजी नवांगवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजीके शिष्यहि नहि हैं, अर्थात् नवांगवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिजीके पट्टमें नहि हैं श्रीजिनेश्वरसूरिजीसें १०८० में खरतर बिरुद नहि हुवा, अर्थात् श्रीजिनेश्वरसूरिजीकों खरतर बिरुद नहि है, श्रीजिनदत्तसूरिजीसें खरतरगच्छ हूवा है फेर कहा कि १२०४ में खरतरकी उत्पत्ति हुईहै, और चामुंडक, और औष्ट्रिक आदि शब्दोंसें गच्छोंके उपर उपरोक्त दोनु महापुरुषोंके उपर

द्वेषधारके असत् दोषारोपण कियाहै, इत्यादि अनेक शास्त्रबाह्य अशुद्ध प्ररूपणा मनोमति धर्मसागरने करी है,

इत्यादि कारणोंसें संवत् १६ सेमें निन्हव धर्मसागर मतावलंबियोंसें आधुनिक तपोटमतकी पुष्टी हुई, और इस समे उनोंकी वहुतहि प्रवलता है, इसवास्तेहि पूर्वोक्त अशुद्ध प्ररूपणा करते हैं, उपदेशकरके करवाते हैं,

॥ अव इहांपर प्रत्युत्तरमें वहुतहि विवेचनीय है, वहुत शास्त्रोंकी शाख है परन्तु इहांपर ग्रंथगौरवभयसें अतिप्रसंगभयसें उन शास्त्रोंका पाठ वगेरे नहिं लिखा है

और किसीकों विशेष देखनेकीही इच्छा होय तो श्रीचिदानंदजीकृत आत्मभ्रमोच्छेदनभानु नाम ग्रंथकी पीठिका सरुसे, वा पृष्ट ३१ सें ६८ तक अवश्य देखलेवे, और यह ग्रंथ छपकर तइयार हूवा है सो आदिसे अंततक देखना जिस्सें इस विषयका परिपूर्ण समाधान होगा, और इस विषयके पहिले वहुत ग्रंथ छप चुके है, और उनग्रंथोंमे इसविषयका वहुतहि सप्रमाण शास्त्रपाठोंसें प्रत्युत्तर दिया गयाहै; इसलिये उन पुरुषोंकों धन्यवाद है, सत्यार्थ प्रगटकरणेसें, और उनोंके रचे हूवे ग्रंथ ये हैं;

प्रश्नोत्तरविचार, प्रश्नोत्तरमंजरी, २ भाग हैं, पर्युषणानिर्णय, आत्मभ्रमोछेदनभानु आदि छपे हैं, इसलिये पिष्टपेषण समजकर मेने इहांपर विशेष नहिं लिखा है, इत्यलं विस्तरेण,

और ऊपरोक्त विषयकी समूल उत्पत्ति इसतरे भइ है श्रीउद्योतनसूरिजीके ज्येष्ठांतेवासी श्रीवर्धमानसूरिजी हूवे, तिनोंके शिष्य श्रीजिनेश्वरसूरिजी हूवे इस अनुक्रमसें अविच्छिन्न जो पाटपरम्परा चली सो खरतर इसनामसें प्रसिद्ध है, यह एकही गच्छसात नामसे प्रसिद्ध है'

प्रथम निग्रन्थ, १ कोटिक, २ चन्द्र, ३ वनवासी, ४ सुविहित, ५ खरतर, ६ राजगच्छ, ७ याने धार्मिक ७ क्षेत्र होवे वैसा, भिन्न भिन्न कारणोंसें अतिनिर्मल यह ७ नाम प्रसिद्ध है, और श्रीउद्योतनसूरिजी महाराजनें श्रीसिद्धक्षेत्रमें श्रीसिद्धवडके नीचे श्रीसर्वदेवादि भिन्न भिन्न आचार्योंके ८३ शिष्योंकों श्रेष्ठ समयमें मध्यरात्रिसमे अपणे हाथसें आचार्यपद दिया, उसवक्त ८४ गच्छ हूवे, इन ८४ सी गच्छोंमे शुद्ध प्ररूपक वडे प्रभाविक आचार्य महाराज हूवेहैं सो सर्व पूजनीय

माननीय है, और तिन ८४ सीयोंकी समाचारी, कथञ्चित् एकहि है, एक गुरुके थापे भये हैं प्ररूपणाभी प्रायें एक समानही है, और इस समय (८४) चौरासी गच्छोंमेसें बहुत गच्छ तो विच्छेद होगये है, प्रायें ३-४ गच्छ सप्रदाय शेष रहि समवे है, ऐसा प्राचीन जैनसप्रदायिक इतिहाससें माल्म होवे है, फेर विशेष तो श्रीज्ञानिमहाराज जाणे, श्रीवर्धमानसूरिजीकी सप्रदायवाले, और श्रीसर्वदेवसूरिजीकी सप्रदायवाले और चित्रवाल गच्छीय तपानिरुदधारक श्रीजगचद्रसूरिजीकी सप्रदायवाले, ओसीया नगरी प्रतिबोधक श्रीरत्नप्रभसूरिजीकी सप्रदायवाले, चौथकी सवच्छरी पडावश्यकादि समाचारी प्रायें समानहि करते हैं इन सप्रदायोंमे होनेवाले महापुरुषोंकी करीहुई प्ररूपणाभी शुद्ध है, येही सप्रदाय प्राये प्राचीन हैं

और श्रीवर्धमानसूरिजी ८४ सी शिष्योंमे वडे थे, और मुख्य थे, तिणोंने छमास निरतर आचाम्ल (आबिल) किया, और पक्षातरमे, श्रीसूरिमत्रका अधिष्ठायककों जाणनेके लिये, क्रमागत श्रीसूरिमत्र श्रीउद्योतनसूरिजीके मुखसें प्राप्त होकर, बादमे श्रीदेवगुरुआराधनरूप अष्टम तप किया, तिससें श्रीसूरिमत्रका अधिष्ठायक श्रीनागराजधरणेन्द्र आया, ओर कहा कि हे भगवन् मेरेकों किसवास्ते याद किया, श्रीसूरिमत्रका अधिष्ठायक मे हू, कार्य होयसो कहो, तब आचार्यश्रीजी बोले कि, इस श्रीसूरिमत्रका चौसठ देवता हैं, उणोंका स्मरण करणेसें, किसीनेभी दर्शन नहिं दिया, इसका क्या कारण है, तब धरणेन्द्रनें कहा कि, आपके सूरिमत्रमे एक अक्षर कम है, इसलिये अशुद्ध होणेसें अशुभभावसें देवता दर्शन नहिं देवे, मेंभी तुमारे तपके प्रभावसें आया हू, तब आचार्यश्रीनें कहा कि, तूं प्रथम सूरिमत्र शुद्धकर, फेर दूसरा कार्य यथावसर कहूगा, तब धरणेन्द्रनें कहा कि, मेरी शक्ति नहिं है, तीर्थंकर सिवाय शुद्ध होवे नहिं, तब आचार्य श्रीनें सूरिमत्रका डब्बा धरणेन्द्रकु दिया, तब धरणेन्द्रनें महाविदेहक्षेत्रमें श्रीसीमधरस्वामीको जाके दिया, और श्रीसीमधरस्वामीनेभी तत्र सूरिमत्रकों शुद्धकरके धरणेन्द्रकों दिया, धरणेन्द्रने पीछा लाकर श्रीवर्धमानसूरिजीकों दिया, बादमें तीनवार उस शुद्ध सूरिमत्रका स्मरण किया, बादमें सप्रभाव वह सूरिमत्र हूवा, बहुतहि जादा फुरणे लगा, बादमे उस सूरिमत्रके सर्व अधिष्ठायक देवताओंनें दर्शन दिया, तब उन देवताओंनें कहा कि, विमलदडनायक हमको पुछे है कि, आबुगिरि शिखरपर, जिनप्रतिमारूप तीर्थ है, वा नहिं, इत्यादि अधिकारआबुप्रबधमे है,

सो अर्थरूपसें श्रीवर्धमानसूरिजीके संबंधमें दिया गया है, इसतरे श्रीआबुतीर्थको प्रगटकर श्रीविमलवसहीकी प्रतिष्ठा करी, बादमे बहुत शासनकी प्रभावना करके स्वर्गगये इनोंके श्रीजिनेश्वर बुद्धिसागर जिनचन्द्र अभयदेवादि और श्रीमरुदेवी कल्याणवती महत्तरादि बहुतहि विद्वान गीतार्थ साधु-साध्वीयोंकी वृद्धि हुई, और बहुत-बडा समुदाय होणेसें, बृहद्गच्छ इस नामसें यह गच्छ प्रसिद्ध हूवा, ऐसा गणधरसार्धशतकादिकका अभिप्राय है, और पूर्वोक्त विषयपर आबुप्रबंध विशेष उपकारार्थ दिया जावे है—तद् यथा—

॥ अह अन्नयाकयाइ सिरिवद्धमाणसूरि आयरिया अरन्नचारिगच्छनायगा-सिरिउज्जोयणसूरिणो गामाणुगामं दूइज्जमाणा अप्पडिबंधेणं विहारेणं विहरमाणा अब्बुयगिरि सिहरतलहट्टीए कासद्दहगामे समागया तयाणंतरे विमलदंड नायगो पोरवाडवंसमंडणो देसभागं उग्गाहेमाणो सोवितत्थेवागओ अब्बुयगिरि-सिहरे चडिओ सव्वओ पव्वयं पासित्ता पमुईओ चित्ते चिंतेउ माढत्तो इत्थ जिण-पासायं कारेमि ताव अचलेसर गुहावासिणो जोई जंगम तावस सन्नासिणो माहण प्पमुहा दुट्ठमिच्छत्तिणो मिलिऊण विमलसाह दंडनायग समीवं आढत्ता एवं वयासी भो विमल तुह्माणं इत्थ तित्थं नत्थि अम्हाणं तित्थं कुलपरंपरया तं वट्टई अओ इहेव तव जिणपासायं रचयं नदेमो तओ विमलो विलक्खो जाओ अब्बुयगिरि सिह-रतलहट्टीए कासद्दहगामे समागओ जत्थ वट्ढमाणसूरि समोसरिओ तत्थेव गुरुं विहि-णा वंदिऊण एवं वयासी भयवं इहेव पव्वए अम्हाणं तित्थं जिणपडिमारूवं वट्टई-त्ति वा नवा तओ गुरुणा भणियं वच्छ देवया आराहणेणं सव्वं जाणिज्जइ छउ-मत्था कहं जाणंति तओ तेण विमलेण पत्थणाकया किंबहुणा वट्ढमाणसूरिहिं छम्मासी तवं कयं तओ धरणिंदो आगओ गुरुणा कहियं भोधरणिंदा सूरिमंत्त अहिट्ठायगा चउसट्ठि देवया संति ताण मज्झे एगावि नागया न किंचि कहियं किं कारणं धरणिंदेणुत्तं भयवं तुम्हाणं सूरिमंत्तस्स अक्खरं वीसरियं असुद्ध भावाओ देवया नागच्छंति अहं तव बलेण आगओ गुरुणा वुत्तं भो महाभाग पुव्वं सूरि मंत्त सुद्धं करेहि पच्छा अन्नं कज्जं कहिस्सामित्ति धरणिंदेणुत्तं भगवन् मम स-त्तीनत्थि सूरिमंतक्खरस्सअसुद्धिंसुद्धिं काउं तित्थगर विणा कस्सवि सत्ती नत्थि तओ सूरिणा सूरिमंत्तस्स गोलओ धरणिंदस्स समप्पिओ तेण महाविदेहखित्ते सीम-धरसामिपासेनीओ तित्थगरेण सूरिमंत्तो सुद्धो कओ तओ धरणिंदेण सूरिमंत्त गो-

लओ सूरिण समप्पिओ तओ वात्तय सूरिमत्त समरणेण सव्वे अहिट्ठायगा देवा पच्चक्खीभूया तओ गुरुणा पुट्ठा विमल्दडनायगो अह्माण पुच्छइ अव्वुयगिरिसिहरे जिणपडिमारूव नित्य अच्छइ नवा तओ तेहिं भणिय अव्वुयादेवी पासओ वामभागे थदद्युदआदिनाहस्स पडिमा वट्टइ अखडरूयसरिथयस्स उवरिं चउसर पुप्फमाला जत्थदीसइ तत्थ खणियव्व इइ देवया वयण सुचा गुरुणा विमलसाव-यस्स पुरओ कहिय तेण तहेव कय पडिमानिग्गया विमलेण सव्वे पासडिणो आहूया दिट्ठा जिणपडिमा सामवयणा जाया पासाय कारमारद्ध विमलेण, पास-डेहिं भणिय, अह्माण भूमिदव्व देहि तओ निमलेण भूमी दव्वेहिं पूरिऊण पासाय कय वट्टमाणसूरीहिं तित्थपइट्ठिय न्हवण पूयाइ सव्व कय तओ पच्छागयकालेण मिच्छत्तिणो तस्साहिणा जाया, तओ वावण्णजिणालओ सोवन्नकलसधयसहिओ निम्मविओ विमलेण अट्ठारसकोडी तेवन्नलक्खसरायव्वो लग्गो अज्जवि अखटो पासाओ दीसइ इत्यादि इति अर्बुदाचळप्रबध इस आवुतीर्थकों प्रगट करणेवाळे श्रीवर्धमानसूरिजीसें अविच्छिन्न दुप्पसहसूरिपर्यंत जो सप्रदाय है, सो सर्वत्र बहुलताकरके, खरतरगच्छ, इसनामसें इसजगतमे महसूर है, और श्रीउद्योतनसूरिजी श्रीसिदक्षेत्रमें सिद्धवडनीचे ८३ शिष्योंको आचार्यपद देकर अपणा अल्पायु जाणके वहाहि अणसणकर समाधिसें स्वर्गगये, और ८३ तयासी शिष्योंको वडवृक्षनीचे आचार्यपद दिया, इस्स कारणसें वडगच्छकी स्थापना हुइ, महाप्रभाविक हूवे, तिस्सें अपणें अपणें गच्छनामसें प्रसिद्ध हूवे, और सामान्यप्रकारसें तयासीयोंकाहि वडगच्छ कहा जावे है, परन्तु वादमें अलग अलग अपने नामसें प्रसिद्धि पाये, और उन ८३ तयासीयोंमे बडे श्रीसर्वदेवसूरिजी थे, वेहि विशेषकर, वडगछ, इस नामसें प्रसिद्ध हूवे हैं ऐसा सभव है, और श्रीउद्योतनसूरिजी श्रीसर्वदेवसूरिजी और श्रीदेवसूरिजी आदि श्रीमुनिरत्नसूरिजी पर्यंत अनुक्रमसें जो पाटपरम्परा है, सो वडगच्छ इसनामसें प्रसिद्ध है, और यह गच्छ, निग्रन्थ, कौटिक, चन्द्र, वनवासी, सुविहितपक्ष, वडगच्छ इन नामोंसें प्रसिद्ध है, और कहा जाता है, और यथा-र्थरूपसें तो श्रीमुनिरत्नसूरिजीके आगे पाटपरम्परा नहिं चली, विच्छेद गइ ऐसा प्रायें सभवे है, और कहा जावेहै कि मुनिरत्नसूरिजी आगे वडगच्छ सप्रदाय श्रीचित्रवालगच्छमें जामिलि है, इस्सें महातपाविरुदधारक श्रीजगच्चन्द्रसूरिजीसें लेकर वडगच्छकी पाटपरम्परा लिखि जावेहै, और वडगच्छकी पट्टावलिमेंभी इसी

तरे पाटपरम्परा देखनेमे आवेहै, ऐसा किसीका कहिना है, यह भी श्रीवृहत्कल्पवृत्ति श्रीधर्मरत्नप्रकरणवृत्ति आदि शास्त्रदेखतां तो यह कहेना मिथ्या संभवे है, जैसे श्रीअभयदेवसूरिजी नवांगवृत्तिकर्तानें अपणा कुल पाटपरम्परा वगेरहस्वतंत्र लिखाहै, इसीतरे महातपाविरुद धारक श्रीजगच्चन्द्रसूरिजीकामी तत्पट्टप्रभाकर श्रीदेवेन्द्रसूरिजी तत्संतानीय श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजीनेंभी अपणा चित्रवालगच्छ, महातपाविरुद, और स्वतंत्र पाटपरम्परा लिखी है, इस्सें इनोंमे वडगच्छका गन्धभी नहिं है, इनोंके वडगच्छकी पाटपरम्परासें कोइ संबंध नहिं है, तद् यथा— श्रीपद्मचन्द्रकुलपद्मविकाशी श्रीधनेश्वरसूरिजी हुवे, श्रीचैत्रपुरमंडन महावीर प्रतिष्ठासें चैत्रगच्छ हुवा, उस गच्छमें श्रीभुवनेन्द्रसूरिजी उनके शिष्य श्रीदेवभद्रगणिजी, उनके शिष्य श्रीजगच्चन्द्रसूरिजी और श्रीदेवेन्द्रसूरिजी, तथा श्रीविजयेन्दुसूरिजी, यह तीन महाराजश्लोकोक्तगुणसहित हुवे, श्रीविजयेन्दुसूरिजीके प्रथम शिष्य श्रीवज्रसेन सूरिजी दूसरे शिष्य श्रीपद्मचंद्रसूरिजी तीसरे शिष्य श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजीनें श्रीवृहत्कल्पसूत्रकी टीका विक्रमसंवत् १३३२ में रचि है, उसकी प्रशस्तिमें और श्रीधर्मरत्नप्रकरणवृत्ति आदिमें इस मुजव अपणा गच्छ अपणा विरुद, और अपणी गुरुशिष्यकी पाटपरम्परा लिखि है और श्रीवडगच्छीयमणिरत्नसूरिजीका गुरुशिष्यतरीके नामभीं नहिं लिखा है, इस्सें जाणा जाता है कि श्रीवडगच्छके साथ श्रीचैत्रवालगच्छका कोइ संबंध नहिं है, यह वात सत्य है, इस्सें यह चैत्रवालगच्छ स्वतंत्र अलगहि है, और श्रीजगच्चन्द्रसूरिजी तत्पट्टे श्रीदेवेन्द्रसूरिजी आदि जो अनुक्रमसें पाटपरम्परा है सो इस्समें लघुपौशालीयतपा शाखा है, श्रीदेवेंद्रसूरिजीसे प्रसिद्ध भइ है, और श्रीविजयेन्दुसूरिसें जो पाटपरम्परा है, सो वृहत्पौशालीयतपा शाखा है, सो प्रसिद्ध है, यह दोनों शाखा श्रीचित्रवालगच्छकीहि है, वडगच्छकी नहिं है, और महातपाविरुद, तपागच्छ चित्रवालगच्छ, यह एकहि है, ऐसा शास्त्र देखनेसें मालूम होवे है, और श्रीशास्त्रोंके अनुसार तो इसीतरे मानना उचित है, वा प्ररूपणा करणा सत्य है, और श्रीसर्वदेवसूरिजीसें लेकर श्रीमणिरत्नसूरिजीतक वडगच्छकी पाटपरम्पराकों श्रीजगच्चन्द्रसूरिजीके नाम साथ लगातें हैं, सो शास्त्रके आधारसें तो मिथ्या है, और विना विचारी अंधपरम्परा है, ऐसा जाणा जावे है, और विशेष तो श्रीज्ञानी महाराज जाणे

और विक्रमसंवत् १६१२ में श्रीजिनमाणिक्यसूरिजीके शिष्य श्रीजिनचंद्रसूरिजी हूवे, उससमय चित्रवालगच्छीय, अपरनाम, श्रीतपागच्छीय श्रीविजयदानसूरिजी-

का शिष्यधर्मसागरनें अनेक उत्सूत्रबोलोंकी प्ररूपणा करी, और अनेक गुरुआम्नायाश्रितविरुद्धबोलोंकी अशुद्धप्ररूपणा की, तब श्रीजिनचन्द्रसूरिजी विहार करते अणहिलपुर पाटणमे पधारे, तब यह वृत्तांत श्रीजिनचन्द्रसूरिजीनें सुणा, तब सर्व गच्छमताश्रित सर्व सभाजनसमक्ष जाहिर शास्त्रार्थ धर्मसागरके साथ श्रीजीका हूवा तिसमें निर्णयार्थ अतिमसभामे धर्मसागरकों बुलाया, अपणा पक्ष निर्बल जाणके, सभामें आणेवास्ते नट गया, तब धर्मसागरका पक्ष झूठा जाण, सर्व गच्छवासीयोंने, और मतवासीयोंनें शास्त्र देख श्रीजिनचन्द्रसूरिजी आश्रित पक्ष सत्य जाण, सर्वनें सही करी, याने दशकत किये, वह सहीपत्र, पाटण, जेसलमेर बीकानेर आदि भंडारमे रखा गया था, और श्रीविजयदानसूरिजीनें धर्मसागरका बनाया हूवा, कुमतिकुद्दालग्रंथकों जलशरण किया, और गच्छव्यवस्थाश्रित, ७ और १३ बोल लिखे, और धर्मसागरकों गच्छ बाहिर किया, इत्यादि व्यवस्था उस समय हूइ थी, सो कुमतिविषजागुलि १ और श्रीजसविजयजीकृत आगमविरुद्ध अष्टोत्तरशत उत्सूत्र बोल २ श्री मोहमकुलरत्नपट्टावलि दीपविजय कविकृत ३ आदि ग्रंथ देखणेमें प्रगटपणे सत्यहि मालूम होवे है, इसी लियेहि लघुपौशालीयतपा शाखामें श्रीविजयसेनसूरीजीके बादमें दोय गद्दी भइ है, सो आणन्दसूरि, १ तथा देवसूरि, २ इस नामनें प्रसिद्ध है, सो इस्मेंभी धर्मसागर और धर्मसागरकृत प्ररूपणाकाहि मुख्य कारण जाणा जाता है, और उस समय तो इन सर्व अशुद्ध प्ररूपणाओंका निषेधहि किया गया है, और इसतरे तपगच्छनायकनें अपणें गच्छमें हुकम जाहिर कियाथा कि, धर्मसागरका बनाया हुआ ग्रंथ उसके अंदरमें कोइभी गीतार्थ अपणें बनाये हुवे ग्रंथमें एकभी बात लावेगा तो गच्छनायकके तरफसें बड़ा ठबका मिलेगा, और इसतरेका कोइभी नवीन ग्रंथ होवे सो सब गीतार्थके शोधे बिगर प्रमाण करे नहि, इत्यादि व्यवस्था गच्छकी लिखि है, इसलिये मालूम होवे है कि, तपगच्छनायकोंनें धर्मसागरकी करी हुइ तिसमयकी अशुद्ध प्ररूपणाये कबुल नहिं करी थी और शुद्ध प्ररूपणा मार्गमेहि रहे, बादमे श्रीविजयसेनसूरिजीके पीछे मुख्य शिष्य देवसूरिजीनें अपणा मामा भाणेज नाता होणेसें, विजयसेनसूरिजीके वचनोंका अनादर करके, और धर्मसागरकी अशुद्ध प्ररूपणा कबुल करके, तीन पीढीसें गच्छबाहिर किये हुवे धर्मसागरकों पीछा गच्छमें लिया, और गच्छमें भेद करके अपणे आपसेंहि स्वयम् आचार्य हुवा, तबसे दोय आचार्य गच्छमें हुवे, एक विज-

यसेनसूरिजीके आज्ञानुसार पट्टधर विजयतिलकसूरिजी, और विजयदेवसूरि, इनोंनें गच्छमे अशुद्ध प्ररूपणाकी प्रवृत्ति करी, और विजयतिलकसूरिजी ३ वर्ष आचार्यपदमे रहे वाद स्वर्ग हुवे, वादमें श्रीविजयतिलकसूरिजीके पट्टमें श्रीविजयाणंदसूरिजी हुवे, जिनोके नामसें आणंदसूरिगच्छ प्रसिद्ध है, और यह आचार्य चिरंजीवी हुवे, इनोंनें स्वगुरु आज्ञानुसार प्रवृत्ति करी, इसतरे होणेसें लघुपौशालीयतपा शाखामें दोय पाटपरंपरा भइ, गच्छमें अशुद्ध प्रवृत्ति हुइ, यह अवभी चल रहि है, यह इतिहास प्रसिद्ध है तथापि विशेष वृत्तान्त पूर्वोक्त ग्रंथानुसार जाणना और परपक्षवालोंके साथ द्वेष धरके मैत्रीभावकों दूर हटाके देवसूरिआश्रित निन्हव धर्मसागरनें अपणा मंतव्य पौपणेके लिये, प्रवचनपरीक्षा १ कुपक्षकौशिकादित्य २ सर्वज्ञसिद्धि, ३ कल्पकिरणावली, ४ वगेरे ग्रंथ वनाये हैं, और धर्मसागरका शिष्य विमलसागरनें स्वकपोलकल्पित खरतर तपाचर्चा आदि वनाये हैं, और श्रीहीरविजयसूरिजी वगेरेके नामसें तथा अपणें नामसें कितनेक पत्र १ वोल २ काव्य ३ चरित्र ४ जम्वूदीपपन्नत्ति टीका ५ वगरे ग्रंथ नवीन अपणा पक्ष पौषणेके लिये वनाये हैं, उनके अंदर अपणी मरजी प्रमाणे पूर्वसूरियोंके नामसें अपणें सत्यवादी होणेके लिये, असत्य पक्ष पौषण किया है, तदाश्रित विद्वानोंनें श्रीजिनचंद्रसूरिजीके साथ वैरानुबद्ध हो कर, उनके प्रच्छन्नपणे, विजयप्रशस्तिकाव्य, २ श्रीहीरसौभाग्यकाव्य २ वगेरे काव्य वनाये हैं तिनोंके अंदर कितनाक असत्य पौपण किया है, और ऋषभदाशकृत हीररास तथा लावण्यसमयकृत विमलरासमें चीतोडवासी कर्मचंदडोसी तथा विमलसाह मंत्री वगेरेके वारेमें कितनाक असत्यका पौषण किया है, और तिण पुन्यवानोंनें स्वस्वकालभावि स्वगच्छाश्रित धर्मगुरुओंके सदुपदेशसें श्रेष्ठ धर्म कार्य किये हैं, सो तिनके, धर्मगुरुओंका नाम श्रीवर्धमानसूरिजी है, श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी है सो क्रमसे जाणना, और श्रीहीरसूरिजी पहिले अकवरसें मिले है, वादमे कोइ कारणसें श्रीजिनचन्द्रसूरिजी अकवरसें जा मिले है, उनोने वकरीका ३ भेद, टोपीकाजीकी वसकरणा, अमावसकों चन्द्रका उगाना आदि चमत्कार दिखाये हैं, और वादसाहाको प्रतिवोध देके षट्दर्शनीयोंका कलंक दूर किया, दिल्लीका वादसाहका मुख्य मंत्री कर्मचंद वच्छावतके निजगुरु, सवा सोमजीको प्रतिवोधके जैनी पोरवाल श्रावक वनानेवाले, श्रीजिनचंद्रसूरिजी थे, इत्यादि शुद्धार्थ गोपणेसें और अनेक असत्यवातोंको ग्रन्थद्वारा पौपणेसें असत्य प्ररूपणा करणेसें और

स्वगच्छकी शुद्ध प्रवृत्ति बिगाडणेसे और स्वगुरुकी आज्ञा लोपणेसें, धर्मसागर तथा धर्मसागरपक्षपाताश्रितविजयदेवसूरि आदिकसें, संवत् १६१२ के आसरेमे तपोटमतकी पुष्टी हुइ और इन तपोटमतियोंनें तिससमय आगम आचरणा विरुद्ध ६० बोल आसरेका फरक किया, और बादमें तो जादातर फरक किया गया है, एसा मालूम होवे है, और इनहि तपोटमतियोंका स्वरूपवर्णन, स्वभावगुणवर्णन वगेरेका सत्यार्थ तपोटमतकुट्टनशतकमें लिखा है, और इन तपोटमतियोंके तथा खरतर गच्छवालोंके आगम, आचरणा, प्ररूपणा, आश्रित आपसमें बहुतहि अन्तर है, सो जाणके सत्य स्वीकार करके और असत्यका त्याग करणा यहहि धर्मार्थी प्राणिका प्रथम कर्त्तव्य है, यह संक्षिप्त आधुनिक तपोटमतका वृत्तात है, अपिच वडगच्छ, तथा चित्रवाल गच्छ, अपर नाम, तपागच्छ, तथा उपकेशगच्छके प्रायें कर आचरणा, आगम, स्वस्वआम्नाय, प्ररूपणा, आश्रित आन्तरगिक अंतर शास्त्र देखनेसें तो श्रीखरतरगच्छवालोंके साथ भेद नहिं है, एसा मालूम होवे है, और प्रायेंकर आपसमे विरोधकाभी कोइ कारण नहिं है, और प्रायें अन्य गच्छवाले सबहिने आपसमे मैत्रीभाव रखा है और खरतरगच्छवाले तो अभितक अन्यगच्छवालोंके साथ अवश्यकर मैत्रीभाव रखते हैं, और ऐसाहि सबके साथ हरवखत रखना चाहते हैं, और चला कर प्रथम कबिभी किसीके साथ विरोध भावकी उदीर्णा करणी नहिं चाहते हैं, और पुरुषादानीय श्रीतेवीसमे तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथस्वामिके संतानीय परदेशी राजा प्रतिबोधक श्रीकेशीकुमारजी हूवे, श्रीगौतमस्वामिके साथ मिलाप होणेसें श्रीवीरशासनमें संक्रमण हूवे, बादमें क्रमसें पट्टपरम्परा चलति रहि, और श्रीजम्बुस्वामिके समे श्रीरत्नप्रभसूरिजी चौद पूर्वधारी हूवे, जिनोनें एकवखतमें दोय रूप करके कोरटक, और ओशीयामे समकालमे प्रतिष्ठा करी, और १२ कोस लांबी और ९ कोस चोडी, एसी ओसीयां नगरी प्रतिबोधके प्रथम, जैनकुलकी तथा ओसवशकी स्थापना करी, बादमें श्रीवज्रस्वामिके समय दशपूर्वधर श्रीभद्रगुप्तसूरिजी हूवे, जिणोंके पास श्रीवज्रस्वामि दशपूर्व भणें हैं, बादमें श्रीलोहित्याचार्यके समय पूर्वधर श्रीदेवगुप्तसूरिजी हूवे हैं, जिणोंके पास वल्लभीय वाचना करनेवाले, और सिद्धान्तोंको पुस्तकारूढ करनेवाले, श्रीलोहित्याचार्य शिष्य श्रीदेवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणाचार्य एकपूर्व भणे हैं, एसा वृद्धसंप्रदाय है, यह वीरनिर्वाणसे ९८० वर्ष हूवे हैं, इनोके बादमें प्रायेंकर चैत्यवास स्थिति हुइ, बादमें विक्रमसं १०८० के शालमें सगुणादिसहित श्रीजीनेश्वरसू-

रिजी अणहिलपुरपाटणमें आये, उस समय चैत्यवासस्थितिमेरहेहुए श्रीउपकेशगच्छीय संप्रदायमे श्रीसूराचार्य प्रमुख ८४ चैत्यवासी आचार्योंके साथ श्रीपंचासरीय चैत्यसभामें श्रीदुर्लभराजा समक्ष शास्त्रार्थ हूवा था तिस शास्त्रार्थमें श्रीजीनेश्वरसूरिजीका पक्ष सत्य होणेसे, श्रीदुर्लभराजानें श्रीजिनेश्वरसूरिजीकों खरतर करके कहे, और वादीपक्ष श्रीसूराचार्यवगेरेकों नर्म होणेसें श्रीदुर्लराजानें कवलाकरके कहे, और कहाभी है, कि जीत्या सो खरतर हुवा, हार्या सो कवला जाणिया, तिणसमे जैनसंघमें, गच्छ दोय वखाणिया, १॥ वादमे श्रीअभयदेवसूरिजी हूवे उनोंने श्रीस्तंभणपार्श्वनाथजीकी प्रतिमा प्रगटकरके नवांग वगेरेकीवृत्तियांरची उस समय श्रीसूराचार्यशिष्यपंडितशिरोमणि सर्वचैत्यवासीयोंमें मुख्य श्रीद्रोणाचार्य हूवे, उणोनें श्रीअभयदेवसूरिजीकृत सर्ववृत्तियां शोधिहै और वादमे क्रमक्रमसें कितनेक चैत्यवास छोडकर वसतिवासी हूवे, और स्वगच्छमें (कवलाग०) वहुतकालसें साधुधर्मविच्छेद होणेसे किसीनें क्रिया उद्धार नहिं किया और क्रियोद्धार नहिं करसके तथाविध आगमानुरोधसें और परिग्रहधारि श्रीपूजपणेमेहि अपणी परम्परा चलाते रहै, सो अविभी कमलागच्छमे परिग्रह धारी आचार्य यानें श्रीपूजयतिवगेरे विद्यमान हैं, परन्तु साधु–साध्वी प्रायें नहिं है, और इनोंका विशेष समुदायभी फलोधि और वीकानेरमें मौजूद है, और इनोंका श्रीपूजभी वीकानेर वगेरहमेहि रहेते थे, यह प्राचीनगच्छ संप्रदाय है, और यह उपकेशगच्छ, वा कावलागच्छ, इस नामसें प्रसिद्ध है, और इस संप्रदायका करिमीसें खरतरगच्छवालोंके सह प्रशस्त मैत्री भावादि चला आवे है यह वात गुरुगमसंप्रदायि होवे सो जाणते हैं, और पहिला सामायक पीछे इरिया वही, श्रीवीरषट्कल्याणकादि प्ररूपणा सर्व प्रायें खरतरगच्छके समानहि मानतें हैं, और यह वडी वडी वाते लिखकर कवलेगच्छका संक्षिप्त स्वरूप कहा है, और विशेष श्रीउपकेशगच्छ सविस्तर पट्टावली तथा खरतरगच्छ पट्टावलीसें गुरुगमाम्नायसें जाणना,

और ८४ सी गच्छवाले एक गुरुके शिष्य है, सवकी सदृश समाचारी है विशेष भेद नहीं है और प्ररूपणा समाचारी प्राचीन शास्त्रानुसारतो एकहि माल्रम होवे है, इसलिये प्रायें विरोध वगेरेका कारण कोइ नहिं माल्रम होवे है, और श्रीरत्नप्रभसूरिजी और श्रीजिनवल्लभसूरिजी और श्रीजिनदत्तसूरिजी इन ३ आचार्योंकाहि जैनकोमपर वा ८४ सी गच्छवालोंपर विशेष उपकार किया हुवा माल्रम होवे है, इत्यलं विस्तरेण किंच वहु वक्तव्यमस्त्यत्र तत्तु नोच्यते, अग्रे यथावसरं विस्तारयिष्यामः.

अथवा जागते हो, वादमें आचार्यश्रीनें मंद स्वरसें जवाव दिया कि, हे भगवति! जागताहुं, वादमें देवता वोली हे प्रभो! शीघ्र उठो, और ये नव सूतकी कोकडी अलुझी भइ है सो आप खोलो 'याने सुलजावो, श्रीसूरिजी वोले कि सुलजानेको में नहिं समर्थ हूं, तव देवता वोलि के हे पूज्य आप कैसे नहिं समर्थ हो! अभितो आपश्री बहुतकालतकजीवोगा, और नव अंगकी टीका वनावोगा, आचार्यश्रीवोले कि इसतरेका प्रचंडरक्तपित्ति रोगयुक्त शरीर होनेपर कैसे नवअंगकीटीकावनावुंगा, वादमें शासन देवतानें कहा स्तंभनक पुरमे सेढी नदीके किनारे पर खाखरेके वृक्षके अंदर जमीनमे श्रीपार्श्वनाथ भगवानकी प्रतिमा है, उन प्रतिमा सन्मुख देववंदन करो, जिससें रोग-रहित समाधियुक्त शरीरहोवे, ऐसा कह कर शासन देवता अदृश्य भइ, वाद प्रभातमे गुरुमहाराज मिच्छामि दुक्कडं देवेगा, इस अभिप्राय कर दूसरे ग्रामोंसें आये हूवे और उसी ग्राममें रहनेवाले सर्व श्रावक मिलकर आचार्य श्रीके पास आये, उन सर्व श्रावकोंनें आचार्य श्रीकों नमस्कार करा, वादमें आचार्यश्रीनें कहा कि हमारेकों श्रीस्तंभनक पुरमें श्रीपार्श्वनाथ स्वामिकों वंदना करनी है, आचार्यश्रीका यह वचन सुनकर वादमें सव श्रावकोंनें अपने मनमें जाना कि निश्चे आचार्यश्रीकुं किसीका रात्रिमे उपदेश हुवा है, उस्सें इसतरे आचार्यश्री फरमाते हैं, इसतरे श्रावकोंनें अपने मनमे विचारके वादमें उन सव श्रावकोंनें आचार्यश्रीकों कहा कि हमभि सव आपके साथमे आवेंगे वाद उन

श्रावकोने आचार्यश्रीके वास्ते डोली करी, तिस डोलीके अंदर आचार्यश्री बेठे, और यात्राकेवास्ते स्तंभनकपुर प्रति वहांसे चले, बादमें आचार्यश्रीकी अनाजपर रुचि भइ, प्रथम आचार्यश्रीकों भूख बिलकुल नहिंथी, परन्तु स्तंभनकपुर प्रति प्रयाण करनेपर, पहिले प्रयाणमेंहि रस विषयि इच्छा उत्पन्न भइ, क्रमसें जितने धोलके पहुंचे उतनें आचार्यश्रीके शरीरमें विशेष समाधि भइ, बाद प्यादलहि विहार कर आचार्यश्री स्तंभनकपुर पधारे, बादमें जितनें श्रावक लोक श्रीपार्श्वनाथस्वामिकी प्रतिमाजीके तलासमें लगे, उतनें वा प्रतिमा कहांभि नहिं देखनेमें आइ, बादमें श्रावकोंने आचार्यश्रीकों पूछा, तब आचार्यश्रीनें कहा, कि खाखरेके अंदर तुमलोक देखो, बादमें श्रावकोनें सेढी नदीके किनारेपर पलाशवृक्षोंके अंदरतलासकरणेसें देदीप्यमान श्रीपार्श्वनाथ स्वामिकी प्रतिमा देखनेमें आइ, और उस प्रतिमाके ऊपर निरंतर स्नात्रके लिये एक गाय वहांपर आके दूधकुं झारतिथी, बादमें हरषित हुवे ऐसे श्रावकोंनें आयके आचार्य श्रीकों कहा, हे भगवन् आपके कहे हुवे प्रदेशमें प्रतिमा देखनेमें आइ है, यह वचन श्रवण कर बादमें भक्तिपूर्वक आचार्यश्री वंदना करनेंके लिये जहांपर प्रतिमा देखनेमे आइ वहांपर पधारे, और वहांपर खडे खडेहि मस्तक नमायकर नमस्कार करा, और नमस्कार करके बादमें देवप्रभावसें ॥ जयतिहुअणवरकप्परुक्ख, जयजिणधन्नंतरि, जयतिहुअणकल्लाणकोस, दुरिअकरिकेसरि, तिहुअणजणअविलंघियाण, भुवणत्तयसामिअ, कुणसु सुहाइं जिणेसपास, थंभणयपुर ठिअ ॥ १ ॥

इत्यादि नमस्कार बत्तीसी करी, वाद अंतकीदोयगाथा अत्यंत-देवतानगेरेकी आकर्षण करनेवाली जाणके, शासन देवताने कहा, हेभगवन् इसस्तौत्रकी तीसगाथा कहेणेसेहि हम अपणेठिकाणे रहे-हुवेहि सर्वस्तौत्रका पाठकरणेवाले भव्योंका सर्व कष्ट दूर करेंगे, संपूर्णस्तौत्रका पाठकरणेवालोंके प्रत्यक्ष होणा हमारे बहुतहि कष्टका कारणहै, इसकारणसें, परमेसर सिरिपासनाह धरणिंद पयट्टिय, पउमावई वइरुट्ट देव जय विजयालंकिय, तिहुअणमंततिकोंण विज्ज सिरिहरि महीमंडिअ, तियवेढिय महविज्जदेव थंभणयपुरट्टिय ॥१॥

सत्तमवन्न जगद्धवन्न सरअट्ठविभूसिय, वंजणवन्न दसद्धवन्न सिरिमंडलपूरिय, चिरिमिरिकित्तिसुबुद्धिलच्छि किर मंत सुसायर थंभणपास जिणद सिद्ध मह वंछिय पूरण ॥ २ ॥

एव महारिह जत्त देव इयन्हवणमहुसउ, जंअण लिय गुणगहण तुम्ह मुणिजण अणिसिद्धउ, इय मई पसियसुपासनाह थंभणय पुरट्ठिअ, इयमुणिवर सिरि अभयदेव विण्णवइ आणंदिअ

॥ ३२ ॥ यह गाथा आपश्री हमारेपर कृपा करके भंडारं करो, वादमें देवताके आग्रहसें दाक्षिण्यताके समुद्र ऐसे आचार्य श्रीनें वैसाहि करा, वादमें आचार्यमहाराजने समस्तसंघके साथ चैत्यवंदन करा, वादमें श्रावक समुदायनें विस्तारसें, स्नात्र, वि-लेपन, मुकुट, कुंडल, वगेरे आभूषण पहिराणेकर और सुगंध युक्त पुष्प चढाणेकर अनेक प्रकारसें पूजा करी, और मनोहर थाल स्तंभा तोरण चोकी वगेरे करके शोभित अत्यंत उंचा

मनोहर देरासर श्रावकोंने बनाया, बादमें श्रीमान् अभयदेव सूरिजीनें स्थापना करी, बादमें श्रीमद् अभयदेवसूरिजी स्थापित वह श्रीमान् स्तंभनक पुरमे रहे हुवे, श्रीस्तंभन पार्श्वनाथ स्वामि सर्वलोकोंका वांछित पूरण करणेसे स्तंभनतीर्थ ऐसा करके सर्व-ठिकाणे प्रसिद्धिकों प्राप्त हुवे.

बादमें आचार्यश्रीभि वहांसे विहार कर अणहिल्लपुर पाटण पधारे, वहां पाटणमे श्रीजिनेश्वरसूरिजी स्थापित वसतिमे रहे, उस वसतिमे रहेतां थकां आचार्यश्रीने, स्थानांग, समवायांग, विवाहपन्नत्ती, वगेरे नवअंगोकी वृत्तियों करणी सरु करी, उन वृत्तियांके करणेमे जहां कहांभी संशय उत्पन्न होवे, उस ठिकाणे स्मरण करणेसें जया विजया जयंति अपराजिता नामक देवता स्मरण करणेके साथहि महाविदेह क्षेत्रमे तीर्थंकरके पास जाके संशय पदका अर्थ पूछके सत्य अर्थ आचार्यश्रीकों कहै.

उस समय वहां पाटणमे चैत्यवासी आचार्य द्रोणाचार्य नामके रहतेथे उणुनेंभि सिद्धांतोंका व्याख्यान करणा सरुकरा, सर्व चैत्यवासी आचार्य पुस्तक लेकर सुणनेकों आते हैं और आचार्यश्रीभि वहांपर व्याख्यान श्रवण करणेकों जातें हैं यतः

स्वयं विदंतोऽपि हि सम्यगर्थं,
सिद्धांततर्कादिकशास्त्रवाचां ।
शृण्वंति गत्वालघवोऽन्यतोपि,
निर्मत्सरा एव गुणेषु संतः ॥ १ ॥

कहामि है, सिद्धांत और तर्कादिक शास्त्रोंका सत्य अर्थ आप जाणतें है तोभि लघुतापूर्वक दूसरोंके पास जाके श्रवण करते हैं इसका कारण यहहै कि सज्जन पुरुष गुणोंमे ईरषा रहित हि होते है, बादमे द्रोणाचार्यभि श्रीअभयदेवसूरिजीके गुणोंसें रंजित हुवे अपणे सहाय्यके वास्ते आचार्यश्रीकों आसन दिरावे, व्याख्यान करतां द्रोणाचार्यको जहां संशय उत्पन्न होवे, वहांपर तिसप्रकारके नीचे स्वरसें कहै, जैसे और दूसरे नहिं सुणे, इसतरे निरंतर व्याख्यान करतां थकां उन द्रोणाचार्यकों और कोइ दिनमें जिस सिद्धांतका व्याख्यान करे हैं उस सिद्धांतकी व्याख्यान स्खलविषयि वृत्ति लाये, और आचार्यश्रीने उस द्रोणाचार्यके हाथमें दी, उस वृत्तिको देखके अत्यंत आश्चर्यसहित होकर द्रोणाचार्यने अपणे मनमें विचार किया कि अहो इये क्या वृत्ति साक्षात् गणधर महाराजकी बनाइ है अथवा इनोंकी बनाइ हूइ हैं, इसतरे मनमे विचारके द्रोणाचार्यने कहा क्या इये वृत्ति तुमारी बनाइ हुइ है इसतरे पूछनेपर आचार्यश्रीमौनधारके रहै बादमें द्रोणाचार्यनें अपणे मनमे विचार किया कि निश्चय इसी आचार्यश्रीनेहि या वृत्ति बनाइ है, जिससें कहाभि है कि जिसका निषेध न किया वह कार्य माना हुवा होवे है, औरभि कहा है ॥

स्वगुणान्परदोषांश्च वक्तुं प्रार्थयितुं परा,
नार्थिनश्च निराकर्तुं, सतामास्यं जडायते ॥ १ ॥

भावार्थ—उत्तम पुरुष अपणे मुखसें अपणा गुण और दूसरोंका अवगुण कहेणेवाले न होवें, और दूसरे पुरुषोंकों प्रार्थना

करणेवाले न होवें, याचना करणेवाले पुरुषोंकी याचनाका भंग करणेवाले न होवे ॥ १ ॥

वादमें द्रोणाचार्य अपणे मनमें विचारणे लगे कि, अहो इति आश्चर्ये कोणपुरुष रत्नप्राप्त होकर, रत्नग्रहणकरणेमें मंदआदरवाला होवे, अपि तु कोइभी मंदआदरवाला न होवे, ऐसा विचारके द्रोणाचार्य श्रीअभयदेवसूरिजीका गुणवर्णन करै आचार्यश्रीके प्रति बहुमान करणेमें तत्पर हुवे, बाद जब जब आचार्यश्री आवे जावे, तब तब द्रोणाचार्य खडे होवे, सामने आवे, कुछ दूरतक पोहचाने जावें, वादमे वेसा सुविहित आचार्य विषयि आदर करता हुवा देखके, और चैत्यवासी आचार्य वगेरह नाराजहोके सर्व उठकर खडे भये, और अपने अपने मठमें चैत्यवासी आचार्योंने प्रवेश करा, और बहुतहि बोलने लगे, जेसे कि, अहो यह किस गुण करके हमारेसें अधिक है, जिस गुणकर हमलोकोंमे मुख्यभी ये द्रोणाचार्य श्रीअभयदेवाचार्यका इसप्रकारका आदरसत्कार बहुमान करते हैं, पीछे हमलोक कैसे होवेगें, अर्थात् हमारी कैसी दशा होवेगी, इत्यादि वादमें द्रोणाचार्य वह पूर्वोक्त वचन अपणे समुदायवाले आचार्य वगेरोंका सुणकर, विशेषज्ञ गुणोंका पक्षपात करणेवाले द्रोणाचार्यने नवीन श्लोक वणाके सर्व चैत्यवासी आचार्योंके मठोंमें भेजा, वह श्लोक यह है,

आचार्याः प्रतिसद्म संति महिमा येषामपि प्राकृतै-
र्मातुं नाध्यवसीयते सुचरितैस्तेषां पवित्रं जगत्, ।
एकेनापि गुणेन किंतु जगति प्रज्ञाधनाः सांप्रतं,
योऽधत्ताऽभयदेवसूरिसमतां सोऽस्माकमावेद्यताम् १

आचार्य-जिणोंकामहिमा प्राकृतयानेअल्पबुद्धिवाले मनुष्योंसें नहिं प्रमाण होसके ऐसेआचार्य प्रत्येकठिकाणेहे, और उनआचार्योंके श्रेष्ठआचारकरके यहजगतपवित्रहै, परन्तु वर्त्तमानकालमें जेबुद्धिरूपधनवाले, याने बुद्धिमानआचार्य जगतमें है, उणोंके अंदरसें कोटभी ऐसा आचार्यहै के जो एकभी गुणकरके श्रीअभयदेवसूरिजीके सदशहोवे, कदाचित् कोइ आचार्य होवे तो मेरेकों जरूरदेखावोगा" यह पूर्वोक्त श्लोक वाचकर बादमें सर्वचैत्यवासीआचार्यशान्तहूवे, और श्रीमद् अभयदेवसूरिजीके सन्मुख श्रीद्रोणाचार्यजीने इसतरे कहाकि "जो सिद्धान्तवगैरेकीटीका आपवणाओगा, उणसर्वटीकाओंको में शोधुंगा, और लिखुगा" और अणहिलपुरपाटणमें रहेतां पूज्यश्रीनें दोय गृहस्थोंकों प्रतिबोधकर सम्यक्तसहितबारेव्रतधारि करेथे, वेदोनुं श्रावक समाधिसे श्रावकपणा पालकर, देवलोक गये, देवलोकसें वह दोनुंदेव श्रीतीर्थंकरकों वन्दना करणेके लिये महाविदेहक्षेत्रमे गये, श्रीसीमंधरस्वामि श्रीयुगंधरस्वामिकों नमस्कारकरा, धर्म सुणकर उण दोनु देवोंनें भगवानकों पूछाकि हमारा धर्माचार्य धर्मगुरु श्रीअभयदेवसूरिजी कितनेभवमे मोक्ष जावेगा, तब अर्हंतभगवाननें कहा, तीसरे भवमे तुमारा धर्माचार्य मोक्षजावेगा, यहसुणकर हरखमें जिणोका शरीर विकस्वरमान हूवा, और जिणोकी रोमराजि विकसितहूइ, ऐसे वह दोनु देव अपणे धर्मगुरूजीके पासमे गये, तीर्थंकरको वादणेका स्वरूप कहा बादमे वंदना करके जातां उणदेवोंने आगाथा कही, यथा—

भणिअं तित्थयरेहिं, महाविदेहे भवंमि तइयंमि,
तुम्हाण चेव गुरुणो, मुक्खंगेसिग्घंगमिस्ससि ॥ १ ॥

यह गाथा प्रगटार्थ है, आगाथा स्वाध्यायकरति हूई, आचार्य श्रीसंबधि महत्तरापदप्राप्तकरनेवाली मुख्यसाध्वीनें सुणी, वादमे उसमुख्यसाध्वीनें उसगाथाकों आचार्यश्रीके सन्मुखआकर सुणाइ, वाद आचार्यश्रीवोले यहअर्थपहिलेहि हमनें जाणा है, और कोइ अवसरमें श्रीपूज्य पालणपुरपधारे, वहांपर आचार्य संबंधि भक्तश्रावकहैं, उणश्रावकोंका जहाज समुद्रके अंदर व्यापारके लिये चलेहैं, वे जहाज क्रयाणोसेंभरके भेजे हूवेहैं, उणक्रयाणोंसें भरेहूवे जहाज उणोंके समुद्रके भीतर मार्गमें चाल- तांथकां इसतरे वात सुणनेमें आइ कि क्रयाणोंसें भरेहूवे जहाज थे सो समुद्रकेभीतरडूबगये, वादमें श्रावक उसबातकों सुणकर, बहुतहि जादा अपणे मनमे उदास हूवे, वह श्रावक श्रीअभयदेव सूरिजीके याद करणेके साथहि उपाश्रयमे आये, आचार्य श्रीकों वंदना करी, वादमें उण श्रावकोंको आचार्य श्रीने पूछाकि, हे धर्म- शील श्रावको आज तुमको वंदना करणेमें देरी केसे हूइ, याने किस कारणसें आज तुमलोक वंदना करणेकों मोडे आये, उण श्रावकोंने कहा, हेभगवन् किसिकारणकरके हमारा मोडा आणाहूवा, पूज्यपाद आचार्यश्रीनें कहा । क्या कारणहै, तब श्रावकोंनें कहा, हे भगवान् समुद्रके अंदर जहाजोंका डूबना सुणकर हमलोक दुखी हुवे है, इस कारणसें हमलोक वंदनाके वक्तपर नहिं आसके, यहवातसुणनेंके वादमें, क्षणमात्रअपनेमनमें ध्यानधरके आचार्यश्रीनें कहा, हे श्रावको इसविषयमें तुमारे दुख करणा नहिं श्रीगुरुदेवके प्रभावसें अछाहोवेगा, इसतरे श्रेष्ठभावार्थकों कहेनेंवालेहि सत्पुरुषहोवेहै, यहसुणकर श्रावक हर्षितहूवे,

उतनें दूसरे दिनमें खबर लानेंवाला मनुष्य उसनें वहां आकर इस-तरे खबर दीनी, के तुमारे जहाज क्षेमकुशलमें समुद्रकों उलंघकर तटपर आये है, बादमें यह बात सुणके, सत्यकरके पवित्र श्रीगुरुमहाराजके वचनोंपर उत्पन्न हूवाहै विश्वासजिणोंकों ऐसे उण श्रावकोंनें सर्वपरिवारसहित श्रीगुरुमहाराजके पास आकर विधिपूर्वक वंदना नमस्कार करके विनय सहित हाथ जोडके इस-तरे श्रीगुरुमहाराजसें बोले, कि हेभगवन् जहाजोंमे आये हूवे क्रयाणोंसे जितनालाभ होवेगा, उसका आधाहिस्सा हमलोक सिद्धान्त पुस्तकोंके लिखाणेमे लगावेंगे, बादमे आचार्यश्रीनें प्रशं-सा करी, अहो श्रावको तुमलोक धन्यहो, जिणोंका मुक्तिस्त्रीके कंठका स्पर्शकरणेमें हेतुभूत इसतरेका परिणाम हैं, यतः–

इह किल कलिकाले चंडपाखंडिकीर्णे,
व्यपगतजिनचंद्रे केवलज्ञानहीने,
कथमिव तनुभाजां संभवेद्वस्तुतत्वा-
वगम इह यदि स्याज्ञागमः श्रीजिनानां ॥ १ ॥

भावार्थ–प्रचंड पाखंडियोंसें व्याप्त इस कलियुगमें निश्चय सर्वज्ञ-रूपी चद्रमाके अस्त होनेपर और केवलज्ञानके विछेद होनेपर इहां-पर जो श्रीतीर्थंकरप्रणीत सिद्धान्त नहिं होते तो मनुष्योंकों वस्तु-तत्वका बोध केसे होता ॥ १ ॥

जिनमतविषयाणां पुस्तकानां स्ववित्तै-
रतिशयरुचिराणां लेखनं कारयेद्यः ॥
प्रथयति महिमानं वस्त्रपूजादिरम्यं,
सुगुरु समय भक्तिर्मानवो माननीयः ॥ २ ॥

भावार्थः—जो पुरुष आद्यंत मनोहर ऐसे जैनधर्मसंबंधि पुस्तकोंका लिखाणा अपणे धनसें करावे है और वस्त्र पूजादिकसें मनोहर ऐसा महिमा विस्तारे है, वह सद्गुरू और सिद्धान्तकी भक्ति करणेवाला मनुष्य जगतमें मानणे योग्य होवे है ॥ २ ॥

सकलभरतनाथा यद्भवंतीह केचित्,
त्रिदशपतिपदं यद्दुर्लभं मानयंति,
यदपिच गुरुदुर्गग्रंथगर्भं विदन्ति,
स्फुरितमखिलमेतत्तत्कृताराधनस्य ॥ ३ ॥

भावार्थः—इहां जो कोइ समस्तभरतक्षेत्रका राजा याने चक्रवर्त्ति होवे है और कितनेक इन्द्रपणो पावे है और कितनेक बहुतहि जादा कठिन ग्रंथोंके तत्वको जाणते हैं इये सर्व सिद्धान्तकी आराधना करणेवाले मनुष्यको फलप्राप्ति होवे है ॥ ३ ॥ इत्यादि देशना करके बहुतहि जादा उत्साहको प्राप्त हुवे, ऐसे उण श्रावकोंनें श्रीअभयदेवसूरिरचितअनेकसिद्धान्तकीवृत्तियांवगेरेके बहुत पुस्तक लिखवाये और प्रसिद्धिमें लाये और लिखवाके ठिकाणे ठिकाणे भंडार कराये.

बादमें औरभि उसस्थानसें पूज्यअभयदेवसूरिजी विहार क्रमसें आकर अणहिल पुरपाटणकों अलंकृत करा, निश्चय यह भी पूज्यपाद आचार्यश्रीजी कुशाग्रबुद्धिवाले सर्वसिद्धान्तपारंगामी सुविहितचक्रवर्त्ती युगप्रवर युगप्रवरागम संविग्नसाधुवोंके समूहनें शिरोमणी पुण्यपात्र इत्यादि अनेक प्रकारसें सर्वत्र पृथ्वीमंडलमें प्रसिद्धिकों प्राप्तभये, उधरसें उससमय आसिकानामकीनगरीमें रहेनेवाले चैत्यवासी कूर्चपुरीय गच्छके श्रीजिनेश्वरसूरिहोतेभये,

वहां जो श्रावकोके लडके है वे सर्वहि उस आचार्यके मठमे भणतें हैं, वहां सर्व विद्यार्थीयोंमें जिनवल्लभ नामका श्रावकका लडका है, उसका पिता परलोक गयाहै, उस लडकेकों उसकी माता निरन्तर सुखसें पालती है, यह लडका जब पढने योग्यभया तब उसकी माताने जिनेश्वराचार्यके मठमे पढणेके लिये भेजा, सर्व विद्यार्थीयोंसे अधिक पाठ उस जिनवल्लभकों याद होवे, अब कोइ एक दिनके समय नगरके बाहिर शौचादिकके निमित्त जातां, उस जिनवल्लभकों एक टीपना मिला उसटीपनेमें दो विद्या लिखि भई है, एक तो सर्प्पआकर्पणी दूसरी सर्प्पमोचनी, बादमें दोनों विद्याको कंठ करके, जितने पहिली विद्याको अजमाणेके लिये पढि, उतने फणोंके समूहसें भयंकर फूत्कार करते हूवे अत्यंतचपलमुखसे बाहिर निकाली दो जिह्वा जिनोंने चलते हूवे लालनेत्र जिनोंके ऐसे दशदिशाओसे विद्याके प्रभावसे खेंचे हूवे आते हुवे बडे बडे सर्प्पोंकों देखे, निर्भय मनवाला उस जिनवल्लभने अपने मनमे विचारकराकि निश्चयजाविद्या प्रभावसहित है, ऐसा विचारके, फेर दूसरी विद्याका उच्चारणकरा, उस दूसरी विद्याके प्रभावकर सर्व सर्प पीछा अपना मुखफोरके जाने लगे, यह सर्ववृत्तात सहरमेरहेहूवे जिनेश्वराचार्यनें सुणा, अपणे मनमे जाणा और निश्चयकरा कि यह लडका सात्विकहै विशेष पुण्यवान है यह गुणपात्र है इस लिये अपने वसमें करणा युक्त है इसतरे विचारके बादमे दास खजूर घेवर मालपूआ मसाणा लाडु वगेरे अनेक सारपदार्थ देनेपूर्वक आचार्यनें उस जिनवल्लभकु अपने नगरके बादमे उस जिनवल्लभकी माताकों

मीठे कोमलवचनोंकर प्रतिबोध करा, और यह तेरा पुत्र विशेष विद्वान्है विशेषप्रतिभा सहितहै विशेषसत्ववान्है, ज्यादा कहनेसें क्या प्रयोजन है, यह जिनवल्लभ आचार्यपद योग्य है तिस कारणसें इस जिनवल्लभकुं हमकों देदें यह धर्मसंबंधि देरासर मठ वगेरे सर्व तेरा है, तेरा और दूसरोंका विस्तार करनेवाला होगा, इस अर्थमें अन्यथा कुछ कहना नहिं, अर्थात् नाकारा वगेरे करना नहिं, ऐसा कहके पांचसें रुपिया जिनवल्लभकी माताके हाथमे देके, शीघ्र जिनवल्लभकुं दीक्षा दी, जिनवल्लभको दीक्षा देके, जिनवल्लभकुं जिनेश्वराचार्यजीनें सर्व व्याकरण छन्द अलंकार नाटक ग्रहगणित वगेरे निरवद्य विद्या भणाई,और जिनवल्लनेभी थोडी मुदतमे अपनी बुद्धिके बलसें सर्व न्यायसाहित्य ज्योतिष वैद्यक वगेरेपर सिद्धान्त रहस्यरूप सर्व विद्या ग्रहण करी,

कभी उस जिनेश्वराचार्यके गाम वगेरे जानेका प्रयोजन उत्पन्न हूवा, तब गामको जाते हूवे आचार्यनें पंडित जिनवल्लभकों कहा कि में गाम जाकर पीछा आवुं उतनें मठ देराशर ग्राम ग्रासवाडी वगेरे सबकी चिंता तेरे करणी, जितने कार्य करके में आऊं, इतने कहेनेपर विनयसें मस्तक नमाकर जिनवल्लभने कहा जेसी पूज्योंकी आज्ञा है वैसाहि करुंगा, आप साहिब परमपूज्योंको कार्य करके पीछा जलदि आना, इतना कहेनेपर यह जिनेश्वराचार्य ग्रामान्तर गया, बादमें दूसरे दिनमें जिनवल्लभनें विचारा कि जो यह भंडारके अन्दर पुस्तकोंसें भरीभइ पेटी देखनेमें आवे है तो इन पुस्तकोंमें क्या लिखा है में देखुं कारण कि जिस्सें सर्वकार्य मेरे आधीन हूवा है,

ऐसा विचारकर, जिनवल्लभनें एक पुस्तककों खोला, वह पुस्तक सिद्धान्तसंबंधि है, उसपुस्तकमें यहलिखा हुवा देखा, साधु मुनिराजोंकों भ्रमरकी तरह गृहस्थोंके घरोंसें बयालीश दोषरहित आहार लेनेकर संजम निर्वाहके वास्ते शरीरकी रक्षा करणी, सचित्त पुष्पफल वगेरे हाथसेंभी स्पर्शना नहिं कल्पे, तो खाणा तो नहिंज कल्पे, और मुनियोंको चतुर्मासकसिवाय एक मास उपरांत एक ठिकाने नियत रहेना नहिं कल्पे, इत्यादि साध्वाचारसंबंधि विचारोंकों देखकर, पंडित जिनवल्लभ अपने मनमें आश्चर्यसहित भया विचार करने लगा कि अहो इति आश्चर्यं, दूसराहि वह कोइ व्रताचार है, जिसकर मुक्तिमे जाया जाय है, उस्सें विरुद्ध यह हमारा आचार है, प्रगट जाणा जाता है कि इस आचारकर दुर्गतिरूप गर्त्तामे पडता कोइभी आधार नहिं होगा, ऐसा मनमे विचार करके, गंभीर वृत्तिकर पुस्तकवगेरेकुं जेसे पहिलेरखे थे वैसाहि पीछा रखकरके, गुरुमहाराजकी कहीहूई मर्यादाप्रमाणे सर्व व्यवस्था संभालता हूवा रहा, बादमे आचार्य कितने दिनोंके अनंतर अपनाकार्यकरके अपनेस्थानपर पीछाआया, और सर्व व्यवस्था बरोबर देखके, आचार्य अपने मनमें विचार करा कि कोइभी वस्तुकी हानि तो नहिं हूइ, जितनी जिनवल्लभने मठवाडी मंदिर द्रव्यसमूह भंडार वगेरे सर्व वस्तुजात इसके आधीन कीगइ थी उससेंसें जबतक जिनवल्लभने संभाला तबतक किसीभी वस्तुकी हानि नहिं हूइ, तिसकारणसे यह जिनवल्लभ सर्वस्व संभालनेमे समर्थ है सर्वका निर्वाहकरणेवाला है, अतः योग्य है, जैसा विचारा है वैसाहि निश्चययहजिनवल्लभहोवेगा, परन्तु

जैनसिद्धान्तविना शेष सर्वहि तर्क अलंकार ज्योतिष वगेरे विद्या इस जिनवल्लभनें भणी है ऐसा जिनेश्वराचार्यनें विचारा और यथावस्थितसंपूर्ण जैनसिद्धान्त इस वक्तमें वर्त्तमानकालकी अपेक्षा श्रीअभयदेवसूरिजीके पासहै, ऐसा सुणतेंहै, उससर्वजैनसिद्धान्तकी वाचनालेनेके वास्ते श्रीअभयदेवसूरिजीके पासमें जिनवल्लभकुं भेजुं"

जैन सिद्धान्तोंकी वाचना ग्रहणकीयोंके वाद सर्वविद्यारूपी स्त्रीका भर्त्तार पंडित जिनवल्लभकों अपणे पदमें स्थापनकरुंगा, ऐसा विचारकर और वाचनाचार्यकापद देके, चिंतारहितहुवा थका भोजनादिकयुक्ति विचारके, जिनशेखर नामका दूसरा शिष्य वैयावच्च करनेके लिये साथमें देकर, श्रीजिनवल्लभकुं श्रीअभयदेवसूरिजीके पासमें भेजा, वाद स्वस्थानसें अणहिलपुरपाटण जातां मरुकोटमे रात्रि रहै, वहां मरुकोटमें माणानामका श्रावकनें कारित जिनभवनकी प्रतिष्ठा करी, वाद अणहिलपुरपाटण पहुचे, वहां श्रीअभयदेवसूरिसंबंधी वसती (उपासरा) पूछकर अन्दर प्रवेश करा, तब वसतीके अन्दरस्तीर्थंकरसमान भगवान् श्रीअभयदेवसूरिजीकों देखे, कैसे हैं वहश्रीअभयदेवसूरिभगवान् विशिष्ट सिद्धान्तकी वाचनाके अर्थी पासमें बैठें हूवे है बहुत आचार्य जिनोंके ऐसे और अपणीवाणीके वैभवकरके तिरस्कारकरा है देवाचार्यका जिणोंने ऐसे साक्षात् तीर्थंकरके समान श्रीअभयदेवसूरिजीकों भक्तिके वससें उलसायमानहै सर्वरोमराजिरूपकी कंचुकिका पेंहेरनेकावस्त्रविशेष उससें युक्त है शरीररूपी लता जिसकी ऐसा जिनवल्लभनें भक्तिबहुमान पुरस्सर विधिपूर्वक

वंदना नमस्कार किया, वादमें श्रीगुरुमहाराजने देखणे मात्रसें हि जाणा कि यह योग्य है, और दर्पणकी तरे विशेषशुद्ध हैं अंतकरण जिसका ऐसा, यहकोइपुरुषरत्नदेखणेमे आवेहै, ऐसा देखणेसेंहि श्रीअभयदेवसूरिजीनें विचारके मधुरवाणीसे पूछा कि कहांसें आये है, और तुमारे आणेका क्या प्रयोजन है, वादमे दोनो हस्तकमलोंकों जोडकर श्रीअभयदेवसूरिजी भगवानके दर्शनसें उत्पन्न हूवा जो उपमारहितवहूमानजलसमूहसे छोयाहै अन्तःकरणसंबधि मेलजिसनें ऐसा, और वचनरूपीजलसें मानकरा हूवा जो अमृतसेंजनाहूवाचन्द्रकेजैसागणिजिनवल्लभनें कहा कि हे भगवन् अपणीअखंडशोभाकेसमूहसेंयुक्त ऐसी अपणी आसिकानामकनगरीसें में आयाहू, और भ्रमरकों भ्रमकरणेवाला जो आपके मुखकमलमे लगा हूवा सिद्धान्तरस पीणेकी बुद्धिवाला मेरेकों मेरेगुरुमहाराजश्रीजिनेश्वरसूरिजीने श्रीमती आसिकानगरीसें सर्वलोकोका मनोवांछित पूरणकरणेमे कल्पवृक्षके समान आपसाहिवके पासमे श्रीजैनसिद्धान्तोंकी वाचना ग्रहणकरणेके लिये भेजा है, मेरे आणेका यह प्रयोजन है, इसलिये आपश्रीके पास सर्व जैनसिद्धान्तोंकी रहस्यसहितवाचना लेणेकी मेरी इच्छा है वादमे पूज्यपादश्रीअभयदेवसूरिजीने विचारा कि

कालंमि आगए विऊ, अपत्तं च
नवाइज्जा पत्तंचनावमाणए ॥ १ ॥

अर्थ—विद्वान् गीतार्थ सुविहित आचार्य व्यवहारसूत्रादिकमे कहा हूवा काल होनेपर भी योग तप उपधानादिक करणे पर भी सिद्धान्तकी रहस्यसहित वाचना अयोग्य कुपात्र विगडे प्रतिनद्धादि-

कोंको नहिं देवे, और योग्यपात्रगुरुभक्त श्रद्धा विनय बहुमानादिकसहित सर्वव्यवहारिकविद्यासंपन्न रहस्यसहितपरसिद्धान्तका जाणकार सुशिष्य मिलनेपर कालयोगादिकविनाभी विद्वान् गीतार्थ सुविहत आचार्य श्रीसिद्धान्तकी रहस्यसहित वाचना देवे, योग्यसुशिष्यका वाचनादि नहिं देणेकर कदापि अपमान नहिं करे' ॥ १ ॥

गुरुक्रमायात संप्रदायसें, ऐसा विचारकर श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजनें कहा, तुमने वहुतहि श्रेष्ठ विचार किया है, और जो इहां पर सिद्धान्तकीवाचनाके अभिप्रायकर तुमारा आणा हूवा है, इसलिये प्रधानदिनमें वाचना देवेगे ऐसाकहकर प्रधानदिनमें वाचना देणी सरुकरी, जैसे जैसे सुगुरुसिद्धान्तकी वाचना देवे वैसा वैसा हरखितचित्तवालाहूवाथका सुशिष्य अमृतकीतरे सिद्धान्त वाचनाका पानकरे, अर्थात् स्वादलेवे, हरखसें विकस्वरमान कमलसदृश उसको वैसा योग्यशिष्यदेखकर, श्रीगुरुमहाराजभी संतोषकी पुष्टिसें वाचनादेनेंमेंद्विगुणउत्साहसहित हूवे, वहूत कहेणेसें क्या प्रयोजन है, वहवह जणाणेकीवुद्धिकर श्रीपूज्यपादनें उस जिनवल्लभकों वाचना देणेके लिये प्रवृत्ति करी, जैसे थोडे हि कालमें सिद्धान्त वाचना पूरीहूइ, तथा श्रीगुरुमहाराजके एक पूर्वपरिचितमित्र ज्योतिषीथा, उसनें श्रीगुरुमहाजकों कहाथा कि जो आपके कोई योग्यशिष्य होवे, तब उस शिष्यको मेरेको सोंपणा, जिस्सें उस शिष्यको समग्र ज्योतिष समर्प्पण करुंगा इसलिये श्रीसिद्धान्तोंकी वाचनापूर्ण होनेपर पूज्यश्रीने श्रीजिनवल्लभगणिको ज्योतिषीकों सोंपें उसज्योतिषिनेभी जि-

नवल्लभगणिके लिये सर्वज्योतिपविद्या परिज्ञानसहित अर्थात् रहस्यसहितदीवी, इमतरे सिद्धान्तवाचनावगेरे ग्रहण पूर्वक श्रेष्ट अनुष्ठानवर्द्धमानपरिणामसें श्रीसिद्धान्तोक्त क्रिया करता हूवा, और अधीतरेप्राप्तक्रियाहैस्फूर्त्तिमानज्योतिपजिसने ऐसा, जिनवल्लभगणि अपणे गुरुमहाराजके पासमे जानेके लिये आचार्य श्रीका आज्ञा वचन चाहता है इस अवसरमे पूज्यपाद श्रीअभयदेवसूरिजीनें कहा, हेवत्स सिद्धान्तोक्तसाध्वाचारसर्वतुमने जाणा है इसलिये सिद्धान्तानुसार हि क्रियाउद्धारविधिकरके जैसे इस समय वर्त्तते हो वैसाहि करणा, वादमे श्रीजिनवल्लभगणिनें श्रीअभयदेवसूरिजीके चरणोंमे नमस्कार करके कहा जैसे श्रीपूज्यपादों कि आज्ञा है, वैसाहि निश्चयवर्तूंगा, औरप्रधानदिनमें आचार्यश्रीके पाससें चला और जिसमार्गसें आया उसी मार्गकरके फेर मरूकोटमें पहुचा, और श्रीगुरुजीके पास ज्ञातिसमयसिद्धान्तअनुसार मंदिरमें विधिलिखि, जिस विधिकरके अविधि मंदिर भी मोक्षका साधन विधि चैत्य होवे, वह यह इहापर उल्लेखक्रम है,

नच नच स्नात्रं रजन्यां सदा साधूनां ममताश्रयो,
नच नच स्त्रीप्रवेशो निशि जातिज्ञातिकदाग्रहो,
नच नच श्राद्धेषु ताम्बूलमित्याज्ञाऽत्रेयमनिश्रिते
विधिकृते श्रीजैनचैत्यालये ॥ १ ॥

अर्थः—इहां निश्रारहित विधिसे बना हूवा इस श्रीजैनमन्दिरमें यह आज्ञा है कि निरंतर रात्रिमे स्नात्रपूजा शान्तिकपूजा शान्तिस्नात्र अष्टोत्तरी पंचकल्याणकपूजा महोत्सव अंजनशलाका मन्दिर-

प्रतिष्ठा वेदीप्रतिष्ठा मूर्त्तिप्रतिष्ठा बलिकरणा दर्शनकरणा पूजा करणी नाटक गान भावनादिक नहिंजकरणा, साधुवोंके ममत्वका स्थान भी वह जिनमन्दिर नहिं है, रात्रिमें स्त्रियोंका प्रवेश भी नहिं है, पिता माता पुत्र पौत्र वगेरे घरसंबंधि पंचायति जातिकदाग्रह कहा जावे है, सासु शुसरा वगेरे ज्ञातिकी पंचायति ज्ञातिकदाग्रह कहाजावे है यह जातिकदाग्रह और ज्ञातिकदाग्रह भी जिस जैनमंदिरमे नहिं होवे है

और जैनमंदिरमें पुरुषोंके स्त्रियोंका संघट्टा (स्पर्श) पूजा प्रभावना वगेरे धर्मकार्य रात्रिमें नहिं होवे रागादि हेतु होणेसें, श्रावकोंको ताम्बूलका देना और ताम्बूल लेना और ताम्बूल वगेरेका खाना नहिं होवे है

और निरंतर रात्रिमें पुरुषोंका प्रवेश विधि चैत्यमें नहिं होवे और तरुण स्त्री मूलनायक प्रतिमाकी पूजा नहिं करे, और १० और ८४ आशातना टालनेपूर्वक पांच अभिगमनसाचवणेपूर्वक दिवसमें शास्त्रनियमानुसार सर्वसंघ इस विधि चैत्यमें पूजा सामायिक व्याख्यान प्रभावना वगेरे यथायोग्य धर्मकार्य कर सक्ते है ॥ १ ॥ इत्यादि विधि इस जैनमंदिरमें करणा उचित है, जिस्सें सर्व चैत्यवंदनादि अनुष्ठान करा हूवा मुक्तिके लिये होवे, बादमे यह जिनवल्लभगणि वहांसें अपणे गुरुमहाराजके पास जाणेके लिये प्रवृत्तमान हूवे क्रमसें चलते हूवे माइयड ग्राममें पहूंचे, आसिका नगरीगढसें तीनकोश उरली तर्फरहै, अर्थात् नगरीमें नहिं गये तीन कोश दूर रहै, उसी ग्रामसें श्रीगुरुमहाराजसें मिलणेके लिये एक मनुष्यकों भेजा, उस पुरुषके हाथमें लेख

लिखकर दिया, उस लेसका यह भावार्थ है कि—यथा आपकी दयासें अपणे गुरुमहाराजके पासमें सर्वसिद्धान्तसंबंधि वाचना लेकर माडयड गाममें मे आयाहूं, पूज्योंको मेरेपर प्रसाद करके इहांपर हि मेरेकों मिलणा, बादमें गुरुश्रीनें जाणा कि क्या कारण है जिस्सें जिनवल्लभगणिनें इसतरे पुरुषके साथ संदेसा भेजा है, और वह जिनवल्लभगणि खुद इहां पर नहिं आया, इसलिये जाणा जाता है कि इहां कोइ जरूर कारण है, इसतरें विचारके दूसरे दिन सर्व लोकोंके साथ आचार्य सामनें आया, जिनवल्लभगणि सामनें गया गुरु श्रीको नमस्कार करा गुरु श्रीने कुशलवृतान्त पुछा और जिनवल्लभ गणियें यथार्थ सर्व बात कही, और ब्राह्मण वगेरे लोकोंके समाधाननिमित्त ज्योतिषके बलसें कितनाक भूतभविष्यत्वर्तमानसंबंधि मेघवगेरेका स्वरूप इस प्रकारसें कहा कि जिस मेघादिस्वरूपको श्रवण करके गुरुकोभी आश्चर्य हूवा, भूतपूर्वकस्तद्वदुपचार, इति न्यायाद् गुरोरित्युक्तं, भूतकालका वर्तमानमें उपचारकरणेसें गुरुको भी आश्चर्य हूवा इत्यादि कहा, बादमे गुरुनें पुछा कि हे जिनवल्लभ तुं अपणे मठमे क्युं नहिं आया, बादजिनवल्लभ गणिने कहा, हे भगवन् श्रीसुगुरुके मुखमें जिनवचनरूपी अमृतको पीके, इस समय किसतरे दुर्गतिरूप कारागारमें अपणे आत्माके सघनबन्धनसदृश और विषवृक्षके सदृश चैत्यवासकु सेवणेकी इच्छा करुं, बादमें गुरुनें कहा हे जिनवल्लभ मेंनें यहविचारा था कि जो तेरेकों अपणा पटदेके तेरे खंधपर अपणे गच्छसंबंधि मन्दिर श्रावक वगेरेका भार रखके, पीछे में सद्गुरुके पासमे वसतिमार्गअंगीकारकरूंगा, बादमे जिन-

वल्लभ गणिने विकस्वरमान मुखकमलकरके कहा, हे भगवन् यह आपका कहेना वहुत हि उचित है,

और विवेकका यह हि फल है जो हेय पापादिक वस्तु हैं उसका त्याग करणा उपादेय अंगीकार करणे योग्य तप संजमादि जो अंगीकारकरणेमें आवे तो श्रेय है,

और यह शुभमार्ग अंगीकार करणेकी आपकी तीव्रतर इच्छा है तो अपणें साथ हि सुगुरुके पासमें चले, यह प्रत्युत्तर सुणके गुरुनें इसके सामने निश्वासा नांखके कहा कि गच्छादिव्यवस्था कियां विना हि चारित्र अंगीकारणा, हे वत्स, ऐसी निस्पृहता हमारी नहिं है, जिस निस्पृहताकरके गच्छादि चिंता करणेमें समर्थपुरुष विना स्वगच्छ मन्दिर वाडी वगेरेकी चिंता छोडके सुगुरुके पासमें वसतिवास हम अंगीकार करें, इसलिये अवश्य वसतिवास तुमकोहि अंगीकार करना, यह आज्ञावचनश्रवण करके श्रीजिनवल्लभगणिजीनें कहा, हे भगवन् ऐसा हि होवो, वादमें गुरु पीछा पलटके आसिकानगरीमे पहुंचा, वाद में श्रीजिनवल्लभगणि भी भूतपूर्वगुरुकीआज्ञासें श्रीअणहिल पुर पाटणकी तर्फ विहारकिया, और क्रमसें विहार करते हूवे वाचनाचार्य श्रीजिनवल्लभगणि अणहिलपुरपाटणपधारे और श्रीमान् पूज्यपाद अभयदेवसूरिजीके चरणकमलोंमें वहुत हि आदरसें विधिपूर्वकवन्दनाकरनेपूर्वक दोनुंचरणकमलोंको स्पर्शकर अपणे जन्मको सफलकरा, तव श्रीमान्अभयदेवसूरिजीको आपणे मनमें पूर्णसमाधान याने पूर्णविश्वास, उत्पन्न हूवा और विचारा कि जैसे इसकी हमनें परीक्षा करी, वैसाहि यह हूवा,

वादमें श्रीमान्‌अभयदेवसूरिजी अपणे मनमें जाणते हूवे भी किसीकोभी कहे नहिं, और उस समय आपणे मनमें विचारते हूवे कि यह जिनवल्लभगणि हि हमारे पद योग्यहै, परंतु चैत्य-वासी आचार्यका शिष्य है, इसलिये गच्छके संमत नहिं होगा यह विचारके गच्छस्थितिवास्ते गच्छधारक श्रीवर्द्धमानसूरिजीको अपणे पट्टमे स्थापे, और श्रीजिनवल्लभगणिजीको श्रीमान् अभयदेव-सूरिजीनें अपणे सबंधि उपसंपद दीनी, अर्थात् अपणे शिष्यत्वपणे स्वीकार करणेपूर्वक वेषचारित्र श्रुतस्वाम्नाय योगादिक सातिशय ज्योतिष गुप्तरहस्य वगेरे सर्व प्रकारकी उपसम्पद अपणे नामसें अपणे हाथसें दीया और सूरिमन्त्राम्नाय गुप्तरहस्य और गणि वाचनाचार्य आदि पदवी और बहुमानपूर्वक सर्वगुणकलापरिपूर्ण भावसें अपणा मुख्य शिष्य पट्टयोग्य समजकर किसी प्रकारका अन्तरभाव नहिं रखकर योग्यगुणपात्र बनाये, और गुणरत्न सत्व-समूहके आधारभूत क्रमसें भये, और गच्छके कारणसें उसतरे होने-परभी अवसरकी अपेक्षा करते हूवे, कालक्षेप करा और आचार्यश्री मनमे विचारें कि योग्य अवसर आवे तो वाचनाचार्य श्रीजिन-वल्लभगणिको मुख्याचार्य पद देनेमें आवे, इस तरे विचार करते रहे, वादमें अपणा स्वल्पायु होनेसें और योग्य अवसर नहिं आणेसें अपणे हाथसें मुख्याचार्य पद नहिं दे सके सामान्य तरिके गच्छस्थितिनिर्वाहके लिये अपणे पदमें श्रीवर्द्धमानसूरिजीको मुकरर करके श्रीमान् अभयदेवसूरिजी अपणे हाथसें वेषश्रुत चारित्ररूप उपसम्पद देके कहा कि–आजसें लेके हमारी आज्ञामें रहेना, सर्वत्र हमारी आज्ञासें हि तुमको प्रवर्त्तना, ऐसा कहा, और

एकान्तमें श्रीजिनप्रसन्नचन्द्रसूरिजीको कहा, मेरे पट्टमे श्रेष्ठलग्नमें श्रीजिनवल्लभगणिको स्थापणा, इसतरे मुक्तिनगरकी साक्षात् सोपानपंक्ति होवे वैसी श्रीनवांगवृत्तिका भव्य लोकोंको उपदेश दे के, सिद्धान्तमें कहे हूवे, विधिसें अणशणआराधना संलेखना करके समाधिसें पंचपरमेष्ठीनमस्कारका स्मरण करते हूवे श्रीमान् अभय-देवसूरिजी वि० सं० ११६७ में कवडवंजनगरमें स्वर्गनिवासी हूवे, और श्रीप्रसन्नचन्द्रसूरिजीकोंभी श्रीअभयदेवसूरिजीके पट्टमें मुख्याचार्यपद कहेप्रमाणे देनेका अवसरनहिं मिला, वादमें श्रीजिनप्रसन्नचन्द्रसूरिजीनेंभी अपणें आयुके अन्तसमय श्रीदेवभद्र-सूरिजीको वीनति करी, यह पूर्वोक्त सुगुरुका उपदेश आपको अवश्यहि सफल करणा, वह सुगुरुका उपदेश करणेकुं में समर्थ नहिं हूवा हूं, तव श्रीदेवभद्रसूरिजीनेंश्रीप्रसन्नचन्द्रसूरिजीका वचनअंगीकारकरा, वर्त्तमानयोगकरके इसतरे हि करेंगें, आपको मनमें समाधिरखना, किसीतरेकीचिंताकरणीनहिं, इसतरे प्रसन्नचन्द्रसूरिजीकों श्रीदेवभद्रसूरिजीनेंकहा, और श्रीजिनवल्लभ-गणिवाचनाचार्यभी. कितनाकालपर्यंत श्रीअणहिलपुरपाटनभूमिमें विचरके, इहां गुजरातदेशमें किसीकोभी वैसा विशेष बोध करणेकुं नहिं समर्थ होवें हैं, जिस्सें मनमें समाधान उत्पन्न होवे, ऐसा मनमें विचारके, तीनठाणासें आगमविधि करके और श्रेष्ठशकुन करके भव्य जनमनरूपी क्षेत्रभूमिकामें भगवानकी कहीहुई विधिकरके धर्मबीजवाणेके लिये, श्रीमेवाड आदि देशोंमें विहार करते हूवे, उस वक्त मेवाडआदि सवहि देश प्रायेंकर चैत्यवासीआचार्योंकरके व्याप्तथें, वहां सब हि लोक

चैत्यवासी आचार्यों करके वासितवर्ने है, किंवहुना, वैसा-देशान्तरमें रहे हुवे, अनेकगामनगरादिकोंमें विहारकरतेहूवे, चितोडपर्वतके किलेमें पहोचे, परन्तु चितोडनगरसंबंधि सबहि लोक क्षुद्र चैत्यवासीयों करके भावितहै, तोभी अयुक्त उपसर्ग-परिसहादिक कुछभी करणेकुं नहिं समर्थभये, श्रीअणहिलपुर पाटणमें विचरते हूवे श्रीगुरूमहाराजकी बहुतहि बडी प्रसिद्धिकीर्त्ति प्रभाव सुणनेसेंहि हतप्रभाव हूवे, बल पराक्रम धैर्यादिक जिणोंका नष्ट हूवा, इसलिये कुछभी अयुक्तव्यवहारकरणेके लिवे समर्थ नहि हूवे, बादमे वाचनाचार्य श्रीजिनवल्लभगणिजीनें वहां चितोड-नगरीका लोकोंके पासमे रहेणेके लिये स्थान मांगा, तब चितोड-नगरीके श्रावकोंने कहा हे भगवन् इहांपर रहणेके लिये कोइ स्थान नहि है परतु एकचंडिकादेवीका मठ है, जो वहां आप रहोतो हाजरहै, तब वाचनाचार्यश्रीजिनवल्लभगणिजीनें शुद्धज्ञानो-पयोगसें जाणाकि, दुष्टआशयसे यहकहेतेहै, तथापि वहां रहेणेसेभी श्रीदेवगुरुके प्रसादसे कल्याणहोगा, यह विचारके उण श्रावकोंसें कहा, तुमारी आज्ञा होवे तो वहां चंडिकादेवीके मठमे हमरहें, यह सुणकर उण क्षुद्राशयवाले श्रावकोंनें कहा कि-हमारे अतिशय कर सम्मत है, आप चंडिकादेवीके मठमें रहो, तब वाचनाचार्य श्रीजिनवल्लभगणिजी श्रीदेवगुरूका अछी तरह स्मरण करके श्रीचंडिकादेवीकी स्तुति प्रदान पूर्वक अवग्रहलेके, चंडिकादेवीके मठमे रहे, श्रीमतीचंडिकादेवी वाचनाचार्य श्रीजिन-वल्लभगणिजीके ज्ञान ध्यान तप संजम वगेरेह सदनुष्ठान करके प्रसन्न हुई दुष्ट प्रयुक्त छल छिद्र मंत्र तंत्र यंत्र वसीकरणादि

उपसर्ग प्रमादरहित उपयोगसहित निरन्तर रक्षा करें, श्रीजिन-वल्लभगणिवाचनाचार्य कैसेसमस्तविद्याके निधानहै सो देखातें है, सर्वसिद्धान्त जाणनेवाले, सूत्रपाठ और अर्थसें, कंठ हैं पाणिनी आदि आठ व्याकरण जिनोंकों, और मेघदूत आदि सर्व महाकाव्य कंठ हैं, रुद्रट उद्भट दंडि वामनभामहादि अलंकार ८४ नाटक सर्व ज्योतिष शास्त्र, जयदेवादि सर्व छंद ग्रंथ और जिनेन्द्रमतकी विशेषकरके स्थापना करनेवाले, श्रीसिद्धसेनाचार्य श्रीहरि-भद्राचार्य श्रीअभयदेवाचार्य कृत सम्मति तर्क अनेकान्तजय पताकादि तर्क शास्त्र और ८४ हज्जार स्याद्वादरतनाकर प्रमाण लक्ष्मा प्रमाणरहस्य शब्दलक्ष्मादि ग्रंथोंकों अपणे नाममुताविक जाणनेवाले और कन्दली किरणावली न्यायशंकर नंदन कमल-शीलादि परदर्शनसंबंधि तर्कादि शास्त्रोंमें बहुतहि विचक्षण भयेहैं,

इसका यह भावार्थ हूवा कि—इग्यारमी सदीमें बारमी शदीके प्रारंभसमय जो प्राचीन अर्वाचीन स्वदर्शनसंबंधि पंचांगी सहित सर्व जैन सिद्धान्त और स्वदर्शनसंबंधि सर्वव्याकरण न्यायकाव्य कोश छंद साहित्य अलंकार ज्योतिष वैद्यक प्रकरण चरित्र रास कथा चम्पू नाटकादि सर्व शास्त्र अपणे नाम सदृशउपस्थित किये हुवेहै, और परदर्शनसंबंधि अनेकमताश्रित कपिल वैदिक जैमिनी गौतम कणाद बौद्ध शैव वैदांतिक वैष्णवादि मता-श्रित मूलसिद्धान्त रहस्य सहित और अन्यदर्शनसंबंधि सर्व व्याकरण न्याय काव्य कोश छंद साहित्य अलंकार ज्योतिष वैद्यक वेदस्मृति पुराण इतिहास कथा चम्पू नाटकादि गद्य पद्यात्मक सर्वशास्त्र अपणे नाममुताविक जानते हैं और पुरुषसंबंधि सर्व

गुणकलामें वहुतहि विचक्षण हैं इसलिये चउदहप्रकारकी विद्याके पारगामी हैं, और उसवक्तमें ऐसा कोइ शास्त्र या गुण कला नहिथा जो कि श्रीजिनवल्लभगणिनाचनाचार्य अपणे बुद्धिके वलसे नहिं जाना या नहिं शीखा और सर्वशास्त्र गुणा कलाके भंडार और सर्वविद्याके पारंगामी हुवे और शंकादिदूषणरहित सिडसठसम्यक्तगुणसहितहोनेसे सर्वोत्कृष्टसम्यक्तगुणसें भूषितहैं आत्माजिणोंका ऐसे, और स्वसमय परसमयके सर्वप्रकारसें जाणकार होणेसे समयानुसार सर्वोत्कृष्टज्ञानप्रधान चरण करण गुण प्रधान, तप संजम प्रधान, ध्यान प्रधान, समिति गुप्ति प्रधान, क्षमा मार्दव आर्यव मुक्ति सत्य शौच अकिंचन ब्रह्मचर्यप्रधान, लाघवप्रधान, सज्झायप्रधान, दानप्रधान, भावप्रधान, योगप्रधान, मन्त्र यन्त्र तंत्रप्रधान, आयुक्त सर्वानुयोग प्रधान, घोरगुणी घोरब्रह्मचर्यवासी घोरतपस्वी, दिप्ततपस्वी तप्ततपस्वी महातपस्वी कुलसम्पन्न जातिसम्पन्न वलसम्पन्न रूपसम्पन्न विनयसम्पन्न गुणसम्पन्न द्युतिसम्पन्न संघयणसम्पन्न संस्थानसम्पन्न प्रतिरूपतेजस्वी युगप्रधानागम मधुरवचन गंभीर उपदेशततपर अपरिश्रावी सोम्यप्रकृति शान्तगुण संग्रहशील अभिग्रहमति अनेकप्रकारका अभिग्रह करणेवाले, ओर कलहादि नहि करणेवाले, विकथादि नहिं करणेवाले १८ पापस्थानमें द्रव्य भावसें कहाभि प्रवृत्ति नहिं करणेवाले सत्तावीस मुनिगुणविभूषित पचीस उपाध्यायगुणे विराजमान अकथक अचपल प्रशान्तहृदय इत्यादि सद्भूत गुणशतशः परिकलित और सर्वोत्कृष्ट सम्यक्दर्शन ज्ञान चारित्र तपसंजमवीर्यादिक जिणोंका ऐसे, और श्रीहर्ष भारवि माघ कालिदासादि जो लोकमें

बहुतहि श्रेष्ठ उच्च कोटिके विद्वान और कवि हूवे हैं, वो भी जिणो-
के प्रत्यक्ष सन्मुख शिष्यत्व भावकों प्राप्त होवें ऐसे, और विशेषसें
इन्द्र शुक्राचार्य सुरगुरु आदिदेवभि श्रुतसमुद्रके विषयमें जिणोंके
सामने अल्पबुद्धिवाले होते है, और गौतम सुधर्म जम्बुप्रभवादि
अवतार, और " तित्थरसमो सूरि जो सम्मं जिणमयं पया
सेइत्ति वचनात् " तिर्थंकर समान श्रुतसमुद्रके पारंगामी,
कलिकालसर्वज्ञ प्राकृतके अंतिम महाकवि इस लिये प्रधान ज्ञान
शक्तिसें और महाकवित्व शक्तिसें अर्थात् महाकवित्वकी प्रधान
सुगंधिसें, श्रीजिनवल्लभगणिवाचनाचार्य श्रीचित्रकूट नगरमें सर्वत्र
प्रकर्षपणें प्रसिद्ध होते हूवे ' बादमें सर्वपरदर्शनवाले ब्राह्मण क्षत्रिय
वैश्य शूद्र ४ वर्णवाले लोक आणे शरु हूवे, और जिस जिसकुं
जिस जिस शास्त्रविषयमें संशय उत्पन्न होवे, वो सबहि लोक
उस उस शास्त्रविषयी संदेहकुं विनयसहितभक्तिपूर्वक पूछे
श्रीजिनवल्लभगणिभी सूर्यकी तरह सर्वत्र भव्योंके अंतःकरणोंमें
विशिष्ट उपदेशद्वारा प्रवेश करके सर्व संदेहरूप अंधकारकुं नाश
करते भये, चित्रकूटनगरके श्रावक भी धीरे धीरे थोडे थोडे आणे
लगे, बादमें श्रावकोंने सत्यार्थ आगमवाणी सुणके, आगम अनुसारे
सत्य क्रिया भी देखके, बहुतसें श्रावकोंनें और अन्यदर्शनवाले
४ वर्णके लोकोंनें अपणें निजगुरुपणें श्रीजिनवल्लभ गणिवाचनाचा-
र्यकों स्वीकारकरे और साधारण सुदर्शन सुमति पल्हक वीरक
मानदेव धंधक सोमिलक वीरदेव आदि श्रावकोंनें सादर संतोष
विनय बहुमान भक्तिसहित विधिपूर्वक समाधि सम्यक्तसहित निजनि-
जशक्ति अनुसार अणुव्रत, गुणव्रत, शिक्षाव्रत, रात्रिभोजनविरमणव्रत,

अभक्ष अनतकाय विरमणव्रत सातव्यसनविरमण, श्रावकषट्कर्मनियम, यथाशक्ति आश्रव निरोध नियम, अनेक अभिग्रहकरण, नियम आदिव्रत नियमादिक संतोष पूर्वक ग्रहण किये, और श्रीजिनवल्लभगणिवाचनाचार्यजीको निजगुरुपणें स्वीकार किये, ॥ १ ॥ और श्रीअभयदेवसूरिजी गुरुमहाराजके सदुपदेश करके श्रीजिनवल्लभगणिवाचनाचार्यजीकोंसातिशायिअतीत अनागतादि ज्ञानसातिशायि ज्योतिष परिज्ञान बहुतहि विशेष था, इसलिये भगवान श्रीजिनवल्लभगणिवाचनाचार्यजीकेपासमें एक साधारण नामक श्रावकनें परिग्रह परिणामव्रत ग्रहण करणेंकेलिये प्रवर्तमान हुवा, उतनें गुणगरिष्ठ या गुणविशिष्ठ श्रीजिनवल्लभ गणिवाचनाचार्यजीनें उस श्रावकमें कहा, हे साधारण कितना सर्व परिग्रहका प्रमाण करेगा, तब उस श्रावकनें कहा' हेभगवान मेरे वीशहजार प्रमाणें सर्व परिग्रहका प्रमाण रखणा है, शेष सर्व परिग्रहका त्याग करता हुं, पुत्रकलत्रादिककी गिणतिनहिं, उतनें निर्मलज्ञानदृष्टिवाले श्रीजिनवल्लभसूरिजी बोले कि हेश्रावक परिग्रहप्रमाणवढावो, बाद उस साधारण श्रावकने परिग्रहप्रमाण बढाकर तीस हजार प्रमाणे करणें लगा, उतने फेर पूज्यश्री बोले, कि हे महानुभाव इमसें भी बहुतर विचारो, तब साधारण श्रावकने कहा, हे स्वामी मेरे घरसबधि सबसारवस्तुवोका मोलगिणेपरभी पांचसो (५००) पुरा न होवे, तिसपरभी आप श्रीके वचनसें मेने सर्वपरिग्रह प्रमाण बढाकर ३० हजारपर रखाहै, उसपरभी आपश्रीनें कहाकि हे महानुभाव इससेंभी जादा प्रमाण बढावो, एमा आप श्री फरमाते है तो इमसे जादा कहांसें मेरे अधिक तर द्रव्य (धन) की प्राप्ति होगी,

वाद सातिशायि ज्ञानशाली भगवान् श्रीजिनवल्लभगणिवाचनाचार्य बोले, सर्व साधर्मियोंमें सर्व साधारण स्थितिवाले, हे साधारण श्रावक पुण्यसमूहके क्या असाध्य है, अतुलागणना (प्रमाणरहित गिणति) मतकर, केवल चणामात्र वेचनेवाले पुरुषभी अगण्य धनके स्वामी होजाते हैं, ऐसा अभिप्राय सहित गुरुमहाराजके वचनसुनके संदेह रहित होकर मनमें विचारा कि कुछने कुछ धनादिककि प्राप्ति जरूर मेरे होगी, और योग क्षेमरूप कल्याण जरूर मेरे होवेगा,

यह साधारण श्रावक पूर्वोक्त मनमें विचारके वादमें मुख विकाश करके साधारण श्रावकनें कहा, जो ऐसा है तो हे भगवान् मेरे एक लाख प्रमाणे सर्व परिग्रहका प्रमाण होवो, तव श्रीगुरुमहाराजनें साधारण श्रावकों सर्वपरिग्रहपरिमाणव्रत उच्चराया, और परिग्रह प्रमाणव्रत ग्रहणकियां वाद, श्रीसद्गुरुमहाराजके चरण कमलोंकी सेवासें, अशुभअन्तरायकर्मकाक्षयोपशमहोनेसें प्रतिदिनमें प्रवर्द्धमानसंपदावाला हुवा, विशेषकरके श्रीगुर्वाज्ञामें प्रवृत्ति करता हुवा, वह साधारण श्रावक संपूर्ण श्रीसंघके हरकोई कार्यमें सर्वश्रीसंघका मध्यस्थपणें कार्यकरणेंमें तत्परहूवा, और सड्ढकादि श्रावकभी साधारण नामा श्रावककी तरह सर्वत्र हरेकधर्मकार्योंमें श्रीजिनवल्लभगणिवाचनाचार्यजीकी आज्ञा करकेहि प्रवर्त्तना शरुकरा, वाद तिस चित्रकूटनगरमें श्रीजिनवल्लभगणिवाचनाचार्यजीनें चतुर्मासकसंवंधि नवमाकल्पकरा और क्रमसें पचास दिनमें संवत्सरीप्रतिक्रमणकियांके वादमें आश्विन मास आया तव आसोजवदि तेरसका श्रीमहावीर देवका गर्भापहार कल्याणक आया सूत्रसिद्ध जाणके, और चैत्यवासीयों करके तिरो-

हित किया हूया जाणके, सर्व सभा समक्ष श्रावकोंको श्रीजिनवल्लभ गणिवाचनाचार्यजीनें कहा, हेश्रावकजनो आज श्रीमहावीरदेवका दूसरा गर्भापहार कल्याणक है, यह गर्भापहार कल्याणकक्रम संख्यामें दूसरा कहाजावे हैं, और यह गर्भापहार कल्याणकसूत्र सिद्ध है, तथाहि " पंचहत्थुत्तरे होत्था साइणा परिनिव्वुडे" इनहि प्रगट अक्षरों करकेहि सिद्धान्तमें कहनेंसें, और दूसरा वैसा कोइभी विधिचैत्य ईहांपर नहिं हैं, ईसलियेहि चैत्यवासीयोंके चैत्यमे जाकें, जो आज देव वांदनेमें आवे तो अच्छाहे बाद श्रीगुरुमहाराजके मुखकमलसें निकले हूवे वचनोंको आराधन करणेवाले श्रावकोंने कहा, हेभगवन् जो आपके सम्मत है वहहि हम करणेकुं तइयार हैं, बादमे सर्व पौषहवाले वगैरह श्रावक लोक अति निर्मल शरीर जिनोंका और निर्मल वस्त्र जिनोका और ग्रहण कियाहै निर्मल देवपूजाका उपकरण जिनोंने ऐसे श्रीगुरुमहाराजके साथ मन्दिरमे जाणेके लिये प्रवर्त्तमान हूवे, बादमे श्रीगुरुमहाराजकोंश्रावकसमुदायके साथआतेहूवे देखके, चैत्यवासीनीसाध्वीनेकिसी मनुष्यकोपूछा कि आज इन वसतिवासीयोंकेक्याविशेषपर्वहै, जिससे यहबहुतसें गुरु श्रावक मिलकर जिनमन्दिरजारहे हैं, उतनेंकिसीएकमनुष्यने उस चैत्यवासीनी साध्वीकों कहा, सामान्य गणनामें छट्ठा, और क्रमसंख्यामें दूसरा गर्भापहार नामकल्याणक करणेके लिये यहजारहेहैं, अर्थात् चैत्यवासीयोंकरकेतिरोहितकिया हुवा और सूत्र सिद्धवीरगर्भापहारकल्याणकआजहै इसलियेकल्याणकनिमित्तदेव वन्दनाकरणेकोंकल्याणकादिबहुमान निमित्त यह जारहेहैं, बाद तिसचैत्यवासीनी

साध्वीनें वीर गर्भापहार कल्याणक, कल्याणकतरीकेकबीभीमेनें मेरीउंवरमें नकीया नसुणा नदेखा,

सुविहितमुनीनांदर्शनाभावात्,
चैत्यवासिनांकल्याणकतयानिषेधात्,

सुविहितमुनियोंके दर्शनके अभावसें, चैत्यवासीयोंके तो यह गर्भापहार कल्याणक रूपता करके निषेध करणेंसें, इसलिये तिस चैत्यवासनी आर्यानें अपणें मनमें विचारा कि यहां चित्रकूटनगरमें हमारी प्रवलता विशेष होनेपर पहिले कोइभी सुविहित मार्गवाले श्वेताम्बराचार्यनें आयके वीरगर्भापहारकल्याणकादिशुद्धप्ररूपणा नहिं करणेंपाये, और यहां रहके हमारे प्रतिकूल प्रगटपणें शुद्ध धर्मोपदेश सुविहित साधु श्रावकादि मार्गोपदेश वीर गर्भापहार कल्याणकादि शुद्धप्ररूपणारूपकार्य पहिले कीसीसुविहित आचार्यनें आयके नहिं करा और यह वीरगर्भापहारकल्याणक आराधन आदि धर्मकार्य हमारे मन्दिरमें हमारे प्रतिकूल प्रगटपणें कीसीनें ऐसा पहिले वर्त्ताव नहिं कीया, और इस समय (इस वखतमें) "एएजूअप्पहाणायरिआ सुद्धपरूवगा सुविहियमग्ग विहारिण वाऊ इव अप्पडिबद्धा सारय सलिलं व सुद्धहियया, चरणकरणोवजुत्ता भयेणएए संमुहेण कोवि पडिसेहिउं समागमिस्सइ सव्वेवि कायरा इच्चाइचिंतिऊ ण जेणकेणवि उवायेण अहं पडिसेहामि जहाणं आम्हाणं परंपराणं ण हवइ लोवो तहासमायरामि" यह जिनवल्लभगणिवाचनाचार्यजी वहुत वडे आडंवरपूर्वक श्रावकादिसमुदायसाथ आयरहे हैं, और इनोंका

इहांपरकोइभीविधिचैत्यहेनहिं इसलिये यह जिनवल्लभगणि वाचनाचार्य श्रावकादि समुदाय साथ जगजाहिर रीतिसें आज यहा हमारे मन्दिरमे आकर पहिले पहेल कल्याणका आराधन करेंगें, और हमारी आचरणाविरुद्ध स्वमंतव्यकों पोषण करेंगें, इस वजेसें इहांपर हमारी आचरणा आम्नायमें धक्का पहोचायेंगें, और लोकोमे हमारी हासी निंदा होगी इसवास्ते यह आज कल्याणकका आराधनकरणायुक्तनहि, परन्तु यह आचार्यविशेषश्रुतवानहै युगप्रधानआगमकोंजानतेंहै, और इस समय इहापर इनोंकेमुताविक दूसरा कोइभी आचार्यहै नहिं, और इससमय यह युगप्रधानआचार्य है, शुद्ध प्ररूपकहै, सुविहितमार्गमे चलनेवालेहैं, वायुकेमुताविकअप्रतिबद्ध विहार करणेवालें है, सरदऋतुके जलमुताविक शुद्धहृदयवालें हैं, चरण करणमे विशेषउपयोगी हैं, अपने गुणोंसें इहांपर स्वदर्शन परदर्शनमे प्रसिद्धहुवे है, नगरवासी सर्व परदर्शनवाले ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वगेरे लोक भ्रमरकी तरह गुणोसे रंजित होकर निरतर सेवा करते है, परम भक्त हुवे है, हमारे श्रावक समुदायकोंभी सुविहितमार्गका उपदेश द्वारा भाग पाडकर बहुतसें हमारे भक्त श्रावकोंको अपणें भक्त करलिये है, बहुतसें हमारे श्रावक लोक स्वेच्छासें शुद्धप्ररूपक शुद्ध चारित्रिया जाणके तथा इनका शुद्धआचारदेखके इस समय इनके भक्त हुवे हैं, प्रायेकर आधे श्रावक तो हमारे इनके तरफ चले गये हैं सेस रहे है वेभी सायत न चले जावेंगे इस हेतुसें इनकों अपने मंदिरवगेरे धर्मस्थानोंमे नहिं प्रवेशकरनेदेना यहहमारे

पक्षके विरोधि है, इनके परिचयसें हमारे पक्षकी हानी होवे है इनका परिचय आगमन वगेरे अछा नहिं है, इसलिये अपने मंदिर मठ वगेरेमें इनको इनोंकीविधिसें इनोकेमंतव्य प्रमाणे धार्मिक क्रिया नहिं करणे देना इस समय इनोका बहुत बडा प्रभाव पडे है, इस वजेसें इनोंके क्ष्योभसें इनोंके सामनें हमारे पक्षवाले कोइभी इससमय निषेध करणेंके लियें नहिं आवेंगें, इस समय इनोंके पक्षकी प्रचुर प्रबलता भइ हैं, हमारे पक्षवाले सर्व कायर हैं, इत्यादि उस आर्यानें अपणें मनमें विचार करके स्त्री जाति होणेसें एकदम साहसअवलंबनकरके बोली के इस समय जिसतिसउपायकरकेमेंमनाकरुं, जिस्सें हमारीपरम्परा आचरणाका लोप न होवे, और लोकोंमे हमारी निंदा हासीभी न होवे, वैसा वरताव करुं, वादमें वह आर्यामन्दिरके दरवजेमें आडी गिरके रही, अर्थात् मन्दिरके दरवाजेमें आडी मार्ग रोकणेके लिये सोगइ" वादमें मन्दिरकेदरवाजेपरआये हुवे आचार्यश्रीकों देखके आचार्यश्रीके प्रति पूर्वोक्त दुष्ट चित्तवाली आर्यानें कहा कि, जो आपश्री इस हमारे मन्दिरमे मेरा अपमान करके प्रवेश करेंगें, तो में अवश्य इहांपर मरुंगी मरुंगी, वैसा अप्रीतिका कारण जाणके देखके वादमें पूज्यश्री वहांसें पीछे लोटके अपणें स्थानपर आये, वादमें धर्मांतराय मिटानेके लिये और आचार्यश्रीकी आज्ञा आराधनेके लिये धर्मिष्ट परमभक्त श्रावकोंनें कहां, हे भगवन् वहुतसें हमारे घर बडे बडे हैं, वास्ते कोइ घरके ऊपर मज्जलमें चउवीसमहाराजका चित्रितपट्टधरके देववंदनादि सर्वधर्मकार्यकरें, और गर्भापहार कल्याणककी आराधनाकी

जावेतो ठीकहै, आचार्यश्रीनें कहा अहोश्रावको यह धर्म-कार्य किया जाय इस समय क्या संदेह है, अर्थात् निसदेह अवश्य करणीय यह धर्म कार्य है ऐसा निश्चय तुमजाणों, यह धर्मकार्य अवश्य आजहि करणेमें आवेगा, यह आचार्यश्रीका वचन श्रवण कर, बादमे आचार्यश्रीके साथ श्रावकादि संघनें विस्तार पूर्वक विधिसहित गर्भापहार कल्याणक आसोज वद १३ के रोज आराधन करा, इसलिये समाधान हुवा, दूसरे दिन गीतार्थ श्रावकोंनें विचार करा, वह यह है अविधि मार्गमे प्रवृत्ति करनेवालोंके साथ रहेनेसे, विधि मार्गके विरोधि पक्षवालोंके सह संबंध होनेंसें अथवा रखनेमें जिनोक्तविधिनरोनरकरणेकुं नहिं समर्थहैं इसलिये जो आचार्यश्रीके सम्मत होवे तो 'उपरितले च देवगृह द्वयं-कार्यते' उपरके मजलमे दोय जिनमन्दिर कराया जायतो ठीकहै, और अपणे समाधि होवे, यह अपणा अभिप्राय आचार्यश्रीकों निवेदन करा, तब आचार्यश्रीभी बोले, यथा—

जिनभवनं जिनविम्वं, जिनपूजां जिनमतं यः कुर्यात् ।
तस्य नरामरशिवसुखफलानि करपल्लवस्थानि ॥ १ ॥

व्याख्या–जिनमन्दिर जिनप्रतिमा जिनपूजा जिनधर्मकु जो पुरुष करे, उसपुरुषके मनुष्यदेव मोक्षकासुखरूपफल हस्त-पल्लवमें रहे हुवे है, ॥ १ ॥ इस देशना करके श्रद्धा प्रधान श्रावकोंने जाणा कि जो हमारा विचार है वह श्रीगुरुमहाराजकों वांछितहिहै, यह लोकोंमें बात भइ के जैसे इन वाचनाचार्य जिनवल्लभगणिके भक्तश्रावकलोकदूसरा मन्दिरकरावेंगे, इस बातकुं सुणके, प्रह्लादननामक श्रावकसें बडाचैत्यनामीश्रावकराहदेव नाम सेठनें श्रीजिनवल्लभगणि वाचनाचार्यजीकों गुणाणेके लिये

अहलादनादि श्रावक समुदायप्रति कहा इये आठ मुंडेवाले दोय मन्दिर करावेगा, और राजके माननीक होगा, यह बात श्रीजिनवल्लभगणिजीनें सुणीं, दूसरे दिनमें बाहिर स्थंडिल भूमि जातां आचार्यश्रीकों मार्गमें चैत्यवासी श्रावक बहुदेवनाम सेठ मिला, तब आक्षेपसहितज्ञानदिवाकरश्रीजिनवल्लभगणि मिश्रनें कहा, हेभद्रबहुदेव गर्वनहिंकरणा, इन हमारे श्राव-कोंके अन्दरसें कोइकश्रावक धन समृद्धहोकर तुमारे कहे प्रमाणे कार्यकरणेवालाहोगा, और वह तेरेकुं बंधे हुवे कुं छु डावेगा, वह कार्य वैसाहि हुवा, और आचार्यश्रीके प्रसादसें सज्जन प्रकृतिवाला साधारण नामश्रावक राजाके अधिकतर माननीयहुवा, और वह बहुदेवनामा सेठचैत्यवासीश्रावक राजासंबंधि किसी अपराधमें आनेपर, उस दुष्टमुखवाले सेठके ऊपर नरवर्मराजा नाराजहुवा, और उससेठकुं उंठके साथ बांधा, उंठकी तरह विलाप करते हुवे सेठकुं राजपुरुष धारानगरीमें नरवर्मराजाके पास लातें हैं, इस अवसर पर धारानगरीमें कोइ कार्यके लिये सरलप्रकृतिवाला साधारणनामश्रावक सुविहित पक्षीय गयाहुवाथा, सर्वजगतके लिये समभावसें हितकारी प्रवृत्तिवालासज्जन साधारणनामा श्रावकनें राजपुरुषकों मना-करके निष्कारण उस सेठका कष्ट हटाकर राजाकुं वीनति करके अंगीकार करी है सज्जनोंकी चेष्टा जिसनें ऐसा श्रीजिनवल्लभाचार्यका भक्त साधारण नामश्रावकनें राजाका मनमनाकर अपराध आश्रित धन वगेरे देके, इसरांक बहुदेवसेठकुं बंधनसें छुडाया, और उत्साह सहित श्रावकोंनें दोयमन्दिरभी बनाना सरु किया,

और देव गुरुके प्रसादसें दोनुं मन्दिर तइयार भये, वहां मंदिरमें ऊपरके मजलमें श्रीपार्श्वजिनमंदिर और नीचेके मज्जलमें श्रीभव्योंके नेत्रोंको और मनको हरणेवाला अतिशय उंचाशिखर बद्ध तोरण सहित सोनेमयी दंडकलशोकी परंपरा और प्रभामंडलसें खंडन करा है अत्यंत गाढअंधकार जिसनें ऐसा ५२ जिनालय श्रीमहावीर जिनका मंदिर कराया, वादमें श्रीजिनवल्लभगणि वाचनाचार्यजीनें विस्तारसें सर्व विधिपूर्वक बडे उछवकेसाथ प्रतिष्ठा करी

सर्वत्र प्रसिद्धि भइ, अहो येहि गुरुहैं येहि गुरुहैं, अर्थात् श्रेष्ठ गुरुराज ऐसेहि होने चाहिये, त्यागी वैरागी सुविहित जैनाचार्य ऐसेहि होते हैं, इत्यादि प्रसिद्धि स्वदर्शन परदर्शनके लोकोमें भइ और कोइ एक दिनके समय लोकोंमें इस प्रकारके सर्व शास्त्र-विशारद श्वेताम्बराचार्य आये है, इस प्रकारकी वडी प्रशंसाकुं सुणके, एक ब्राह्मण जोतिषी पंडितमानी श्रीजिनवल्लभगणि-वाचनाचार्यजीके पासमें आया, उसको वैठणेके लिये श्रावकोंनें आसन दिया, इस ब्राह्मणकों श्रीगुरुमहाराजनें पूछा कि हे भद्र आपका रहना किस ठिकाणे है, कौनसे शास्त्रमें तुमारा अभ्यास है, ब्राह्मण बोला रहनातो इहाहि है, अभ्यास तो व्याकरण काव्य नाटक अलकार वगेरे सर्व शास्त्रोंमे है, वादमे वाचनाचार्य-श्रीजिनवल्लभगणिजी बोले कि, होवो, विशेष परिचय कौनसे शास्त्रमे है, ब्राह्मणबोला कि विशेष परिचय जोतिष शास्त्रमे है, वादमे वाचनाचार्य श्रीजिनवल्लभगणिजी बोले कि, अछीतरे याद है, तब ब्राह्मणनें कहा, तुमारेकोंभी लग्नके विषयमे कुछभी क्या परिज्ञान है, तब वाचनाचार्य श्रीजिनवल्लभगणिजीने कहा कि,

होगा किंचित्, अर्थात् कुछपरिज्ञानहै, वाद ब्राह्मण आक्षेप-सहित बोला कि, तो आप कहो, तब वाचनाचार्य श्रीजिनवल्लभ-गणिजीभी उत्साहसहित हुवे थके बोले, कि हे विप्र कहो, कितने लग्न कहुं, दश अथवा वीस लग्न कहुं, यह वचन सुणके उस ब्राह्मणकों आश्चर्य हुवा, उतने दश—वीस संख्यक लग्नोंकुं जलदिसें कहके, फेर आचार्यश्रीनें कहा, हे विप्र आकाशमंडलमें दोय हाथ प्रमाणे वादल है, उसकों तुम देखतेहो, ब्राह्मण बोला कि हे भगवन् देखताहुं, वाचनाचार्यश्रीनें कहा, हे विप्र कहो कितनें प्रमाणे जल डालेगा, वादब्राह्मण नहिं जानता हुवा, शून्य नजरसें दिशाकों देखता रहा है, उतनें आचार्यश्रीनें कहा, हे विप्र ! सुणो, दोय घडीवाद यह वादल दोय हाथ प्रमाणकाभी दोय घडीके अन्दर अन्दर संपूर्ण आकाशमंडलकुं व्यापके, उतनी वर्षात करेगा, जितने जलकर दोंय भाजनपूरा भराजाय उतने-प्रमाणे वर्षात होगा याने जलगिरेगा, वादमें वहांहि वेठा हुवा उंचा आकाशकी तरफ मुख है जिसका ऐसा वह ब्राह्मणके सन्मुख सर्व वैसाहि जलकावरसात हुवा, वादमे वह ब्राह्मण ललाटमे दोनुं हाथकुं जोडके, अहो यह वडा आश्चर्य है, अहो ज्ञानं अहो ज्ञानं, यहहि ज्ञान है यहहि ज्ञान है, अर्थात् इसीका नाम सत्यज्ञान कहते हैं, इसतरह मुखसें कहता हुवा, मस्तककों धूणता हुवा, पूज्य आचार्यश्रीके चरणोंमें पडा, और मुखसें कहेणें लगा कि, जबतक में इहांपर रहुंगा तवतक निश्चे आपश्रीके चरण-कमलोंमे नमस्कार करके, भोजन करुंगा, अभिमानसहित होणेकर हे भगवन् मेने आपश्रीकों इसतरहके ज्ञानी नहिं जाणेंथे, वाद

यह सर्वत्र प्रसिद्धि भई, अहो जो यह श्वेताम्बराचार्यहै साति-शायि विशेषज्ञानी होवेहै, बहुरत्ना वसुंधराहै इति । और कोइ एकदिनके समय कभी वडगच्छीयश्रीमुनिचंद्रसूरिजीनें सिद्धान्तोकी वाचना ग्रहण करणेके लिये, दो शिष्योंको वाचना-चार्यश्रीजिनवल्लभगणिजीके पासमे भेजे, वाचनाचार्यश्रीजिनवल्लभ-गणिजीभि श्रीमुनिचंद्रसूरिसंबंधि उन दोनों शिष्योंको संप्रदायगत सिद्धान्तोंकी प्रीतिपूर्वक वाचना देनी सरूकरी, और उन दोनों शिष्योंनेभि अपणे मनमे अशुभ चिंतवतां, यह विचार किया, कि जो वाचनाचार्यश्रीजिनवल्लभगणिके श्रावकोंकुं कीसी प्रकारसें अपणें ठगें, अर्थात् इणके ऊपरसें श्रद्धाहटाकर अपणे गुरु-महाराजके रागि बनाकर बादमे अपणे आचार्यश्रीमुनिचंद्रसूरिजीके परम भक्त श्रावक करें, तो अच्छा होवे, ऐसी बुद्धि करके श्री-जिनवल्लभगणिजीके भक्तश्रावकोंकुं रंजितकरतेभये, और कभी अपणे गुरुके पासमे प्रच्छन्नवृत्तिसें भेजनेके लिये छाना लेख लिखा, उन दोनों शिष्योंनें, उस लेखकुं वाचनासनधिकाफीमे डालके वाचना ग्रहणकरणेके लिये, वह दोनों शिष्य वसतिमें श्रीजिनवल्लभगणिजी वाचनाचार्यके पासमे आये, वह दोनो शिष्य वंदनाकरके, बैठे, जितने वाचनेका पुस्तकखोला उतने नवीन लेख लिखा हुवा देखा, गुणविशिष्टमे मिश्र शब्द है, जिनवल्लभ-गणि मिश्रनें उस लेखकुं ग्रहण किया, और उस लेखकु खोला वे दोनों शिष्यभी वाचनार्यजीके हाथमें पीछा लेख लेनेकुं नहिं समर्थ हुवे, उतने उस लेखकों वाचनाचार्यश्रीजिनवल्लभगणिजीनें,

वांचा उस लेखमें यह लिखा हुवा था, कि जिनवल्लभगणेः केचिच्छ्रद्धास्ते वशंनीताः सन्ति, क्रमेण सर्वानपि वशीकरिष्यामः इति मनोवृत्तिरस्ति, जिनवल्लभगणिके भक्त कितनेक श्रावकोंको हमने अपणें वशमे करें हैं, और धीरे धीरे क्रमकरके सबहिको हम अपणें वश करेंगें, यह हमारे मनकी धारणावर्त्ते है, और इहांपर ऊपरोक्त विषयके लिये वृत्तिकार लिखते हैं कि, अयं चार्थो विरुद्धत्वात् यद्यपि शास्त्रोपनिबंधयोग्यो न भवति, तथापि चरितोपरोधादुक्तमिति, यह अर्थ (कार्य) विरुद्ध होणेसें जो कि शास्त्रमे लाणे योग्य नहिं है, और लेखके और शास्त्रके कोइ संबंध नहिं है, तोभी चरितानुवादके उपरोधसें कहा है ऐसा जाणना, बादमें श्रीजिनवल्लभगणिजीने, लेखका दो खंड करके कहा एक श्लोक सो यह है,

आसीज्जनः कृतघ्नः,
क्रियमाणघ्नस्तु सांप्रतं जातः।
इति मे मनसि वितर्को,
भविता लोकः कथं भविता ॥ १ ॥

व्याख्या—प्रथमहिसें लोक किये हूवे उपगारकुं हणनेवाले थे, और वर्त्तमान कालमेभी किये हूवे कार्यको नहि मानते हैं ऐसा मेरे मनमें विचार भया है लोककी क्या दशा होगी क्या होनेवाला है ॥ १ ॥ ऐसा कहके बोले अहो ऐसै अशुभ अध्यवसायवाले तुम हो वाचनालेने सैसरा वादविमुखहोके स्वस्थान गये उहां न रहे चले गये, कदाचित् श्रीजिनवल्लभगणि वहिर्भूमी जाते थे तब कोइ विचक्षण पांडित्यकी प्रसिद्धी सुनके मार्गमे

मिला कोडराजाका वर्णन आश्रयि समस्यापददिया वह यह है कुरंगः किंभृगोमरकतमणिः किंकिमशनिः बादजिनवल्लभगणिने उसीवक्त थोडा विचारके समस्या पूर्ण करी उसके आगे कही यथा—

चिरं चित्रोद्याने चरसि च मुखाब्जं पिवसि च,
क्षणादेणाक्षीणां विरहविपमोहं हरसि च ।
नृप त्वं मानाद्रिं दलयसि च किं कौतुककरः,
कुरंगः किं भृंगो मरकतमणिः किं किमशनिः ॥ १ ॥

अर्थ–कोइकवि कोडराजासे कहता है हेराजन् बहुतकालतक विचित्रउद्यानमे स्वेच्छासे विचरतेहो और मुखकमलका पान करतेहो और मृगाक्षियोंका विरह हि विपमोहकुं दूर करते हो और शत्रुलोकोंका मानरूप पर्वतको तोडते हो यह आश्चर्यकारि क्या कुरग हो (मृग) भृंग २ (भ्रमर) हो क्या, मरकतमणि हो क्या ३ अथवा क्या वज्र हो ४ इति ऐसा सुनके अत्यंतप्रमुदित होके समस्या पूच्छनेवाला विचक्षण बोलाअहो लोकोंमें जो प्रसिद्धि होति है वह निर्मूल नहिं होति है यह निश्चय है हेभगवन् आपको जैसे सुने थे वैसेहि आपहे ऐसी गुणोंकी स्तुतिकरके नमस्कार करके स्वस्थानगया बादगुरु उपाश्रय आये श्रावकोंने पूच्छा हेप्रभो आज बहुतसमयकैसे लगा तब साथमे जो शिष्यगयाथा उसने सब बात कही सुनके सबश्रावकलोक बहुत हर्षित भये नेत्रकमलसुगुरुमाहात्म्यसूर्यसें विकसित भये उस समय गणदेव नामका एकश्रावक सुवर्णकाअर्थीथा जिनवल्लभगणिके पास स्वर्णसिद्धि हैं ऐसासुणके चित्रकूटस्थगुरुकेपासमेंआके सेवाकरणा सरू किया

उसका भाव गणिजीने जाना योग्यजानके भवनिस्तारणी वैराग्य-उत्पन्न करणेवाली संसारसे निर्वेदजननी देशनादिवी जिस्से गणदेव श्रावक अत्यंतसंविग्न निस्पृही भया तब गणिश्रीने फरमाया हे भद्र क्या स्वर्णसिद्धिकहुं गणदेवने कहा हे भगवन् आपके चरणोंकी सेवा करतां विंशतिद्रव्य (वीश रुपिया) की पूंजीसे व्यापार करतां श्रावकधर्म पालन करुंगा जादाधनउपाधिका मूल है गणदेवमें धर्मवर्धनसामर्थ्यथी इसवास्ते लिखेहुवे द्वादशकुलकग्रंथविशेषदेके सिखाके वागडदेशमें भेजणेका उपदेशकरा वागडमें जाके सब वागडदेशके लोक जिनवल्लभगणिजीके रागी गणदेवश्रावकने किये, श्रीजिनवल्लभगणिजीके व्याख्यानमें सब विचक्षण लोक आते हैं वेठते हैं विशेषतः ब्राह्मण आते हैं अपणा अपणा विद्याविषयि संदेह निवर्त्तनकेवास्ते, अथ कदाचित् यह गाथा व्याख्यानमें आइ यथा

धिज्जाईण गिहीणय, पासत्थाईण वा वि दट्ठूणं ।

जस्स न मुज्झइ दिट्ठी अमूढ दिट्ठिं तयं विंति ॥ १ ॥

अर्थ—ब्राह्मणजातीय और गृहस्थ और पासत्था वगेरेकों देखके जिसकिदृष्टि नहिं मोहप्राप्तहोवे वह अमूढदृष्टिपणा कहाजावे १, ऐसा निःशंकपणे व्याख्यान किया यथावस्थितपदार्थसुनके ब्राह्मणमनमें क्रोधातुरहोके वाहिरनिकलके एकट्ठेमिले तब विरोधिभि निकट भये ब्राह्मणोंने विचार किया श्रीजिनवल्लभगणिजीके साथ विवाद करके निरुत्तर करके प्रभाव नष्ट करेगें बाद यह स्वरूप श्रीजिनवल्लभगणिजीने जाना परंतु मनमें बिलकुल भय नहिंभया, कहाजाताहै अपणाकियाभया सिंहनादसे

मधरीकृतकाननजिसने और उत्कट मदोद्धत हाथीयोंका कुंभस्थलरूपतट गिरानेमें वहुतकठोरनखमुखहै जिसका ऐसे सिंहकों कोड्वक्त पवनसे प्रेरित वृक्षोंके अग्रभागसैंगिरेपत्र मात्रके शब्दसे अत्यंतभागते भये भयाहे अगमंगजिनोंका ऐसै मृगोंमै क्या भयहोताहै अपितु नहिं, व्याख्याकार श्रीसुमति गणि कहतेंहै हमारे गुरु श्रीजिनपतिसूरिजी कि इसी अर्थमे अन्योक्ति है यथा

खरनखशरकोटिस्फोटिताग्रेभकुंभ,
स्थलविगलितमुक्ताराजिविभ्राजिताजिः ।
हरिरधिगरिमा किं तर्जितोऽ तर्जितो वा,
ऽनिलचलदलपातत्वंगदंगैः कुरंगैः ॥ १ ॥

अर्थ—कठोरनखरूपवाणोंकी कोटिके अग्रभागसै विदारण कियाहै कुंभस्थल जिसने उस्से निकलीमोतियोंकिश्रेणिसै सोभित पृथ्वी करि है जिसने अैसा हरिनाम केसरिसिंघ हे सो परवतके समीपकी भूमीमे वायुसै चलता पत्रोंके पातसै कूदते भये हरिणोंसै क्या तर्जित होता हे ॥ १ ॥ वाद गणिजीने एक श्लोक भोजपत्रमें लिखके फोड विवेकीकों देके मिले भये ब्राह्मणोंमे मुख्यविप्रके पासभेजा तव उसब्राह्मणने श्लोककाअर्थ विचारके मनमे विचार किया वहवृत्तयह है

मर्यादाभंगभीतेरमृतरसभवा धैर्यगांभिर्ययोगा-
न्न क्षुभ्यंते च तावन्नियमितसलिलाः सर्वदैते समुद्राः ।
आहोक्षोभं व्रजेयुः कचिदपि समये दैवयोगात्तदानी,
न क्षोणी नाद्रिचक्र न च रविशशिनौ सर्वमेकार्णवं स्यात् १

व्याख्या–अमृतरसकी (पक्षे चंद्रकी) उत्पत्तिवाले और सदाकाल नियमित जलवाले एसे यह समुद्रों धैर्य और गांभीर्य गुणके योगसें और मर्यादाभंगके भयसें, प्रथम कविभी क्षोभ नहिं पाये हैं, और हा हा इति खेदे दैवयोगसें कोइ वखनमें कभी क्षोभपावे तो पृथ्वी न रहे पर्वतोंका समूह पण न रहे और तिससमय चंद्रसूर्य भि न रहे, परन्तु यह सर्व एक समुद्ररूप होवे,? अहो हम लोक एकेक विद्याके धारणेवाले हैं, अर्थात् एकेक शास्त्रके विषयकों जानतें हैं, सामान्यपणें (अस्पष्टपणें) विशेष प्रगटतर स्पष्टतर स्पष्टतम एकेक शास्त्रके विषयको हम लोक नहिं जानतें हैं, और यत् किंचित् सामान्यपणें हम लोक एकेक शास्त्रके विषयके अधिकारी हैं, परन्तु यह श्वेताम्बराचार्यश्रीजिनवल्लभसूरिजी तो सर्वविद्यानिधान हैं, अर्थात् चउद विद्याके पारंगामीहैं, स्वसिद्धान्त परसिद्धान्त षट्शास्त्रादिरहस्यसहित प्रगटतर स्पष्टतम विषयको जानतें हैं, अत यह श्वेताम्बराचार्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी संपूर्ण सर्वशास्त्रके अधिकारी हैं, इसलिये कैसे इण श्रीमान् जिनवल्लभसूरिजीकेसाथ विवाद करणेकुं शक्तिमान् होवें, अर्थात् श्वेताम्बराचार्य श्रीमान् जिनवल्लभसूरिजीके साथ शास्त्रार्थ करणेकी शक्ति हमारी नहिंहै, इनके साथ हम शास्त्रार्थ करणेकों समर्थ नहिं हैं, इसतरे वृद्ध ब्राह्मणनें विचारके, सबहि ब्राह्मणोंको कहा, अहो, अहो ब्राह्मणों तुम लोक हृदयचक्षु करके क्या नहिं देखो हो, अर्थात् क्या नहिं जानोहो, तुम लोक सबहि एकेक मलिन (अस्पष्टतर अस्पष्टतम) विद्याके धारणेवाले हो, और वह श्वेताम्बराचार्य

संपूर्ण सर्व विद्याओंका निधान हैं, अत इस श्वेताम्बराचार्यके साथ तुमारा विवाद कैसा, अर्थात् सर्वविद्यापारंगामी श्वेताम्बराचार्य श्रीमज्जिनवल्लभसूरिजी सर्वोत्कृष्ट अद्वितीय कवीश्वरके साथ अहो विद्वानो विवादकरणा तुमको न शोभे, यदि जो आत्मोन्नति यशःख्याति और विशेषगुणप्राप्तिकीचाहना हो तो तुमको विवाद करणा युक्त नहिं, इत्यादि वचनसमूहसें प्रतिबोधके सर्व ब्राह्मणोंकों शांत किये, वाद वे सर्व विद्वान् ब्राह्मण तिस वृद्धब्राह्मणके सुवचनोंको सुणके, शान्तिभावको प्राप्तहोके, नम्र हुवेथके विनयसहित श्रीगुरुमहाराज श्रीजिनवल्लभ गणिजीके चरणकमलोंमे आकर गिरे, अपणा अपराध क्षमा करवाके विनयपूर्वक श्रीमज्जिनवल्लभसूरिजीकी सेवा करणे लगे, सर्व विद्वान् ब्राह्मणलोक, अन्यदा धारानगरीमें श्रीनरवर्मराजाकी राजसभामें देशान्तरसें दोय विदेशी पण्डित आये, और तिनविदेशीपण्डितोंनें श्रीनरवर्मराजाके पण्डितोंके सामनें पूर्णकरणेकेलिये यहसमस्यापदकहा, जेसे कि, "कंठे कुठारः कमठे ठकार" इति समस्यापदं इस समस्यापदकुं सुणके, वाद अलग अलग श्रीनरवर्मराजाके पण्डितोंनें अपणी अपणी बुद्धिअनुसार पूरण करी, परन्तु तिन विदेशी पण्डितोंका मन हर्षित न हूवा, मनमाफक समस्या पूरण न होनेसें, यह स्वरूप किसी पुरुषनें जाणके, श्रीनरवर्मराजाके आगे कहा, हे देव इन दोनों विदेशीय पंडितोंकों आपके पंडितोंकी पूरणकरी यह समस्या नहिं रुचे है, श्रीनरवर्म राजाने कहा, अहो पुरुष तु कहे अब इससमय कोइ समस्या पूर्णके लिये दूसरा उपाय है, जिस उपाय करके इन दोनों विदेशी पंडितोंका मनरजितहोवे,' तब

किसी विवेकी पुरुषनें श्रीनरवर्मराजाके प्रति कहा, हे देव चितोड-से श्वेताम्बराचार्य श्रीमज्जिनवल्लभगणिजी सर्वविद्यानिधान सुणनेंमें आवे है, यह वृत्तांत सुणके, श्रीनरवर्मराजानें उसीसमय चितोडके प्रति दोय ऊंठ शीघ्रगतिवाले लेखसहित भेजे, और सज्जनसाधा-रण नामक श्रावकके ऊपर लेखलिखा कि हेसज्जनसाधारण श्रावक तुमारे वहां विद्वज्जनचूडामणि सर्व विद्यानिधान श्रीमज्जिनव-ल्लभगणिजी सुणतें हैं, वास्ते यह लेख तुमारेकुं लिखा है, मनोहर तुमारे गुरुमहाराजके पास विद्वानोंके मनको हरण करे इस प्रकारसें पूरण करवाके, "कंठे कुठारः कमठे ठकार" इति, यह समस्या पीछी जलदि आवे वैसा उपाय करणा परन्तु अन्यथा करणा नहिं, इस प्रकारका लेख तिन दोय ऊंठवाले पुरुषोंनें संध्यासमयमे सज्जन साधारण नामक श्रावकके हाथमे दीया, और वह श्रीनरवर्मराजा-संबंधि लेख साधुसाधारण श्रावकने प्रतिक्रमणवेलामें श्रीगुरुमहा-राजके सामनें वाचा, उसलेखका परमार्थ श्रीमान्गणिमिश्रनें जाणा, और जाणनेंके वाद प्रतिक्रमण करणेके अनन्तरहि जलदिसें समस्या पूरण करी, जैसे कि—

"रे रे नृपाः श्रीनरवर्म भूप, प्रसादनाय क्रियतां नतांगैः॥
कंठे कुठारः कमठे ठकारश्चक्रे यदश्वोग्रखुराग्रघातैः" ॥१॥

व्याख्या—हे राजाओ जिस श्रीनरवर्मराजासंबंधि घोडोंके ती-क्ष्ण खुरोंके अग्रभागके प्रहारोंसें, कमठमेठकार है उस प्रमाणे तुमलोकभी अपणें कंठपर (खंधेपर) कुहाडा धारण करो श्रीनरव-र्मराजाको प्रसन्न करणेके लिये नम्र होके शरीरकी रक्षा करणी

चाहते हो तो ॥ १ ॥ यह समस्यापूरणकरके साधारणश्रावककों पत्र दिया उसने उंठवालोंसेंदिया राजाकों साधारणश्रावकनें एक पत्र भि लिखके दिया तब लेखवाहक लेख लेके रात्रिहीमे शीघ्र धारानगरी पोहचे दूसरे दिन समस्या विदेशी विद्वानोंकों सुनाई बहुत हर्षितभये मन प्रसन्न भया और बोले इस सभामे ऐसा विद्वान् कोइ नहि है जिसने यह समस्या पूरी होवे अपि तु और किसीने पूरण करि है समस्या पूरण करनेवाला अद्वितीय विद्वान् है ऐसैं प्रशंसा करते भये उन विद्वानोंको वस्त्रादिकसैं सत्कार करके राजाने विसर्जन कीये श्रीजिनवल्लभगणिवरभि स्वाध्याय ध्यानमें मग्न घोर ब्रह्मचर्यमे रहनेवाले उद्यत विहारी कितनेक दिनोंके बाद चित्रकूट (चितोड) मै विहार कर धारानगरी पधारे भव्य कमलोंकों विकसित करते ऐसैं तब राजाकों किसीने कहा महाराज ? समस्यापूर्त्ति करणेंवाले श्वेताबर गणिवर इहां पधारे है तब अतिशायिविद्वत्तता गुणसे आकर्षित हृदय ऐसैं, राजा बोले अहो शीघ्र बोलावो तब राजपुरुषोंने सत्कारपूर्वकबुलाये जिनवल्लभगणि राजसभामें आये राजा आदरसहित नमस्कार करके हाथ जोडके आगे बैठा गणिवरभि राजाको धर्मलाभरूप आशीर्वाद देके अभिनंदित किया तब राजा बोले भो विद्वज्जनचूडामणे ? हे महाराज ? मेरे मनमें संतोषहोणेके वास्ते (३) तीन लाखद्रव्य अथवा तीन ग्राम लेवो तब श्रीजिनवल्लभगणिवाचनाचार्यबोले हे महाराज ? यतियोंको धनसंग्रहका निषेध हमारे शास्त्रमें विशेषकरके लिखा है ऐसा आगम भि है।

"दोससयमूलजालं" पुव्वरिसि विवज्जियं जइ दंतं,
अत्थंवहसि अणत्थं, कीनस निरत्थं तंवग्गंच्चरसि ॥ १ ॥

द्रव्य सइकडो दोषोंका मूल है पापोपादानमें मुख्य हेतु है दुर्गतिका मुख्यकारण है साधुवोंके सर्वथा त्याग होवे है गृहस्थोंके परिग्रहप्रमाणव्रत होता है आचार्य उपदेश करते हैं पूर्वरिषियोंने मनाकिया धन जो रखे तो व्रतनिरर्थक होवे, महाराज ? हम श्रमण हैं धनकों हाथसेंभि नहिं स्पर्शकरते हैं लेणा रखना कैसे होवे, राजा गणिवरके चरणोंमे मस्तक लगाके नमस्कार करके बोले भो महात्मन् ? निर्लोभियोंमें शिरोमणि आप हों तथापि तीन लाख द्रव्य लिये सिवाय मेरे मनमें समाधि न होवै इस वास्ते कृपा करके मेरे मनमें जेसे वने वेसा समाधिउत्पन्नकरणा आप जैसे उत्तम पुरुषोंका अनुग्रह है, तव श्रीगणिवर वोले जव आपका महान् आग्रह हे तव चित्रकूट नगरमें श्रावकोंने दो जिनमंदिर वनवाये हैं उहां पूजाके वास्ते दो लाख द्रव्य आपकी मंडिसै दिरादो, वाद राजा संतोष प्राप्त होके वोला शाश्वत दान रहेगा वाद उसीतरह द्रव्य दोलाख दिया तथा श्रीजिनवल्लभगणि विद्वान् परोपगारी धार्मिक कार्यकरणेमे तत्परहै ऐसी सर्वत्र प्रसिद्धि भई । वाद श्रीनागपुरनगरमें श्रावकोंने नवीनदेवघर और श्रीनेमिनाथस्वामीका नवीन विंव कराया है ओर उण श्रावकोंका यह अभिप्राय भया कि महाचारित्रिया श्रीजिनवल्लभगणिवरोंकों गुरुकरें ओर गणि श्रीके हाथसे प्रतिष्ठा करावेंगे ऐसा विचारके वडे आदरसै सर्वकी सम्मतिसै महान्वहुमानसै श्रीजिनवल्लभगणिजीकों वीनति

करी बुलाये तब पूज्योंने विहार किया क्रमसें ग्रामानुग्राम विचरते नागपुर गये संघने प्रवेशोत्सव बहोत ठाठसे किया बाद शुभ लग्नमें जिनमंदिर ओर श्रीनेमिनाथ स्वामीके बिंबकी प्रतिष्ठा किया शासनोन्नति भइ गणिवरकी करिभइ प्रतिष्ठाके प्रभावसे नागपुरके श्रावक-लक्षाधिपति भये लोकोंमे श्रीजैनधर्मकी ख्याति बहुत भई श्रीनेमिनाथस्वामीके रत्नोंका मुकुट तिलक कुंडल अगद श्रीवत्स कंठमें मणिरत्नकी माला हांसवगेरह आभरण कराये पूजा प्रभावना विशेप करते भये तथा राजपुरिके श्रावकोंकाभि वैसा अभिप्राय भया कि हमभि श्रीजिनवल्लभगणिजीकों गुरुपणे अंगीकार करे और जिनमदिरबनावे प्रतिमाजी नवीन भरावे प्रतिष्ठा करवावे बाद सब कि सम्मतिसें वैसाहि कीया दोनु नगरोंके जिनमदिरोंमे रात्रिको वलिवाकुल रखणाऔरदेणा रात्रिमे स्त्रीप्रवेश रात्रिमें प्रतिष्ठाका करणा इत्यादिक अविधिका निषेध करके मुक्तिमारगकी प्रवृत्तिसाधक विधिवाद लिखके प्रवृत्ति कराई, बाद मरोटके श्रावकोंने श्रीगणिवरोंको वीनति करी तब श्रीजिनवल्लभगणिजी विहार करते विक्रमपुरमे होके मरोट पधारे श्रद्धावान श्रावकोंने भक्तिसें यतनास्थानादियुक्त स्वाध्यायध्यानादिकके भिन्न २ स्थान है जिसमे ऐसा उपाश्रय उतरनेकुं दिया वसतिमें रहे श्रावकोंने कहा भगवन्? आपके मुखकमलसें जिनवाणीमकरंदका पानकरणेकी इच्छा है तब भगवान् बोले श्रावकोंको युक्त है शास्त्रश्रवणकरणा, "सोचा जाणइ कल्लाणं, सोचा जाणइ पावगं०" इत्यादि दशवेकालिक है सुणके कल्याण जाणते है सुणके अकल्याण जानने है धर्म अधर्म पुण्य पाप कर्त्तव्य अकर्त्तव्य जिनवचन

सुणनेसे जाना जाता है इनोंमें जो श्रेय होवे वह अंगीकार करणा। इसलिये उपदेशमाला प्रारंभकरें तब श्रावकोंने वीनति किया प्रभो? पहले सुना है पूज्य बोले और सुणनाउचित है शुभ दिनमें व्याख्यान करणा प्रारंभ किया।

संवच्छर मुसभजिणो छ मासे वद्धमाण जिणचंदो।
इअविहरिया निरसणा जइज्जएओवमाणेणं ॥ १ ॥

अर्थ—रिषभदेवसामी १ वर्ष तप किया और वर्द्धमानस्वामीने ६मासी तपकरा निराहार विचरे इसी तरह मुनियोको तपमेयत्न करणा इस एकगाथाका व्याख्यानमे छमहिना व्यतीतभया तथापि श्रावकोंको बहोतसिद्धांतोंका उदाहरणरूपअमृतरससै तृप्ति नहिं भइ और कहने लगे श्रीभगवान् तीर्थंकरदेवहि ऐसा वचनामृतसैं श्रोताजनोंके श्रवणकुं सुखउत्पन्नकरणेमें समर्थहोतेहैं सत्यहै आप श्रीतीर्थंकरसदृशहैं कहाभि है "तित्थयरसमोसूरि०" इत्यादि अन्यथा ऐसी अमृतवरसावणीवाणी इसतरहकीव्याख्यान लब्धि कहांसै होवै इस प्रकारसै अत्यंत संतुष्टमनश्रावक देशना सुनके होतेभये बहोतअनुमोदन करतेभये अपार हर्षप्राप्त भये अन्यदा चैत्यघरमें व्याख्यान वांचके बहुत श्रावकजिनोंके साथथे ऐसे गणिवर उपाश्रय आतेथे इस प्रस्तावमें मार्गमें एक पुरुष बहोत परिवारसै परिवरा हुवा स्त्रीयों गीत गातिहै घोडेपर सवार है पाणिग्रहणको जारहाहै पूज्यपादने देखा तबसंविग्नशिरोमणि ज्ञानदिवाकर संसारकी असारता विचारते ऐसै श्रीगणिवरने कहा अहो देखो देखोसंसारकी क्षणदृष्टनष्टता कैसीहै जिसकारणसैं येस्त्रियां विकस्वरमानहे मुखारविंदजिनोंका ऐसी गान करति जारहि है येहि

स्त्रियां वक्षस्थल (छाति) कूटती महाआक्रंदशब्दकरतिहि इसी मार्गसे पीछी आवेगी वाद पूज्य उपाश्रयगया उतने वह पाणि-ग्रहणकरणेवाला अपणे सासरे पोहचा ऊपरके मजलपरचढणे लगा उतने पादस्खलित भया अर्थात् पग डिगगया इस्से नीचे घरटके ऊपर गिरा घरटके कीलेसै पेटफटगया ओर उसीसमय देहत्याग करदिया तदनंतर वै स्त्रियों रोति भइ उसी मार्गसे पिछी आतिभइ देखी तब श्रावक लोक बोले अहो श्रीगुरुमाहाराजका ज्ञान कैसा त्रिकालविषयि है सब श्रावक लोक धर्ममें स्थिरभये ऐसै श्राव-कोंकाधर्ममें स्थिर परिणाम उत्पन्न करके विहार करके और नागपुर गये श्रीजिनवल्लभगणिजीने उहा विशेषधर्मकी प्रवृत्ति करी इस अव-सरमें श्रीदेवभद्राचार्य विहार क्रमसै करते करते श्रीअणहिल्लपत्तनमें आये उहां आके विचारकरा कि, श्रीप्रसन्नचंद्राचार्यजीने अंतसमय मेरेसै कहाथा कि तुम श्रीजिनवल्लभगणिको श्रीअभयदेवसूरि-जीके पदमे स्थापन करणा, पट्टपर बैठाना वह प्रस्ताव अब वर्ते है ऐसा विचारके श्रीनागपुरमें जिनवल्लभगणिको विस्तारसें पत्र लिखके भेजा पत्रमेयहलिखा तुमकों परिवारसहितशीघ्रचितोडतरफ विहार करणा और चित्रकूट जलदी पोहचना जिस्से हमभि आके विचाराहुवाकार्यकरें ऐसा पत्रपोहचणेसे गणिवरने नागपुरसैविहार-कराचित्रकूट पोहचे श्रीदेवभद्राचार्यभिपरिवारसहितपत्तनसें विहारक-रचित्रकूटआये पंडितसोमचंद्रमुनिकोभि पत्र लिखके बुलाया परंतु नहि आसके वाद वडे आडंबरसें महान् विस्तारसें श्रीदेवभद्रा-चार्यजीने श्रीअभयदेवाचार्यजीके पट्टपर श्रीजिनवल्लभगणिको-

बैठाये अर्थात् आचार्यपदमेंस्थापितकिये तब अनेकलोकयुग प्रधान-
श्रीअभयदेवसूरिजीके भक्तश्रीजिनवल्लभसूरिजीकुं देखकेमहांनूउत्सा-
हसैधर्ममेंमोक्षमार्गमें प्रवर्त्तमान भये श्रीदेवभद्राचार्यादिकपद-
स्थापनाकरके अपणेकुं कृतकृत्य मानता श्रीअणहिल्ल पाटणनगेरह-
स्थानोंसे विहारकरतेभये, श्रीजिनवल्लभसूरिजीने अपणे आयुषका
प्रमाण जोतिषसें गिना छ वरस हाल आयुष हे ऐसा गणितसें
आया तब विचार किया इतने कालमें वहोतभव्यलोकोंको
प्रतिबोधकरेंगे इस प्रकारसे विचरते अछितरहसे ग्रामनगरादिकमें
उपदेश करते भव्य प्राणियोंकों सन्मार्गमें प्रवर्तावते श्रीवीर-
परमेश्वरके शासनको सोभित करते ६ छ मास व्यतिक्रांत भये
तब अकस्मात् शरीरसे अस्वास्थ्य भया अर्थात् बेमारि भइ यह
क्याहे ऐसा जितने विचारके ओर गणित करके विचारा उतने
आंकविस्सरणहुवा जाना छ महिनोंके ठिकाने छ वरस आये
तब श्रीपूज्योंने कहा इतनाहि आयुष है वाद निश्चय करके वह
महापुरुष श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज समस्तसंघके साथ खामणा
करके मिछामिदुकडदेके आराधना करके सर्व जीवोंके साथ
खामणा कर सर्वपापको आलोयपडिकमके च्यार सरण अंगीकार
किया तीन दिनका अनशन याने संथारा करके इग्यारहसै सिडसठ
(११६७) के सालमें कार्त्तिक वदि द्वादशी १२ को रात्रिके
चोथे पहरमें पंचपरमेष्ठिनवकारका सरणकरते भये श्रीजिनवल्ल-
भसूरीश्वरजी महाराज समाधिसें आयु पूर्णकरके चोथे देवलोक
पधारे सुरसुख प्राप्त भये ऐसे महापुरुष प्राकृतके अद्वितीय कवि इस

भारतवर्षमें अंतिम भये परतु उन महापुरुषोंनें जो जो शास्त्र रचे सो परिचय लिखते हैं निर्मल चारित्रके निधान मरुकोटमें सात वरस आते जाते एकंदर निवास करके सर्व आगम परिशीलित करके समस्त गच्छीयोंने अगीकार किये ऐसे पदार्थवर्णन द्रव्यानुयोग वगेरहके शास्त्ररचे सो लिखते हैं सूक्ष्मार्थसार १ सिद्धांत सार २ विचार-सार ३ षडशीति ४ सार्धशतक कर्मग्रंथ ५ पिंडविशुद्धि ६ पौषधविधि-प्रकरण ७ प्रतिक्रमणसमाचारी ८ संघपट्टक ९ धर्मशिक्षा १० द्वाद-शकुलक ११ प्रश्नोत्तरशतक १२ शृंगारशतक १३ नानाप्रकारका विचित्र चित्रकाव्यसार १४ सइकडो स्तुतिस्तोत्रवगेरह लघु अजित सांतिस्तोत्र प्रमुख बहुत प्रकरण चरित्र प्राकृतसंस्कृतरूप रचे वह। कीर्त्तिरूपपताका सकलपृथ्वीमंडलभारतीयजनोको मडनकरति है सोभित करति है विद्वानोंके मनोंको हर्षित कररहीहै ऐसें श्री-जिनवल्लभसूरिजी महाराजकाकिंचित्मात्र चरित्रलिखके जो पुन्य उपार्जनकरा उस्सैंभव्यजीवजिनमार्गमें प्रवृत्तिकरके अजरामर-स्थानपावो इति।

अत्राह कश्चित् साक्षेपं, जिनवल्लभायोपस्थापनोपसंपदाचार्य-पदेषु कतमत्, श्रीनवांगीवृत्तिकारकश्रीअभयदेवसूरिभिः समर्पि, अर्थात्, इहांपर आक्षेपसहित कोई तपोटमताश्रितावादी कहे है, श्रीनवांगवृत्तिकारकश्रीमद्अभयदेवसूरिजीमहाराजकेपट्टधर शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजीमहाराजको वडीदीक्षा १ उपसंपदा २ आचा-र्यपद ३ इन तीनवस्तुओंमेंसें नवांगटीकाकार श्रीमद् अभयदेव-सूरिजी महाराजनें किस बस्तुकों अर्पण किया,

उत्तर, श्रीखरतरगच्छकी पट्टावली ग्रंथमें लिखा है कि, तत्पट्टे त्रिचत्वारिंशत्तमः श्रीजिनवल्लभसूरिः स च प्रथमं कूर्च्चपुरगच्छीयचैत्यवासीजिनेश्वरसूरेः शिष्योऽभूत्, ततश्च एकदा दशवैकालिकं पठन् सन् औपधादिकं कुर्वाणं अतिप्रमादिनं स्वगुरुं विलोक्य उद्विग्नचित्तः संजातः तदनंतरं स्वगुरुमापृच्छ्य शुद्धक्रियानिधीनां श्रीअभयदेवसूरीणां पार्श्वेऽगात्, तदुपसंपदं गृहीत्वा तेषामेव शिष्यश्च संजात, क्रमेण सकलशास्त्राण्यऽधीत्य महाविद्वान् बभूव, तथा पिंडविशुद्धिप्रकरण, पडशीतिप्रकरण, प्रमुखाऽनेकशास्त्राणि कृतवान् तथा अष्टादशसहस्रप्रमितवागडश्राद्धान् प्रतिबोधितवान् तथा पुनश्चित्रकूटनगरे श्रीगुरुभिः चंडिका प्रतिबोधिता जीवहिंसात्याजिता धर्मप्रभावात्सधनीभूतसाधारणश्राद्धेन कारितस्य द्विसप्ततिजिनालयमंडितश्रीमहावीरस्वामीचैत्यस्य प्रतिष्ठा कृता तथा तत्रैव पुरे संवत् सागररसरुद्र (११६७) मिते श्रीअभयदेवसूरिवचनाद्देवभद्राचार्येण तेषां पदस्थापना कृता व्याख्या–श्रीमहावीरस्वामीकी संतानपाटपरंपरामें ४२ वें पाटे नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिमहाराज हुवे, उनके पाटपर ४३ वें श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज हुवे, प्रथमकूर्च्चपुर गच्छीयचैत्यवासीय श्रीजिनेश्वरसूरिजीके शिष्य थे, एक दिन दशवैकालिकसूत्रकोपढतेहुवे अतिप्रमादीऔपधादि करनेवाले अपने गुरु जिनेश्वरसूरिजीको देखकर उद्विग्नचित्त हुवे, उसके अनंतर अपने गुरुसें पूछकर शुद्धक्रियाकेनिधाननवांगटीकाकार श्रीमद् अभयदेवसूरिजी महाराजके पासगए, उनसें उपसंपदग्रहण करके उन्हींके याने नवांगटीकाकारश्रीअभयदेवसूरिजी महाराजके शिष्य

श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज हुवे, अनुक्रमे सकलशास्त्रोंको पढकर महाविद्वान् हुवे तथा पिंडविशुद्धिप्रकरण, संघपट्टक प्रकरण, धर्मव्यवस्था प्रकरण, षडशीति, सूक्ष्मार्थसार्धशतक प्रकरण, श्री-जिनवल्लभसूरिसमाचारी, इत्यादि अनेक प्रकरण शास्त्र किये, तथा अढारे हज्जार वागडदेशमें श्रावक नवीन जैनी किये, और चित्रकूट नगरमें श्रीजिनवल्लभसूरिजीमहाराजनें चण्डिकादेवीको प्रतिबोधी और जीवहिंसा छुडाई तथा धर्मप्रभावसें धनवाला हुवा साधारण नामका श्रावकने कराया हुवा ७२ जिनालयमंडित श्रीमहावीर स्वामीके चैत्य (मंदिर)की प्रतिष्ठा करी उसी चित्रकूटस्थानमे वि० संवत् ११६७में श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराजको आचार्यपद नवांग-टीकाकार श्रीमद् अभयदेवसूरिजी महाराज देवलोक होनेसे उनके वचनसें उन्होंके संतानीय श्रीदेवभद्राचार्य महाराजनें दिया, याने नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजके पाटपर मुख्य श्री-जिनवल्लभसूरिजी महाराजकों आचार्यपदमें स्थापित किने,

नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजने श्रीभगवतीसूत्रकी टीकाके अंतमें अपने पूर्वजोंकी पाटपरंपरा इसतरह लिखी है कि—

चांद्रे कुले सद्वनकक्षकल्पे,
महाद्रुमो धर्मफलप्रदानात्,
छायान्वितः शस्तविशालशाखः,
श्रीवर्द्धमानो मुनिनायकोऽभूत् ॥ १ ॥
तत्पुष्पौ विलसद्विहारसद्गंधसंपूर्णदिशौ समंतात्,
बभूवतुः शिष्यवरावऽनीचवृत्ति श्रुतज्ञानपरागवंतौ ॥ २ ॥

एकस्तयोः सूरिवरो जिनेश्वरः
ख्यातस्तथाऽन्यो भुवि बुद्धिसागरः ।
तयोर्विनेयेन विबुद्धिनाप्यलं
वृत्तिकृतैषाऽभयदेवसूरिणा ॥ ३ ॥
तयोरेव विनेयानां, तत्पदं चानुकुर्वतां,
श्रीमतां जिनचंद्राख्यसत्प्रभूणां नियोगतः ॥ ४ ॥
श्रीमज्जिनेश्वराचार्यशिष्याणां गुणशालिनां ।
जिनभद्रमुनींद्राणामस्माकं चांघ्रिसेविनः ॥ ५ ॥
यशश्चंद्रगणेर्गाढ, सहाय्यात्सिद्धिमागता,
परित्यक्ताऽन्यकृत्यस्य, युक्ताऽयुक्तविवेकिनः ॥ ६ ॥

व्याख्या–श्रीआचारंगसूयगडांगसूत्रकी टीकाके अंतमें–"इत्य
चार्यशीलांकविरचितायां श्रीआचारांगटीकायां द्वितीयश्रुतस्कंध
समाप्तः इत्यादि, टीकाकार श्रीशीलांकाचार्यमहाराजनें लिखा है
किन्तु श्रीमहावीर स्वामीसें लेकर अपनें सब पूर्वजोंके नाम वा गु
दादा गुरुके नाम तथा अपना निर्ग्रंथ गच्छ कोटिकगच्छादिनाम
विशेषण नहिं लिखा है, इसी तरह श्रीठाणांगआदिनवांगसूत्रटीका
अंतमें श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजनेभी श्रीमहावीरस्वामीसें लेक
अपने सब पूर्वजोंके नाम तथा निर्ग्रंथगच्छ, कोटिकगच्छ, वज्रशाख
चंद्रकुल, बृहत्गच्छ, खरतरगच्छ, ६ ये सब नाम या विशेषण प्राय
नहीं लिखें हैं, किंतु किसी अज्ञके प्रश्नके उत्तरमें कोई बुद्धिमा
संक्षेपप्रशंसासें अपने कुलका नाम तथा उसमें अपने पितादादेके
नाम जैसा बतलाता है वैसा नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी

महाराजनेभी बालजीवोंके कुतर्क वा उनकी अज्ञानताको दूर करनेके लिये उपर्युक्त श्लोकोंमें संक्षेपप्रशंसासें अपने कुलका नाम चंद्रकुल उसमें अपनें दादा गुरुका नाम श्रीवर्द्धमानसूरिजी, उनके शिष्य अपने गुरुका नाम श्रीजिनेश्वरसूरिजी, श्रीबुद्धिसागरसूरिजी, उनके लघुशिष्य श्रीअभयदेवसूरिजीनें यह श्रीभगवतीसूत्रकी टीका करी श्रीजिनेश्वरसूरिजीके तथा श्रीबुद्धिसागरसूरिजीके पाटे बडे शिष्य श्रीजिनचद्रसूरिजीकी आज्ञासें और श्रीजिनेश्वरसूरिजीके शिष्य श्रीजिनभद्रसूरिजीके तथा श्रीअभयदेवसूरिजीके चरणसेवक श्री-यशश्चंद्रगणिजीके सहायसें टीका करनेमे आई, यह श्रीअभयदेव-सूरिजी महाराजनें अपनी गुरुशिष्यपरम्परा स्पष्ट लिख बतलाई है, और यह पाटपरपरा खरतर गच्छवालोंकी है, उसमें नवांगटीका-कार श्रीअभयदेवसूरिजी हुवे, तपगच्छके श्रीमुनिसुंदरसूरिजी-महाराजविरचित श्रीउपदेशतरंगिणी ग्रंथमे-"नवांगटीकाकार श्री-अभयदेवसूरिजी उनके शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी प्रशिष्य श्रीजिन-दत्तसूरिजी इन प्रभाविक आचार्योंकी स्तुतिद्वारा खरतरगच्छवालोंकी गुरुशिष्यप्रशिष्यपाटपरपरा दिखलाई है कि—

व्याख्याताऽभयदेवसूरिरऽमलप्रज्ञो नवांग्या पुनः,
भव्यानां जिनदत्तसूरिरऽददद्दीक्षां सहस्रस्य तु ॥
प्रौढिं श्रीजिनवल्लभो गुरुरऽधीज्ज्ञानादिलक्ष्म्या पुनः,
ग्रंथान् श्रीतिलकश्चकार विविधान् चंद्रप्रभाचार्यवत् ॥ १ ॥

व्याख्या-निर्मलबुद्धिवाले श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजनें नव-अंगसूत्रोंकी टीका करी, उनके प्रशिष्य श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराजने

हजारों भव्यजीवोंको दीक्षा दी और चंद्रप्रभाचार्यकी तरह (श्री) शोभा वा लक्ष्मीके तिलकसमान नवांगटीकाकारके शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज ज्ञानादिलक्ष्मीसें प्रौढताको धारण करतेहूवे, विविध (अनेक) ग्रंथोंकों करते भये, और श्रीकल्पांतर्वाच्यामें तपगच्छके श्रीहेमहंससूरिजी महाराजने भिन्न भिन्न गच्छके प्रभाविक आचार्योंके अधिकारमें लिखा है कि, "खरतरगच्छे नवांगीवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरि थया, जिये शासनदेवीना वचनथी थंभणाग्रामे सेढीनदीनें उपकंठे जयतिहुअणबत्तीसी नवीन स्तवना करके श्रीपार्श्वनाथजीनी मूर्त्ति प्रगट कीधी धरणेन्द्र प्रत्यक्ष थयो शरीरतणो कोढरोग उपशमाव्यो नवअंगनीटीका कीधी तच्छिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी थया जिये निर्मल चारित्र सुविहित संवेगपक्ष धारण करी, अनेक ग्रंथतणो निर्माण कीधो तच्छिष्य युगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरि थया जिये उज्जैनी चित्तोडना मंदिरथी विद्यापोथी प्रगट कीधी देशावरोंमें विहारकरते रजपूतादिकनें प्रतिबोधीनें सवालाख जैनी श्रावक कीधा इत्यादि"—और श्रीसूक्ष्मार्थ सार्धशतक मूलग्रंथके अंतमें लिखा है कि—

जिणवल्लह गणिरइयं, सुहुमत्थवियारलवमिणं सुयणा,
निसुणंतु सुणंतु सयं, परे विबोहिंतु सोहिंतु ॥ १ ॥

श्रीचित्रवालगच्छके श्रीधनेश्वरसूरिजी महाराजविरचित श्रीसूक्ष्मार्थ सार्धशतक मूलग्रंथकी टीकामें लिखाहै कि—श्रीजिनवल्लभगणिनामकेन मतिमता सकलार्थसंग्राहिस्थानांगाद्यंगोपांग पंचाशकादिशास्त्रवृत्तिविधानावाप्तावदातकीर्त्तिसुधाधवलितधरामंडलानां श्रीमदऽभयदेवसूरीणां शिष्येण कर्मप्रकृत्यादिगंभीरशास्त्रेभ्यः समुद्धृत्य रचितमिदं॥

अर्थ—सकल अर्थके संग्रहवाले स्थानांगआदिनवअंगसूत्र और उपांगसूत्र पंचाशकआदिप्रकरणशास्त्र इन्होंकी टीकाकरणेसे प्राप्त स्वच्छ कीर्तिरूप सुधासे उज्ज्वल किया है पृथ्वीमंडल जिन्होंने ऐसे श्रीमद् अभयदेवसूरिजी महाराज उनके शिष्य मतिमान् श्रीजिनवल्लभगणि है नाम जिनका उन्होंने कर्मप्रकृति आदि गंभीर शास्त्रोंसे उद्धार करके यह सूक्ष्मार्थ सार्धशतक मूलप्रकरण ग्रंथ रचा है। इस तरह चित्रवालगच्छके श्रीधनेश्वरसूरिजीमहाराजने नवांगटीकाकार श्रीमद् अभयदेवसूरिजी उनके शिष्य श्रीजिनवल्लभ (गणि)सूरिजी, यह गुरु-शिष्यपरंपरा लिखदिखलाई है तो इन उपर्युक्त शास्त्रप्रमाणोंसे चंद्रकुलके श्रीवर्धमानसूरिजी उनके दो शिष्य श्रीजिनेश्वरसूरिजी तथा श्रीबुद्धिसागरसूरिजी, उनके वडे शिष्य श्रीजिनचन्द्रसूरिजी तथा लघुशिष्य नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी उनके शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी, उनके शिष्य श्रीजिनदत्तसूरिजी इत्यादि खरतरगच्छवालोंकी गुरु-शिष्यपरंपरामें नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराजने श्री-जिन-वल्लभसूरिजी महाराजको उपसंपद अर्पण करके अपने शिष्य किये, इत्यादि इसविषयमें उपर्युक्त शास्त्रप्रमाणोंको देखकर पूर्वपक्षी अपनी शंका दूर करें और निम्नलिखित प्रश्नोंके उत्तर शास्त्रप्रमाणोंसे प्रकाशित करें—

१ [प्रश्न] तुमने लिखा कि—"जिनवल्लभगणिजीने वडी दीक्षा उपसंपद इत्यादि" तो हमभी लिखतेहैं कि—"जगच्चंद्रसूरिजीको वडीदीक्षा १, उपसंपद २ और आचार्यपदवी ३ इन तिनमेंसे चि-

त्रवालगच्छके श्रीधनेश्वरसूरिजीके शिष्य श्रीभुवनचंद्रसूरिजी उनके शिष्य शुद्धसंयमी श्रीदेवभद्रगणिने कौनसी वस्तु दी ॥

२ [प्रश्न] श्रीजगच्चंद्रजी वड़ी दीक्षा उपसंपदादि ग्रहण करके किस गच्छके और किस नवीनशुद्धसंयमी गुरुके शिष्य हुए मानते हो

३ [प्रश्न] श्रीधर्मरत्नप्रकरण ग्रंथमें चित्रवालकगच्छके श्रीभुवनचंद्रसूरि उनके शिष्य श्रीदेवभद्रगणि उनके शिष्य श्रीजगच्चंद्रसूरि उनके शिष्य श्रीदेवेन्द्रसूरिने यह उपर्युक्त अपने पूर्वजोंकी गच्छनामसहित गुरु-शिष्यपरंपरा मानना वतलाया है अन्य नहीं तो श्रीदेवेन्द्रसूरिजी उक्तकथनसे विरुद्ध अपने मनसे वृहत्गच्छ तथा श्रीमणिरत्नसूरि उनके शिष्य श्रीजगच्चंद्रसूरि यह गुरु-शिष्यपरंपरा मानना क्यों वतलाते है ?

४ [प्रश्न] श्रीदेवेन्द्रसूरिजीके उक्तकथनसे विदित होता है कि श्रीजगच्चंद्रसूरिजीने उपसंपद दीक्षादि लेकर-चैत्रवालगच्छको तथा उस गच्छके श्रीदेवभद्रगणिजीको और उनके पूर्वजोंकी परंपराको स्वीकार किया और अपने प्रथम गुरु श्रीमणिरत्नसूरिजीको तथा उनके पूर्वजोंकी परंपराको और उनको गच्छको त्यागा, तो फिर पट्टावलीमें उन गुर्वादिकोंको क्यों मानते हो ?

५ [प्रश्न] श्रीसत्यविजयजीने और श्रीयशोविजयजीने तथा श्रीनेमसागरजीने वा उनके गुरूने यतिपनके शिथिलाचारको त्याग कर क्रियाउद्धार किया तो योग १, वड़ीदीक्षा २, उपसंपद ३, पन्यासपद ४, उपाध्याय पद ५, किस दूसरे शुद्धसंयमी गुरुके

पास ग्रहण किया और किसकिस दूसरे शुद्धसंयमी गुरुको धारण करके उनके शिष्य हुए ?

६ [प्रश्न] जिसके गच्छमें पूर्वकालमें दो, तीन, चार पीढ़ीपर कई जनोंने क्रियाउद्धार किया है और उनके शिष्यप्रशिष्यादि साधु साध्वी वर्तमानकालमें बहुत विचरते हुए नजर आते हैं उनके गच्छमें कोई वैराग्यभावसे यतिपनेके शिथिलाचारको त्यागके क्रियाउद्धार करके साधुकी रीतिसे विचरता है उसको दूसरेके पास उपसपद लेनेकी और दूसरेका शिष्य होनेकी आवश्यकता नहीं है ऐसी शास्त्रकारोंकी आज्ञा मानते हो तो उन क्रियाउद्धारकारक सुसाधुकी निरर्थक निंदा करनेवाले और बालजीवोंको भरमानेवाले, शास्त्रविरुद्ध वादी वा द्वेषी दुर्गतिके भाजन हो या नहीं ?

श्रीजिनेश्वरसूरये दुर्लभेन. राज्ञा पत्तने चैत्यवासिविजयेन खरतरबिरुदं सहस्रे समानामऽशीत्यधिके प्रादायि न वा? अर्थात् अणहिलपुरपाटणमें (सुविहित) शुद्धक्रियावंत साधुओंको नहीं रहने देनेके लिये मिथ्याअभिमानी श्रीजिनमंदिरोंमें रहनेवाले चैत्यवासी यतियोंका बडाभारी व्यर्थ कदाग्रह (जोर) को हटानेसे खरेतरे याने खरतरबिरुद श्रीजिनेश्वरसूरिजी (नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजीके गुरु) महाराजको संवत् १०८० में दुर्लभराजा तथा भीमराजाके समयमें मिला या नहीं ?

[उत्तर] इस विषयका निर्णय अनेक ग्रंथोंके प्रमाणोंसे श्रीप्रश्नोत्तरमंजरी ग्रंथमें लिख दिखलाया है अतः उस ग्रंथमें देखलेना। और इस विषयमें शंका रखनी सर्वथा अनुचित है। क्योंकि इस

अनाभोगको दूर करनेके लिये तपगच्छनायक श्रीसोमसुंदरसूरिजी-के शिष्य महोपाध्याय श्रीचारित्ररत्नगणिजीके शिष्य पंडित श्रीमत् सोमधर्मगणिजीमहाराजने स्वविरचित उपदेशसप्ततिका नामक महाप्रमाणिक ग्रंथमें लिखा है कि-

पुरा श्रीपत्तने राज्यं, कुर्वाणे भीमभूपतौ ।
अभूवन् भूतलाख्याताः, श्रीजिनेश्वरसूरयः ॥ १ ॥
सूरयोऽभयदेवाख्या, स्तेषांपदे दिदीपिरे ।
येभ्यः प्रतिष्ठामापन्नो, गच्छः खरतराऽभिधः ॥ २ ॥

भावार्थ-(पुरा) पूर्वकालमें याने संवत् १०८० में अणहिलपूर पाटणमें दुर्लभ तथा भीमराजाके राज्यके-समयमें चैत्यवासी यति-योंका सुविहित मुनियोंको शहरमें नहीं रहनेदेनेका वड़ाभारी व्यर्थ कदाग्रह (ज़ोर) को हटानेसे और अत्यंत शुद्धक्रिया आचा-रसे खरेतरे याने खरतरविरुद धारक श्रीजिनेश्वरसूरिजी महा-राज भूमंडलमें प्रख्यात हुए । उनके पाटे जयतिहुअणस्तोत्रसे श्री-स्थंभनपार्श्वनाथ प्रतिमा प्रगट कर्ता नवांग-टीकाकार श्रीअभय-देवसूरिजीमहाराज खरतरगच्छमें महाप्रभाविक हुए, जिनसे खरतर-नामकागच्छलोकमें-प्रतिष्ठाको प्राप्त हुआ । इत्यादि अधिकार लिखा है और श्रीप्रभावक चरित्रमेंभी लिखा है कि-

जिनेश्वरस्ततः सूरिरऽपरो बुद्धिसागरः ।
नामभ्यां विश्रुतौ पूज्यै, र्विहारेऽनुमतौ तदा ॥ १ ॥
ददे शिक्षेति तैः श्रीमत्, पत्तने चैत्यवासिभिः ।
विघ्नं सुविहितानां स्यात् तत्राऽवस्थानवारणात् ॥ २ ॥

पूर्वाभ्यामऽपनेतव्यं, शक्त्या बुद्ध्या च तत् किल ।
यदिदानींतने काले नास्ति प्राज्ञो भवत्समः ॥ ३ ॥
अनुशास्तिं प्रतीच्छाव इत्युक्त्वा गुर्जरावनौ ।
विहरंतौ शनैः श्रीमत् पत्तनं प्रापतुर्मुदा ॥ ४ ॥
सद्गीतार्थपरीवारौ तत्र भ्रांतौ गृहे गृहे ।
विशुद्धोपाश्रयाऽलाभात् वाचां सस्मरतुर्गुरोः ॥ ५ ॥
श्रीमान् दुर्लभराजाख्यस्तत्र चाऽऽसीद्विशांपतिः ।
गीःपतेरऽप्युपाध्यायो नीतिविक्रमशिक्षणात् ॥ ६ ॥

इत्यादि उपर्युक्त भावार्थवाला अधिकार बहुत लिखा है तथा श्रीखरतरगच्छकी पट्टावलीमें भी लिखा है कि तदा शास्त्राऽविरुद्धाऽऽचारदर्शनेन श्रीजिनेश्वरसूरिमुद्दिश्य अतिखरा एते इति दुर्लभराजा प्रोक्तं तत-एव खरतरविरुदं लब्धं तथा चैत्यवासिनो हि पराजयप्ररूपणात् कुवला इति नामध्येयं प्राप्ता एवं च सुविहितपक्षधारकाः श्रीजिनेश्वरसूरयो विक्रमतः १०८० वर्षे खरतरविरुदधारका जाताः ।

इसतरह अनेकशास्त्रोंमे यह उपर्युक्त अधिकार स्पष्ट लिखा है वास्ते श्रीसोमधर्मगणिजी महाराजकेउचित तथा शास्त्रसंमत सत्यवचनोंमे सर्वथा शंकारहित शुद्धश्रद्धाधारण करें और द्वेषीके शास्त्रविरुद्ध कपोलकल्पित महामिथ्या अनुचित वचनोंपर श्रद्धा नहीं रक्खे क्योंकि शास्त्रविरुद्ध मिथ्यावचनके कदाग्रहसे भवभ्रमण होता है नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजीके शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजीके समयमें खरतरगच्छकी मधुकरशाखा (पाटगादी) सं. ११६७ में अलग हुई है ॥

उसके स्थानमें द्वेपसे १२०४ में ऊष्ट्रिक मत निकला कहना, यहभी द्वेपीके प्रत्यक्ष द्वेपभाववाले महामिथ्या कपोलकल्पित अनुचित आक्षेपवचन है। १२०४ में श्रीजिनदत्तसूरिजीसे खरतरगच्छ खरतरविरुद्ध खरतरमतकी उत्पत्ति हुई इत्यादि—कल्पित अनेक मिथ्याप्रलापोंसे अपने झूठे कदाग्रह मंतव्यको सिद्ध करना कि नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज खरतरगच्छवालोंकी गुरुशिष्यपरंपरामें नहीं हुए। परंतु उपर्युक्त शास्त्रपाठोंसे प्रत्यक्ष विरुद्ध इन महामिथ्या प्रलापोंसे अपने झूठे मंतव्यका जय कदापि नहीं कर सकते हैं। वास्ते अपने पूर्वज श्रीसोमधर्मगणिजीके शास्त्रसंमत उपर्युक्त सत्यवचनोंसे सर्वथा विपरीत महाद्वेपीके कपोलकल्पित अनेक तरहके असत्यवचनोंसे पराजय फलको वेरवेर प्राप्त होना ठीक नहीं है। अस्तु यदि ऐसाही आग्रह है तो निम्नलिखित प्रश्नोंके उत्तर आग्रही सत्यप्रकाशित करें—

[१] अंचलगच्छकी पट्टावली आदिग्रंथोंमें लिखा है कि—संवत् १२८५ में श्रीजगच्चंद्रसूरिजीसे (गाढक्रियतापसः) याने तापलमत—तपोटमत—(चांडालिका तुल्या) पुष्पवती प्रभू पूजाका मत निकला और श्रीविजयदानसूरिजीके शिष्य धर्मसागर गणिसे संवत् १६१७ में तपौष्ट्रिकमतकी उत्पत्ति हुई श्रीहीर विजयसूरिजीसे संवत् १६२९ में गर्दभी मतोत्पत्ति हुई इसतरहके तपगच्छ के १८ नाम हेतुवृत्तांतसहित लिखे हैं उनको आग्रही लोग सत्य मानते हैं या मिथ्या ?

२ [प्रश्न] क्रमशश्चित्रवालकगच्छे—कविराजराजिनभसीव,

श्रीभुवनचंद्रसूरिर्गुरुरुदियाय प्रवरतेजाः ॥ १ ॥
तस्य विनेयः प्रशमैकमंदिर देवभद्रगणिपूज्यः, ।
शुचिसमयकनकनिकषो बभूव मुनिविदितभूरिगुणः ॥ २ ॥
तत्पादपद्मभृंगा निस्संगाश्चंगतुंगसंवेगाः ।
संजनितशुद्धबोद्धा जगति जगच्चद्रसूरिवराः ॥ ३ ॥
तेषामुभौ विनेयौ श्रीमान् देवेंद्रसूरिरित्याद्यः ।
श्रीविजयचंद्रसूरिर्द्वितीयकोऽद्वैतकीर्तिभरः ॥ ४ ॥
स्वाऽन्ययोरुपकाराय श्रीमद्देवेंद्रसूरिणा ।
धर्मरत्नस्य टीकेयं सुखबोधा विनिर्ममे ॥ ५ ॥

ये श्लोक श्रीजगचंद्रसूरिजीके मुख्यशिष्य श्रीदेवेंद्रसूरिजीने अपनी रची हुई श्रीधर्मरत्नप्रकरणकी टीका उसकी प्रशस्तिमे लिखे हैं इन श्लोकोंमे तथा श्रीजगचंद्रसूरिजीके शिष्य श्रीविजयचंद्रसूरिजी उनके शिष्य श्रीक्षेमचन्द्रकीर्तिसूरिजीने संवत् १३३२ मे श्रीबृहत्कल्पसूत्र—कीटीका रची है उसकी प्रशस्तिमेंभी चित्रवालगच्छमे श्रीधनेश्वरसूरिजी उनके शिष्य श्रीभुवनचन्द्रसूरिजी उनके शिष्य श्रीदेवभद्रगणिजी उनके शिष्य श्रीजगचंद्रसूरिजी इत्यादि लिखा है किंतु न तो अपना या श्रीजगचंद्रसूरिजीका बृहत्गच्छ ना तपगच्छ ऐसा नाम या विशेषण लिखा और न तो उनके गुरुका नाम—श्रीमणिरत्न—सूरिजी लिखा और न तो श्रीजगचंद्रसूरिजीने जावज्जीव आचाम्ल तप किया लिखा और न तो संवत् १२८५ मे अमुक राजाने तपगच्छनाम या तपगच्छ विरुद दिय लिखा तथा ३२ दिगंबरजैनाचार्योंको अमुक विवादमे जीतनेसे

अमुक नगरके अमुक राजाने श्रीजगच्चंद्रसूरिजीको हीरलाविरुद दिया यहभी नहीं लिखा है तथापि आप लोग अपनी तपगच्छकी पट्टावलीसे उक्त वातोंको मानते हो तो श्रीसमवायांगसूत्रकी टीकाके-अंतमें (श्रीमत्सूरिजिनेश्वरस्य जयिनो दर्प्पीयसां वाग्मिनां) इस श्रीअभयदेवसूरिजीके वाक्यसे तथा अनेक शास्त्रसंमत खरतर-गच्छकी पट्टावलीके लेखसे विदित होता है कि वाचाल और अहं-कारी चैत्यवासियोंको जीतनेसे खरेतरे याने खरतर विरुदधारक श्री-जिनेश्वरसूरिजी महाराज भूमंडलमें प्रख्यात हुए उनके शिष्य नवां-गटीकाकार श्रीस्थंभनपार्श्वनाथप्रतिमा प्रगटकर्ता श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज हुए जिनसे खरतर नामका गच्छ प्रतिष्ठा को प्राप्त हुवा इन अपने पूर्वजोंकी लिखी हुई सत्यवातोंको क्यों नहीं मानते हो ?

३ [प्रश्न] संवत् १२८५ वर्षके पहले रचे हुए किस ग्रंथमें श्री-जगच्चंद्रसूरिजीका बृहत् या वड़गच्छ वा वृद्धगच्छ लिखा है ?

४ [प्रश्न] धर्मसागरउपाध्यायके ग्रंथोंमें आगमविरुद्ध अनेक कदाग्रह वचनोंको तथा द्वेपसे परगच्छवालोंकी निंदारूप कपोल-कल्पित महामिथ्या कटु वचनोंको उनके गुर्वादिकने अपने रचे द्वादशजल्पपदआदिग्रंथोंमें जलशरणद्वारा मिथ्याठहराये हैं या नहीं ? और उन मिथ्यावचनोंको कोई माने वह गुरुआज्ञा लोपी हो ऐसा लिखा है या नहीं ? इन उपर्युक्त प्रश्नोंके उत्तर धर्मसागरादि-मताश्रिततपोटमतवाले सत्यप्रकाशित करें। इत्यलं किं वहुना ?

और यह ऊपरोक्त प्रश्नोत्तर और प्रश्न सप्रमाणसत्यतापूर्वक दिये हैं सो सद्गुणीवरोंके भक्तिनिमित्त गुणानुरागसे गुणानुरागी

भव्योंके उपगारार्थ और धर्मानुरागी भव्योंके सत्यधर्म आराधनके लिये विशिष्टगुणवान् आचार्योपर दुर्लभनोविजीनोंके करे हुवे आक्षेप दूर करनेके लिये भावदयापूर्वक देनेमें आया है, नतु द्वेषभावसे है और भगवानकी आज्ञानुसार साम्नाय सप्रमाण शास्त्रानुसार धर्माराधन करते हूवे सबहि गच्छवाले श्रीसर्वज्ञदेवकी आज्ञाके आराधक हैं और अक्षरप्रमाणविना पुरुषप्रमाणविना पूर्वापर संबंध शोच्याविना हरेक विषयमें द्वेषसें विना विचारके प्रमाणविना रागद्वेष करणेसे झूठा दूषण देनेसें और उत्सूत्र प्ररूपणाकरनेसें महान्कर्मबंध होवे है और धर्मार्थीयोंकों भवभीरुता रखनीचाहिये, नहिं तो इमतरह करणेसें महान् संसारवृद्धिहि होणाहै, और श्रीमहावीरस्वामी श्रीगौतमस्वामी श्रीसुधर्मास्वामी श्रीजंबूस्वामी प्रभवस्वामी आदि पाटपरंपरा क्रमसे ३८ मे पाटे श्रीउद्योतनसूरिजी हूवे इहांतक प्रायें सर्वगच्छोंकी पट्टावली एकसरखी है, और केवल श्रीपार्श्वनाथस्वामीके संततिवालोंकी पट्टावली सो अलग हि संभवे है श्रीउद्योतनसूरिजीसे ८४ गच्छोंकी स्थापना भई, यह स्थापना श्रीउद्योतनजीने अपणे स्वहस्तसे की है, और ८४ गच्छ इन गच्छोंमे सुविहित क्रियाकरणेवाले शुद्धप्ररूपक कंचनकामनीके त्यागी पृथग् पृथग् आचार्यादिक हूवे हैं और होतेहैं होवेंगे सो सर्व आचार्यादिक ८४ गच्छवाले धर्मार्थी गुणानुरागी भव्योंके मानने पूजने योग्य हैं, और श्रीउद्योतनसूरिजीके ज्येष्ठातेवासी श्रीवर्धमानसूरिजीकी संतति चली सो इस समयमी खरतर गच्छ नामसे प्रसिद्ध है और खरतर यह नाम १०८० मे श्री जिनेश्वरसूरिजीकु दुर्लभराजाके समक्ष पंचासरा देवलमें सभा समक्ष खुददुर्लभराजाने दिया है तवसें खरतर यह नाम श्रीवर्धमानसूरिजी

की शिष्यसंततीमें सर्वत्र जगतमे प्रसिद्ध भया, इसीतरे प्राकृत अभिधानराजेन्द्र शब्दकोशके भाग. चोथेमें पृष्ठ ७३३ खकारादि शब्दाधिकारमें खरतरशब्द लिखा है तद् यथा-खरतर-खरतर-पुं. वैक्रम संवत् १०८० श्रीपत्तने वादिनो जित्वा खरतरेत्याख्यं विरुदं प्राप्तेन जिनेश्वरसूरिणा प्रवर्त्तिते गच्छे, इति आत्मप्रबोध १४१

आसीत् तत्पादपंकजैकमधुकृत् श्रीवर्द्धमानाभिधः,
सूरिस्तस्य जिनेश्वराख्यगणभृज्जातो विनेयोत्तमः

यःप्रापत् शिवसिद्धिपंक्ति (संवत् १०८०) शरदि श्रीपत्तने वादिनो,जित्वा सद्विरुदं कृती खरतरेत्याख्यां नृपादेर्मुखात्

अष्ट० ३२ अष्टकवृत्तिः" और श्रीउद्योतनसूरिजीके दूसरे शिष्य श्रीसर्वदेवसूरिजीकी संतति चली सो वडगच्छके नामसें प्रसिद्ध भई, यह संतती प्रायें मुनिरत्न अथवा मणिरत्नसूरिजीपर्यंत चली एसा संभव है, और चित्रवालगच्छ स्वतंत्र अलगहि था ऐसा शास्त्रानुसारसें संभवे है, और इस गच्छकी पट्टावलीभी श्रीउद्योतनसूरिजी वगेरेसें संबंध रखनेवाली अलगहि मालूम होवे है, और सर्वदेवसूरिजीकी पाटपरंपरासें श्रीचित्रवालगच्छकी पट्टावलीकों संबंध रखनेसें कीसी तरहका प्रयोजन नहिं संभवे है और इस चित्रवाल गच्छके यह एकार्थपर्याय शब्द है, निग्रंथ, कोटिक, चंद्र, वनवासी सुविहित पक्ष, वडगच्छ, वृद्धगच्छ, तपगच्छेति वा वज्रशाखेति चंद्रकुलमिति वा यह सदृशनाम शाखावाले गच्छकों अपर गच्छके साथ मिलानेका श्रीमुनिसुंदरसूरिजीने स्वरचितपट्टावलीमें वहुतहि

अछी पालिसी की है, यह संस्कृत पट्टावली है १४ सो ६६ में वनाई गई हैं, परन्तु श्रीबृहत्कल्पकीटीकाकीअंतप्रशस्तिमें और धर्म रत्नप्रकरणकी टीकाकी अंतप्रशस्तिमें श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजीने तथा श्रीदेवेन्द्रसूरिजीने चित्रवालगच्छ अपणी पाटपरपरा बतलाई है, वहि परपरा सत्य है तद् यथा

श्रीजैनशासननभस्तलतिग्मरश्मिः
श्रीपद्मचंद्रकुलपद्मविकाशकारी,
स्वज्योतिरावृतदिगंवरडंवरोऽभूत्
श्रीमान् धनेश्वरगुरुः प्रथितः पृथिव्यां ॥ १ ॥
श्रीमच्चैत्रपुरेकमंडनमहावीरप्रतिष्ठाकृत-
स्तस्माच्चैत्रपुरप्रबोधतरणिः श्रीचैत्रगच्छोऽजनि ॥
तत्र श्रीभुवनेन्द्रसूरिसुगुरुर्भूभूषणं भासुरः,
ज्योतिःसद्गुणरत्नरोहणगिरिः कालक्रमेणाभवत् ॥२॥
तत्पादांबुजमंडनं समभवत् पक्षद्वयी शुद्धिमान्,
नीरक्षीरसदृशदूपणगुण त्यागग्रहैवाहतः ॥
कालुष्यं च जडोद्भवं परिहरन् दूरेण सन्मानसः,
स्थायी राजमरालवद् गणिवरः श्रीदेवभद्रः प्रभुः ॥ ३ ॥
शस्याः शिष्याः त्रयस्तत्पदसरसिरुहोत्संगशृंगारभृंगाः,
विध्वस्तानंगसंगाः सदसि सुविहितोत्तुगरंगा वभूवुः ॥
तत्राद्यः सचरित्रानुमतिकृतमतिः श्रीजगचंद्रसूरिः,
श्रीमद्देवेन्द्रसूरिः सरलतरलसच्चित्तवृत्तिर्द्वितीयः ॥ ४ ॥

तृतीयशिष्याः श्रुतवारिवार्द्धयः
परीषहाक्षोभ्यमनःसमाधयः,
जयन्ति पूज्या विजयेन्दुसूरयः
परोपकारादिगुणौघसूरयः ॥ ५ ॥

प्रौढं मन्मथपार्थिवं त्रिजगतीजैत्रं विजित्येयुषां,
येषां जैनपुरे पुरेण महसा प्रक्रांतकांतोत्सवे,
"स्थैर्यं मेरुरगाधतां च जलधिः सर्वंसहत्वं मही,
सोमः सौम्यमहर्पतिः किल महत्तेजोकृत प्राभृतं ॥ ६ ॥

वापं वापं प्रवचनवचोवीजराजीविनेय
क्षेत्रे क्षेत्रे सुपरिमिलिते शब्दशास्त्रादिसीरैः ॥
यैः क्षैत्रज्ञैः शुचिगुरुजनाम्नायवाक्सारणीभिः,
सिक्त्वा तेने सुजनहृदयानंदिसंज्ञानसत्यं ॥ ७ ॥

यैरप्रमत्तैः शुभमंत्रजापैर्वैत्तालमध्ये प्रकलिस्ववश्यं,
अतुल्यकल्याणमयोत्तमार्थसत्पूरुषः सत्वधनैरसाधि ॥ ८ ॥

किंबहुना !

ज्योत्स्ना मंजुलया यया धवलितं विश्वंतरामंडलं,
या निःशेषविशेषविज्ञजनताचेतश्चमत्कारिणी
"तस्यां श्रीविजयेन्दुसूरिसुगुरुर्निष्कृत्रिमायां गुणः,
श्रोणः स्याद्यदि वासवः स्तवकृतौ विज्ञः स चावां पतिः ९

तत्पाणिपंकजरजःपरिपूतशीर्षाः
शिष्यास्त्रयो दधति संप्रति गच्छभारं ॥
श्रीवज्रसेन इति सद्गुरुरादिमोऽभूत्
श्रीपद्मचंद्रसुगुरुस्तु ततो द्वितीयः ॥ १० ॥

तार्त्तीयीकस्तेषां, विनेयपरमाणुरऽनणुशास्त्रेऽस्मिन्,
श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिर्विनिर्ममे विवृतिकल्पमिति ॥ ११ ॥
श्रीविक्रमतः क्रामति, नयनाग्निगुणेन्दु १३३२ परिमिते वर्षे,
ज्येष्ठश्वेतदशम्यां, समर्थितैषा च हस्तार्के ॥ १२ ॥

और इस पाठसे यह विदित हूवा कि श्रीउद्योतनसूरिजी श्रीपद्मचंद्रसूरिजी चित्रवाल एमा गच्छका नाम उत्पन्न करनेवाले श्रीधनेश्वरसूरिजी उस चित्रवालगच्छमे कालक्रमसे श्रीभुवनेन्दुसूरिजी हूवे, और दोनुं पक्ष शुद्धजिनोंका एसे उनोंके शिष्य श्रीदेवभद्रसूरिजी इनोंके तीन शिष्य हूवे जिसमे पहिले श्रीजगचंद्रसूरिजी दूसरे श्रीदेवेन्द्रसूरिजी तीसरे श्रीविजयेन्दुसूरिजी और श्रीजगचद्रसूरिजीके पदमे श्रीदेवेन्द्रसूरिजी हूवे इनोंने श्राद्धदिनकृत्यवृत्ति धर्मरत्नप्रकरणवृत्ति वगेरे ग्रंथ बनाये है इन ग्रथोंकी अतप्रशस्तिमें इस तरह लिखा है।

क्रमशश्चित्रवालकगच्छे, कविराजराजिनभसीव,
श्रीभुवनचंद्रसूरिर्गुरुरुदियाय प्रवरतेजाः ॥ १ ॥

इत्यादि पूर्वोक्तप्रमाणे इहांपर जाणलेना इन श्रीदेवेन्द्रसूरिजीके शिष्य श्रीविद्यानंदसूरिजी वगेरे पाट चले है मो प्रसिद्ध है, और श्रीजगचंद्रसूरिजी दूसरे श्रीविजयेन्दुसूरिजी इनके तीन शिष्य पहिले श्रीवज्रसेनसूरिजी दूसरे श्रीपद्मचद्रसूरिजी तीसरे श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी इनोंनें श्रीबृहत्कल्पकी वृत्ति १३३२ में रचि है उसमे इसतरे लिखा है, और इनोकी पाटपरंपरा आगे इस तरह चली है, तद् यथा

श्रीदेवेन्द्रमुनीन्दोर्विद्यानन्दादयोऽभवन् शिष्याः,
लघुशाखायां तु गुरोर्विजयेन्दोश्च त्रयः पट्टे ॥ १४० ॥

श्रीवज्रसेनसूरिः, पद्मेन्दुः क्षेमकीर्तिसूरिश्च,
रदविश्वते १३३२ वर्षे, विक्रमतः कल्पटीकाकृत् ॥ १४१ ॥
अथ हेमकलशसूरिस्तत्पदमौलिर्गुरुर्यशोभद्रः,
रत्नाकरस्ततोपि च, शिष्यो रत्नप्रभश्चाऽस्य ॥ १४२ ॥
मुनिशेखरस्तदीयः, शिष्यः श्रीधर्मदेवसूरिरपि,
श्रीज्ञानचन्द्रसूरिः, सूरिः श्रीअभयसिंहश्च ॥ १४३ ॥
अथ हेमचंद्रसूरिर्जयतिलकाः सूरयस्ततो विदिताः,
जिनतिलकसूरयोऽपि च, सूरिर्माणिक्यनामा च ॥ १४४ ॥
कालानुभाववशतः शाखापार्थक्यचेतसो ह्यधुना,
सर्वे ते गुणवन्तो ददतां भद्राणि मुनिपतयः ॥ १४५ ॥

इस तरह श्रीजगच्चंद्रसूरिजीके दो शिष्योंसें दो शाखा निकली वृद्धशाखा और लघुशाखा पूर्वोक्तप्रमाणे इनका स्वरूप जाणना और श्रीमानूजगच्चंद्रसूरिजीको महातपाविरुद तथा चारित्र-स्वीकारविषयी यह ख्याति है, सो इस तरे श्रीभुवनचंद्रसूरिजीके वचनसें वस्तुपाल तेजपालकी उत्पत्ति भइ कालक्रमसें राजाके मंत्री भये वाद कुलक्रमागतमर्यादा साचवनेके लिये अपणे गच्छके उपाश्रयमे रहे हूवे श्रीदेवभद्रसूरिजीके सुशिष्य श्री जगच्चन्द्रसूरिजी शिथिलचर्यामें विद्यमान थे, उनको वन्दनादि करनेके लिये हर-हमेस वस्तुपालमंत्री स्वपरिवारसहित जातेथे इसतरह कितनाक दिन-के वाद कोइ एक दिनके समे भाविभावके वशसें अकस्मात् वन्दना निमित्त श्रीजगच्चंद्रसूरिजी के पास आया तिससमय श्रीजगच्चंद्रसू-रिजीके पासमें पण्यस्त्री वेठी थी इस तरहका अनुचित व्यवहार प्रत्य-

क्षदेखनेपरभी प्रणायानेअभाव नहिं करके शुद्धभावपूर्वक विधिसहित मुनिवेषमें रहे हूवे श्रीजगचंद्रसूरिजीकों वंदनापूर्वक पच्चक्खाण वगेरे करके गया और अपणेकार्यमें लगा वाद जातिकुलादिसंपन्न आचार्यके मनमें अत्यंतलज्जा अनुचितकार्यका महान् पश्चात्ताप-पूर्वक तीव्रसंवेगउत्पन्नहोनेसें यह विचारकिया हाइतिखेदे इस अनुचित मेरेकर्त्तव्यको धिग् हो अहो इति आश्चर्ये गुणहीन साध्वाचाररहितकेवलवेषयुक्त मेरेकुं यह महर्द्धिकशुद्धश्रावकवस्तुपालमंत्री निःशंकपणें भावपूर्वक वंदना करके स्वस्थानगया और कुछ कहा नहिं अहो यह मुनिवेषधर्मका हि प्रभाव है इत्यादिशुभ-भावना भावतां दृढसंवेगपूर्वक क्रियोद्धारविधिसें सर्वपरिग्रहका उसीवक्त त्याग करके सुविहितमुनिमार्ग अंगीकार किया अप्रतिबंध विहार करते हूवे तीर्थयात्रानिमित्तगिरनारगये वहां तीव्र-तपसंयमादिकरतेंरहेहैं तिसअवसरमें वहांपर यात्रानिमित्त वस्तु-पाल मंत्रीभी स्वपरिवारसहित आया तब वहां उग्रतप करते हूवे देखके शुद्ध मुनि जाणके स्वपरिवारसहित भावसें विधिपूर्वक वंदना करके आगे वेठे मुनि धर्मोपदेश देकर निवृत्तहूवे, वाद विनयसहित वस्तुपालने पूछा कि आपश्रीके गुरु कोण है और उनोंका क्या नाम है तब श्रीजगचंद्राचार्य बोले कि हेधर्मप्रिय श्रावक मेरा गुरुका नाम श्रीवस्तुपाल मंत्री है, यह सुणते हि मंत्री चमकके बोलाकि यह अनुचित क्या फरमातें हैं, आपश्री मुनिराज हैं औरमें तो आपका श्रावक हूं दास हु आपश्रीतो मेरे गुरु हैं और पूजनीक हैं वंदनीक हैं, में आपका गुरु कैसा, तब आचार्य बोले की

हेमंत्रिन्तेरेकारणसे मेरेकों प्रतिबोधहूवाहै, जिससें जिसको प्रति-
बोध होवे वह उसका गुरु होवे है, इस लिये मेने तेरेको कहा,
और इसकारणसें तें मेरागुरुहि है और व्यवहारसें मेरा श्रावक
है सुणके विशेषखुशीहूवा और आपहि मेरे शुद्धगुरु है इत्यादि
कहके विशेष वंदना पूर्वक व्रतादि धर्मस्वीकार करके उनीका भक्त-
शुद्ध श्रावकभया, इसकाविशेष चरित्र ग्रंथान्तरसें जानना शत्रुंजय
गिरनार आदि तीर्थोंकी यात्रा करते भये विहार क्रमसें मेवाड देशमें
गये वहां उदेपुरके पास नदीमें उष्णकालके मध्यान्हसमयनिरन्तर वे-
लुकी आतापना करते हूवेरहै तब कोइएकदिनके समय वहां नदीमें
अकस्मात् कार्यनिमित्त मंत्री सहित रांणेका आणाभया, वहां नदीमें
मृतकवत् निचेष्टित पडेहूवे आचार्य कों देखके रांणाजी बोलोकि
यह इससमय नदीमें कोंण अनाथ मृतक पडा हैं तब श्रावक मंत्री
रांणेजीको बोला कि हेमहाराज यह अनाथ मृतक नहिं किंतु यह
जैनी आचार्य है इससमय यहां नदीमें निरन्तर यह महात्मा
निस्पृही वेलुकी आतापना तपस्या करतें हैं घोरतपस्वी है शरीर-
की भी जिनोंको वांछा नहिं है एसे यहमाहात्मा है इत्यादि
गुणसुणके देखके श्रीमहाराणानें खुशी होके श्रीजगच्चंद्रा-
चार्य कों महातपाविरुदिया, इनोंके दोशिष्यभये एसी प्र-
सिद्धख्याति है, और इनोंके शिष्योंकी पाटपरंपरा शाखा कुल
गछ वगेरे ऊपर लिखा है और ऊपरोक्तप्रसिद्धख्याति और
ऊपरोक्त ग्रथोंसें तोविदितहोताहेकि श्रीमुनिसुंदरसूरिजीनें पूर्वापर
संबंध और ऊपरोक्त ग्रन्थोंका विचार या अवलोकन नहिं क-

रके उद्योतनसूरिजीसर्वदेवसूरिसेंलेकरश्रीसोमप्रभसूरि मणिरत्नसूरिजी पर्यंत दूसरे गच्छकी पट्टावली· श्रीमान्‌जगचंद्राचार्यके नामाक्षरसाथ लगायी है सो अयुक्त है और खरतरविरुद श्रीअभयदेवसूरिजी तच्छिष्यश्रीजिनवल्लभसूरिजी तच्छिष्यश्रीजिनदत्तसूरिजीके विषयमें विशेषसंकादूरकरनेकी इच्छा होवे सो भव्यमध्यस्थ आत्मार्थी भवभीरु प्राणियोंको १ प्रश्नोत्तरमंजरीका तीसरा भाग २ पर्युषणा-निर्णयउत्तरार्ध भाग ३ आत्मभ्रमोच्छेदनभानु ४ समाचारीशतकादि ग्रन्थोंको देखें और व्यर्थरागद्वेषके जरीये कदाग्रह करना उचित नहीं है, संसारवृद्धिके कारणोंसें विवेकी प्राणियोंको अपनावचाव-करना उचित है, संसारकी वृद्धिका मार्ग यह है,

मज्जं विसयकसाया, निद्दाविकहा य पंचमी भणिया,
एए पचप्पमाया, जीवं पाडंति संसारे ॥ १ ॥
पक्षापक्षीमें पचमरे, सो नर मतके हीन,
सारधर्मनिरपक्ष है, सबहीमें लयलीन ॥ २ ॥

निस्कलंक चान्द्रादिकुल निग्रन्थकोटिकादिगच्छ वज्रादिशाखा सुविहित आचार्योंपर आक्षेप निंदादि करणेंसें महान् कर्मबंध होता है, कर्मोंके मुलायजा नहीं है, और कर्मोंके उदय आनेपर पसतावेंगे, इसलिये कर्मबंधका विवेक रखना उचित है, इत्यलं विस्तरेण ॥ नमोऽस्तु भगवते शासनाधीश्वराय श्रीवर्द्धमानाय सर्वातिशयसमन्वि-ताय चतुष्षष्टिसुरेन्द्रपरिपूजिताय चतुर्मुखाय अष्टप्रातिहार्यसहिताय नमोनमः समस्तविभ्रमतमोभास्कराय श्रीगौतमगणधारिणे नमोऽस्तु

सारत्यै श्रीश्रुतज्ञानअधिष्ठायिकायै, नमोनमः श्रीमद्ज्ञानदातृभ्यो: श्रीगुरुभ्यः नमोऽस्तु श्रीश्रमणसंघभट्टारकाय नमोऽस्तु पितामह-चरित्रशोधिकायै परमसंविग्नसूरिमुख्यपंडितपरिषदे, इति श्रीमज्जिन-कीर्तिरत्नसूरिशाखायां तत्परंपरायां च क्रमात् वरीवर्त्यते, सच्चारित्र-चूडामणिर्भगवान् श्रीमज्जिनकृपाचंद्रसूरीश्वरः तच्छिष्यविद्वच्छिरो-मणिः श्रीमदानंदमुनिवर्यसंकलिते लोकभाषोपनिबद्धे तल्लघुगुरुभ्राता। उपाध्याय श्रीजयसागरगणिसंस्कारिते श्रीमद्युगप्रधानश्रीजिनद-त्तसूरीश्वरचरिते श्रीमद्अभयदेवसूरिश्रीजिनवल्लभसूरिचरित्राधिकार-वर्णनो नामचतुर्थःसर्गः साक्षेपपरिहारसहितः परिपूर्त्तिभावमगमत्।

॥ अथ पंचमसर्गः ॥

॥ तत्रादौ मंगलाचरणम् ॥ अर्हंतो ज्ञानभाजः सुरवरमहिताः सिद्धिसौधस्थसिद्धाः पंचाचारप्रवीणाः प्रगुणगणधराः पाठकाश्चाग-मानां ॥ लोके लोकेशवंद्या सकलयतिवराः साधुधर्माभिलीनाः पंचा-प्येते सदाप्ता विदधतु कुशलं विघ्ननाशं विधाय ॥ १ ॥ चिंतामणिः कल्पतरुर्वराकौ कुर्वन्तु भव्या किमु कामगव्याः ॥ प्रसीदतः श्री-जिनदत्तसूरेः, सर्वे पदाहस्तिपदे प्रविष्टाः ॥ २ ॥

इदानीं श्रीजिनदत्तसूरिविरचिताः सार्धशतकसंख्याका 'मूल-गाथाः' छायया च समन्विता वक्तुम् प्रारभंते ॥

गुणमणिरोहणगिरिणो, रिसहजिणिंदस्स पढमसुणिवइणो
सिरिउसभसेन गणहारिणोऽणहे पणिवयामि पओ ॥ १ ॥

अर्थः—गुणरूपमणिके रोहणाचलऐसे श्रीऋषभदेवस्वामी प्रथम-

तीर्थंकरके प्रथमगणधरश्रीऋषभसेनके निर्दोषचरणकमलोंमें नमस्कार करूं ॥ १ ॥

अजियाइजिणिंदाणं, जणियाणंदाणं पणय पाणीणं ।
थुणिमो दीणमणोहं, गणहारिणं गुणगणोहं ॥ २ ॥

अर्थः—अजितनाथस्वामीको आदिलेके उत्पन्नकिया है आनन्द जिन्होंने और तीनजगत्में रहनेवाले प्राणियोंने नमस्कार किया है जिन्होंको ऐसे तीर्थंकरोंके गणधरोंको अदीनमन ऐसा मैं नमस्कार करता हूं ॥ गुणगणके समूहकी स्तुति करता हूं ॥ २ ॥

सिरिवद्धमाण वरनाण, चरणदंसणमणीणं जलनिहिणो ।
तिहुवणपहुणो पडिहणिय, सत्तुणो सत्तमो सीसो ॥ ३ ॥

अर्थः—श्रीवर्धमान प्रधानज्ञानदर्शनचरित्रमणिके समुद्र तीन जगत्के स्वामी कर्मशत्रुवोंको हननेवाले ऐसे तीर्थंकरके प्रधान शिष्य ॥ ३ ॥

संखाईए विभवे साहिंतो जो समत्तसुयनाणी ।
छउमत्थेण न नज्जइ, एसो न हु केवली होइ ॥ ४ ॥

अर्थः—असंख्याता भव कहते हुए जो सम्पूर्ण श्रुतज्ञानी छद्मस्थ नहीं जानसके यह केवली नहीं है ऐसे ॥ ४ ॥

तंतिरियमणुयदाणवदेविंदनमंसियं महासत्तं ।
सिरिनाण सिरिनिहाणं गोयमगणहारिणं वंदे ॥ ५ ॥

अर्थः—तिरियञ्च, मनुष्य, भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषि, वैमानिक इन्द्रोंसे नमस्कृत महासात्विक शोभायुक्त ज्ञानादिलक्ष्मीके निधान ऐसे श्रीगौतमस्वामीको मैं नमस्कार करूं ॥ ५ ॥

जिनवद्धमानमुनिवइ, समप्पियासेसतित्थभारधरणेहिं ।
पडिहय पडिवक्खेणं, जयंम्मि धवलाइयं जेण ॥ ६ ॥

अर्थः—श्रीजिनवर्धमानस्वामीतीर्थंकरोंने अर्पणकिया सर्व तीर्थका भार धारण करनेवाले ऐसे प्रतिपक्षको दूर किया जिन्होंने जगत्में उज्ज्वल है यश जिन्होंका ऐसे ॥ ६ ॥

तं तिहुयणपणयपयारविंद, मुद्दामकामकरिसरहं ।
अनहं सुहम्मसामिं, पंचमट्ठाणट्ठियं वंदे ॥ ७ ॥

अर्थः—तीनजगत्करके नमस्कृतहै चरणकमलजिन्होंका बन्धन-रहितकामहस्तीके लिये सिंहसदृश निष्पाप दोषरहित पंचमगणधर सुधर्म. स्वामीको मैं नमस्कार करूं ॥ ७ ॥

तारुन्ने विहु नो तरलतार, अत्थि पिच्छरीहिं मणो ।
मणयं वि मुणिय पवयण, सब्भावं भामियं जस्स ॥ ८ ॥

अर्थः—योवनअवस्थामेंभी चंचलनेत्रवाली स्त्रियोंकरके जिनका मन थोडाभी चलितनहीं हुआ ऐसे जानाहैप्रवचनका सद्भाव जिन्होंने ऐसे ॥ ८ ॥

मणपरमोहि पमुहाणि, परमपुरपट्ठिएण जेण समं ।
समईक्कंताणि समत्त, भव्वजणजणिय सुक्खाणि ॥ ९ ॥

अर्थः—मनःपर्यव परमअवधिप्रमुख (१०) दसवस्तु मोक्षनगर प्राप्त भए जिन्होंके साथ चलीगई ऐसे समस्त भव्य प्राणियोंको उत्पन्न किया है सुख जिन्होंने ऐसे ॥ ९ ॥

तं जंबुनामनामं, सुहम्मगणहारिणो गुणसमिद्धं ।
सीसं सुसीसनिलयं, गणहरपयपालयं वंदे ॥ १० ॥

अर्थः-जम्बुस्वामी है नाम जिन्होंका ऐसे श्रीसुधर्मास्वामी गणधरके गुणसमृद्ध सुशिष्यस्थान ऐसेशिष्य गणधरपदके पालनेवालोंको नमस्कार करूं हूं ॥ १० ॥

संपत्तवरविवेयं, वयत्थिगिहिजंबुनामवयणाओ ।
पालिययुगपवरपयं, पभवायरियं सया वंदे ॥ ११ ॥

अर्थः-पाया है प्रधानविवेक जिन्होंने व्रतके अर्थी गृहस्थाश्रममें रहे जम्बुकुमरके वचनसे चारित्र लियाजिन्होंने ऐसे पालनकिया है युगप्रधानपदजिन्होंने ऐसे प्रभवस्वामी आचार्यको मैं निरंतर नमस्कार करूं हूं ॥ ११ ॥

कट्ठमहो परमो यं, तत्तं न मुणिज्जइत्ति सोऊणं ।
सज्जंभवंभवाओ, विरत्तचित्तं नमंसामि ॥ १२ ॥

अर्थः-अहो यह परमकष्ट है तत्व नहीं जानते हैं ऐसा सुनके शय्यंभवभट्ट ससारसे विरक्त भया है चित्त जिसका ऐसे चारित्र लेके युगप्रधानपद पाया जिन्होंने ऐसे शय्यंभवसूरिको मैं नमस्कार करता हूं ॥ १२ ॥

संजणियपणयभद्दं, जसभद्दं मुणिगणाहिवं सगुणं ।
संभूयसुहसंभूई, भायणं सूरि मणुस्सरिमो ॥ १३ ॥

अर्थः-उत्पन्न किया है नमस्कार करनेवालोंको कल्याण जिन्होंने ऐसे मुनिगणके स्वामी गुणसहित यशोभद्रसूरि और सुखसम्पदाके भाजन ऐसे संभूतिविजयआचार्यका स्मरण करूं ॥ १३ ॥

सुगुरुतरणीइ जिणसमय, सिंधुणो पारगामिणो सम्मं ।
सिरिभद्दवाहुगुरुणो हियए नामक्खराणि धरिमो ॥ १४ ॥

अर्थः—सुगुरुरूप जहाजसे जैनसिद्धान्तसमुद्रका पारगामी सम्यक् ऐसे श्रीभद्रवाहुगुरुका मनमें नामाक्षर धारण करें ॥ १४ ॥

सो कहं न थूलभद्दो लहइ सलाहं मुणीणं मज्झंमि ।
लीलाइ जेण हणिओ सरहेण व मयणमयराओ ॥१५॥

अर्थः—वह थूलभद्रस्वामी मुनिगणमें कैसें प्रशंसा नहीं पावे जिसने लीलासे कामरूप मृगराजको अष्टापद सदृश होके हना॥१५॥

कामपईवसिहाए, कोसाए वहुसिणेहभरिआए ।
घणदड्डजणपयंगाएवि, जीए जो झामिओ नेया ॥१६॥

अर्थः—कामप्रदीपशिखा ऐसी कोशावेश्या वहुतस्नेहसे भरीभई वहुतजनपतंगदग्धभए जिससे ऐसीमेंभी नहीं ही दग्धभए ऐसे ॥१६॥

जेण रविणेन विहिए, इह जणगिहे सप्पहं पयासंती ।
सययं सकज्जलग्गा, पहयपहा सा सणिद्धावि ॥ १७ ॥

अर्थः—जिसने सूर्यके जैसी यहां लोगोंके घरमें स्वप्रभाका प्रकाश निरंकिया तर स्वकार्यमें लगी भई स्नेहवतीकी प्रभा नष्ट करी॥१७॥

जेणासु साविया साविया, चरणकरणसहिएण ।
सपरेसिं हियकए सुकय जोगउ जोगयं दट्ठुं ॥ १८ ॥

अर्थः—जिसनेशीघ्रचरणकरणसहित स्वपरहितकेलिये सुकृतके योगसे योग्यतादेखके जिनवचनसुनाके श्राविका करी ॥ १८ ॥

तमपच्छिमं चउद्दस, पुव्वीणं चरणनाणसिरिसरणं ।
सिरिथूलभद्दसमणं, वंदे हं मत्तगय गमणं ॥ १९ ॥

अर्थः–वह अंतके चतुर्दशपूर्वधारी ज्ञान चरण लक्ष्मीके शरण ऐसे श्रीःस्थूलभद्राचार्यको मैं नमस्कार करूं ॥ कैसे हैं स्थूलभद्रसूरि हाथीके जैसा है गमन जिन्होंका ॥ १९ ॥

विहिया अणगूहियविरियसत्तिणा सत्तमेण संतुलणा ।
जेणाज्जमहागिरिणा, समईक्कंते वि जिणकप्पे ॥ २० ॥

अर्थः–की है अनवगुप्तवीर्यशक्तिकरके जिसउत्तम पुरुषने जिनकल्पीपना विच्छेद होनेसेभी तुलना जिन्होंने ऐसे श्रीआर्यमहागिरिः आचार्यको नमस्कार होवो ॥ २० ॥

तस्स कणिट्ठं लट्ठं, अज्जसुहत्थिं सुहात्थिजणपणयं।
अवहत्थियसंसारं, सारं सूरिं समणुसरिमो ॥ २१ ॥

अर्थः–आर्यमहागिरिके छोटे भ्राता आर्यसुहस्तिसूरिः सुखार्थीलोगोंने नमस्कार किया है जिन्होंको ऐसे दूरकिया है संसारजिन्होंने ऐसे श्रेष्ठ आचार्योंका हम संस्मरणकरें ॥ २१ ॥

अज्जसमुद्दं जणयं, सिरीइ वंदे समुद्दगंभीरं ।
तह अज्जमंगुसूरिं, अज्जसुधम्मं य धम्मरयं ॥ २२ ॥

अर्थः–आर्यसमुद्रसूरिः लक्ष्मीकाजनक और समुद्रके जैसा गंभीर तथा आर्यमंगुसूरिः और धर्ममेंरक्त ऐसे आर्यसुधर्मसूरिः को नमस्कार करें ॥ २२ ॥

मणवयणकायगुत्तं, तं वंदे भद्दगुत्तगणनाहं ।
जइ जिमइ जई जम्मंडलीए, पत्तो मरइ तेहिं समं ॥२३॥

अर्थः—मनवचनकायकरके गुप्त ऐसे भद्रगुप्तआचार्यको नमस्कार करूं, जो यतिः जिन्होंकी मंडलीमें प्राप्त भोजन करें उन्होंके साथ मरण पावे ऐसे ॥ २३ ॥

छम्मासिएण सुकयाणुभावओ जायजाइसरणेणं ।
परिणामओ णवज्जा, पव्वज्जा जेण पडिवन्ना ॥ २४ ॥

अर्थः—छै महीनोंका होनेसे सुकृतके प्रभावसे भया है जाति-स्मरण जिसको ऐसे परिणामसे निरवद्य प्रव्रज्या अंगीकार करी जिसने ऐसे ॥ २४ ॥

तुंववणासंनिवेसे, जाएणं नंदणेणं नंदाए ।
धणगिरिणो तणएणं, तिहुयणपभुपणयचरणेणं ॥२५॥

अर्थः—तुंववनसंनिवेशमें धनगिरिका पुत्र नंदासे उत्पन्न भया ऐसा तीनभवनके प्रभुके चरणोंमें नमस्कार किया है जिसनें ऐसे अथवा तीनभवनके लोगोंने नमस्कार किया है जिसको ऐसे ॥२५॥

इग्गारसंगपाढो, कओदढं जेण साहुणीहिंतो ।
तस्स झ्झायझ्झयणुज्जएण, वयसा छवरिसेणं ॥ २६ ॥

अर्थः—इग्यारहअंगकापाठ साध्वियोंसे सुनके दृढकंठकिया है जि-सने स्वाध्यायअध्ययनमें उद्यत ६ वर्षकी उमर जिसकी ऐसा ॥२६॥

सिरिअज्जसीहगिरिणा, गुरुणा विहिओ गुणाणुरागेणं ।
लहुओ वि जो गुरुकओ, नाणदाणओ सेससाहूणं ॥२७॥

अर्थः—श्रीआर्यसिंहगिरिगुरूने गुणानुरागकरनेसे लघुवयकोंभी पाठकपदमें स्थापित किया ऐसा और साधुओंको ज्ञानदेनेवाला ऐसा ॥ २७ ॥

उज्जेणीए गहिअव्वओ, लहुगुज्झगेहिं वरिसंते ।
जो सुजइत्ति निर्मितियपरिक्खिओ पत्ततव्विज्जो २८

अर्थः—गृहीतव्रतउज्जैनीनगरीमें यक्षोंनेवरसातके समयमें परीक्षाकरनेके लिये आमंत्रणकिया और शोभन यह यति है ऐसा जानके देवोंने विद्या दिया ॥ २८ ॥

उद्धरिया जेण पयाणुसारिणा गयणगामिणीविज्जा ।
सुमहापइन्नपुव्वाओ, सव्वहा पसमरसिएण ॥ २९ ॥

अर्थः—जिसने पदानुसारीसुमहाप्रकीर्णपूर्वसे सर्वथा समपरिणाममें रक्त ऐसोंने आकाशगामिनीविद्याका उद्धारकिया ऐसे ॥ २९ ॥

दुक्कालंमि दुवालस, वरसियंमि खीयमाणे संघंमि ।
विज्जावलेणमाणियमन्नं, जेणन्नक्खित्ताओ ॥ ३० ॥

अर्थः—बारहवर्षकेदुःकालमें संघखेदपातेहुएको विद्याके बलसे और ठिकानेसे अन्नप्राप्तकिया ऐसे ॥ ३० ॥

सुररायचायविब्भमभमुहाधणुमुक्कनयणवाणाए ।
कामग्गिसमीरणविहियपात्थणावयणघट्टणाए ॥ ३१ ॥

अर्थः—इन्द्रधनुषके जैसा भ्रूरूप धनुषसे फेंका है नेत्रप्रान्तरूप बाण जिसने ऐसी कामाग्नि वायुसेकरी है प्रार्थना वचनरूप चेष्टा जिसने ऐसी ॥ ३१ ॥

लट्ठंगपइट्ठाए, सिट्ठिसुयाए विसिट्ठचिट्ठाए ।
गुणगणसवणाओ जस्स, दंसणुक्कंट्ठियमणाए ॥ ३२ ॥

अर्थः—मनोहर है अंग जिसका ऐसी सेठकी पुत्रीने साध्वियोंके मुखसे गुणगणश्रवणसे जिसके दर्शनकीउत्कंठामनमें भई विशेष कामकी चेष्टावाली ऐसी ॥ ३२ ॥

निजजणयदिन्नधणकणयरयणरासीए जो ण कन्नाए ।
तुच्छमवि मुच्छिओ, जुव्वणे वि घनियं धनड्ढाए ॥ ३३ ॥

अर्थः—अपनेपितानेदिया धनसुवर्ण रत्नकीराशि ऐसी अत्यन्त-धनाढ्यकन्यापर यौवनअवस्थामेंभी मूर्च्छितनहीं भए ऐसे ॥ ३३ ॥

जलणगिहाओ माहेसरीए, कुसुमाणि जेण समाणित्ता ।
तिवन्नियाणं माणो, मलिओ संघुन्नई विहिया ॥ ३४ ॥

अर्थः—ज्वलनदेवका मंदिरवालाउद्यानमाहेश्वरीनगरीमेंथा वहांसे पुष्पलाके बौद्धोंका मान म्लान किया संघकीउन्नतिकरी ऐसे वज्रस्वामी ॥ ३४ ॥

दूरोसारिय वइरो, वयरसेननामेण जस्स बहुसीसो ।
सासो जाओ जाओ, जयम्मि जायाणुसारिगुणो ॥ ३५ ॥

अर्थः—दूर किया है वैर जिन्होंने ऐसे वज्रसेन नामके जिन्होंके शिष्य बहुतशिष्योंका परिवार है जिसके ऐसा जगत्में प्रसिद्ध गीतार्थानुसारि गुणजिन्होंका ॥ ३५ ॥

कुंकुणविसए सौपारयंमि, सुगुरुवएसओ जेण ।
कहिय सुभिक्खमविग्घ, विहिओ संघो गुणमहग्घो ३६

अर्थः-कोंकणदेशमें सोपारक नगरमें सुगुरुके उपदेशसे जिसने सुभिक्षकहके गुणसे पूजित संघकाविघ्नदूरकिया ऐसा ॥ ३६ ॥

तमहं दसपुव्वधरं, धम्मधुराधरणं सेससमविरियं ।
सिरिवइरसामिसूरिं, वंदे थिरियाइ मेरुगिरिं ॥ ३७ ॥

अर्थः-दशपूर्वके धारनेवाले धर्मरूपधराकेधारनेमें, शेषनागके जैसा है पराक्रमजिन्होंका ऐसे मेरुगिरीकेजैसानिश्चल ऐसे श्रीवज्रस्वामीआचार्यको मैं नमस्कार करूं ॥ ३७ ॥

निअजणणिवयणकरणंमि, उज्जओ दिट्ठिवायपढणत्थं ।
तोसलिपुत्तंतगओ ढड्डरसड्ढाणुमग्गेण ॥ ३८ ॥

अर्थः-अपनीमाताकावचनकरनेमेंउद्यत दृष्टिवादपढ़नेके लिये तोसलिपुत्रआचार्यके पासमें गया ढड्डरश्रावकके साथमें उपाश्रयमें प्रवेश किया ॥ ३८ ॥

सड्ढाणुसारओ विहिय, सयलमुणिवंदणो य जो गुरुणा।
अकयाणुवंदणो सावगस्स, जो एवमिह भणिओ ॥३९॥

अर्थः-श्रावकके अनुसारसे किया है सम्पूर्णमुनियोंकोवंदन जिसने और श्रावकको नही किया नमस्कार जिसने ऐसेको गुरुने इस प्रकारसे कहा ऐसा ॥ ३९ ॥

को धम्मगुरु तुम्हाणमित्थय तेणावि विणय पणएणं ।
गुरुणो निदंसिओ स ढड्डरसड्ढोवियड्ढेण ॥ ४० ॥

अर्थः-तुम्हारा धर्मगुरू यहांकौन है तब उसविचक्षणनेभी विनयसे नम्र होके, गुरूसे दिखाया यह ढड्डरश्रावक है ॥ ४० ॥

अकयगुरुणिण्हवेणं सूरिसयासंमि जिणमयं सोउ ।
परिवज्जिय सावज्जं पवज्जागिरिं समारूढो ॥ ४१ ॥

अर्थः—नहींकिया है गुरुकानिषेधजिसने ऐसा आचार्यके पास जैनधर्म सुनके सावद्यका त्यागकिया और प्रव्रज्यापर्वतपर आरूढ भया अर्थात् दीक्षा लिया ॥ ४१ ॥

सीहत्तानिक्खंतो सीहत्ताए य विहरिओ जोउ ।
साहियनवपुव्वसुओ संपत्तमहंत्त सूरिपओ ॥ ४२ ॥

अर्थः—सिंहके जैसा निकले औरसिंहके जैसाही विचरे और कुछ अधिक नव पूर्वपढ़े और आचार्यपद पाया ऐसे ॥ ४२ ॥

सुरवरपहु पुट्ठेणं महाविदेहंमि तित्थनाहेणं ।
कहिउ निगोयभूयाणं भासओ भारहे जोउ ॥ ४३ ॥

अर्थः—इन्द्रने प्रश्नकिया महाविदेहक्षेत्रमें तत्र सीमन्धरस्वामीने कहा निगोदके जीवोंका स्वरूपकहनेवाला भरतक्षेत्रमें इसवक्तमें आर्यरक्षित सूरिः है ॥ ४३ ॥

जस्स सयासे सक्को माहणरूवेण पुच्छए एवं ।
भयवं फुड मन्नेसि अ मह कित्तियमाउयं कहसु ॥४४॥

अर्थः—जिसके पासमें इन्द्रः ब्राह्मणके रूपसे इस प्रकारसे पूछे हे भगवन् आप प्रगट जानते हैं मेराआयुष्य कितनाहै सो कृपा-करके कहो ॥ ४४ ॥

सक्को भवन्ति भणिओ मुणिओ जेणाउयप्पमाणेण ।
पुट्ठेण निगोयाणं वि वण्णणा जेण निद्दिट्ठा ॥ ४५ ॥

अर्थः—इन्द्रसें भगवान्‌ने आयुःका प्रमाण कहा बाद इन्द्रने निगोदका सरूप पूछा आचार्यने कहा ॥ ४५ ॥

इरिसभरनिम्भरेणं हरिणा जो संत्थुओ महासत्तो ।
जेण सपयम्मि सूरी वि ठाविओ गुणिसु बहुमाणो ॥४६॥

अर्थः—हर्षके समूहसे निर्भर इन्द्रने जिस महासात्विककी स्तुति करी जिस आचार्यनें अपनें पदमें आचार्य स्थापा गुणीमें बहुमान होवे है ऐसा विचारके ऐसे ॥ ४६ ॥

रक्खियचरित्तरयणं पयडियजिणपवयणं ।
वंदामि अज्ज रक्खियमलक्खियंतं क्खमासमणं ॥४७॥

अर्थः—चारित्ररत्नकीरक्षाकियाहै जिसने जैनसिद्धान्तका प्रथम अनुयोग कियाजिसने प्रशान्तमनजिसका ऐसे गंभीर अंतःकरणजिन्होंका ऐसे क्षमाश्रमणआर्यरक्षितसूरिःको मैं नमस्कार करूं ॥४७॥

तयणुजुगपवरगुणिणो जाया जायाणं जे सिरोमणिणो ।
सन्नाणचरणगुणरयणजलहिणो पत्तसुयनिहिणो ॥४८॥

अर्थः—उन्होंके अनन्तर आचार्योंमें शिरोमणिः सद्ज्ञान चरणगुणरत्नोंकेसमुद्र, पायाहैश्रुतनिधानजिन्होंने ऐसे युगप्रधान आचार्य भए ॥ ४८ ॥

परवादिवारचारणवियरणे जे मियारिणो गुरुणो ।
ते सुगहिय नामाणो, सरणं मह हुंतु जइपहुणो ॥४९॥

अर्थः—परवादीरूपहाथियोंकोविदारण करनेमे सिंहके जैसे ऐसे जे गुरुः सुगृहीतनामधेय उनआचार्योंका मेरेको शरण होवो॥४९॥

पसमरइपमुहपयरण, पंचसया सक्कया कया जेहिं ।
पुव्वगयवायगाणं, तेसि मुमासाइ नामाणं ॥ ५० ॥

अर्थः—प्रसमरतिः प्रमुख पांचसै प्रकरण जिन्होंने बनाया पूर्वगत श्रुतके वाचक ऐसे उमास्वातिः नाम वाचकके ॥ ५० ॥

पडिहयपडिवक्खाणं, पयडीकयपणयपाणिसुक्खाणं ।
पणमामि पायपउमं, विहिणा विणएण निच्छउमं ॥ ५१ ॥

अर्थः—दूरकिया है प्रतिपक्षजिन्होंने और प्रगटकियाहै नमस्कारकरनेवालेप्राणियोंको सुख जिन्होंने ऐसे उमास्वातिः आचार्यके विधियुक्तविनयसे निष्कपटहोके चरणकमलोंको नमस्कार करूं ॥५१॥

जाइणिमहयरिया, वयणसवणओ पत्तपरमनिव्वेओ ।
भवकारागाराओ, साहंकाराओ नीहरिओ ॥ ५२ ॥

अर्थः—याकिनीमहत्तराके वचन श्रवण करनेसे पाया परमवैराग्यजिसने ऐसे भवकारागारसेही अपने अहंकारसे निकले ऐसे ॥ ५२ ॥

सुगुरुसमीवोवगओ, तदुत्तसुत्तोवएसओ जोउ ।
पडिवन्नसव्वविरइ, तत्तरुई तत्थ विहियरई ॥ ५३ ॥

अर्थः—गुरुके समीपमें गए गुरुका कहाहुआ सूत्रकाउपदेशसे तत्वरुचिमें भई प्रीतिजिन्होंकी ऐसे सर्वविरति अंगिकार किया ऐसे ॥ ५३ ॥

गुरुपारतंतउपगत, गणियओवि मुणिय जिणमयंसम्मं ।
मयरहिओ सपरहियं, काउमणो पयरणे कुणइ ॥ ५४ ॥

अर्थः—गुरूके आधीन होनेसे पाया है गणिपद जिसने सम्यक् जैनधर्मको मानके मदरहित स्वपरहितकरनेकामनजिन्होंका ऐसे प्रकरण करे ॥ ५४ ॥

चउदससयपयरणगो, विरुद्धदोस सया हयप्पओसो ।
हरिभद्दो हरियतमो, हरिव्व जाओ जुगप्पवरो ॥५५॥

अर्थः—चौदह सै चवालीस (१४४४) प्रकरणके कर्त्ता ऐसे रोका है दोषोंको जिन्होंने ऐसे अज्ञानरूपअंधकारको दूरकरनेवाले ऐसे युगप्रधान सूर्यके जैसे हरिभद्रसूरिः भए ॥ ५५ ॥

उदयंमि मिहरि भद्दं, सुदिट्ठिणो होइ मग्ग दंसणओ ।
तहहरिभद्दायरिए, भद्दायरियंमि उदयमिए ॥ ५६ ॥

अर्थः—सूर्यके उदयहोनेसे मार्गके देखनेसे सुदृष्टिवालोंको भद्र होवे है वैसा कल्याणके आचरणमें सूर्योदयके जैसे हरिभद्राचार्य भए ॥ ५६ ॥

जंपइ केई समनामा, भोलिया भोलियाइं जंपंति ।
चीयावासि दिक्खिओ, सिक्खिओ य गीयाण तं नमयं ५७

अर्थः—जिमहरिभद्रसूरिको कईक सदृश नामहोनेसे भ्रांतिसे चैत्यवासियोंमंदीक्षालिया शिक्षाग्रहणकिया उन्होंको नमस्कारकरो ऐसा मिथ्या कहते हैं ॥ ५७ ॥

१यकुसमयभडजिणभडसीसो सेसुव्व धरियतित्थधरो ।
जुगपवरजिणदत्तपट्टत्तसुत्ततत्तत्थरयणसिरो ॥ ५८ ॥

अर्थः—दूरकियाहै कुत्सितमत भट्ट जिनभट्टकाशिष्य शेपनागके

१ दूरसूरि०

जैसा जैनसिद्धान्तकोधारणकरनेवाला ऐसा युगप्रवर जिनदत्तआ-
चार्यनें कहा सूत्रोंका तत्त्वार्थरत्नोंको धारनेवाला ऐसा ॥ ५८ ॥

तं संकोइयकुसमयकोसिअकुलममलमुत्तमं वंदे ।
पणयजणदिन्नभद्दं, हरिभद्दपहुं पहासंतं ॥ ५९ ॥

अर्थः—वह संकोचित किया है कुसमय कौशिकका कुल जिसने और नमस्कार किया है जिन्होंने ऐसे लोगके कल्याण करनेवाले निर्मलउत्तम प्रकाश करते हुए ऐसे हरिभद्रआचार्योंको मैं नमस्कार करूं ॥ ५९ ॥

आयारवियारणवयण, चंदियादलियसयलसंतावो ।
सीलंको हरिणंकुव्व सोहइ कुमुयं वियासंतो ॥ ६० ॥

अर्थः-आचारविचारणरूपवचनचन्द्रिकासे दूर किया है सम्पूर्ण संताप जिन्होंने ऐसे कुमुदको विकसित कर्ता चंद्रके जैसा सीलंका-चार्य शोभते हैं ॥ ६० ॥

तयनंतरं दुत्तरभवसमुद्दमज्जंतभव्वसत्ताणं ।
पोयाणुव्व सूरीणं, जुगपवराणं पणिवयामि ॥ ६१ ॥

अर्थः—तदनंतर दुस्तरभवसमुद्रमें डूबतेहुएभव्यप्राणियोंको तार-नेमें जहाजके जैसे युगप्रधान आचार्योंको नमस्कार करूं ॥ ६१ ॥

गयरागरोसदेवो, देवायरिओ य नेमिचंद गुरु ।
उज्जोयणसूरिगुरु, गुणोह गुरुपारतंतगओ ॥ ६२ ॥

अर्थः—गतरागद्वेषदेवके जैसे देवाचार्यनेमिचंद्रसूरि और उद्यो-तनसूरि गुरुपारतंत्रगत गुणोके समूह ऐसे ॥ ६२ ॥

सिरिवद्धमाणसूरी, पवद्धमाणाइरित्तगुण निलओ ।
चियवासमसंगयमवगमित्तु वसहिहिं जोवसउ ॥६३॥

अर्थः-श्रीवर्धमानसूरि प्रवर्धमानविशेपगुणकास्थान चैत्यवासको असंगत जानके वस्तीवासअंगीकार किया अर्थात् श्रीउद्योतनसूरि-जीकेपास चारित्र उपसम्पत किया ॥ ६३ ॥

तेसिं य पयपउमसेवारसिओ भमरुव्व स्वव्व भमरहिओ।
ससमयपरसमयपयत्थसत्थवित्थारणसमत्था ॥ ६४ ॥

अर्थः-श्रीवर्धमानसूरिके चर्णकमलकी सेवामे रसिक भ्रमरसदृश सर्वभ्रमरहित स्वसमयपरसमयपदार्थसमूहके विस्तारणमें समर्थ ऐसे ॥ ६४ ॥

अणहिल्लवाडए नाडइव्व, दंसिय सुप्पत्त संदोहे।
पउरपए वहुकविदूसगे य, सन्नायगाणुगए ॥ ६५ ॥

अर्थः-अणहिल्लपाटननगरमें नाटकसदृश दिखाया सत्पात्रका समूहजिन्होंने वहुतपद और वहुतविदूपक जिसमे ऐसा सत् नायक अनुगत रहतेभी ॥ ६५ ॥

सद्धियदुल्लहराए, सरसइ अंकोवसोहिए सुहए ।
मज्झे रायसहं पविसिऊण, लोयागमाणुमय ॥ ६६ ॥

अर्थः-श्रीमंतदुर्लभराजा मध्यस्थरहते सरस्वती अंकउपशोभित सुख देनेवाली राजसभामें प्रवेशकरके लोक आगम, अनुमत ॥६६॥

नामायरिएहिं समं, करिय वियारं वियाररहिएहिं ।
वसईहिं निवासो साहूणं, ठाविओ ठाविओ अप्पा ॥६७॥

अर्थः–विचाररहित ऐसे नामसे आचार्य ऐसे शूराचार्यादिकोंके साथमें विचारकरके साधुओंके वस्तिवास स्थापितकिया वहुतजीवोंको सन्मार्गमें स्थापा ॥ ६७ ॥

परिहरिय गुरुक्कमागयवरवत्ताए य गुज्जरत्ताए।
वसहि निवासो जेहिं फुडी कओ गुज्जरत्ताए ॥ ६८ ॥

अर्थ–कितनेकसमयमें गुरुक्रमसेआयाहुआ प्रधानवर्त्ताव जिसगुर्जरदेशमें चैत्यवासका परिहारकरके वस्तीनिवास जिन्होंने प्रगटकिया ऐसे जिनेश्वरसूरिआचार्य और ॥६८॥

तिजगयगयजीववंधूणं, य वंधु वुद्धिसागरसूरी।
कयवायरणो वि न जो, विवायरणकायरो जाओ ॥६९॥

अर्थः–तीनजगत्के जीवोंकावंधु ऐसा जो वुद्धिसागरसूरि शास्त्रार्थरूप संग्राम किया है जिसने ऐसेभी विवादरणमें कायर न भए ऐसे ॥ ६९ ॥

सुगुणजणजणियभद्दो, सूरि जस्स विणेयगणप्पढमो,
सपरेसिं हियासुरसुंदरी कहा जेण परिकहिया ॥ ७० ॥

अर्थः–सद्गुणी लोगोंको कल्याण किया है जिन्होंनें ऐसे जिन्होंके शिष्यगणोंमें प्रथम शिष्य अपने और स्वपरकेहितकरनेवाली ऐसी सुरसुंदरी कथा जिसने रची ऐसे जिनभद्रसूरिः (गुणभद्र) ॥७०॥

कुमयं वियासमाणो विहडावियकुमयचक्कवायगणो।
उदयंमिओ जस्सीसो, जयंमि चंदुव्व जिणचंदो ॥ ७१ ॥

अर्थः–भव्य कुमुदको विकासमानकर्ता कुत्सितमतरूप चक्रवाकके

समूहको वियोगकर्ता उदयप्राप्तभये श्रीजिनेश्वरसूरिके शिष्य जगत्में चन्द्रके जैसे श्रीजिनचंद्रसूरिको मै नमस्कार करूं ॥ ७१ ॥

संवेगरंगसाला विसालसालोवमा कया जेण।
रागाइवेरि भयभीय भवजण रक्खणनिमित्तं ॥७२॥

अर्थः-श्रीः जिनचन्द्रसूरिने विशालसालाके जैसी उपमा ऐसी संवेगरंगशालानामकी ग्रंथपद्धति रची रागादिवैरियोंके भयसे डरे-हुए भव्य प्राणियोंकी रक्षाके निमित्त ऐसे ॥ ७२ ॥

कयसिवसुहत्थि सेवो, भयदेवो वगयसमय पयक्खेवो ।
जस्सीसो विहियनवंगवित्ति जलधोय जललेवा ॥ ७३ ॥

अर्थः-किया शिवसुखके अर्थियोंने सेवनजिन्होंका ऐसे अभयदेव-सूरि, जाना है सिद्धान्तका परमार्थजिन्होंने ऐसे नवाङ्गवृत्तिरूप जलसे धोया है अज्ञानरूप लेप जिन्होंने ॥ ७३ ॥

जेण नवंगविवरणं, विहियं विहिणा समं सिवसिरीए ।
काउं नवंगविचरणं, विहियमुज्झियभवजुवइसंजोगं ॥७४॥

अर्थः-जिसअभयदेवआचार्यने ठाणङ्गादि नवअङ्गका विवरण किया विधिः और शिवलक्ष्मीके साथ नवाङ्गका विचार करनेके लिए भवयुवतिके संयोगको छोड़के शिवस्त्रीका आश्रय किया जिन्होंने ॥ ७४ ॥

जेहिं बहुसीसेहिं, शिवपुरपहपत्थियाणं भव्वाणं ।
सरलो सरणी समगं कहिओ ते जेण जन्ति तयं ॥७५॥

अर्थः-बहुत शिष्योंकरके सहित ऐसे श्रीअभयदेवसूरिः महा-

राजने मोक्षनगरके मार्गमें चलेहुए भव्योंको शरलमार्ग कहा जिससे वह सुखसे जावें ॥ ७५ ॥

गुणकणमवि परिकहिउं, न सक्कई सक्कई वि जेसिं फुडं ।
तेसिं जिणेसरसूरीणं, चरण सरणं पवज्जामि ॥ ७६ ॥

अर्थः—जिन्होंके सामने अच्छाकवि भी गुणका कण कहनेको नहीं समर्थ होवे है उन जिनेश्वरसूरि के चर्णोंका शरण मैं अंगीकार करूं ॥ ७६ ॥

युगपवरागमजिणचंदसूरि विहिकहिय सूरि मंतपयो ।
सूरी असोगचंदो, महमणकुमुयं विकासेउ ॥ ७७ ॥

अर्थः—युगप्रवर आगम जिन्होंका ऐसे श्रीजिनचंदसूरि आचार्य-का जो सूरिमंत्रपद उसका विधि कहा जिन्होंने ऐसे अशोकचंद-सूरिः मेरे मनकुमुदको विकासित करो ॥ ७७ ॥

कहिय गुरु धम्मदेवो, धम्मदेवो गुरुउवज्झाओअ ।
मज्झावि तेसिं य दुरंत दुहहरो सो लहु होउ ॥ ७८ ॥

अर्थः—कहा गुरुधर्मदेव वेंहि गुरुः उपाध्यायपदधारक ऐसे मेरेभी दुरन्त दुःखके हरनेवाले ऐसे उनके प्रसादसे शीघ्रकल्याणकी प्राप्तिः होवे ॥ ७८ ॥

तस्स विणेओ निद्दलिअगुरुगओ जो हरिव्व हरिसीहो ।
मज्झगुरु गणि पवरो, सो महमणवंच्छियं कुणउ ॥ ७९ ॥

अर्थः—धर्मदेव उपाध्यायके शिष्य कुत्सितमतरूप ब्रडे हाथीको दलन करनेमें सिंह जैसे हरिसिंह आचार्य मेरेगुरुः गणिप्रवर वह मेरेको मनोवांछित देवो ॥ ७९ ॥

तेसिं जिट्ठो भाया, भायाणं कारणं सुसीसाणं ।
गणि सव्वदेव नामो, न नामिओ केणइ हट्ठेण ॥ ८० ॥

अर्थः-उन्होंका वड़ाभाई सुशिष्योंके भाग्यका कारण सर्वदेव नाम उपाध्याय जिन्होंको किसीने वादमे नहीं नमाया बलात्कारसे ॥ ८० ॥

सूर ससिणो वि न समा, जेसिं जं ते कुणंति अत्थमणं ।
नक्खत्त गया मेसं मीणं मयरं विभुंजंते ॥ ८१ ॥

अर्थः-सूर्य चन्द्रमाभी जिन्होंके समान नहीं है कारण अस्त होते है नक्षत्र गतिमें मेष, मीन, मकर राशिको भोगवते है ॥८१॥

जेसिं पसाएण मए, मएण परिवज्जियं पयं परमं ।
निम्मलपत्तं पत्तं, सुहसत्त समुन्नइ निमित्तं ॥ ८२ ॥

अर्थः-जिन्होंके प्रसादसे मैंने मदरहित परमपद निर्मल पात्रपना पाया शुभ प्राणियोंकी उन्नतिका कारण ॥ ८२ ॥

तेसिं नमो पायाणं, पायाणं जेहिं रक्खिया अह्मे ।
सिरिसूरिदेवभद्दाणं, मायरं दिन्नभद्दाणं ॥ ८३ ॥

अर्थः-उन्होंके चरणोंमें नमस्कार होवे जिन्होंने हमको संसारसे बचाया श्रीदेवभद्रसूरिको आदरसहित नमस्कार करूँ कैसे हैं देवभद्रसूरि किया है कल्याण जिन्होंने ॥ ८३ ॥

सूरिपदं दिन्न मसोगचंदसूरीहिं चत्तभूरीहिं ।
तेसिं पय मह पहुणो, दिन्नं जिणवल्लहस्स पुणो ॥ ८४ ॥

अर्थः-अशोकचदसूरिने दिया है आचार्यपद बहुतसोंको छोडके

जिन्होंने ऐसे मेरे प्रभुः जिनवल्लभगणिको आचार्यपद दिया ॥८४॥

अत्थगिरि मुवगर्यसिं, जिणजुगपवरागमेसु कालवसा।
सूरमिव दिट्ठिहरेण विलसियं मोह संतमया ॥ ८५ ॥

अर्थः—जिनयुगप्रवरागम कालवशसे सूर्यके जैसा अस्त होगया दृष्टिको हरनेवाला मोह अंधकार फैला ऐसे ॥ ८५ ॥

संसारचारगाओ, निव्वण्णेहिं पि भव्व जीवेहिं।
इच्छंतेहिमवि मुक्खं, दीसइ मुक्खारिहो न पहो ॥ ८६

अर्थः—संसारबन्दीखानेसे निर्वेदपाए भव्यजीव मोक्षमार्गकी इच्छा कर्तेहुओंको मोक्षमार्ग देखनेमें नहीं आता है ॥ ८६ ॥

फुरियं नक्खत्तेहिं महा गहेहिं तओ समुल्लसियं।
वुड्ढीरयणि परेण वि, पाविआ पत्तवसरेण ॥ ८७ ॥

अर्थः—नक्षत्र स्फुरित हुआ महाग्रह उल्लसित भया इस अवसरमें रजनी करनेभी वृद्धिः पाई ऐसा ॥ ८७ ॥

पासत्थकोसिअकुलं, पयडीहोऊण हंतु मारद्धं।
काएकाएग्र विघाए भावि भयं जं ण तं गणइ ॥ ८८ ॥

अर्थः—पासत्थ रूप चैत्यवासी कौसिककुल प्रत्यक्ष होके हनना प्रारंभ किया छकायरूप काकोंके विघातमें भावीभय नहीं गिने ऐसे ॥ ८८ ॥

जाग्गंति जणा थोवा, सपरेहिं निव्वुइं समिच्छंत्ता।
परमात्थ रक्खणत्थं सद्दं सद्दस्स मेलंता ॥ ८९ ॥

अर्थः—अपने और परके सुखकीइच्छा करतेभए लोग थोड़े

जागते हैं परमार्थरक्षणके लिये शब्दको शब्दसेमिलाते हुए ऐसे ॥ ८९ ॥

नाणासत्थाणि धरंतितेओ, जेहिं वियारिऊण परं ।
मुसणत्थ मागयं, परि हरंति निज्जीव मिह काउं ॥९०॥

अर्थः—नानाप्रकारके शास्त्रोंको धारते हैं वे तो जिन्होंसे विचारके परको मोपणके अर्थ आया हुआ उनोंको निर्जीव करके छोडते हैं ऐसे ॥ ९० ॥

अविणासिय जीवं ते, धरंति धम्मं सुवंसन्निप्पण्णं, ।
सुक्खस्स कारणं भय निवारणं पत्त निव्वाणं ॥ ९१ ॥

अर्थः—अविनाशि जीव सद्वंशमे निष्पन्न हुए ऐसे वह धर्मको धारण करे हैं भय निवारण सुखका कारण निर्वाण पाया जिन्होंने ऐसे ॥ ९१ ॥

धरिय किवाणा केई, सपरे रक्खंति सुगुरु फरयजुआ।
पासत्थ चोर विसरो, वियार भीयो न ते मुसई ॥९२॥

अर्थः—केईक धारण किया है दया कृपारूप तलवार जिन्होंने और सद्गुरूरूप ढाल युक्त ऐसे स्वपरकी रक्षा करते हैं पार्श्वस्थ-रूप चौरोंका फैलाव विचारसे डराहुआ वह नहीं लूट सकते हैं ९२

मग्गुमग्गा न्नज्जंति, नेय विरलो जणो त्थि मग्गण्णू।
थोवा तदुत्तमग्गे, लग्गंति न वीससंति घणा ॥ ९३ ॥

अर्थः—मार्ग उन्मार्गको बहुत लोग नहीं जानते हैं कोई विरला

मनुष्य जानता है उस कथितमार्गमें थोड़े लोग लगे हैं वहुत लोग विश्वास नहीं करते हैं ॥ ९३ ॥

अन्ने अण्णत्थीहिं सम्मं, सिवपहमपिच्छरेहिंपि ।
सत्था सिवत्थिणो चालियावि, पडि पडिया भवारण्णे ९४

अर्थः—और केचित् अन्यार्थियोंके साथ शिवपथकी अपेक्षा करते हुएभी शिवार्थी सार्थ चलाहुआभी भवारण्यमें गिरे ॥९४॥

परमत्थ सत्थ रहिएसु, भव सत्थेसु मोह निद्दाए ।
सुत्तेसु मुसिज्जंतेसु, पोढ पासत्थ चोरेहिं ॥ ९५ ॥

अर्थः—परमार्थ शस्त्ररहित भव्य प्राणीका साथ मोहनिद्रा करके सोते भएको प्रौढ़ पार्श्वस्थ चौरोंने लूटेभए ऐसे ॥ ९५ ॥

असमंजसमेआरिस, मवलोइअ जेण जाय करुणेण ।
एसा जिणाणमाणा, सुमरिया सायरं तइआ ॥ ९६ ॥

अर्थः—पूर्वोक्त ऐसा असमंजस देखके उत्पन्नभई हैकरुणा जिसको ऐसा उसवक्तमें आदरसहित तीर्थंकरोंकी आज्ञाका स्मरण कराया जिन्होंने ऐसे ॥ ९६ ॥

सुहसीलतेण गहिए, भव पल्लितेण जगडि अमणाहे ।
जो कुणइ कूजियत्तं, सोवण्णं कुणई संघस्स ॥ ९७ ॥

अर्थः—सुखशील चोरोंने ग्रहणकिया भवरूपपल्लीके मध्यमें अनाथ प्राणियोंको रोकके रक्खे जिसमें ऐसा जो पुकार करे वह संघमें प्रशंसा पावे ॥ ९७ ॥

तित्थयर रायाणो, आयरिआरक्खिअव्व तेहिं कया ।
पासत्थ पमुह चोरो, वरुद्ध घण भव्व सत्थाणं ॥ ९८ ॥

अर्थः—तीर्थंकरराजाने आचार्यको आरक्षकके जैसाकिया पासत्था प्रमुख चौरोंसे रोकाहुआ है बहुत भव्य समूह ऐसा ॥ ९८ ॥

सिद्धिपुर पत्थियाणं, रक्खट्टायरिअवयणओ सेसा।
अहिसेअवायणा चारिय, साहुणो रक्खगा तेसिं ॥९९॥

अर्थः—मोक्षनगरकोचले उन्होंकी रक्षाकेवास्ते आचार्यके वचनसे अभिषेक किया है जिन्होंका ऐसे वाचनाचार्य साधु उन्होंका रक्षक ऐसे ॥ ९९ ॥

ता तित्थयराणाए, मयेवि ये हुंति रक्खणिज्जाओ।
इय मुणिय वीरवित्तिं, पडिवज्जिय सुगुरु संनाहं १००

अर्थः—यह तीर्थंकरकी आज्ञा करके मेरेभी ये रक्षा करने योग्य होवे है ऐसा जानके श्रीवीरकीवृत्ति जानके अथवा वृत्तिको अंगीकार करके सुद्गुरुरूपसन्नाह धारण किया अथवा सुगुरुने सन्नाह धारण किया ॥ १०० ॥

करियक्खमा फलिअं धरिअ मक्खयं कयदुरुत्त सर रक्खं।
तिहुअण सिद्धं तं जं, सिद्धंतमासिं समुक्खविय॥ १०१॥

अर्थः—अक्षत क्षमारूप ढाल करके किया है दुरुक्त शरका रक्षण जिसने ऐसा तूणीरको धारके तीन भवनमें सिद्ध ऐसे सिद्धान्तरूप खड्गको उठाके ऐसे ॥ १०१ ॥

निव्वाणवाणमणहं, सगुणं सद्धम्म मविसमं विहिणा।
परलोग साहगं मुक्खकारगं धरियं विप्फुरियं ॥१०२॥

अर्थः—निर्वाण वाण निर्दोषगुणसहित सद्धर्म अविषम ऐसा

विधिः करके परलोककासाधक मोक्षकाकारक देदीप्यमान धारके ॥ १०२ ॥

जेण तओ पासत्थाइ, तेणसेणाविद्दकिया सम्मं ।
सत्थेहिं महत्थेहिं विआरिऊणं च परिचत्ता ॥ १०३ ॥

अर्थः—उसके वाद जिसने पासत्थादि चौरोंकी सेनाकोभी हटा दिया सम्यक् शास्त्र महार्थसें विचारके त्यागकिया अथवा विदारण करके ऐसे ॥ १०३ ॥

आसन्नसिद्धिया भव्व सत्थिया, सिवपहंमि संट्ठाविया ।
निव्वुइ मुवंति जहते, पडंति नभीय भवारण्णे ॥ १०४ ॥

अर्थः—आसन्न है मोक्ष जाना जिन्होंको ऐसे भव्यसमूह मोक्षमार्गमें चले मोक्ष पहुंचे और जैसे भवारण्यमें नहीं पड़े ऐसा १०४

सुद्धाणाययणगया चुक्का मग्गाओ जायसंदेहा ।
वहुजणपिट्ठिविलग्गा दुहिणो हूया समाहूआ ॥ १०५ ॥

अर्थः—भोले लोग अनायतनमें गये उत्पन्न हुआ है सन्देह जिन्होंको ऐसे सन्मार्गसे च्युतभए वहुत लोग पीछे लगे दुःखी भए ऐसोंको बुलाया जिन्होंने ऐसे ॥ १०५ ॥

दंसियमाययणं तेसिं, जत्थ विहिणा समं हवइ मेलो ।
गुरुपारतंतओ समय सुत्थओ जस्स निप्पत्ती ॥१०६॥

अर्थः—दिखाया आयतन उन्होंको जहां विधिकेसाथ सम्बन्ध होवे गुरु परतन्त्रतासे और समयसूत्रसे जिसकी निष्पत्ति है ॥१०६॥

दीसइय वीयराओ, तिलोयनाओ विरायसहिएहिं ।
सेविज्जंनो संतो, हरई तु संसार संतावं ॥ १०७ ॥

अर्थः—और देखनेमे आता है वीतराग तीनलोकके नाथ जो है सो वैराग्यसहित भव्योंसे सेव्यमान भए ऐसे संसाररूप संतापको हरे है ॥ १०७ ॥

वाइय सुपगीयं नट्टमपि, सुयं दिट्ठं चिट्ठमुत्तिकरं ।
कीरइ सुसावएहिं, सपरहियं समुचियं जुत्तं ॥ १०८ ॥

अर्थः—वादित्रका वजाना और गाना और नाटकभी सुना देखा इष्ट मुक्तिका करनेवाला सुश्रावक स्वपरहित इकट्ठे होके करे है वह युक्त है ॥ १०८ ॥

रागोरगोवि नासइ, सोउं सुगुरूवदेस मंत पए ।
भवमणो सालुरं नासई दोसो वि जत्थाहि ॥ १०९ ॥

अर्थः—रागसर्पभी सुगुरुका उपदेशरूप मंत्र पद सुनके भग जाता है भव्यमनरूप दर्दुरको जहां दोषरूप सर्प नहीं खाता है ॥ १०९ ॥

नो जत्थुस्सुत्त जणक्कमोत्थि, ण्हाणं वलि पइट्ठा य ।
जइ जुवइपवेसोवि अ, न विज्जए विज्जए विमुक्को ॥११०

अर्थः—जहा उत्सूत्र लोगोंका क्रम नहीं है स्नात्र, वलि, प्रतिष्ठा और यतिः युवतिका प्रवेशभी रात्रिमे है नही वहां मुक्ति विद्यमान है ॥ ११० ॥

जिणजत्ताण्हाणाई, दोसाणं य स्कयायकीरेति ।
दोसोदयंमि कए तेसिं, संभवो भवहरो होज्जा ॥१११॥

अर्थः—जिनयात्रा स्नात्रादिक दोपक्षयकेवास्ते किए जावे हैं दोपके उदयमें उन्होंके भवहरणका संभव कैसे होवे है ॥ १११ ॥

जा रत्ति जारत्थिणमिह, रइं जणइ जिणवरगिहेवि ।
सारयणी रयणिअरस्स, हेउ कह नीरयाणं मया ॥११२॥

अर्थः—यह जो रात्रि तीर्थंकरोंके मंदिरोंमेंभी जार स्त्रियोंको रति उत्पन्न करे है वह रात्रि पापसमूहका कारण किस प्रकारसे निष्पापोंके इष्ट होवे है ॥ ११२ ॥

साहु सयणासणभोअणाइं, आसायणं च कुणमाणो ।
देवहरएण लिप्पइ, देवहरे जमिह निवसंतो ॥ ११३ ॥

अर्थः—साधुः जैनमंदिरमें सोना बैठना भोजनादि आशातना करता हुआ देवद्रव्यके उपभोगके पापसे लिप्त होवे है जो जिन-मंदिरमें रहता है ॥ ११३ ॥

तंबोलो तं बोलइ, जिणवसहिट्ठिएण जेण खद्धो ।
खद्धे भव दुक्ख जले, तरइ विणा नेअ सुगुरुतरिं ११४

अर्थः—तीर्थंकरके मंदिरमें रहेहुये जिसने तांबूल खाया वह संसारमें डूबता है संसारसमुद्रमें डूबताहुआ सुगुरुरूप जहाजसिवाय नहीं तरता है ॥ ११४ ॥

तेसिं सुविहिअजइणोय, दंसिआ जेउ हुंति आययणं ।
सुगुरुजणपारतंतेण, पाविया जेहिं णाणसिरी ॥११५॥

अर्थः—सुविहित साधुओंने जो दिखाया वह आयतन होवे है जिन्होंने ज्ञानलक्ष्मी सुगुरु जन पारतन्त्रसे पाई है उन्होंके ॥११५॥

संदेहकारि तिमिरेण, तरलिअं जेसिं दंसणं नेयं ।
निव्वुइ पहं पलोअइ, गुरुविज्जुव एस ओसहओ ॥११६

अर्थः-सन्देहकारी तिमिरसे तरलित जिन्होंका दर्शन नहीं है वह गुरु वैद्यके उपदेश औषधसे मोक्षमार्गको देखते हैं ॥ ११६ ॥

निप्पच्चवाय चरणा, कज्जं साहंति जेउ मुत्तिकरं ।
मण्णंति कयं तं यं, कयंत सिद्धंड सपरहिअं ॥११७॥

अर्थः-निर्दोष है चारित्र जिन्होंका ऐसे कर्मक्षयरूप कार्यको साधते हैं सिद्धांतसिद्ध स्वपरहित जो कार्यको मानते हैं वह॥११७॥

पडिसोएण जे पवट्टा, चत्ता अणुसोअगामिनी वट्टा ।
जणजत्ताए मुक्का, मयमच्छर मोहओ चुक्का ॥ ११८ ॥

अर्थः-प्रतिश्रोत मार्गकरके (मोक्षसाधनमार्ग) प्रवर्तमान भया अनुश्रोतगामी मार्ग लोकयात्रा गृहव्यापारादिकसे छूट गये और मद मत्सर मोहसे रहित भए ॥ ११८ ॥

सुद्धं सिद्धंतकहं, कहंति वीहंति नो परेहिंतो ।
वयणं वयंति जत्तो, निव्वुइ वयणं धुवं होइ ॥ ११९ ॥

अर्थः-शुद्ध सिद्धांत कथा कहे औरोंसे डरे नहीं वचन ऐसे बोले कि जिन्होंसे मोक्षमार्गमे निश्चय प्रवृत्ति होवे ॥ ११९ ॥

तव्विवरीआ अवरे, जइवेसधराचि हुंति नहु पुज्जा ।
तद्दंसणमवि मिच्छत्तमणुक्खणं जणइ जीवाणं ॥ १२० ॥

अर्थः-उक्त गुणवालोंसे विपरीतयतिवेषधारनेवालेभी पूज्य

नहीं होवे उन्होंका दर्शनभी प्रतिक्षण जीवोंके मिथ्यात्व उत्पन्न करे है ॥ १२० ॥

धम्मत्थीणं जेण, विवेयरयणं विसेसओ ठविअं।
चित्तउडे ठिआणं, जं जणइ भव्वाण निव्वाणं ॥ १२१ ॥

अर्थः—धर्मार्थी प्राणियोंके जिसने विवेकरत्नविशेषकरके चितौड़-नगरमें रहेहुये हृदयरूप पात्रमें स्थापा जो विवेकरत्न निर्वाणमुक्ति-सुख भव्योंके उत्पन्न करता है ॥ १२१ ॥

असहाएणावि विहिय, साहिओ जो न सेससूरीणं।
लोअणपहे वि वच्चइ, वुच्चइ पुण जिणमयण्णूहिं ॥१२२॥

अर्थः—सहायरहित होकेभी जिसने विधिः मार्ग साधा जो अगीतार्थ और आचार्योंके दृष्टिपथमें नहीं आया ऐसा जैनधर्मका जाननेवाला कहे है ॥ १२२ ॥

घण जणपवाह सरिआण, सोअपरिवत्तसंकटे पडिओ।
पडिसोएण णीओ, धवलेणवसुद्धधम्मभरो ॥ १२३ ॥

अर्थः—वहुत लोगोंका प्रवाह जो नदी उसको जो धारानुकूल आवर्तरूप संकटमें पड़ाहुआ प्राणियोंको प्रतिश्रोतमें लाए शुद्ध धर्मको धारणेवाले धवलधौरेयके जैसे ॥ १२३ ॥

कयवहुविज्जुज्जोओ, विसुद्धलद्धोदओ सुमेघुव्व।
सुगुरुच्छाइय दोसायरप्पहो प्पहयसंतावो ॥ १२४ ॥

अर्थः—किया है वहुत विद्यारूप विजलीका उद्योत उस्से विशुद्ध पाया है उदय ऐसा सुमेघसदृश सुगुरुने दोषाकर चंद्रकी प्रभाका आच्छादन किया और संतापको मिटाया ऐसे ॥ १२४ ॥

सव्वत्थवि वित्थरिय, वुट्ठो कयसस्स संपओ सम्मं।
नेव वायहओ न चलो, न गज्जिओ यो जए प्पयडो॥१२५

अर्थः–सर्वत्र विस्तारपाके वर्षा, अच्छीतरहसे धान वगैरहकी उत्पत्ति करी जिसने वादरूप वायुसे नहीं नष्ट हुआ चंचल नही गाजामी नहीं ऐसा जगतमें प्रसिद्ध ऐसे ॥ १२५ ॥

कहमुवमिज्जइ जलही, तेणसमं जो जडाणं कय वुड्ढी।
तिस्सोर्हिपिपरेहिं, मुअइ सिरिं पिछु महिज्जंतो ॥ १२६ ॥

अर्थः–समुद्रकी उपमा कैसे करी जावे समुद्र पानीकी वृद्धिः करनेवाला है देवोंने मथा तब लक्ष्मी उत्पन्न भई उसको छोड दी ॥ १२६ ॥

सूरेण व जेण समुग्गयेण, संहरिय मोह तिमिरेण।
सद्दिट्ठीणं सम्मं, प्पयडो निव्वुइ पहो हुओ ॥ १२७ ॥

अर्थः–दूर किया है मोहरूप अंधकार जिनोंने ऐसा ऊगाहुआ सूर्यके जैसा जिणुने सम्यकदृष्टि जीवोंको मोक्षमार्ग दिखाया प्रगट किया ऐसा ॥ १२७ ॥

वित्थरियममलपत्तं, कमलं बहु कुमय कोसिया हसिया।
तेयस्सीणमपि तेओ, विगओ विलयं गया दोसा॥ १२८॥

अर्थः–विस्तार पाया है निर्मल पत्र जिसका ऐसा ज्ञानरूप कमल बहुत कुमतरूप घुघुओं करके दूषित हुवा तथापि तेजस्वि-ओंसामी तेज नष्ट होनेसे दोष राग द्वेषादि नष्ट होगए ऐसे ॥१२८

विमलगुण चक्कवायावि, सयण विहाडिया विसंघडिया।
भमरेहिं भमरेहिंपि, पावओ सुमण संजोगो ॥ १२९ ॥

अर्थः—निर्मलगुणवाले चक्रवाकभी अर्थात् ज्ञानादिगुणयुक्त ऐसे सर्वथा दूर होगए थे उन्होंको मिलाया परिभ्रमण करनेवाले ऐसे भ्रमरोंके जैसे साधुओंका सम्बन्ध किया ऐसे ॥ १२९ ॥

भव्व जणेण जग्गिय, मवग्गियं दुट्ठ सावय गणेण ।
जलमवि खंडियं, मंडियं य महिमंडलं सयलं ॥ १३० ॥

अर्थः—भव्यप्राणियोंको जगाया और चैत्यवासी श्रावकसमुदायने नहीं खंडन किया अर्थात् खंडन नहीं करसके जिसपर हाथ रक्खे उसका जाड्य नष्ट हो जाय ऐसे संपूर्ण पृथ्वीमंडलको शोभित करनेवाले ऐसे ॥ १३० ॥

अत्थमई सकलंको, सया ससंको वि दंसिय पओसो ।
दोसोदये पत्तपहो, तेण समं सो कहं हुज्जा ॥ १३१ ॥

अर्थः—सदा कलंकसहित दिखाया है प्रदोप जिसने ऐसा चन्द्रभी अस्त होता है और रात्रिमें प्रकाश होता है जिसका ऐसे चन्द्रके समान वह कैसा होवे ऐसे ॥ १३१ ॥

संजणिय विही संपत्त गुरुसिरी जोसया विसेस पयं ।
विण्हुव्व किवाण करो, सुर पणओ धम्मचक्कधरो १३२

अर्थः—प्रचलित किया है विधिः वाद जिनोंने पाई है युगप्रधानपदरूप लक्ष्मी जिनोंने ऐसा जो निरंतर विष्णुके जैसा दया और आज्ञाका करनेवाला देवोंकरके वंदित ऐसा क्षमादि धर्मचक्रको धारनेवाला ऐसा ॥ १३२ ॥

दंसियवयणविसेसो, परमप्पाणं य मुणइ जो सम्मं ।
पयडि विवेओ छच्चरण, सम्मओ चउमुहुव्व जए ॥ १३३ ॥

अर्थः-दिखाया है वचनविशेष परमात्मको अच्छीतरहसे माने ऐसा जो और प्रगट है विवेक जिसका पट्चरण नाम पद्व्रतरूप जो चारित्र वह है संमत जिसके चतुर्मुखके जैसा॥ १३३ ॥

धरइ न कवड्डयं पि कुणइ, न वंधं जडाण मवि कयाइ ।
दोसायरं य चक्कं, सिरंमि न चडावए कयापि ॥ १३४ ॥

अर्थः-एक कौडीभी नही धारे मूर्खोंका कभी भी संग्रह नहीं करे दोपाकर याने चन्द्र और चक्रको मस्तकपर नहीं धारे श्लेशार्थ है ॥ १३४ ॥

संहरइ न जो सत्तो, गोरीए अप्पए नो नियमंगं ।
सो कह तव्विवरीएण, संभुणा सह लहिज्जु पमा ॥१३५॥

अर्थः-जो प्राणियोंका संहरण न करे गौरीको अपना अंग नहीं देवे वह कैसे निर्मल चारित्र करके शंभुकी उपमाको प्राप्त होवे ऐसा ॥ १३५ ॥

साइसएसु सग्गं गयेसु, जुगप्पवरसूरिनिअरेसु ।
सव्वाओ विज्जांगाओ, भुवणं भमिऊण स्संनाउ ॥१३६॥

अर्थः-सातिशई युगप्रधान आचार्योंका समूह स्वर्ग जानेसे सर्व विद्या अंगना जगत्में फिरके श्रांत भई ॥ १३६ ॥

तह वि न पत्तं पत्तं, जुगवं जव्वयणपंकयावासं ।
करिय परूप्पर मचंन, पणयओ हुंति सुहिआओ १३७

अर्थः-तथापि पात्र नहीं पाया युगपद् जिसके मुख कमलमें निवास करके परस्पर अत्यन्त प्रीतिसे सुखी भई ॥ १३७ ॥

अण्णुण्ण विरह विहुरोद, तत्तागत्ताओताओ तणाइओ ।
जायाओ पुण्णवसा, वासपयं पिजो पत्ता ॥ १३८ ॥

अर्थः—परस्पर विरहसे पीड़ित दुःख परंपरासे तपाहुआ शरीर ऐसी वह दुर्बल अंगवाली भई तथापि पुण्यके वससे अपने निवासका स्थान पाया ॥ १३८ ॥

तं लहिअ विअसिआओ, नाओ नच्चयण सरूह गयाओ ।
तुट्ठाओ पुट्ठाओ, समगं जायाओ जिट्ठाओ ॥ १३९ ॥

अर्थः—जिनवल्लभसूरिको प्राप्त होके हर्षित भई विद्या अंगना उन्होंके मुखकमलमें गई संतुष्ट भई पुष्टभई एकही वक्तमें बड़ी होगई ॥ १३९ ॥

जाया कइणोकेके, न सुमइणो परे मिहोवमं तेवि ।
पावंति न जेण समं, समंतओ सव्व कव्वण णिउं ॥१४०॥

अर्थः—कवि पृथ्वीपर कौन कौन न भए परन्तु यहां जिस प्रभुके साथ उपमा नहीं पावे है सम्यक् बुद्धिवाले सर्व काव्यके नेता ऐसे ॥ १४० ॥

उवमिज्जंते सन्तो, संतोसमुवविंति जंमि नो सम्मं ।
असमाण गुणो जो होइ, कहणु सो पावए उवमं ॥१४१॥

अर्थः—सज्जन जिसमें उपमान कर्ता सम्यक् संतोष नहीं पावे है कारण समानगुण जो न होवे वह उपमा कैसे पावे ॥ १४१ ॥

जलहिजलमंजलीहिं, जो मिणइ नहं गणं विहु पए हिं ।
परिचंकमइ सोवि न सक्कइत्ति, जा गुण गणं भणिउं १४२

अर्थः—समुद्रके जलका जो अंजलिसे प्रमाण करे आकाशको पगोंसे उल्लंघे वहभी जिन्होंके गुणके समूहको कहनेको समर्थ नहीं होवे ॥ १४२ ॥

जुगपवर गुरु जिणेसर, सीसाणं अभयदेव सूरीणं ।
तित्थभर धरण धवलाण, मंतिए जिणमयं विमयं १४३

अर्थः—युगप्रधानगुरु श्रीजिनेश्वरसूरिके शिष्य अभयदेवसूरि तीर्थभार धारणमें धौरेय ममान उन्होंके पासमें जैन आगमविशेष करके जाना ॥ १४३ ॥

सविणय मिह जेण सुअं, सप्पणयं तेहिं जस्स परि कहियं ।
कहियाणुसारओ सवं, समुवगयं सुमइणा सम्मं ॥ १४४ ॥

अर्थः—विनयसहित इहा उन्होंने जिसको स्नेहसहित श्रुत कहा कथित अनुसार जिस सद्बुद्धिवालेने सुना और जाना प्राप्त किया ऐसा ॥ १४४ ॥

निच्छम्मं भवाणं, तं पुरओ पयडियं पयत्तेण ।
अकय सुकयंगिदुल्लहजिण वल्लह सूरिणा जेण ॥१४५॥

अर्थः—कपटरहित भव्योंके आगे वह सिद्धान्त प्रयत्नसे प्रगट किया, नहीं किया सुकृत ऐसे प्राणियोंको दुर्लभ ऐसे जिनवल्लभसूरिने ॥ १४५ ॥

सो मह सुह विहिसद्धम्म दायगो तित्थनायगो अ गुरू ।
तप्पयपउमं पाविय, जाओ जायाणुजाओहं ॥ १४६ ॥

अर्थः—वह मेरेको शुभ विधिः सद्धर्मका देनेवाला तीर्थसंघका

नायकगुरु धर्माचार्य उन्होंके चरणकमलको पाके मैं गीतार्थोंका अनुसरण करनेवाला भया ॥ १४६ ॥

तमणुदिणं दिण्णगुणं, वंदे जिणवल्लहं पहुं प्पयओ।
सूरिजिणेसरसीसोअ वायगो धम्मदेवो जो ॥ १४७ ॥

अर्थः—दिया है ज्ञानादि गुण जिन्होंने ऐसे जिनवल्लभसूरि प्रभुको निरंतर प्रयत्नसे नमस्कार करें और श्रीजिनेश्वरसूरिके शिष्य वाचक धर्मदेव गणि और ॥ १४७ ॥

सूरीअसोगचंदो, हरिसींहो सव्वदेवगणिप्पवरो।
सव्वेवि तव्विणेया, तेसिं सव्वेसिं सीसोहं ॥ १४८ ॥

अर्थः—अशोकचन्द्रसूरि हरिसिंहसूरि और सर्वदेवगणिप्रवर सर्वजिनेश्वरसूरिके शिष्य धर्मदेवगणिके शिष्य उन सबोंका मैं शिष्य हूं ॥ १४८ ॥

ते मह सव्वे परमोवयारिणो वंदणारिहागुरुणो।
कयसिवसुहसंपाता, तेसिं पाए सया वंदे ॥ १४९ ॥

अर्थः—वह मेरे सर्व परम उपगारी नमस्कार करने योग्य गुरु आराध्य हैं किया है शिवसुख संपात जिन्होंने ऐसे उन्होंके चरणोंमें मैं निरंतर नमस्कार करूं ॥ १४९ ॥

जिणदत्तगणि गुणसयं, सपण्णयं सोमचंदबिंबं व।
भव्वेहिं भणिज्जंतं, भवरविसंताव मवहरउ ॥ १५० ॥

अर्थः—जिनदत्तगणि गणधर उन्होंके गुणग्रहणरूप डेढ़सौ (१५०) गाथाका यह प्रकरण पौर्णमासीके चंद्रबिंबके जैसा शीतल स्वभाववाला भव्योंकरके पठ्यमान नाम पढ़ते गुणते सुनते भव-

रूपसूर्यका संताप दूरकरो ॥ १५० ॥ इति ॥ इसतरह गणधरोंका स्वरूप कह्योंके अनन्तर स्वसंवेदनसें तथा गुरुजन दर्शित संप्रदायसें और ग्रन्थान्तरसें किंचित् युगप्रधानोंका स्वरूप दिखाते हैं, इस पांचमें आरेके श्रीवीरप्रभुनें २३ उदय फरमायें हैं उन तेवीस उदयोंमें क्रमसे धर्मोन्नतिके करणेवाले युगप्रधानपदोपशोभित दो हजार चार (२००४) आचार्य होवेंगे और पांचमे आरेके अंततक वृद्धिहानिके क्रमसें तेवीस वखत धर्मरूपी चंद्रोदय होगा, तत्र त्रयोविंशतिरुदयेषु, वर्षादिकं निर्दर्श्यते, सचैवं ॥ ९० ॥ नमः श्रीवीतरागाय, नमः श्रीभद्रबाहवे, येन श्रीदुःषमाप्राभृतके, त्रयोविंशतिरुदयैः कृत्वा, चतुरधिकद्विसहस्रयुगप्रधानस्वरूपं वर्षादिसहितं प्रतिपादितमस्ति, तत्संख्या यथा—

पढमेवीस १, वीइतेवीस २, तीइ अडनवई ३, चउत्थे अडसयरि ४, पंचमे पंचसयरि ५, छट्ठे गुणनवई ६, सत्तमे एगसयं ७, अट्ठमे सगसी ८, नवमे पणनवई ९, दसमे सगसी १०, एगारसमे छहुत्तरि ११, बारसमे अट्ठहुत्तरि १२, तेरसमे चउणवई १३, चउदसमे अट्ठउत्तरसयं १४, पनरसमे तिउत्तरसयं १५, सोलसमे सत्तोत्तरसयं १६, सत्तरसमे चउरुत्तरसयं १७, अट्ठारसमे पन्नरोत्तरसयं १८, इगुणवीसमे तित्तीसाहीयसयं १९, वीसमेसयं २०, एगवीसमे पणनवई २१, बावीसमे नवनवई २२, तेवीसमे चालीसा २३, एवं चउरुत्तर दुस्सहसा २००४

तथा प्रवचनसारोद्धारप्रकरणे चतुषष्ठ्यधिकद्विशततमद्वारे
जावदुप्पसहोसूरी, होहिंती जुगप्पहाण आयरिआ,
अज्जसुहम्मप्पभिई, चउरहीया दुन्निसहस्सा ॥ १ ॥
वृत्त्यैकदेश, आर्यः स चासौ सुधर्मस्तत्प्रभृतयः, प्रभृतिग्रहणात्, जंबूस्वामिप्रभवसिय्यंभवाद्यागणधरपरंपराः गृह्यन्ते इत्यादि, अपरं च कालसप्ततिकादीपोत्सवकल्पे च तथासिद्धिप्राभृतिकायां

बारसवरसेहिं गोयम, सिद्धो वीराओवीसेहिं सुहम्मो, चउसट्टीए जंबू, वोच्छिन्नातत्थदसट्ठाणा ॥ ३५ ॥ मण-परमोहि पुलाए, आहारग खवग उवसमे कप्पे, संजम-तिअ केवल सिज्झणा जंबूंमिवुच्छिन्ना ॥ ३६ ॥ सिज्जं भवेण विहिअं, दसवेयालिअ अट्ठनवइ वरसेहिं, सत्तरि-सएहिं १७० चुक्काचउपुव्वा भद्दबाहुम्मि ॥ ३७ ॥ तुट्टिंसु थूलभद्दे, दोसयपन्नरेहिं २१५ पुव्वअणुओगो, सुहुमम्हा-पाणाणिअ आयमसंघयण संठाणा ॥ ३८ ॥ पणसय चुलसीइसु ५८४, वयरेदसपुव्वा अद्धकीलियसंघयणं, छसोलेहिअ ६१६ थक्का, दुब्बलिए सड्ढनवपुव्वा ॥ ३९ ॥ वज्जसेणे नवपुव्वा पच्छाकमेण हीरमाणा जावदेवड्ढिगणि-खमासमणे साहियपुव्वसुयं, नवसयअसीए पुत्थयलिहणं, नवसयतेणउएहिं समइक्कंत्तेवीराओकालगसूरिंहिंतो चउ-त्थीए पज्जूसवणकप्पो, तओपच्छावीराओ वाससहस्सेहिं सच्चमित्ताओ पुव्वसुए वुच्छिन्ने, तओपच्छा उमासाइ हरि-भद्दजिणभद्दगणिखमासमणे सीलांगसूरि जाववीराओ

साहियसोलसण्हिं जिणदत्तसूरि कमेणजुगप्पहाणायरि-
आनेया, इचाइजावदुप्पसहोसूरि होहीति तावदहवं
एतेषां स्वरूपं यंत्रेण दृश्यम् ॥

त्रयोविंशतिरुदयाः	१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
त्रयोविंशतिरुदय युगप्रधानसंख्याः	२०, २३, ९८, ७८, ७५, ८९, १००, ८७, ९५, ८७, ७६, ७८, ९४, १०८, १०३, १०७, १०४, ११५, १३३, १००, ९५, ९९, ४० सर्वे २००४
त्रयोविंशतिरुदय वर्षसंख्या	[१] ६१७, [२] १३४६, [३] १४६४, [४] १५४५, [५] १९००, [६] १९५०, [७] १७७०, [८] १०१०, [९] ८८०, [१०] ८५०, [११] ८००, [१२] ४४५, [१३] ५५०, [१४] ५९२, [१५] ९६५, [१६] ७१०, [१७] ६५५, [१८] ४९०, [१९] ३५९, [२०] ४८९, [२१] ५७०, [२२] ५९०, [२३] ४४०, सर्ववर्ष २०९८७
त्रयोविंशतिरुदय माससंख्या	१०, १०, ११, ८, ३, ९, ७, १०, १, २, ३, ४, ७, ५, ६, ९, ६, ९, १, ४, ३, ५, ११ सर्वे मासवर्ष १२
२३ त्रयोविंशति रुदयदिनानि	१७, २९, २०, २९, २९, २२, २७, १५, १८, १२, १४, १९, २२, २५, २९, २०, २४, २, १७, २, ९, ५, १७,

२३ त्रयोविंशति रुदयप्रहराः	७, ७,	१६१
२३ त्रयोविंशति रुदयघटिका	,, ,, ,, ,,	१६१
२३ त्रयोविंशति रुदयपलानि	,, ,, ,, ,,	१६१
२३ त्रयोविंशति रुदयांशानि	,, ,, ,, ,,	१६१

एवंच कालसप्ततिकायां सुहम्माइ दुप्पसहंता तेवीसउदएहिं चउज्जुअ दुसहस्सा, जुगपवर गुरुतस्ससंखा, इगारलक्खा सहससोलस ॥ २३ ॥ एगावयारि सुचरणा, समयविउ पभावगाय जुगपवरा, पावयणिआइदुतिगाइ वरगुणा जुगप्पहाणसमा ॥ ३४ ॥ तह-संघचउसूरी दुप्पसहो, साहुणीअ फग्गुसिरी, नाइलसड्ढो, सड्ढीसच्च-सिरी अंतिमोसंघो ॥ ५० ॥ दसवेयालिअ १ जिअकप्पो २ऽऽवस्सय ३, अणुओगदारं ४ नंदिधरो ५ सययं इंदाइनओ, छड्डग्गतवो दुहत्थ-तणू ॥ ५१ ॥ गिहिवयगुरु बारस, चउचउ वरिसो कय अट्ठमो यसोहम्मि सागराउहोइ, तओसिझही भरहे ॥ ५२ ॥ तीर्थोद्धार प्रकीर्णके इत्युक्तं, वीसाए सहस्सेहिं पंचहियसएहिं होइ वरिसाणं पूसेवछसगुत्तेवोछेदो उत्तरझाए ॥ १ ॥ इत्यादि विशेषस्तु दुःख-माप्राभृत युगप्रधानगंडिका सिद्धप्राभृतिका तीर्थोद्धालीप्रकीर्णक-सिद्धप्राभृतबृहट्टीका कालसप्ततिकादि ग्रन्थेभ्योऽवसेयः, पुनः यत्र-

पत्रेपि जिनवल्लभजिनदत्तादिनामानि समुपलभ्यन्ते, तद् यथा–प्रथमोदययुगप्रधाननामानि, श्रीसुधर्मस्वामी १ श्रीजंबूस्वामी २ श्रीप्रभवस्वामी ३ श्रीसिज्जंभवसूरिः ४ श्रीयशोभद्रसूरिः ५ श्री-संभूतविजयसूरि ६ श्रीभद्रबाहुस्वामी ७ श्रीस्थूलिभद्रस्वामी ८ श्री-आर्यमहागिरिः ९ श्रीआर्यसुहस्तिसूरिः १० श्रीगुणसुंदरसूरिः ११ श्रीकालिकाचार्य १२ श्रीस्कंदिलाचार्य १३ श्रीरेवतीमित्रसूरिः १४ श्रीआर्यधर्मसूरिः १५ श्रीभद्रगुप्तसूरिः १६ श्रीश्रीगुप्तसूरिः १७ श्रीवज्रस्वामी १८ श्रीआर्यरक्षितसूरिः १९ दुर्बलिकापुष्पसूरिः २० पुष्पमित्र, इत्यपि दृश्यते, इति प्रथमोदय यूगप्रधानसूरयः अथ द्वितीयोदययुगप्रधाननामानि एवं दृश्यंते तद् यथा–श्रीवयरसेन-सूरिः १ श्रीनागहस्तिसूरिः २ श्रीरेवतीमित्रसूरिः ३ श्रीब्रह्मद्वीप-सूरिः ४ श्रीनागार्जुनसूरिः ५ श्रीभूतदिन्नसूरिः ६ श्रीकालिकाचार्यः ७ श्रीदेवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण ८ श्रीसत्यमित्रसूरिः ९ श्रीहरिभद्र-सूरिः १० श्रीजिनभद्रगणिक्षमाश्रमण ११ श्रीशीलांकसूरिः १२ श्रीउमास्वातिसूरिः १३ श्रीउद्योतनसूरिः १४ श्रीवर्धमानसूरिः १५ श्रीजिनेश्वरसूरिः १६ श्रीजिनचंद्रसूरिः १७ श्रीजिनाभयदेव-सूरिः १८ श्रीजिनवल्लभसूरिः १९ श्रीजिनदत्तसूरिः २० श्रीमणि-मंडितभालस्थलजिनचंद्रसूरिः २१ श्रीजिनपतिसूरिः २२ श्रीजिन-प्रभसूरिः २३ इति द्वितीयोदय सूरयः, दिनेंद्रांकादत्रनामांतराण्यपि दृश्यन्ते, पुष्पमित्र, सभूतिसूरिः, माढरसंभूति, धर्मरक्तसूरिः, ज्येष्ठ-गणिः, फल्गुमित्र, धर्मघोष, विनयमित्र, शीलमित्र, रेवतीमित्र, सुनि-णमित्र, अरिहमित्र, २३, एषां प्रतिकूलान्यपि कानिचित् कानिचित्

नामान्युपलभ्यंते, अन्यच्च यंत्र मुद्रितपुस्तकेपि एवं दृश्यते–तद् यथा–श्रीमन्महावीरात् परंपरया तोसलीपुत्राचार्य आर्यरक्षित दुर्वलिकापुष्पाचार्य वगेरे

१ सुधर्मास्वामी २० ८ आर्यसुहस्ति २९१
२ जंबूस्वामी ६४ ९ सुस्थितसुप्रतिबद्ध ३७२
३ प्रभवसूरि ७५ १० इन्द्रदिन्न ४२१
४ शय्यंभव ९८ ११ दिनसूरि
५ यशोभद्र १४८ १२ शांतिश्रेणिक १२ सिंहगिरि ५४७
६ संभूतिविजय १५६ उच्चनागरीशाखानि० १३ वज्रसूरि ५८४
६ भद्रबाहूस्वामी १७० १४ वज्रसेन ५२० १४ पद्मरथसूरि
गोदास १५ चंद्रवगेरे ४ १५ पुष्पगिरि
७ स्थूलभद्र १६ सामंतभद्र १६ फल्गुमित्र
१७ वृद्धदेवसूरि १७ धनगिरि

८ आर्यमहागिरि २४५ १८ वज्रस्वामी २७ भूतदिन्न आर्यरक्षितसूरि
९ बहुलवलिस्सह १९ नंदिलक्ष्मण २८ लोहित्य
१० स्वातिहारितगोत्र २० नागहस्ति २९ दूष्यगणि–देवर्द्धिगणि०
११ श्यामाचार्य ,, २१ रेवती ३० देववाचक (नंदिसूत्रनाकर्त्ता)
१२ शांडिल्यजीतधर २२ सिंह (ब्रह्मद्वीपिका शाखा)
१३ जीतधर २३ स्कंदिलाचार्य (माथुरीवाचना)
१४ समुद्र २४ हिमवत्
१५ मंगु २५ नागार्जुन
१६ धर्म २६ गोविंद
१७ भद्रगुप्त

वज्र	१८ प्रद्योतनसूरि	प्रभावकाचार्य
आर्यरक्षित	१९ मानवदेवसूरि	वृद्धवादी सिद्धसेनसूरि
		प्रियग्रंथसूरिः
शिनभूति	२० मानतुंगसूरि	हरिभद्रसूरि
कृष्णसूरि	२१ वीरसूरि	जिनभद्रगणि०
भद्रसूरि	२२ जयदेवसूरि	शीलांकाचार्य
नक्षत्रसूरि	२३ देवानन्दसूरि	कालिकाचार्य
नागसूरि	२४ विक्रमसूरि	आर्यमिसतसूरि
जेहिलसूरि	२५ नरसिंहसूरि	बप्पभट्टसूरि
विष्णुसूरि	२६ समुद्रसूरि	मल्लवादी
कालकसूरि	२७ मानदेवसूरि	आर्यखपुटाचार्य
संपलित, भद्र	२८ विबुधप्रभसूरि	विनयचंद्रसूरि
आर्यवृद्धसूरि	२९ जयानन्दसूरि	जीनदेवसूरि
सघपालितसूरि	३० रविप्रभसूरि	शातिसूरि
आर्यदत्त्नि काश्यपगोत्र	३१ यशोदेवसूरि	हेमचंद्रसूरि
आर्यधर्म (सुव्रतगोत्र)	३२ विमलचंद्रसूरि	देवचंद्रसूरि
आर्यदत्त	३३ देवसूरि	जगच्चंद्रसूरि
आर्यधर्म	३४ नेमिचंद्रसूरि	मलयगिरिसूरि
आर्यसिंह	३५ उद्योतनसूरि	धनेश्वरसूरि

आर्यधर्म	३६ वर्धमानसूरि	अभयदेवसूरि
आर्यशांडिल्य	३७ जिनेश्वरसूरि	यशोभद्रसूरि
आर्यजंबू	३८ जिनचंद्रसूरि	वर्धमानसूरि
आर्यनन्दित	३९ जिनाभयदेवसूरि	सर्वदेवसूरि
आर्यदेशितगणि०	४० जिनवल्लभसूरि	वादीदेवसूरि
आर्यस्थिरगुप्त०	४१ जिनदत्तसूरि	हरिभद्रसूरि
आर्यकुमारधर्म	४२ जिनचंद्रसूरि	जिनप्रभसूरि
देवगुप्तसूरि	४३ जिनपतिसूरि	जिनभद्रसूरि
देवर्द्धिगणि०	४४ जिनेश्वरसूरि	जिनकुशलसूरि
सत्यमित्रसूरि	४५ जिनप्रबोधसूरि	जिनराजसूरि
उमास्वातिसूरि		जिनपतिसूरि
कालिकसूरि		जिनचंद्रसूरि
हरिभद्रसूरि		श्रीआनन्दघनजी
युगप्रधान०		श्रीदेवचंद्रगणिः
		इत्यादिसूरयः

॥ वीरात् प्रथम उदय ॥

१ सुधर्मास्वामी	२०	६ संभूतिविजयसूरि	१५६
२ जंबूस्वामी	६४	७ भद्रबाहुस्वामी	१७०
३ प्रभवसूरि	७५	८ स्थूलभद्रसूरि	२१५
४ शय्यँभवसूरि	९८	९ महागिरिसूरि	२४५
५ यशोभद्रसूरि	१४८	१० सुहस्तिसूरि	२९१

११ गुण(घन)सुंदरसूरि ३३५	१६ भद्रगुप्तसूरि	५३३	६३
१२ श्यामाचार्य ३७६	१७ श्रीगुप्तसूरि	५४८	७८
१३ स्कन्दिलाचार्य ४१४	१८ वज्रसूरि	५८४	१११
१४ रेवतिमित्रसूरि ४५०	१९ आर्यरक्षितसूरि	५९७	१२७
१५ धर्मसूरि वीरात् ४९४ विक्रमात् २४	२० पुष्पमित्रसूरि	६१७	१४७

॥ द्वितीय उदय ॥

२१ वज्रसेनसूरि	१५०	३३ संभूतिसूरि	८२९
२२ नागहस्तिसूरि	२१९	३४ माढरसंभूतिसूरि	८८९
२३ रेवतिमित्रसूरि	२७८	३५ धर्मरत्नसूरि	९२९
२४ सिंहसूरि	३५६	३६ ज्येष्ठांगसूरि	१०००
२५ नागार्जुनसूरि	४३४	३७ फल्गुमित्रसूरि	१०४९
२६ भूतदिन्नसूरि	५१३	३८ धर्मघोषसूरि	११२७
२७ कालिकसूरि	५२४	३९ विनयमित्रसूरि	१२१३
२८ सत्यमित्रसूरि	५३१	४० शीलमित्रसूरि	१२९२
२९ हारिलसूरि	५८५	४१ रेवतिमित्रसूरि	१३७०
३० जिनभद्रसूरि	६४५	४२ स्वप्नमित्रसूरि	१४४८
३१ उमास्वातिसूरि	७२०	४३ अर्हन्मित्रसूरि	१४९३
३२ पुष्पमित्रसूरि	७८०		

लोकप्रकाशसर्ग ३४ युगप्रधाननामानि यथा, विषमेऽपि च कालेऽस्मिन् भवन्त्येव महर्षयः, निर्ग्रंथैः सदृशाः केचिचतुर्थारक-

वर्त्तिभिः ॥ १०० ॥ + + + श्रीसुधर्माच जंबूश्च, प्रभवः-सूरिशेखरः, शय्यंभवो यशोभद्रः, संभूतिविजयाह्वयः ॥ ११४ ॥ भद्रबाहूस्थूलभद्रौ महागिरिसुहस्तिनौ, घनसुंदरश्यामायौ स्कन्दिलाचार्यइत्यपि ॥ ११५ ॥ रेवतीमित्रधर्मोऽथभद्रगुप्ताभिधोगुरुः श्रीगुप्तवज्रसंज्ञार्यरक्षितौपुष्पमित्रकः ॥ ११६ ॥ प्रथमोदयस्यैते विंशतिः सूरिसत्तमाः, त्रयोविंशतिरुच्यन्ते द्वितीयस्याथनामतः ॥ ११७ ॥ श्रीवज्रोनागहस्तिश्च रेवतीमित्र इत्यपि, सिंहोनागार्जुनो भूतदिन्नः कालकसंज्ञकः ॥ ११८ ॥ सत्यमित्रोहारिलश्च जिनभद्रोगणीश्वरः, उमास्वातिः पुष्पमित्रः संभूतिसूरि कुंजरः ॥ ११९ ॥ तथा माढरसंभूतो धर्मश्रीसंज्ञको गुरुः ज्येष्ठांगः फल्गुमित्रश्च धर्मघोषाह्वयोगुरुः ॥ १२० ॥ सूरिर्विनयमित्राख्यः शीलमित्रश्च रेवतिः, स्वप्नमित्रोर्हन्मित्रो द्वितीयोदयसूरयः ॥ १२१ ॥ स्युस्त्रयोविंशतिरेवसुदयानां युगोत्तमाः, चतुर्युक्ते सहस्रे द्वे मिलिताः सर्वसंख्यया ॥ १२२ ॥ एकावताराः सर्वेऽमी सूरयोजगदुत्तमाः, श्रीसुधर्माश्च जंबूश्च ख्यातौ तद्भवसिद्धिकौ ॥ १२३ ॥ अनेकातिशयोपेता, महासत्त्वा भवन्त्यमी, घ्नन्तिसार्धद्वियोजन्यां, दुर्भिक्षादीनुपद्रवान् ॥ १२४ ॥ इत्यादि लोकप्रकाशमें लिखा है

उक्तं च-येषां हि वस्त्रे न पतन्ति यूका, न देशभंगः खलु एषु सत्सु, पादोदकेन गदोपशान्ति, युगप्रधानं मुनयोवदन्ति ॥ १ ॥ तृतीयोदये इत्येतन्नामानि दृश्यन्ते—पादलिप्तसूरि जिनभद्रसूरि हरि-

भद्रसूरि शांतिसूरि हरिसिंहसूरि जिनवल्लभसूरि जिनदत्तसूरि जिनपतिसूरि जिनचंद्रसूरि जिनप्रभसूरि धर्मरुचिगणि धर्मदेवगणि विनयचंद्रसूरि शीलमित्रसूरि देवचंद्रसूरि हेमचंद्रसूरि श्रीचंद्रसूरि जिनभद्रसूरि समुद्रसूरि सुरसूरि श्रीचारित्रसूरि धर्मघोपसूरि सूरप्रभसूरि सूरप्रभसूरि जिनशेखरसूरि जिनप्रभसूरि श्रीविमलसूरि मुनिचंद्रसूरि श्रीदेवेन्द्रसूरि समुद्रसूरि श्रीदेवचंद्रगणिः श्रीलाभानन्दगणिः श्रीकीर्त्तिसारगणिः इत्यादि अष्टनवतिसंख्यया तृतीयोदये युगप्रचराः भविष्यन्ति कियन्तः प्रागभूता च तृतीयस्य वर्पसंख्या इमा १४६४ सूरिसंख्यापूर्वं निर्दिष्टा श्रीसुधर्मतः समारभ्य सुविहितपरंपरायां चतुरशीतिगच्छपरंपरायां च ये युगप्रधानाः युगप्रधानसमा ये च महान्तः प्रभावका सूरयो प्रागभूता ये च भविष्यन्ति सर्वे ते गुणवन्तो ददातु भद्राणि संघाय, पुनरत्र यु० सूरिणां गृहस्थादि पर्यायप्रबोधकानि यन्त्रकोष्टकानि सन्ति तदपि यथा दृष्टानि तथा लिख्यंते तथाहि—गृहस्थ, व्रत, युगप्रधानपद, सर्वायु—वर्पसंख्या,

॥ प्रथम उदय वर्प ६१७

प्र उ	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
गृ	५०	१६	२०	२८	२२	४२	४५	३०	३०	२४	२४	२०	२२	१३	१८	२१	३०	८	११	१७
व्र	३०	२०	६४	११	१४	४०	१७	२४	४०	३०	३२	३५	४८	४८	४०	४५	५०	४४	५१	३०
यु प्र	२०	४४	११	२३	५०	८	१४	४५	३०	४६	४४	४१	३८	३६	४४	३९	१५	३६	१२	२०
सर्वा	१०	८०	१०५	९२	८६	९०	७६	९९	१०	१०	१०	९६	१०८	९८	१ २	१०५	१०	८८	७५	६७

२३ दत्तसूरि०

द्वितीय उदय वर्ष १३४६

यु. प्र. २३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
गृ.	९	१९	२०	१८	१४	१८	१२	१०	१७	१४	२०	८	१०	१०	१५	१२	१४	८	१०	११	९	१२	२०
व्रत.	११६	२८	३०	२०	१९	२२	६०	३०	३०	३०	१५	३०	१९	३०	२०	१८	१३	१५	१९	२०	१६	१८	१६
यु.प्र.	३	६९	५९	७८	७८	७९	११	७	५४	६०	७५	६०	४९	६०	४०	७१	४९	७८	८९	७९	७८	७८	४५
सर्वायु	१२८	११६	१०९	११६	१११	११९	८३	४७	१०१	१०४	११०	९८	७८	१००	७५	१०१	७६	१०१	११५	११०	१०३	१०८	८१

तृतीय उदय वर्ष १९६१ युग प्रधान ९८

यु प्र ९८	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
गृ	९	१०	१६	१५	२०	१५	१०	१२	१५	२०	२५	१२	२६	१४	११
न प०	८७	२०	४०	५०	३०	३०	३०	१२	३०	३०	३५	२०	३०	३०	३०
यु प्र	९	४५	५०	३०	४०	३०	३०	१२	३८	३८	३०	२९	७५	२९	३२
सर्वायु	१००	७५	१०६	९५	९०	७५	७०	३६	८३	८८	९०	७१	८१	७३	७३

इत्यादियन्त्रकोष्टकओरविजाणना, यथादृष्टलिखाहै ऊपरोक्त-युगप्रधानोंकेनामक्रममेंभि आगेपीछेपणासंभवेहै, और एक युग-प्रधानकेनाम स्थानमें २–३ नामान्तरभिदेखणेमें आवे है, और प्रायें वहुत ठिकाणें एसा है, पर्यायान्तरभिसंभवे है, और युगप्रधानोंकाक्रमभि प्रायेंलिखेप्रमाणें बरोबर नहिं मिले है, और सर्वायुवर्षसंख्यावगेरेभिप्रायेंबरोबरनहिंमिलता है और लिखेहुने यंत्रादिककेसाहायसें कितनेकयुगप्रधानोंकेकेवल नाम मात्रतो प्रायें मिलतें है, और पूर्ण विश्वासुकपणें सर्व इष्टसिद्धि नहीं होसके है, परंतु मेने तो जैसाअक्षरदेखावैसालिखा है, अब विशेषपणें अधिकृत विषयकों लिखदिखातें हैं, कि–सामान्य यंत्र विशेषयुगप्रधानयंत्र सर्वसामान्ययंत्र छुटकरयंत्र इनमें युगप्रधा-नोंका विषय है और यहयंत्रदेखनेमेंभिआते है प्राचीनभि है तथापि यथावस्थितप्रमाणसहनशील नहींहै नमालुम क्या कारण है सो ज्ञानिगम्य है प्रसिद्ध अप्रसिद्धपणेमें नजाणेंक्या कारण है कितनेक युगप्रधानतो प्रसिद्ध हैं और कितनेक युग-प्रधान अप्रसिद्ध है, इतिहास वगेरेमे, गौण मुख्य नाम नामान्तर भेदहोणेसें, पठनलिखनकीअभ्यासप्रवृत्तिकेअभावसें, सत्संप्र-

दायके जाणनेवाले अल्पहोणेसें, अथवा लेखकप्रमादसें नाम अंकोंकाअस्तव्यस्तपणाभि होणेसें यंत्र विशेपलाभदायक नहीं संभव है, और विशेप परमार्थतो सत्‌संप्रदायिगीतार्थजाणें, वा केवली महाराज जाणें, प्रश्न युगप्रधान एकहि संप्रदाय विशेप गच्छमें होतें हैं या भिन्न भिन्न गच्छमें होवे है, उत्तर—प्रायें भिन्न भिन्न समुदायविशेप गच्छोंमेंहि होवे है, एसासंभव है, एकहि गच्छ विशेपमें होवे ऐसा संभव नहीं है, और युगप्रधानोंकी सुवि-हित समाचारी होवे है, यह निश्चय है, और आगम आचरणाविरुद्ध मनकल्पित स्वकपोलकल्पित समाचारी नहींहोवे यहभिनिश्चय है, "सव्वगुणेसु अप्पडिवाई" इस वचनसे, और अलग अलग-गच्छोंमें होनेपरभि सुविहित एक समाचारी होणेसें, अनुक्रमें सरलंग दो हजार चार (२००४) युगप्रधानोंकी एकपाटपरंपरागिण-नेसें, एक गच्छ कहा जावे तो कोइ हरजनहीं है, अन्यथा नहीं संभवे है, सर्वयुगप्रधानोंकावचनसर्वगच्छवालोंकेमाननीयहोवे है, जिसनेयुगप्रधानोंके वचनोंका अनादरकिया उसने जिनाज्ञा भंगकिया यहनिःसंदेहजाणना और गुरुपरम्परासंप्रदायभि एसाहि है और विशेपपरमार्थज्ञानीगम्य है, और श्रीगुरुमहा-राजनें जिन अक्षरोंकोउच्चारणकरके नाम या पदवी दिया होवे वैसाहि कहा जावे और लिखा जावे, प्राचीनसंप्रदायभि ऐसाहि देखनेमे आवे है, इसलिये कितनेक युगप्रधानोंके नामोंके अंतमें, अमुकआचार्य, अमुकसूरि, अमुकगणि, अमुकक्षमाश्रमण, अमुक वाचनाचार्य वगेरे पदान्तवाले युगप्रधानोंकानामदेखनेमें

आवे है, सर्वगच्छके श्रीसंघमें और युगमें प्रधानहोणेसैं अर्थात्-श्रीवीरशासनमें प्रधानहोणेंसें, युगप्रधानाचार्य महाराज होतें हैं और युगप्रधानाचार्य महाराजके वस्त्रोंमे जूं नहीं पडे १ जिस देशमें वा नगरादिकमें विचरते होवे उसका भंग न होवे २ चरणप्रक्षालित जलसें रोगकी शांति होवे ३ दुर्भिक्ष दुःकालादि १० कोशपर्यंत उपद्रव न होवे ४ यह ४ अतिशय संयुक्त होवे है, अतः सर्वयुगप्रधानोंके वचनोंमे शंकारहित अप्रतिहतपणें प्रवृत्तिकरणी चाहिये और ऐसे महाप्रभावक युगप्रधान आचार्योंको न माने न पूजे और निंदाअ वर्णवादादि करे वह पुरुष मिथ्यात्वी अज्ञानी है और इस अवसर्पिणीकालके पाचमे आरेमें २३ उदयमें श्रीमहावीरभगवन्तके निर्वाणसैं श्रीसुधर्मास्वामीसैं लेके यावत् श्रीदुप्पसहसूरिपर्यन्त दो हजार चार युगप्रधान होगा, बाद धर्मान्त होगा, और यह २००४ की संख्या इस तरह होणेसैं पूर्णहोगी कि एक युगप्रधानकेस्वर्गजानेपर दूसरा युगप्रधानका पाट महोत्सव होवेगा इसअनुक्रमसैं पांचमे आरेके २१ हजार (२१०००) वर्ष पूर्ण होगा और धर्मांत होगा इस तरह होनेसैं इस समय ५९ मा युगप्रधान विचरते होने चाहिये वि० सं० १९७२ के सालमें पाट महोत्सव है जिनोका ऐसे सिद्धगेहसूरि नामका चाहीये और विशेष तत्त्वकेवलीगम्य है.

और नवाङ्गवृत्तिकर्त्ता श्रीअभयदेवसूरिजी रचित आगमअष्टोत्तरीके वचनसैं श्रीवीरस्वामीके प्रथमपदमे श्रीगौतमस्वामी द्वितीयपट्टे श्रीसुधर्मास्वामी तृतीयपट्टे श्रीजम्बूस्वामी इत्यादि गणधरपरपरा जाणना और श्रीपुष्पमित्रादि अरिहमित्रपर्यन्त नामके आचार्य पूर्व-

श्रुतगतसत्तामें हो चुके ऐसा संभवे है निश्चयसें तो श्रीज्ञानीमहाराज जाणें और श्रीगणधरसार्धशतकप्रकरण १ श्रीगणधरसार्धशतकबृहत्-वृत्ति २ तथा लघुवृत्ति ३ उपदेशतरंगिणीप्रकरण ४ कल्पान्तरवाच्या ५ समाचारीशतक ६ श्रीकोटिकगच्छपट्टावलीप्रकरण ७ उपाध्याय श्रीक्षमाकल्याणगणिकृत खरतरगच्छपट्टावली ८ श्रीगुरुपारतंत्र्य-स्मरण ९ प्राचीन जैन इतिहास वगेरे ग्रंथोंसें श्रीजिनदत्तसूरि आदि आचार्योंको युगप्रधानपद प्राप्त होवे है, अर्थात् युगप्रधानकरके लिखे हैं, और मध्यस्थ आत्मार्थी धर्मार्थी गुणानुरागी भव्य जीवोंके दृष्टिपथमें आयरहे हैं, और इससेंभी प्राचीनप्रमाण ६ ग्रंथोंका ऊपर लिखआयें हैं अखंड गुरुपरम्परा संप्रदायभी ऐसाहि है, इससें यह निश्चय हूवा कि श्रीजिनदत्तादिआचार्ययुगप्रधान है, अतः इनमहापुरुषोंकाचरित्रादिवर्णनकरनासम्यक्त्वादि गुणोंकी प्राप्तिमें हेतु भूत अतिउत्तम कार्य है इसलिये श्रीवीरनिर्वाणसें श्रीवर्द्धमानस्वामीके पट्टपर श्रीगौतमसुधर्मादिक युगप्रधानोंसें लेकर श्रीजिनवल्लभसूरिजीपर्यन्त युगप्रधानमहाराजोंकाचरित्रकह्योंके अन-न्तर क्रम प्राप्त युगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरिजीमहाराजका चरित्र कहेतें हैं, तद्यथा—श्रीमंतःप्रभुपुंडरीकगणभृन्मुख्यागणाधीश्वरा-स्त्रैलोक्याच्र्च्ययुगप्रधानकमलाभूपाभृताः सूरयः, अन्येच प्रवरा मुनीं-द्रनिकराः श्रीसाधुसाधुव्रजाः, श्रीकल्पद्रुमजैत्रचारुमहसः कुर्वन्तु-वः सत्फलं ॥ १ ॥ नानालब्धिनिधिनदीपरिदृढश्रीपुंडरीकादिम, ज्ञानध्यानचरित्रसद्गुणगणावासानगारेश्वरान्, संस्तुमः, मयकात्र-वृत्तमिषतः संप्राप्यपुण्यं ततो, भव्यौघः प्रतनोतु सिद्धिकमला-

पाणिग्रहणोत्सवम् ॥ २ ॥ लब्ध्वायदीयचरणांबुजतारसारं, स्वादच्छटाधरितदिव्यसुधासमूहं, संसारकाननतटेह्यटतालिनेव पीतो मया प्रवरबोधरसप्रवाहः ॥ ३ ॥ वन्दे मम गुरुं तं च, सूरिकृपाचंद्राह्वयं, परोपकारिणां धुर्यं, चित्रं चारित्रमाश्रितम् ॥ ४ ॥ कमलदलविपुलनयनाः, कमलमुखीकमलगर्भसमगौरी, कमलेस्थिताः भगवती, ददातु श्रुतदेवता सौख्यम् ॥ ५ ॥ अधुनैतत्प्रकरणकाराणां श्रीजिनदत्तसूरीणां यथाश्रुति यथास्मृति किंचिच्चरित्रमुत्कीर्त्यते, व्याख्या—अब क्रम प्राप्त और पूर्वनिर्दिष्टप्रकरणके कर्त्ता अंवाप्रदत्त युगप्रधानपदधारक एकलाख तीसहजार घरकुटुम्ब प्रतिबोधक और तीसरे भवमें सकलकर्म निर्जरी मोक्ष जानेवाले और इस पंचमआरेमे सर्वोत्कृष्टपणें श्रीवीरशासनकी तथा धर्मकी तथा संघकी वृद्धि करणें पूर्वक महाउपकारकरणेंवाले मुख्य आचार्य श्रीजिनदत्तसूरीश्वरकास्तुतिधर्मदेसनादिरहितकेवल मूलमात्रचरित्रलेशस्मृतिकेअनुसार जैसासुणा है उसीतरह कुंच्छ विन्दुमात्र कहनेमें लिखनेमें आता है, तथाहि—प्रथम श्रीजिनेश्वरसूरिजीके समयमेंश्रीधर्मदेवउपाध्यायभए उन्होंकी गीतार्थी साधवीयोंने सिद्धान्तकीजाननेवालीगीतार्थी वहुत साध्वियों है उनमें कितनीक साधवीकोंने धवलक नामके नगरमें चतुर्मासक किया था वहां क्षपणक भक्त (आशाम्बर भक्त) हुम्बडगोत्रीय वाछिकश्रावककीस्त्रीवाहडदेवी नामकी पुत्रसहित रहती थी साध्वियोंके पासमे धर्मसुननेको आतीथी साध्वियोंभी विशेप करके उसको धर्मकथादिक कहती थी वाहडदेवीभी पुत्रसहित श्रद्धापूर्वक

सुनती थी और साध्वियों पुरुषका लक्षण शुभाशुभ गुरूके उप-
देशसे जानती हैं उसके पुत्रका प्रधान लक्षणदेखके लाभके
निमित्त वाहडदेवीको ऐसा उपदेश दिया कि जिससे कहे माफक
करनेवालीभई वाद श्रमणियोंने वाहडदेवीसे कहा हे धर्मशीले
यह तेरा पुत्र विशिष्ट युगप्रधानके लक्षण धारनेवाला है इसलिये
जो तैं इसको हमारे गुरूको देवे तव तेरेको महाधर्मका
लाभ होवे औरसुन यहतेरापुत्रसर्वजगत्कामुकुटभूतपूज्यहोगा
वाहडदेवीने भी आर्यायोंकावचनअंगीकारकियावादचतुर्मासिके-
अनन्तरश्रीधर्मदेवउपाध्यायको साध्वियोंने कहवाया कि हमको
यहां एकरत्नमिलाहै जो आपके ध्यानमें आवे तो ठीक
होवे इसलिए आप यहां कृपा करके पधारें वाद श्रीधर्म-
देव उपाध्याय धवलक नाम नगरमेंआए उसवालककोदेखा
और निश्चयकिया कि यहसामान्यपुरुष नहीं है किंतु प्रशस्त
लक्षणयुक्त पुण्यशाली वड़ेपदके योग्य होगा उस पुत्रकी मा-
तासे पूछा इस तेरे पुत्रको दीक्षादेवें यह तेरे सम्मत है तव
वाहडदेवी वोली हे भगवन् प्रसन्न होके आप दीक्षा देवें जिससे
मेराभी निस्तार होवे तवउपाध्यायने और पूछा इसकी कितने
वर्षकी उमर है वाहडदेवी वोली ११३२ का जन्म है जव इसका
जन्म हुआ था तव वहुतही प्रशस्तवातें भई थीं जवयहगर्भमें
आया था तव प्रशस्त स्वप्नहुआथा ऐसा सुनके धर्मदेव उपा-
ध्यायने ११४१ के सालमें शुभ लग्नमें दीक्षा दिया सोमचन्द्र ऐसा
नाम स्थापा उपाध्यायोंने सर्वदेवगणीसे कहा तुम्हारे इसकी रक्षा
करनी अर्थात् प्रतिपालना करनी वहिर्भूमिवगेरह लेजाना क्रिया-

कलापका सिखाना इत्यादि, और श्रावककेसूत्रादिपाठ तो उसके पहले घरमें रहे हुएही सीखा है "करेमि भन्ते सामाइयं" इत्यादि पढाना शुरू किया पहिलेहीदिन सोमचन्द्र मुनिको वहिर्भूमि लेगए सर्वदेवगणी ॥ वाद सोमचन्द्रने नहींजाननेसे क्षेत्रमें वनस्पतिके पत्र तोडे तव शिक्षानिमित्त रजोहरणमुखवस्त्रिका लेके सर्वदेवगणी वोले दीक्षा लेके क्षेत्रमें क्या पत्रतोड़ेजावे हैं इसलिए तैं अपने घरजा तब उत्पन्नभईहैप्रतिभाजिसको ऐसा सोमचन्द्र बोला आपने युक्त किया परन्तु मेरी जो चोटीथी सोआपदीजिए जिससे मैं घरजाऊं ऐसा कहनेसे सर्वदेवगणी को आश्चर्यहुआ और विचारा अहो छोटीउमरका है तथापि कैसा इसने उत्तर दिया इसको क्या कहा जावे वाद उससें कहा हेवत्स ऐसा करनानहीं तव सोमचन्द्र बोला हे भगवन् यह मेरा एकअपराधक्षमा करें वाद गणिवर सोमचन्द्रको उपाश्रयलेआए यहवार्ता धर्मदेवउपाध्यायके आगेभई धर्मदेव उपाध्यायने विचारा योग्यहोगा गुणविशिष्टहोगा इसकी रक्षा अच्छीतरहसे कीजावे गणमें आधारभूत होगा ऐसा विचारके सर्वदेवगणीसेकहा इसकीरक्षा अच्छीतरहसे करनी वादमें विहार-करके पाटन आए लक्षण नाम व्याकरण न्यायपंजकादिशास्त्र पढ़नेशुरूकिए सोमचन्द्रने, एकदा भावड़ाचार्यकी धर्मशा-लामे पंजिका पढ़नेके लिए जाते हुए सोमचन्द्रको किसीउद्ध-तने कहा जैसे अहो यह सितपट कपलिका (पुस्तक विशेष) हाथमें किसवास्ते रखते हैं अर्थात् पुस्तक लेके क्यों फिरते हैं

तब सोमचन्द्रबोले तेरेको निरुत्तर करनेके लिए और अपना मुखमण्डनके अर्थ, निरुत्तर होके चला गया कुछ नहीं बोलसका धर्मशालामें गए वहां अनेक अधिकारियोंकेपुत्रपंजिका पढ़ते हैं कोई वक्त आचार्यने परीक्षाके वास्ते पूछा कि भो सोमचन्द्र न विद्यते वकारो यत्र स नवकारः इति यथार्थनाम ? नहीं विद्यमान है वकार जिसमें वह नवकार यथार्थ नाम है तब शीघ्रबुद्धिमान सोमचन्द्र बोला आचार्य ऐसा नहींकहें किंतु नवकरणं नवकारः ऐसी व्युत्पत्ति करनी अर्थात् अंगुलियोंके बारहविश्वोंपर नवबेर गुनना वह नवकार कहाजावे पंचपरमेष्ठीके १०८ गुणका स्मरण नवकारमें होता है ऐसा सुनके आचार्यने जाना अत्यन्त यह श्रेष्ठ उत्तर है इसके साथ कोई छात्र नहींबोलसकताहै अन्यदा लोचके दिनमें सोमचन्द्र पढ़नेको नहीं गया और व्याख्यान व्यवस्था तो ऐसी है की जो एकभी विद्यार्थी नहीं आवे और सब विद्यार्थी आजावें तथापि आचार्य पाठ देवेनहीं बाद आचार्य ने पाठ जब नहींदिया तब गर्भसहित अधिकारियोंके पुत्रोंने आचार्यमिश्रसें कहा हे भगवन् सोमचन्द्रके ठिकाने यह पाषाण रखा है आप व्याख्यान कहिए तब उन्होंके उपरोध (आग्रह) से आचार्यने व्याख्यान किया ॥ दूसरे दिन सोमचन्द्र आया पूछा गतदिनमें व्याख्यान मेरे विना क्या आपने कहा तब आचार्य बोले तेरे ठिकाने इन छात्रोंने पाषाण रक्खा सोमचन्द्र बोला कौन पाषाण है और कौन नहीं है ऐसा अभी जाना जायगा जितनी पंजिका पढ़ीहै मेरेसेभीपूछें इन्होंसेभीपूछें जो यथार्थ व्याख्यान नहीं

करेगा वही पापाण है आचार्य बोले भो सोमचन्द्र तुमको प्रज्ञादि सौरम्य गुणाढ्य कस्तूरीके जैसा जानता हूं परन्तु इन मूर्ख लोगोंने व्याख्यान करनेमें मेरी प्रेरणा करी इस कारणसे क्षमाकरना ऐसे पंजिका पढी अशोकचन्द्राचार्यने उपस्थापना किया अर्थात् वड़ी दीक्षा दी हरिसिंहाचार्यने सर्वसिद्धान्त पढ़ाए और मन्त्रकी पुस्तकें पण्डितसोमचन्द्रकोदी जिसपुस्तकपर हरिसिंहाचार्यने सिद्धान्तकी वाचना ग्रहण करी थी वह पुस्तक प्रसन्न होके सोमचन्द्रको दी देवभद्राचार्यनेभी संतुष्टमान होके लिखनेकी सामग्री दी जिससे महावीर चरित पार्श्वनाथ चरितादि चार कथाशास्त्र पट्टीपर लिखे इस प्रकारसे पण्डित सोमचन्द्रगणी ज्ञानी ध्यानी सैद्धांतिक सब लोगोंका मन हरन करनेवाला व्याख्यान करके श्रावकोंके मनमें आल्हाद करते सर्वाचारपालते हुए ग्रामानुग्रामविचरते भए ॥ इधरसे श्रीदेवभद्राचार्यने श्रीजिनवल्लभसूरि देवलोक गए यह सुना विचारकिया अत्यन्तचित्तमेंसंतापभया अहो सुगुरूकापद उद्योतनानहुआथा प्रकाशितकियाथा परन्तु देववशसे थोडे दिनोंमें जिनवल्लभसूरिकाआयुःपूर्णहोगया अब क्याकिया जावे ऐसे विचारते देवभद्राचार्यने औरभी ऐसा विचारकिया जो श्रीजिनवल्लभसूरिजी युगप्रधानकेपट्टपरयोग्यआचार्यस्थापने कर नहीं आदरकियाजावे तब क्या हमारी भक्ति है इसलिये कोईयोग्यव्यक्तिको आचार्यपददेके श्रीजिनवल्लभसूरिजीके पट्टधर करें तब मनोरथसफलहोवे बादमें विचारकरने लगे पद योग्य कौन है उतने पण्डित सोमचन्द्रगणीका स्मरण हुआ निश्चय

विचार किया सोमचन्द्रगणीहीयोग्य है श्रावकोंको ज्ञानध्यान क्रियामेंप्रवर्तानेकर आनन्दकारीहै वाद सबकी सम्मतिसे पण्डित सोमचन्द्रको लेख भेजा उसमें लिखा चित्रकूट (चितौड़) नगरमें जल्दीआना जिससे श्रीजिनवल्लभसूरिजीके पट्टपर पद स्थापन होगा ऐसापत्र लिखा उसमें औरभीलिखा नहीं जाना जाय है कौनवैठेगा श्रीजिनवल्लभसूरिजी जब आचार्य भए तब तुम नहीं आए इसवक्त श्रीजिनवल्लभसूरिजीके पट्टपर वैठनेके लिए वहुतसे विशालहैंनेत्र जिन्होंके गौरवर्णवाले वड़े २ कान हैं जिन्होंके ऐसे साक्षात मकरध्वजके जैसे गुर्जरदेशमें उत्पन्न भए साधुः उद्यमवानभएहैं परन्तु योग्यतातो गुरूही जाने है ऐसा पत्रभेजा वादमें देवभद्राचार्य और पण्डित सोमचन्द्र औरभी साधुः चित्रकूट आए सवलोग जानते हैं सामान्य प्रकारसे, श्री-जिनवल्लभसूरिजीके पट्टपर आचार्य होंगे परन्तु नहीं जाना जावे है कौनवैठेगा श्रीजिनवल्लभसूरिप्रतिष्ठित साधारण श्रावकने करवाया श्रीमहावीरस्वामीका चैत्यमें पद स्थापन होगा वाद विचारा हुआ लग्नका दिन उसकेपहलेदिन श्रीदेवभद्राचार्यने एकान्तमें सोमचन्द्रगणीसेकहा अमुकदिन तुम्हारेलिए पदस्थापनका लग्न विचारा है पण्डित सोमचन्द्रने कहा जो आपके ध्यानमें आवे सो युक्त है परन्तु जो इसलग्नमें पदस्थापना करेंगे तब वहुत काल जीना नहीं होगा ६ दिनोंके वाद अर्थात् वैशाखवदिछठ शनिश्चरवारको लग्न अच्छाहै उसलग्नमें पदस्थापना करनेसे अपने चारों दिशामें विहारकरनेसे चार प्रकारका श्रीश्रमणादि

संघ श्रीजिनवल्लभसूरिकेवचनसे वहुतहोगा चिरकालजीवित होगा तव श्रीदेवभद्राचार्यबोलेयहीहमविचारतेहैं वह लग्नभी दूर नहीं है वाद उसदिन श्रीजिनवल्लभसूरिके पट्टपर विस्तार विधिसे संध्यासमयलग्नमें पदस्थापनाकिया अर्थात् पण्डित सोमचन्द्रगणीको आचार्यपद दिया श्रीयुगप्रवर जिनदत्तसूरि, ऐसा नामकिया तदनंतर वादित्रवाजते उपाश्रयआए प्रतिक्रमणके अनन्तर वन्दनादेके श्रीदेवभद्रसूरिनेकहा देशनादेओ तव सिद्धान्तोक्त उदाहरणको अनुसरण करके अमृतश्रावणी गीर्वाण वाणी प्रवन्धकरके अर्थात् प्राकृत संस्कृत भाषासे श्रीजिनदत्तसूरिपूज्योंने ऐसीदेशनाकरीकि जिसको सुनके सव प्रजारंजित भई और लोग कहने लगे सिंहोंके स्थानमें सिंहही बैठे हुए शोभे है सोमचन्द्रगणिका शरीर छोटा था और श्यामवरण था उन्होंको देखके जव पदस्थापनाका निर्णय भया तव लोगोंने विचारा यह क्या बैठेगा गौरवरण विशाललोचन ऐसे गच्छमें वहुत साधु हैं इत्यादि लोगोंकेमनमेंविचारथा सो सव दूर होगया लोग कहने लगे अहो धन्य है यह देवभद्राचार्य जिन्होंने ऐसे रत्नकी परीक्षा करी और हमारे जैसे अल्पबुद्धिवाले आप्तलक्षण क्याजानें वादमें विहार करते हुए और भव्योंको प्रतिवोधते असत्मार्गको दूर करते सद्मार्गमे प्रवृत्ति कराते क्रमसे गुर्जरदेशमे पाटणनगर आए संघने महोत्सवके साथ प्रवेशकराया देशना दिया देशना सुनके लोग कहने लगे यह आचार्य क्या आए हैं साक्षात् वृहस्पति आए हैं साक्षात् गणधरके अवतार हैं अन्य दिनमें श्रीदेवभद्राचार्यने

जिनदत्तसूरिजीसे कहा कितने दिनोंके अनन्तर श्रीपत्तनसे विहार करना श्रीजिनदत्तसूरि बोले इसीतरह करेंगे ॥ अन्यदिनमें जिन-शेखरने साधुविषयमें कुछ कलहादिक अयुक्त किया तब देवभद्रा-चार्यने निकाल दिया बाद जहां जिनदत्तसूरि बहिर्भूमि जाते थे वहां जाके रहा वहां आए भए पूज्योंके पगोंमें पड़कर दीनवचनसे जिनशेखर बोला हेप्रभो मेरा यह अन्याय एकवक्त आप क्षमा करें दूसरी वक्त ऐसा नहीं करूंगा तब कृपासमुद्र श्रीजिनदत्त-सूरिने जिनशेखरको प्रवेशकराया अर्थात् ले आए उसके बाद देवभद्राचार्यने कहा तुमने युक्त नहीं किया यह दुरात्मा तुमको सुखदेनेवाला नहीं होगा पामायुक्त उष्ट्रके जैसा इसको बाहिर निकालनाही युक्त है तब श्रीजिनदत्तसूरि बोले श्रीजिनवल्लभसूरिके पीछे लगा हुआ यह है अर्थात् साथमें यह रहताथा जबतक यह आज्ञामें वर्तता है तबतक रखते हैं देवभद्राचार्य बोले जैसी इच्छा बाद श्रीदेवभद्राचार्य आदिकने पाटनसे अन्यत्रविहारकिया कितने कालके बाद समाधिसे आयुःपूर्ण करके स्वर्गपधारे, श्री-जिनदत्तसूरिभी पत्तनसे विहारकरनेकीइच्छा करते श्रीदेवगुरु-सरणके अर्थ तीन उपवास किए तदनंतर देवलोकसे श्रीहरिसिंहा-चार्य आए और बोले किसवास्ते मेरा सरण किया आचार्य बोले कहां विहारकरें तब हरिसिंहाचार्यदेव बोले मरुस्थलादि देशोंमें विहार करना ऐसा कहके अदृश्यहोगए जबतक पूज्य नहीं रहते हैं विहार करनेवाले हैं लब्धोपदेश हैं उतने मरुस्थलमें रहनेवाले मेहर, भाषकर, वासल भर्तादिक श्रावक व्योपारकेवास्ते वहां आए

वहां श्रीजिनदत्तसूरिगुरूका दर्शन करके और देशना सुनके संतोप पाया वहुत हर्षित भए और श्रीजिनदत्तसूरिजीको गुरूपने अंगीकार किया भरतआचार्यके पासमें अध्ययन करनेको रहा और मेहरमापकरादि स्वस्थान गए अपने कुटुम्बके आगे गुरूके गुणका वर्णन करे इसवक्तमें शुद्धचारित्र पालनेवाले कलिकालमें सर्वज्ञतुल्य श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज हैं इत्यादि, वादमें विहारकिया उस देशमें प्रवेशभया और नागपुर (नागौर)में आए वहां श्रावक धनदेवसेठ भक्ति करे आयतन अनायतनादि विचार सुनके धनदेवने कहा हेभगवन् मेराकथनआप करें तो सव श्रावकवर्ग आपके परिवारभूत होजाय तव पूज्योंने नहीं जानते होवें ऐसे होके वोले हे धनदेवसेठ वह क्या हे तव धनदेव वोला हे भगवन् आयतन अनायतन विधि अविधि सर्व विपयमें आप नहीं कहते हैं तो सव लोग आपके भक्त होजावें ऐसा सुनके श्रीपूज्योंने कहा हे धनदेव सुनो

तावकीनं, वचनं कुर्मो, उत नु तीर्थ कृतां ।
"यदनायतनं सूत्रे, भणितं तद्ब्रूमहे नियतं" ॥ १ ॥
उत्सूत्र भापणात्पुनरनन्तसंसारकारणात् वहुशः
किं लोकेन त्वग् रोगिणो, भवेत् प्रचुरमक्षिकासंगः २
"मैवं मंस्था वहुपरिकरो जनो जगति पूज्यतां याति ।
येन वहुतनययुक्तापि शूकरीगूथमश्नाति" ॥ ३ ॥

अर्थः-तुम्हारेवचनकरें अथवा तीर्थंकरोंके वचन करें जो सूत्रमें अनायतन कहा है वह हम कहते हैं ॥ १ ॥

उत्सूत्र भाषणकरनेसे अनन्तसंसारपरिभ्रमणकरना होता है तो ऐसे वहुत लोग इकट्ठे होनेसे क्या होवे है केवल भवभ्रमणही होवे है जैसे खगूरोगी पुरुषको वहुतमक्षियोंका संगहोवे तो क्या होवे अपि तु रोगवृद्धि होवे इसीतरह उत्सूत्रभाषण करनेसे संसार-वृद्धि होवे है ॥ २ ॥

ऐसा मत जानो कि वहुतपरिवारवाला मनुष्यलोकमें पूज्यता पावे है किंतु जिस कारणसे वहुत पुत्रयुक्त सूकरी विष्टा खाती है इसवास्ते जिनआज्ञासे विरुद्ध करनेवाला क्या प्रशंसनीय होवे है अपि तु नहीं होवे है ॥ ३ ॥

ऐसा अत्यन्त कर्णकटुक दुःखउत्पादक वचन धनदेवके भया तथापि गुरूको तो युक्तही कहना उहितहे कहाभी है

"रूसउवा परो मा वा, विसं वा परियत्तउ, भासि-
अव्वा हियाभासा, सपख्क गुणकारिआ" ॥ १ ॥

अर्थः—सुननेवाला नाराज होवे या न होवे परन्तु भासा ऐसी कहनी चाहिये जिसका परिणाम विषपरावर्तन होके अमृतका परिणाम होवे स्वपक्षगुणकारिणी वाधारहित होवे अर्थात् सिद्धान्तसे विरुद्ध नहीं होवे ॥ १ ॥

ऐसा सिद्धान्तप्रमाणसे आचार्यने कहा तव कितने विवेकी लोगोंने वचन प्रमाण किए और कितने मध्यस्थ रहे वाद नागपुरसे अजमेर तरफ विहार किया क्रमसे अजमेर आए वहां आशधर साधारण, रासल वगैरहः श्रावक रहते हैं श्रीजिनदत्तसूरि देव-वन्दनाके अर्थ वाहणदेव श्रावकका वना हुआ जिनमंदिरमें जाते हैं

अन्यदा वहांका आचार्य उसी चैत्यमे आया पर्यायसे छोटा है वह आचार्य चैत्यमें आए हुए जिनदत्तसूरि का व्यवहार नहीं करे तब ठक्कुर आशधर वगेरेह ने कहा यहा जिनमंदिरमें आनेका क्या फल है जो युक्त प्रवृत्ति न होवे बादमें देव वन्दनादि व्यहवार निवृत्त हुआ तब श्रावकों ने अरण राजसे विनती किया हेमहाराज हमारे गुरु श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज यहां पधारे हैं राजा बोले बहुत श्रेष्ठ हैं हमारे योग्य कार्य हो सो कहो, तब श्रावकों ने कहा हे देव कितनीक जमीन चाहिये है जिसमे जिनमंदिर वगैरह देवस्थान बनाए जावे और अपने कुटुम्बके रहनेके लिए घरभी बनाया जावे, बाद अरणराजने कहा दक्षिणदिग्भागमें जो पर्वत है उसपर जितनीजमीनचाहिये उतनी लेलो देवघरवगैरह वहां निशंक बनाओ. अपने गुरूका मेरेको दर्शनकराना यह स्वरूप आचार्यके आगे श्रावकोंने कहा आचार्य विचारके बोले अहो जो इस प्रकारसे हमारे दर्शनकी उत्कंठावाला है राजा उनको बुलानेसे गुणहीहोगा बाद गुरुका वचनके अनुकूल हुए श्रावकोंने भव्यदिनमे अर्णराजाका आमन्त्रण किया राजा शीघ्र आए श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराजको राजाने नमस्कार किया आचार्यने आशीर्वाद देके अभिनन्दित किया वह आशीर्वाद यह, है—

"विश्वविश्वविनिर्म्माणस्थितिप्रलयहेतवः ।
संतु राजेन्द्र भूत्यै ते, ब्रह्मश्रीपतिशंकराः" ॥ १ ॥

तथा—"नीतिश्चित्ते वसति नितरां लब्धविश्रांतिरुच्चैः
श्रीरस्याङ्के भुजयुगलमध्याश्रिता विक्रमश्रीः ।

एषोऽत्यर्थं क्षिपति वहुभिर्लोकवाक्यैः प्रियो मा-
मित्यर्णो राड् भ्रमति भुवनं कीर्तिरस्ताश्रया ते" ॥२॥

अर्थः—हे राजेन्द्र सव जगतकी रचना स्थिति और प्रलयके कारण ऐसे ये ब्रह्मा विष्णु शंकर तुह्मारे सम्पदाके लिए हो' ॥१॥

हे राजन् नीति चित्तमें वसे है अतिशय विश्रांति पाई है प्रयत्नसे जिसने और लक्ष्मी जिसके अंगमें रहती है और पराक्रम श्रीने दोनों भुजका आश्रय किया है वहुतलोगोंके वाक्यसे यह अर्ण राजा अत्यर्थ मेरी प्रेरणा करता है प्रिय ऐसा मानके कीर्ति तुह्मारा आ-श्रय नहींमिला है जिसको ऐसी जगतमें फिरती हैं इसका क्या कारण है ॥ २ ॥

इत्यादि सद्गुरुके मुखकमलसे निकली भई वाणी सुनके राजा संतुष्टमान हुआ और वोला आप कृपा करके निरंतर यहां ही रहें दर्शनका लाभ होगा, गुरु वोले महाराजने ठीक कहा परन्तु हमारी यह स्थिति है कि हम सर्वत्र विहारकरते हैं लोगोंके उपकारके लिए यहां पुनः पुनः आवेगें जैसे आपके समाधान होगा वैसा करेगें वादमें राजा प्रसन्न होके उठे आचार्यको नमस्कार कर के स्वस्थान गए वाद पूज्योंने ठक्कुर आशधरसे कहा यथा

"इदमन्तरमुपकृतये, प्रकृतिचला यावदस्ति संपदियं ।
विपदि नियतोदयायां, पुनरुपकर्तुं कुतोऽवसरः" ॥ १ ॥

यह संपदा स्वभावसे चपल है इससे उपकार होवे तवही इसका फल है इसलिए सुकृतमें इसका नियोग करना अर्थात् लगाना प्राणियोंकी आपदाका उद्धार करना जीवरक्षादि प्रकारमें इसका व्यय करना उचित है ॥ १ ॥

इस कारणसे स्तम्भनक शत्रुंजय, गिरनार इन तीर्थोंकी कल्पना करके श्रीपार्श्वनाथस्वामीश्रीऋषभदेवस्वामीश्रीनेमिनाथस्वामी इन्होंके बिंबोंकी स्थापनाका विचार करना ऊपर अंबिकादेव कुलिका नीचे गणधरादिस्थानविचारना ऐसा कहके श्रीपूज्योंने वागड़देशकीतरफ विहारकिया अच्छे शकुनभए वागड़के लोगोंको श्रीजिनवल्लभसूरिजीने पहलेही बोध दियाथा उन्होंका समाधान कियाथा श्रद्धालुः कियेथे जिनवल्लभसूरिजीके नाम ग्रहणमे भी नमनशील थे अर्थात् नमस्कारकरतेथे और जिनवल्लभसूरिजीके देवलोकगमनकीवार्ता सुनके उन्होंकाचित्तखिन्न हुआथा बादमें जिनवल्लभसूरिजीके पदपर स्थापित भए श्रीजिनदत्तसूरिनामकेगुरु ज्ञानध्यानगुणसहित श्रीमहावीरस्वामीवदनारविंदसे निकलाहुआ जो अर्थ श्रीसुधर्मास्वामी गणधर ने रचाहुआ सिद्धान्तके जाननेवाले युगप्रधान तीर्थंकरकल्प इस वागडदेशमें विहारकरके पधारते हैं ऐसासुनके बहुत हर्षित भए दर्शनकीउत्कंठा भई आचार्यकेचरणकमलमें वंदनाकरनेके लिए आए बाद श्रीपूज्योंका दर्शनकरके वंदना कर और देशना सुनके अत्यन्तआनन्द प्राप्तभए जो जो वह श्रावक प्रश्न करे उसका उत्तर केवलीके जैसा देताहुआ उन्होंके मनमे समाधान उत्पन्न करे कइयोंने सम्यक्त्वअंगीकारकिया केई देशविरति भए केइक ने सर्वविरतिपना अंगीकारकिया बहुतसंतोषपाए पूज्योंने यहां बहुत साधु बनाए, (५२) बावन साध्वी हुई ऐसा सुना जाते हैं उसीप्रस्तावमें जिनशेखरको उपाध्यायपददिया कितनेक साधुसाथमें देके रुद्रपल्लीभेजा, वह जिनशेखरउपाध्यायतप करतेहैं, सज्जनहारहतेहैं,

उन्होंके समाधानके लिए जिनशेखर उपाध्यायगए तथा यह स्वरूप अपने स्थान रहे हुए जयदेव आचार्यने सुना कि श्रीजिनवल्लभसूरिके पदपर श्रीजिनदत्तसूरिजी सर्वगुणयुक्त प्रतिष्ठित भएहैं, और विहारकर्ते हुए इस देशमें आए हैं बाद विचार किया यह अच्छाभया है श्रीजिनवल्लभ गणीने चैत्यवासका परिहारकरके श्रीजिनअभयदेवसूरिजीके पासमें वस्तीवास अंगीकार किया सुनके पहलेही हमारा वस्तिवास प्रतिपत्तिका अभिप्राय उत्पन्न भयाथा इस वक्तमें जाके गुरुका दर्शनकरें ऐसा विचारके परिवारसहित जयदेवआचार्य श्रीजिनदत्तसूरिजीकोवन्दनाकरनेकेलिए आए विनयसहित श्रीजिनदत्त सूरिजीको वन्दना करी आचार्यनेभी सिद्धान्तोक्त मधुर वचनोंसे जयदेवआचार्यकेसाथऐसावचनव्यवहारकिया कि जिससे सपरिवार जयदेवआचार्यका ऐसा परिणामभया कि इस भवमें हमारे यही गुरुहोवो उसके अन्तर शुभमुहूर्तमें जयदेवआचार्यने चारित्रका उपसंपद ग्रहण किया ॥

सनत्कुमारचक्रीके जैसा पीछा देखानहीं उस देशमें श्रीजिनप्रभाचार्य केवलिकपरिज्ञान नाम शकुनादिअवधारण परिज्ञानसे सबलोगोंमें प्रसिद्धथे वहजिनप्रभाचार्य तुरककेराज्यमेंगए किसी तुरक नायकने ज्ञानीजानके पूछा मेरे हाथमें क्या है आचार्यने विचारके कहा खडीमट्टीका टुकड़ा वालसहित है वह तुरकनायक खडीखंडजानता है वाल नहींजानता है आश्चर्यपाया हुआ हाथदिखाया तब वालखड़ीपरलगाहुआदेखा तब तुरकनायक खुशीभया चंगा २ ऐसा बोला हाथपकडकर चुंबनकिया बाद आचार्यने-

जाना यह मेरे को साथमें ले जायगा यह सिंधितुरक दुष्ट विचारवाला है कोई वक्त मेरेपर अनर्थभी करदेवेगा म्लेच्छोंका क्या विश्वासकिया जावे ऐसा विचारके रात्रिमे चलके अपने देशमें चले आए जयदेवआचार्यको वस्तीवासमार्गअंगीकार किया श्रीजिनदत्तसूरिजीके पासमें सुनके जिनप्रभाचार्यका अभिप्राय भया मैंभी चैत्यवासकात्याग करूं परन्तु इनका अत्यन्तकठिनमार्ग सुनते हैं जोकोई सुकरतरधर्ममार्ग होवे तो ठीकहोवे वादमे उसने केवलिक परिज्ञानसे विचारा पहले वक्तमें जिनदत्तसूरि ऐसा नाम आया वाद विचारा अकव्यत्यय न होगयाहोवे दूसरी वक्त और गिनतीकरी तथापि उसीतरहजिनदत्तसूरि ऐसानाम आया और निश्चयकरनेके लिएतीसरीवक्तगिननाप्रारंभ किया तब आकाशसे अग्निपुञ्जगिरा आकाशमें वाणी भई जो तेरे शुद्ध मार्गसेप्रयोजन है तो बहुतवार क्यागिनता है तो यही जिनदत्तसूरि आचार्य संसारनिस्तारक और शुद्ध मार्गके प्ररूपक सद्गुरु है वाद यहजिनप्रभाचार्यनिःसन्देह भए श्रीजिनदत्तसूरिके पासमें आए तब ज्ञानभानु श्रीजिनदत्ताचार्यने कहा तुह्मारा चूडामणि परिज्ञान हमारे समीपमे नहीं फुरेगा जिनप्रभाचार्य बोले मत फुरो, मेरे विधिमार्गसे प्रयोजन है, ऐसा कहनेसे पूज्योंने जिनप्रभाचार्यको चारित्रउपसम्पति दिया वाद जिनप्रभाचार्यने आचार्यकी आज्ञासे विहार किया तथा वहां रहे हुए जिनदत्तसूरि अतिशय ज्ञानियोंके पासमे जयदेवआचार्य जिनप्रभाचार्यने वस्तीवास अंगीकार किया सुनके विमलचन्द्रगणी नामका चैत्यवासीने

वस्तीवासअंगीकारकिया उसीप्रस्तावमें जिनरक्षित शालिभद्र सेठके पुत्रने मातासहित दीक्षालिया तथाथिरचन्द्र वरदत्त नामके दो भाइयोंने प्रव्रज्या लिया तथा जयदत्त नामका मुनि मंत्रवादी भया जयदत्तके पूर्वज मंत्रशक्तियुक्त थे उन सबोंको दुःसाधित रोषातुर भइ दुष्ट देवताने मारा जयदत्त भागा श्रीजिनदत्तसूरिजीके शरणे आया तब करुणानिधान शक्तिमान् श्रीपूज्योंने दुष्ट देवतासे बचाया तथा गुणचन्द्र यतिने जिनदत्तसूरिके पासमें दीक्षा लिया वह पहले श्रावक था तुर्कोंने हाथ देखके यह अच्छा भंडारी होगा यह जानके भागनेके भयसे बेड़ी डालदिया उसने शुद्ध भावसे लाख- नौकार गुणा उन्होंके प्रभावसे सांकल बेड़ी टूटगइ पहरेवालेने जाना नहीं ऐसा रात्रिके पश्चिमार्धमें निकलके कोई वृद्धाके घरमें प्रवेश किया उसने कृपासे कोठीमें रखदिया तुर्कोंने देखा तोभी नहीं मिला बाद रात्रिमें निकलकर अपने देश गया और वैराग्य होगया श्रीपू- ज्योंके पासमें दीक्षा ग्रहण किया और रामचन्द्रगणी जीवानन्द पुत्रसहित अन्यगच्छसे भव्यधर्म जानके श्रीजिनदत्तसूरिजीकी आज्ञा अंगीकार करी और ब्रह्मचन्द्र गणीने सुविहित पक्षमें दीक्षा लिया इन्होंमें जिनरक्षित, शीलभद्र थिरचन्द्र वरदत्त प्रमुख साधु- ओंने और श्रीमती, जिनमती, पूर्णश्री वगेरेहः साध्विओंने वृत्ति पंजिकाटीकादिलक्षणशास्त्रपढ़नेकेवास्ते धारानगरीभेजे इन्होंने वहां जाके भक्तिवान् महर्द्धिक श्रावकके सहायसे वह व्या- करणादिसबपढ़े आप श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराजने रुद्रपल्लीके तरफ विहारकिया मार्गमें चलते हुए एकग्राममें ठहरे वहां एक

श्रावकको एक व्यन्तर निरंतर बहुत तकलीफ देताथा उसके पुण्य-सेही आचार्य वहांआए उस श्रावकने अपने शरीरका स्वरूप कहा श्रीपूज्योंने विचार किया कि यह मंत्रतंत्रोंसे साध्य नहीं है बाद् गणधर शप्ततिका बनाके टिप्पनकमें लिखाके व्यन्तर ग्रहीत श्रावकके हाथमें वह टिप्पन दिया और कहा इस टिप्पनमें दृष्टि रखना उसने वैसाही किया जितने वह व्यन्तर जादापीडा देनेके वास्ते आया परन्तु खड्वाके पासतकरहा शरीरमेंनहींप्रवेश करसका गणधरशप्ततिकाका हृदयमेंनिवेशदर्शनप्रभावसे दूसरे दिन दरवज्जेकीसीमातकआया तीसरेदिन आयाहीनहीं श्रावक स्वस्थ हुआ अर्थात् समाधि हुई बादमें विहार करके रुद्रपल्ली पहुंचे परिवारसहितजिनशेखरउपाध्याय और श्रावकलोगसामने आए विस्तारविधिसे प्रवेशउत्सव किया बादमे आचार्यने धर्मोपदेशदिया वहां श्रीजिनवल्लभसूरिजीके उपदेशसे उपदेशपाएहुए एकसोवीस (१२०) कुडुम्बके लोग रहतेथे उन्होंने श्रीऋषभदेवस्वामी और पार्श्वनाथस्वामीका २ मंदिर बनवाए थे उन्होंकी प्रतिष्ठा करी वहां कितनेक सम्यक्त्वधारी हुए और कइयोंने श्रावकका व्रतग्रहण किया और कितनेक देवपालगणी वगेरेहःने सर्वविरति पना स्वीकार किया इस प्रकारसे उन्होंके समाधान उत्पन्न करके जयदेव आचार्योंको यहां भेजेंगे ऐसा कहके और पश्चिमदेशतरफ विहार किया वहांसे पश्चिम वागड़देशमे आए व्याघ्रपुर नगरमे आके रहे और श्रीजयदेव आचार्यको रुद्रपल्ली भेजे सब व्यवस्था समझाके, वहां रहे हुवे श्रीजिनवल्लभसूरिप्ररूपित श्रीजिनचैत्यविधिस्वरूप चर्चरीग्रन्थ

वनाया पुस्तकमें लिखवाके विक्रमपुर नगरमें भेजा श्रावक प्रबोधार्थः श्रावकोंको बोध होनेके वास्ते भेजा देवधर सम्बन्धी [illegible] जनकघरके पासमें पौषधशाला है उसमें बैठके जिनदत्तसूरिके भक्त श्रावकोंने चर्चरी ग्रन्थकापुस्तक खोला उसअवसरमें मदो- न्मत्त देवधर आके चर्चरी टिप्पन यह है ऐसा कहके अपने हाथमें जुबरदस्तीसे लेकर फाडडाला उसका यह कुछ नहींकरसकते हैं उन्मत्त होनेसे श्रावकोंने उसके पिताके आगे यह स्वरूप कहा तब देवधरकापिताबोला यह अत्यन्तदुरदान्त है तोभी मैं मना करूंगा बाद श्रावकोंने श्रीपूज्योंकोविनतीलिखी उसमें चर्चरीका स्वरूप लिखा तब पूज्योंने और चर्चरीग्रन्थ लिखवाके भेजा और पत्रभेजा उसमें यह लिखा देवधरके ऊपर विरूप किसीको मानना नहीं अर्थात् विरुद्ध नहीं करना श्रीदेवगुरुके प्रसादसे यह भव्य होगा यह दूसरा टिप्पन पहुंचनेसे नमस्कार करके श्रावकोंने खोला समाधान हुआ देवधरने विचार किया यद्यपि मैंने टिप्पनक फाड़- दिया तथापि आचार्योंने दूसराभेजा है इहां कुछकारण होना चाहिये इस लिए मैं एकान्तमें प्रछन्नपने बांचू और विचार करूं उसमें क्या लिखा है बादमें जब श्रावक टिप्पनक स्थापनाचार्यके आलयमें रखके दरवाजावन्धकरके गए तब अपनेघरसे ऊपर वाड़ेसे प्रवेश करके वाहरका दरवज्जा वन्धरहते भी चर्चरी पुस्तक लिया और वांचना शुरू किया जैसे २ उसको वांचे वैसा २ भाव उल्लास होवे सो लिखते हैं

जहिं उस्सुत्तजणक्कमु कुवि किरलोयणेहिं ।
कीरंतउ नवि दीसइ सुविहियलोयणिहिं ॥
निसि न ह्वाण न पठन साहुसाहुणिहिं ।
निसि जुवइहिं न पवेसु न नट्ट विलासिणिहिं ॥ १
वलि अत्थिमियइ दिणयर जहिं नवि जिणपुरओ ।
दीसइ धरिउ न जुत्तइ जहिं जणि तूरउ ॥
जहिं रयणिहिं रहभमणु कयाड न कारियइ ।
लवु डार सुह जहिं पुरि सुविहित पमुहाइ ॥ २
जहिं सावय तंबोल न भक्खइ हिंलिंति न य ।
जहिं पाणहिय धरति न सावय सुद्धन य ॥
जहिं भोयणु नवि भक्खइ न अणुचिय भणओ ।
सहु पहरणि न पवेसु न पुट्टउं चुल्लणओ ॥ ३
जहिं न हासु नवि हुड्ड न खिडड्ड नरूसणओ ।
कित्ति निमित्त न दिज्जइ जहिं धणु अप्पणओ ॥
कि २जहिं वहु आसायण जहिंति नाम लिहिं ।
मिलिय केलि कारिंतिसमणु महि लियेहिं ॥ ४

अर्थ—जहां उत्सव करनेवालेलोगोंका क्रम कुत्सित नेत्रों करके करतेहुए सुविहित विधि मार्गको नहीं देखते हैं सुविहितविधिमार्गमें रात्रिमे स्नान नहीं करना और साधु साध्वियोंका परस्पर रात्रिमे पठन नहीं और रात्रिमें स्त्रियोंका जिनमंदिरमें प्रवेश नहीं और वेश्यायोंका मंदिरमें नाटक नहीं ॥ १ और सूर्य अस्त होनेके बाद तीर्थंकरके आगे वलियाने

नैवेद्य वगैरहः चढ़ाना युक्त नहीं वादित्र बजाना रथ घुमाना कभीभी नहीं किया जावे और लवण उतारना वगैरह रात्रिमें नहीं करना ॥ २ जिनमंदिरमें तंबोल खाना नहीं और परस्पर पंचायतकरना नहीं जिनमंदिरमें श्रावक पानी पीवे नहीं भोजन न करे अनुचितव्यापार न करे पहरावनीवगैरहः न करे परमेश्वरकोपीठदेके बैठे नहीं रसोई करे नहीं ॥ ३ जिनमंदिरमें हास्य, कुचेष्टा, परस्पर लड़ाई करना इत्यादि नहीं करे और केवलकीर्तिके निमित्त जिनमंदिरमें दानादिकार्यनहीं करे जिनभक्तिसे दानादिक करे और नाम वगैरेहः नहींलिखे जिनमंदिरकोमलीननहीं करे यह करनेसे आशातनाहोवे हैं और स्त्रियोंकेसाथक्रीडा न करे ४ इत्यादि अर्थ धारण करे वैसा २ देवधरके मनमें प्रमोद उत्पन्न होवे अहो अत्यन्तशोभनजिनभवनका विधि कहा है इसके अनुसारसे स्थालिपुलाक न्याय करके औरभीसर्वविषय इसशास्त्रमें श्रेष्ठ संभव है इस लिए मैंभी यह मार्ग अंगीकार करूं परन्तु बिंब अनायतन १ और स्त्री पूजा न करे यह संदेह दो पूछना है ऐसा विचारके देवधर टिप्पन वैसाही रखके सन्मार्गमें भया है चित्त जिसका ऐसा अपने घर आया ॥

इधरसे वागड़देशमें रहे हुए श्रीपूज्योंनेभी धारानगरीमें जो साधुओंको भेजेथे उन सबोंको पीछे बुलाए सिद्धान्त पढाया बादमें जिनदेवको जो आपने दीक्षा दियाथा उन्होंको आचार्यपद दिया दस १० वाचनाचार्य किए वाचनाचार्य पंडित जिनरक्षित गणि १ वा. शीलभद्रगणि २ वा. थिरचन्द्रगणि ३ ब्रह्मचन्द्रगणि ४ वा. विमलचन्द्रगणि ५ वा. वरदत्तगणि ६ वा. भुवनचन्द्रगणि ७ वा.

चरणागगणि ८ वा. रामचन्द्रगणि ९ वा. भाणचन्द्रगणि १० तथा ५ महत्तरा करीं श्रीमती महत्तरा १ जिनमती महत्तरा २ पूर्णश्री-महत्तरा ३ जिनश्रीमहत्तरा ४ ज्ञानश्रीमहत्तरा ५ तथा हरिसिंहाचार्योंका शिष्य मुनिचन्द्रनामका उपाध्याय था उसने श्रीजिनदत्तसूरिजीसे प्रार्थना करीथी जो कोई मेरा शिष्य योग्य आपके पासमें आवे उसको आचार्यपद देना श्रीपूज्योंने यह वचन अंगीकार कियाथा बाद मुनिचन्द्रउपाध्यायका शिष्य जैसिंहनामका आचार्यपदमें स्थापा उसकाभी शिष्य जैचन्द्रनामका था उसको पत्तनमे समव सरणमे आचार्यपदमे स्थापा दोनोंके आगे पूज्योंने कहा हमारी कहीहुई रीतिमे अनतुह्यारेप्रवर्तना आत्मकल्याणकरना इस प्रकारसे पद स्थापना करके उन्होंको सिरावन देके सबोंको विहारादिस्थान कहके स्वयं आप अजमेरआए, वहां श्रावकोंने तीन जिनमंदिर और अंबिकाका स्थान पर्वतपर तय्यारकराया है बाद श्रीजिनदत्तसूरिजीने शोभनलग्नमेमूलमदिरोंमे वासक्षेपकिया इधरसे श्रीविक्रमपुरमें साढियापुत्र श्रीदेवधरने श्रीजिनदत्तसूरिजीने भेजा चर्चरी नामकापुस्तकके वाचनेसेजाना है सद्दर्शनकारी विधिविशेष जिमने पनरे अपना कुटुम्ब श्रावक समुदाय करके अपना पिता और आसदेवादिकसे कहा भो श्रावको मेरेको यहां श्रीजिनदत्तसूरिजीको विहार कराना है अर्थात् मै विनतीकरकेयहा लाउंगा देवधरके आगे कोई कुकर्मी नहीं बोलसकता है श्रावक समुदायके साथ विक्रम पुरसे देवधर रवाने होके नागोर आया है उस वक्तमें वहा श्रीदेवाचार्य विशेषकरके प्रसिद्धि पात्ररहतेथे

देवधरभी विक्रमपुरसें आया है यह वात प्रसिद्धभईथी वाद जिनमंदिरमें व्याख्यानप्रस्तावमें देवाचार्यवैठे हैं देवधरभी स्नानादिकसे पवित्र होके जिनमंदिरगया देववंदनादिक करके आचार्यको वंदनाकरी आचार्यने कुशल वार्ता पूछी वाद देवधर पहलेही आचार्यसे प्रश्न किया हेभगवन् जिनमंदिरमें रात्रिमें स्त्रीप्रवेश और प्रतिष्ठावलिविधान नन्दीवगैरहः करनायुक्त है या नही ऐसा प्रश्न सुनके देवाचार्यने विचारा कथंचित् जिनदत्ताचार्यका मंत्र इसके कानमें प्रवेशकिया है इस कारणसे उन्होंसे वासितके जैसा मालूम होता है ऐसा विचारके कहा हे श्रावक रात्रिमें जिनमंदिरमें स्त्रीप्रवेशादिक ठीकनहीं होवे है तव देवधर वोला क्यों नहीं मनाकरते हैं आचार्य वोले लाखों आदमी हैं किस २ कों मना करें तव देवधर वोला हे भगवन् जिस देवघरमें जिन आज्ञा नहीं प्रवर्ते वहां क्या जिनआज्ञा निरपेक्ष इच्छासे लोग प्रवर्ततेहैं उसको जिनघर कहना या जनघर कहना आप आचार्य हैं कहिये, तव आचार्य वोले जहां साक्षात् तीर्थंकरविराजमान दीखते हैं वह कैसे जिनमंदिर नहीं कहा जावे, देवधर वोला हेआचार्य हम मूर्ख हैं परंतु इतनातो हमभी जानते हैं जहां जिसकी आज्ञानहीं प्रवर्ते वह घर उसका नहीं कहाजावे इसकारणसे पाषाणमईजिनबिंब अंदर स्थापनेसे भगवानकी आज्ञाविना स्वेच्छा करके व्यवहार करनेमें वह जिनमंदिर कैसे कहा जावे और ऐसेजानतेभए आप प्रवाहमार्ग नहीं मनाकरते हैं प्रत्युत पोषते हैं वह ये आपको मैं नमस्कर करता हूं आपने मार्ग प्रथम बताया है परन्तु मेरेको जिस

मार्गमें तीर्थंकरकीआज्ञाप्रवर्ते है वहमार्गअंगीकारकरनाहै ऐसा कहके देवधरउठाअपनेसाथमें जो श्रावककुटुम्बवगैरहःके लोगआएथे उन्होंका विधिमार्गमे स्थिरपनाहुआ वाद वहांसे चलके श्रावकसमुदायसहित अजमेर पहुंचा श्रेष्ठभावसे श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराजको वन्दना करी आचार्यश्रीने देवधरका अभिप्राय पहलेही जानाथा श्रीपूज्योंने देशना दिया तव देवधर परिवारसहित निसदेहभया वाद श्रीपूज्योंकीप्रार्थनाकरी हे भगवन् कृपा करके आप विक्रमपुरके तरफ विहार करें आचार्य वोले जैसा अवसर वादमें विस्तार विधिसे जिनमंदिर वहुत जिनप्रतिमा और गणधरादि प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करके वहुत जिनशासनकी उन्नति करी अढाई दिनकी झुंपडी जो कहि जावे सो उसवक्तकावना हुवा मकान है उसमे अभि वहुत प्रतिमावगेरे निकले है और अजमेरसे पूर्व दिशि तरफ एक पर्वतमे वावनवीरका निवास था वहां आचार्य गए वहां वावन वीरोंको साधे वीर प्रत्यक्ष भए और वोले हम आपकी सेवामें हाजिर है आप आज्ञा करें ऐसे कहके वीर अदृश्य हो गए वाद परिवारसहित देवधर है साथमे जिन्होंके ऐसे श्रीआचार्य अजमेरसे विहारकरके क्रमसे नगरग्रामादिकमे भव्योंको प्रति वोधते ऐसे विक्रमपुर पधारे प्रवेशोत्सव हुआ वहाके वहुत लोगोंको प्रतिवोधा परतु जिस वक्त विक्रमपुर पधारे वहा पहलेसेही जनमारीका उपद्रव था आचार्य आयोके वाद श्रावकोमे शाति भई परंतु और लोगोंने वहुतशांतिकाउपायकिया परंतु उपद्रवशातभया नहीं तव नगरके लोगोंने श्रीपूज्योंसे विनती करी हे भगवन् हमारे

ऊपर उपकारकरें इस उपद्रवकीशांति करें हम आपकी आज्ञा पालनकरेगे तव आचार्य बोले जैनधर्मअंगीकार करो या अपना एक पुत्र या पुत्री हमको देदेओ तो हम अभी उपाय कर देवे तव लोगोंने श्रीपूज्योंका वचन अंगीकार किया तव वहां शांति भई तव बहुत लोग श्रावक होगए जिन्होंने जैनधर्म नहिं अंगीकार किया उन्होंने अपना एक पुत्र वा पुत्री आचार्यजीको दिया वहां ५०० पांचसै साधु भए और ७०० साध्वियां भई, वहां भी महावीर स्वामी की प्रतिमा स्थापी वहांसे विहार करके उच्चनगर जाते हुए बीचमें अन्तराय भूत जो विरोधीलोग थे उन्होंको प्रतिबोधे बड़नगर आए वहां प्रवेशोत्सवहुआ बहुतलोगोंकोप्रतिबोधेवहां कितनेकईरषालुब्राह्मणवगैरहः लोगोंनेएकमरनेवाली गायको जिनमंदिरमें रखदी गाय मरगई बाद लोगोंनेकहा यह जैनदेव गोघातक है श्रावक लोगसुनते घभराए और श्रीपूज्योंसे कहने लगे महाराज लोग अपवाद करते हैं बाद श्रीपूज्योंने मांत्रिक प्रयोगसे गायको वहांसे उठाई गाय चली और रुद्रालयमें जाके गिरी तब ईरषालु लोग लज्जित होके आचार्यके पावोंमें गिरे और कहने लगे हमारा अपराधक्षमा करें अबहमऐसाकभी नहीं करेंगे आपकी संततिके जो यहां आवेंगे उन्होंका प्रवेश उत्सव वगैरहः हम लोग करंगे आचार्यश्रीने वहांसे विहार किया गुर्जरदेशमें होके लाटदेशमें नर्मदाके किनारे भड़ौंच (भरुछ) नगर पधारे वहां मुगलका राज्य था प्रवेश उत्सवमें मुगलका पुत्र आयाथा बहुत लोंगोंकी भीडथी उसमें वह मुगलका पुत्र घबराके अकसात मरगया

श्रावक लोग घभराए श्रीपूज्योंसे कहा तब श्रीपूज्योंने उसी वक्त व्यन्तरके प्रयोगसे जीताकरदिया और कहा यह मदिरा मांस नहीं खायगा तबतक जीता रहेगा उसने ६ महीनोंतक मदिरा मांस नहीं खाया बाद एक दिन भूलसे मांस खालिया उसी वक्त देवशक्ति नष्ट होगई और मरगया, वहां बहुत लोगोंको प्रतिबोधके विहार किया नर्मदाकिनारे विहार करते त्रिभुवनगिरीमें कुमार-पाल राजाको प्रतिबोधा वहां बहुत यतियोंका विहार कराया वहांसे विचरतेभए मालवदेशमे उज्जैनीनगरीआए वहां ६४ योगिनि-योंको प्रतिबोधी सो लिखते हैं श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज व्या-ख्यान वांचते थे उस वक्त ६४ योगिनी श्रावकनीका रूप करके आई श्रीपूज्योंने व्याख्यानके पहलेही श्रावकसे कहाथा व्याख्यानमें ६४ छोटे पाटे रखदेना श्रावकने उसीतरहकिया उतनेमे ६४ योगिनी आई पाटोंपर बैठगई श्रीपूज्योंने व्याख्यानवाचते योगिनियोंको कीलदी व्याख्यान उठेके बाद सब लोग चले गए योगिनियो बैठी रही तब दीन होकर योगिनियों बोली हे भगवन् हम तो आपको छलनेको आईथी आपने तो हमको स्वाधीन करली आप कृपा करके हमको छोड़ें हम आपकी आज्ञामे रहेंगी तब आचार्यने योगिनियोंको छोड़ी तब योगिनियां आचार्यके विद्याबलसे प्रसन्न होके वरदान दिए उन्होंके नाम लिखते हैं ग्राम २ मे खरतरश्रावक दीप्ति-वानहोगा १ प्रायः खरतरश्रावक निर्धन नहीं होगा २ संघमे कुम-रणनहींहोगा ३ अखंडशीलपालनेवाली साध्वी ऋतुवंती नहीं होगी ४ खरतर संघको शाकन्यादि नहीं छलेगी ५ जिनदत्त नाम

लैनेसे विद्युत पातादिउपद्रव नहीं होगा ६ खरतरश्रावक सिंधु देशमें गया हुआ धनवान होगा ७ और योगिनियां बोली यह सात वचन पालना जिससे हमारादिया हुआवरदान सफल होवे सो कहते हैं सिंधुदेशमेंगए हुए गच्छनायकोंको पंचनदीसाधना १ आचार्योंको निरंतर २००० दोहजार सूरिमंत्रकाजाप करना २ साधुओंको निरंतर २००० दोहजार नौकार गुणना ३ खरतरश्रावकोंको घरमें या उपाश्रयमें उभय काल सप्तस्मरण गुणना ४ श्रावकोंको नित्य तीन खीचडीकी नौकर वाली गुणना वहां एक मनकेपर एक नवकार और १ उवसग्ग स्तोत्र गुननेसे खीचडीकी माला कही जावे है ५ तथा खरतरश्रावकोंके १ महीनेमें २ आंविल करने ६ खरतर साधुओंको शक्तिरहतेनित्यएकाशनाकरना ७ और जोगनियोंने कहा दिल्ली १ अजमेर २ भडौच ३ उजैन ४ मुलतान ५ उच्चनगर ६ लाहौर ७ ये सात नगरोंमें परिपूर्णशक्तिरहित खरतरगच्छ नायकोंको रात्रिमें नहीं रहना ऐसा कहके योगनियों स्वस्थान गईं और उज्जैनमें वज्र खंभमें श्रीमहाकालके मंदिरसे सिद्धसेनदिवाकरकाविद्याम्नायकापुस्तकग्रहणकिया और मायावीजका ३॥ साढातीन करोड़ जाप किया वहांसे विहार करके चित्रकूट चीतोड नगरआए वहां विरोधियोंने अपशकूनकरनेके लिए कालासर्पबांधके सामने लाए तवगीत वादित्रआदिक बंध हो गए विवाद सहित श्रावकोंने कहा अहो सुंदरनहीं हुआ तव ज्ञानदिवाकर श्रीजिनदत्तसूरिजी महराज बोले अहो क्यों उदास होते हैं जैसे यह कालाभुजंगडोरीसे बंधाहुआ है वैसाहीऔरभीविरोधी दुष्टलोगहै वहवंधनमें पडेगा परिणामसे यह शकुन अतीव सुंदर है वाद आगे चलते दुष्टोंने एक

नकटी स्त्रीको सामने लाए वह सामने आकेखडी भईको पूज्योंने देखी उसको बतलाई (आई भल्ली) तब उस दुष्ट रंडाने उत्तर दिया "भल्लाइ धाणुक्कइ मुक्की" तब पूज्य थोडे हसके बोले "पक्खा हरा तेण तुह छिन्ना" तब विलखी होके चलीगई बाद आचार्य नगरमें आए श्रीचिंतामणिपार्श्वनाथस्वामीके मंदिरके स्तंभसे अपनीविद्याके प्रभावसे विद्याम्नायका पुस्तक प्रगटकिया वहांसे विहार करते हुए अजमेर आए पाक्षिक प्रतिक्रमण करते हुए श्रीगुरू महाराजने वारंवार चमकती बीजलीको मंत्र बलसे पात्रके नींचे रक्खी प्रतिक्रमणभयोंके अनन्तर पात्रके नींचेसे निकालकर जिनदत्त नाम ग्रहण करेगा वहां मै नहीं पडूंगी ऐसा वर लेके छोड़दी बीजली स्वस्थान गई वहांसे आचार्य विहार करते हुए गुर्जरदेशमे पाटननगरआए उससमय एक नागदेवनामकाश्रावक था उसका दूसरा नाम अंबड़ ऐसाथा उसने एकदा गिरनार पर्वतपर ३ उपवास करके अंबिका देवीका आराधन किया अंबा प्रत्यक्ष भई और कहा मेरा क्यों आराधनकिया कार्य कहो तब नागदेवबोला मातर इससमयमे भरतक्षेत्रमे युगप्रधानपद्धारक कौन आचार्य है उन्होंको मे अपना गुरूकरूं ऐसा पूछा तब अंबिकादेवी उसके हाथमे सोनेके अक्षरोंसे यह श्लोक लिखा "दासानुदासा इव सर्वदेवा यदीयपादाब्जतले लुठंति। मरुस्थलीकल्पतरुः स जीयात् युगप्रधानो जिनदत्तसूरिः ॥ १

और बोली जो यह हाथके अक्षरबाचेंगे उन्होंको युगप्रधान जानना ऐसा कहके अंबा अदृश्य होगई बाद वह श्रावक ठिकाने

२ बहुत आचार्योंको हाथ दिखाता फिरा परंतु कोईभी अक्षर वांचनेको समर्थ नहीं भए बाद एकदा पाटननगरमें त्रात्रावाडा नामकेमोहल्लेमें श्रीजिनदत्तसूरिजीके पासमें आया अपना हाथ दिखाया तब गुरूने अपनी स्तुतिलिखीभई देखके हाथपर वासक्षेप किया और शिष्यको वांचनेकी आज्ञादी शिष्यने ऊपर लिखा श्लोक वांचा तब नागदेवश्रावक परम भक्तिमान आचार्यका शिष्य भया ऊपर लिखे भए श्लोकका यह अर्थ है दासानुदासके जैसा सर्वदेव जिन्होंके चरण कमलमें लुटते हैं अर्थात् नमस्कार करते हैं मरुस्थलीमें कल्पवृक्षके जैसा युगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरि चिरंजीव रहो, ऐसे कलिकाल सर्वज्ञकल्प युगप्रधानपदधारक श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज एकदा व्याख्यान वांचतेथे तब गुरूने दीर्घ उपयोगसे समुद्रमें डूबता हुआ एक श्रावकका जहाज जानके अपना स्मरण करते हुए लोगोंके उपकारके लिए व्याख्यानका पत्रनीचे रखके योगशक्तिसे पक्षिवत् समुद्रमें जाके जहाजतिराया इस प्रकारसे श्रावकका कष्ट दूरकरके पीछे आके व्याख्यान वांचना शरू किया यह वृत्तान्त सब लोगोंने जाना तब श्रीगुरुका महिमा बहुत फैला बहुत लोग भक्त भए वहांसे विहार करते क्रमसे विचरते भए मुलताननगर गए प्रवेशोत्सव बहुत विस्तारसै होता देखके एक अन्य गणका अंबडनामकाश्रावक बोला इहां सामेला होता है जो गुर्जरदेशमे पाटणपधारें और प्रवेशोत्सव ठाठसै होवे तब आपको सच्चासमजैं तब श्रीपूज्य उपयोग देके बोले हम फरसना साथ पाटण आवेंगें तें तेललूण वेचता सांमने मिलेगा बाद श्री जिनदत्त

सूरिजी महाराज मुलतानमें बहुत लोकोंको प्रतिबोधे जैन शासनकी उन्नति करके विहार करते पंचाल (पंजाब) मरुस्थल गोडादि देशोंमें विचरते प्रतिबोध करते गुर्जरदेशमे पाटण नगर पधारे बहुत विस्तारविधिसें सांमेला होताथा उतने वहही अंबडश्रावक अन्य गच्छीय सांमने आया तैलादिवेचणेकुंग्रामातरजाताथा आचार्य-श्रीने बोलाया कैसाहे भद्र तब अंबड लज्जितहोके नीचा मुख करके चलागया श्रीपूज्य पाटणमे रहे तब अंबड कपटसे खरतर-गच्छकाश्रावकभया एकदा उपवासकेपारनेमे साकरके पाणिमें ज-हिर दिया आचार्यने आहारकियेके बाद जहिरकापरिणाम जाणा तबरायभणसालीगोत्रीय श्रीआभूनामकाश्रावकने पालणपुरसें जहि-रउतारणेकिमुद्रामंगाई उस्सेजहिरउतारा बादअंबडकीलोकोंमेंबहुत-निंदाभइ अंबड मरके व्यंतरदेवहुवा तथापिद्वेषनहिंगया एकदा श्रीपूज्यसोतेथे रजोहरण पाटेसेंनीचागिरगया तबछलदेखके रजो हरण व्यंतरने लेलीया ओर आचार्य महाराजमें अधिष्ठित भया तब भणशाली श्रावकने धूपादिक करके बोलाया तब अंबड व्यंतर बोला तेरा कुटुंबको मुजे देवे तब श्रीपूज्योंको छोडु बाद उसी वक्त आभु श्रावकने अपने गोत्रवालेसबकुटुंबका उताराकरा तब आचार्य सावधानभये ओघालेके भणसालीका गोत्रबचाया और व्यंतर उसी समय आचार्यका तेज नहिंसहता चलागया तब संघमें बहोत हर्षभया श्रावकोंने जिनशासनकी उन्नति गुरु महाराजकी भक्तिके लियें उत्सव सातिलात्र वगैरे श्रीदेवगुरुकी भक्ति विशेष करि ऐसे प्रभावक कलिकालसर्वज्ञकल्प परोपकारकरणतत्पर भूमंडलमें

विचरते श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज शिष्यादि परिवारसे परिवृत ज्ञानदिवाकर विचरतेभये मेघवत् उपगारि उपगार करतेहैं इ-त्यादि अनेक आश्चर्यके निधान निरंतर चार प्रकारके देवों करके सर्वदा सेवित चरणकमल जिनोका ऐसे बावन (५२) वीर चोसठ (६४) योगिनी पांचपीर खेत्रपाल मानभद्र वगैरे देवकिंकरवत् सेवाकरतेहैं जिनोकी ऐसे श्रीजिनदत्तसूरीश्वरजी करुणासमुद्र धारापुरि गणपद्रादि स्थानोंमें महावीरस्वामीजी पार्श्वनाथस्वा-मीजी सांतिनाथस्वामीजी अजितनाथस्वामीजी प्रमुखजिनबिंबोकी और जिनमंदिरोकी प्रतिष्ठाकरणेवाले ऐसे और स्वज्ञानके बलसे देखके निजपट्टोद्धारक रासलश्रावकके पुत्रकों प्रव्रज्या देनेवाले स्वहस्तसे आचार्यपद देके भालस्तलमें मणिधारणेवाले श्रीजिनचंद्रसू-रिनाम स्थापित करनेवाले सूर्यवत् प्रतिबोधकियाहै भारतवर्षके भव्य कमलोको जिनोने ऐसे गणधरसार्धशतकादि वहोत शास्त्रोंके करणेवाले युगप्रधान भट्टारक श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराजका चरित्र लेशमात्र निरूपण कीया इतिश्रीजिनकीर्तिरत्नसूरिशाखायां तत्परंपरा-यांच श्रीमज्जिनकृपाचंद्रसूरिशिष्य पं० आनंदमुनि संगृहीत तल्लघुभ्राता उपाध्याय जयसागरगणिना लोकभाषयाऽवतारिते जंगम युगप्रधान भट्टारक श्री जिनदत्तसूरिचरिते श्रीजिनदत्तसूरीश्वराणां जन्मदीक्षा-युगप्रधानपदस्थापनाद्यधिकारवर्णनोनामपंचमसर्गः समाप्तः ॥ ५ ॥

इति पूर्वार्द्ध समाप्तम् ।

॥ अशुद्धिशुद्धिपत्रम् ॥

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
४	१२–१३	में टिपनी है	२ ओली १४से मूल है
४	१४	पृथ्वीकेऊपर१८सो योजन	समभूतलसें ९सें नीचे ९से ऊपर
५	८–९	२१ सो ४३	२६ सो ३५
५–६		टिप्पनीकी लकीर है	०
७	१९	उपत्ति	उत्पत्ति
८	१२	सुदर्शनविजय	सुदर्शन विजय
१६	९	श्रीरिमदेव	श्रीरिषभदेव
२७	५	पृथ्वीपर	रत्न पीठपर
२९	३	कितनेक	असख्यात
३२	१२	सख्याण	साख्य
५६	१३–१४	देवलोकएसें	देवलोकसें
५८	१	राजसगण	राक्षसगण
५९	२१	आर्यशिवा	आर्यासिवा
७३	६	कुथकुमर	कुथुकुमर
७४	७	प्राप्ति	प्राप्त
७६	६	प्राप्ति	प्राप्त

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
७७	५	कुमरि	कुमारि
७७	८	कुमर	कुमारि
७७	१३	मथुरा	मिथिला
७८	९	प्राप्ति	प्राप्त
८०	७	प्राप्ति	प्राप्त
८४	११	प्राप्ति	प्राप्त
८९	१६	सुदामा	सुभद्रा
९३	३	शुद्धी	रिद्धि
९४	४	शुद्धी	रिद्धि
१०९	१७	पूछेकि	पूछ कि
११२	११	निष्टितार्थे	निष्टितार्थै
११४	२	मध्यपापा	मध्यमपापा
११५	१८	प्रत्यक्त	प्रत्यक्ष
१५३	४	वेहू	हुवे
१७२	१९	दरिद्रातताका	दरिद्रताका
१८०	२०	धाये	धापे
१८५	१८	रागवुधिका	रागवृद्धिका
१८८	८	नखलु	नखलुनखलु
२२४	२५	होनेमें	होनेसैं
२४९	७	छो	धो
२६०	५	तित्थर	तित्थयर

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
२६२	१	शानशाली	ज्ञानशाली
२६३	५	वनच	वचन
२८०	३	पूल्य	मूल्य
२९४	७	पदे	पट्टे
२९५	१३	अरूपणात्	प्रापणात्
२९६	१६	तापल	तापस यातपा
२९७	२१	दिय	दीया
३०६	११	वोलोकि	वोलेकि
३१२	१३	रविणेन	रविणेव
३१२	१६	निरकियातर	निरतरकिया
३१५	१३	सघप्रि	सघमि
३१६	१६	सासो	सीसो
३१८	१७	पूछ	पूछा
३७३	१३	तो	०
३८४	१९	विवाद	विषाद